माला का परिचय

नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी हीरक-जयंती के अवसर पर जिन भिन्न-भिन्न साहित्यिक अनुष्ठानों का श्रीगणेश करना निश्चित किया था उनमें से एक कार्य हिंदी के आकर-ग्रंथों के सुसंपादित संस्करणों की पुस्तकमाला प्रकाशित करना भी था। जयंतियों अथवा बड़े-बड़े आयोजनों पर एकमात्र उत्सव आदि न कर स्थायी महत्त्व के ऐसे रचनात्मक कार्य करना सभा की परंपरा रही है जिनसे भाषा और साहित्य की ठोस सेवा हो। इसी दृष्टि से सभा ने हीरक-जयंती के पूर्व एक योजना बनाकर विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्रीय सरकार के पास भेजी थी। इस योजना में सभा की वर्तमान विभिन्न प्रवृत्तियों को संपुष्ट करने के अतिरिक्त कतिपय नवीन कार्यों की रूपरेखा देकर आर्थिक संरक्षण के लिए सरकारों से आग्रह किया गया था जिनमें से केंद्रीय सरकार ने हिंदी-शब्दसागर के संशोधन परिवर्धन तथा आकर - ग्रंथों की एक माला के प्रकाशन में विशेष रुचि दिखलाई और ६-३-५४ को सभा की हीरक-जयंती का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति देशरत्न डा० राजेंद्रप्रसाद जी ने घोषित किया—'मैं आपके निश्चयों का, विशेषकर इन दो (शब्दसागर-संशोधन तथा आकर-ग्रंथमाला) का स्वागत करता हूँ। भारत सरकार की ओर से शब्द-सागर का नया संस्करण तैयार करने के सहायतार्थ एक लाख रुपए की सहायता, जो पाँच वर्षों में, बीस-बीस हजार करके दिए जायँगे, देने का निश्चय हुआ है। इसी तरह से मौलिक प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन के लिए पचीस हजार रुपए भी, पाँच वर्षों में पाँच-पाँच हजार करके, सहायता दी जायगी। मैं आशा करता हूँ कि इस सहायता से आपका काम कुछ सुगम हो जायगा और आप इस काम में अग्रसर होंगे।'

केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने ११-५-५४ को एफ ४-३-५४ एच ४ संख्यक एतत्संबंधी राजाज्ञा निकाली। राजाज्ञा की शर्तों के अनुसार

इस माला के लिए संपादक-मंडल का संघटन तथा इसमें प्रकाश्य एक सौ उत्तमोत्तम ग्रंथों का निर्धारण कर लिया गया है। संपादक-मंडल तथा ग्रंथ-सूची की संपुष्टि भी केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने कर दी है। ज्यों-ज्यों ग्रंथ तैयार होते चलेंगे, इस माला में प्रकाशित होते रहेंगे। हिंदी के प्राचीन साहित्य को इस प्रकार उच्च स्तर के विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं तथा इतर अध्येताओं के लिए सुलभ करके केंद्रीय सरकार ने जो स्तुत्य कार्य किया है उसके लिए वह धन्यवादार्ह है।

संपादन-सामग्री

शिवसिंहसरोज में *भिखारीदास* (*दास*) के पाँच ग्रंथों का उल्लेख है—*छंदार्णव*, *रससारांश*, *काव्यनिर्णय*, *शृंगारनिर्णय* और *बागबहार*। *मिश्रबंधु-विनोद* में *बागबहार* के संबंध में लिखा है—"वे (प्रतापगढ़ के राजा प्रतापबहादुर सिंह) कहते हैं कि बागबहार नामक कोई ग्रंथ *दासजी* ने नहीं बनाया। उनका मत है कि शायद लोग *नामप्रकाश* को *बागबहार* कहते हों। हमने भी *बागबहार* कहीं नहीं देखा और जान पड़ता है कि राजा साहब का अनुमान यथार्थ है—(प्रथम संस्करण)।"

प्रतापगढ़ के राजाओं की प्रशस्ति में लिखी गई *प्रतापसोमवंशावली* में सात ग्रंथों का नाम लिया गया है—

प्रथम काव्यनिर्नय को जानो। पुनि सिंगारनिर्नय तहँ मानो॥
छंदोर्नव अरु विष्णुपुराना। रससारास ग्रंथ जग जाना॥
अमरकोस अरु सतरंजसतिका। रच्यो लहन हित मोद सुमतिका॥
नृपति अर्जीतसिंह खुजवाई। संचित कियो अमित सुख पाई॥

खोज (काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा संचालित) की खोज यह है—

१—*अमरतिलक* (२६-६१ ए, बी)
२—*अमरकोश-नामप्रकाश* (४७-२६१ क)
३—*अलंकार* (४७-२६१ ख)
४—*काव्यनिर्णय* (०३-६१, २०-१७ ए, बी; पं २२-२२, २३-५५ डी, ई, २६-६१ ई, एफ, जी, एच, आई, ओ; ४७-२६१ ग)
५—*छंदप्रकाश* (०३-३२)
६—*छंदार्णव* (०३-३१; २०-१७ सा; २३-५५ ए, बी, सी, २६-६१ सी, डी; ४७-२६१ घ)
७—*मात्रा-प्रस्तार वर्णमर्कटी* (४७-२६१ ङ)
८—*रससारांश* (०४-२१; २३-५५ एफ, जी, २६-६१ जे, के, पी; ४७-२६१ च, छ, ज)

६—*विष्णुपुराण* (०६-२७ बी; २६-६१ क्यू, आर; ४७-२६१ भ)
१०—*शतरंजशतिका* (०६-२७ ए; ४७-२६१ ज)
११—*शृंगारनिर्णय* (०३-४६; २३-५५ एच, आई; २६-६१ एल, एम, एन)

खोज (४७-२६१ भ) में साहित्यान्वेषक ने *विष्णुपुराण* की सूचना का उद्धरण यों दिया है—

"श्री राजा अजीतसिंह नगर प्रतापगढ़ाधीश ने प्रकृत अनेक निबंध बहुद्योग से एकत्र संचय किए हैं। इन निबंधों का उत्पादक नगर प्रतापगढ़ के ईशान दिक सीमा समीप ट्योंगा ग्रामनिवासी कायस्थकुलभूषण महाकवि असीमोपमाश्रय उक्त नगर राज्याधिकारी श्री राजा अजीतसिंह के साविध्य महाराज हिंदूपति जिनको अद्य समय शताधिक १५६ घनसठि वर्ष व्यतीत भए हैं······तदाज्ञावलंबी······भिखारीदास हैं। यह निबंध अत्युत्तम है······। जैसा वज्रमणि चकमणि के आरोपण से उत्कृष्ट आभा को प्राप्त होवै······पुनः यह भाषानिबंध मुद्रित होकर प्रचलित होने के पूर्व······राजा अजीतसिंह वैकुंठपदारूढ़ हो गए··· इनकी इच्छा पूर्ण होने के हेतु से······तदात्मज श्री राजा प्रतापबहादुर सिंह ने इस निबंध को मुंशी नवलकिशोर साहब (सी० आई० ई०) क यंत्रालय में मुद्रित कराए हैं ······किंच रससाराश, शृंगारनिर्णय, काव्यनिर्णय इन निबंधों का नगर गढ़ाधिष्ठित यंत्रालय गुलशन अहमदी नामक······मुंशी अहमद हुसेन साहब डिप्टी इंस्पेक्टर मदारिस नगर निवासी स्थापित में आरोपित करवा के किले प्रतापगढ़ के सरस्वती भंडार में स्थिर किए हैं······कवि पंडित······रसिकजनों के विनोदार्थ राजा साहब हर्षपूर्वक प्रेषित करते हैं ······पुनः भिखारीदास रचित अमरकोश, शतरंजशतिका भाषाशिरोमणि निबंधद्वय आरोपण कराने का विचार है।··· ··यह सूचना अग्रिम के हेतु लघु से निश्चित कर दी गई है।"

इसमें आए *भाषाशिरोमणि निबंधद्वय* को, जो वस्तुतः *अमरकोश* और *शतरंजशतिका* के विशेषणमात्र हैं, एक साहित्यान्वेषक ने दो स्वतंत्र ग्रंथ समझ लिया। *निबंध* शब्द का व्यवहार किसी कृति के लिए परंपरा में रूढ है। *तुलसीदास* का *मानस* भी निबंध ही है—'भाषानिबंधमतिमंजुलमातनोति'। इसलिये ये कोई नए ग्रंथ नहीं।

ग्रंथों का विस्तृत विचार नीचे किया जाता है—

बागबहार

इस ग्रंथ का नाम श्रीशिवसिंह सेंगर ने अपने *सरोज* में दिया है। अन्यत्र इसका किसी ने उल्लेख नहीं किया। श्रीसेंगर को दास के आश्रयदाता के 'हिंदूपति' नाम के कारण यह भी भ्रम हो गया है कि *भिखारीदास* बुंदेलखंडी थे। हिंदूपति नाम के एक राजा पन्ना में हुए हैं*। इन्हीं के भाई श्री खेतसिंह के दरबार में बोधा कवि (रीतिमुक्त) थे। ये प्रसिद्ध वीर छत्रसाल के प्रपौत्र थे। *बागबहार* के संबंध में भी इसी प्रकार के भ्रम की संभावना है। किसी अन्य दास कवि का यह ग्रंथ *भिखारीदास* के नाम पर चढ़ गया होगा। *शिवसिंहसरोज* में दीनदयाल गिरि के नाम पर भी एक *बागबहार* दिया है। कहीं दीन-दास का घालमेल हो जाने से एक ग्रंथ दो स्थानों पर तो नहीं चढ गया। यह कहना कि *नामप्रकाश* या *अमरकोश* का ही नाम *बागबहार* है समझ में नहीं आता। *बागबहार* का अर्थ नामकोश किसी प्रकार नहीं निकलता। इसलिए यह निर्णय भी ठीक नहीं जान पड़ता। उस ग्रंथ (*नामप्रकाश*) में *बागबहार* नाम का उल्लेख कहीं नहीं है। इस प्रकार न तो यह भिखारीदास की कृति है और न यह उनके *नामप्रकाश* का पर्याय नाम है।

विष्णुपुराण

यह संस्कृत *विष्णुपुराण* का भाषानुवाद है। इसका आरंभिक अंश यों है—

(छप्पै)

जो इंद्रिन को ईस विस्वभावन जगदीस्वर।
जो प्रधान बुध्यादि सकल जग को प्रपंचकर।
परम पुरुष पूरबज सृष्टि थिति लय को कारन।
बिस्नु पुंडरीकाक्ष मुक्तिमद भुक्तिसुधारन।
जेहि दास ब्रह्म अक्षर कहिय, जो गुन-उदधि-तरंगमय।
तेहि सुमिरि सुमिरि पायन परिय करिय जयति जय जयति जय॥

(दोहा)

विनय बिस्नु ब्रह्मादि पुनि गुरुचरनन सिर नाइ।
यातें बिस्नुपुरान की भाषा कहौं बनाइ॥ १॥
पुनि अध्यायनि सोरठा किय छप्पै प्रति अंस।
आठ आठ तुक चौपई अनियम छंद प्रसंस॥ २॥

अंत में यह है—

> यह सत्र नुष्टुप छंद में दस सहस्र परिमान।
> दास संस्कृत तें कियो भाषा परम ललाम॥

इसमें निर्माणकाल का उल्लेख नहीं है। मिश्रबंधुओं का अनुमान है कि शिथिल रचना के कारण यह दास की पहली कृति जान पड़ती है। *अमरकोश* का अनुवाद १७६५ में किया गया है। इसके पूर्व १७६१ में वे *रससारांश* लिख चुके थे। इसलिए यह कल्पना सत्य नहीं जान पड़ती। *नामप्रकाश* के भाषानुवाद के साथ *विष्णुपुराण* के भाषानुवाद का कार्य भी छेड़ा गया हो यह संभावना की जा सकती है।

नामप्रकाश

यह संस्कृत *अमरकोश* का भाषानुवाद है। इसका आरंभिक अंश यों है—

> आदि गुरु लायक विनायक चरनरज
> अंजन सों रंजित सुमति दृष्टि करिकै।
> देखिकै अमरकोस तिलक अनेकनि सों
> बूझिकै बुधन जो सकत सेप सरि कै।
> संसकृत नामनि के अर्थ निज जानि जानि
> औरो नाम आनि भाषामंथन सों हरिकै।
> याही क्रम सबके समझिबे के कारन
> प्रकासो दास भाषाजोग छंदवृंद भरिकै॥ १॥

(दोहा)

> सुगम टानियो संसकृत विद्याबल नहिं नेक।
> पाहन-सुतिय-करन-चरन-सरन भरोसो एक॥ २॥
> ज्यों अहिमुख विष सीपमुख मुक्त स्वातिजल होइ।
> विगरत कुमुख सुमुख बनत त्यों ही अक्षर सोइ॥ ३॥
> देखि न मानव दोष कहुँ स्वर को फेर तुकंत।
> सब्द असुद्धी होइ तो सोधि लीजियो संत॥ ४॥

अनुक्रमनी (दोहा)

> स जु मु मिश्र यो स्वर मिलित सब्दांतन मो दीन्ह।
> कहूँ व्यक्ति संजोगियो कहूँ दीर्घ लघु कीन्ह॥ ५॥

(कुंडलिया)

नाम न लेखहु ग्राहि कहि गहि लहि पुनि सुनि और।
जानि मानि पहिचानि गुनि आनि ठानि सब ठौर।
ठौर देखि अवरेखि लेखि सु बिसेषि धीर धरि।
ठीक अलीक उताल हाल विख्यात ताकु करि।
टेर राखि अभिलाषि आसु पद पाद सही भनि।
सहित जुक्ति जुत उक्ति छंद पूर्‌यो इन नामनि॥ ६॥

(दोहा)

य ज रि ऋ स श ष ख छ क्ष न ण ग्य ह्र ड ग ठान्यो एक।
भाषाबर्नेन बूझिकै कियो न बर्नबिवेक॥ ७॥
एकै सब्द कि दोइ त्रय यह भ्रम उपजत देखि।
नामन की संख्या धरी लीजै सुमति सरेखि॥ ८॥
सनह सै पंचानवे अगहन को सित पक्ष।
तेरसि मंगल को भयो नामप्रकाश प्रत्यक्ष॥ ९॥

(छप्पय)

स्वर्ग ब्योम दिग काल बुद्धि सब्दादि नाट्य लहि।
पातालो अरु नरक वारि दस प्रथम कांड कहि।
भू पुर सैल बनोषधी 'रु सिंहादि द्वीय पुनि।
ब्रह्म क्षत्रियो वैश्य सूद्र दस दू तृतीय सुनि।
सचि सेष निघ्न संकीरनो अनेकार्थ त्रय बर्ग लिय।
तजि सासन भाषाजोग लखि पूरन नामप्रकास किय॥ १०॥

इसकी पुष्पिका यों है—

इति श्रीभिखारीदासकृते सोमवंशावतंसश्री १०८ महाराजछत्रधारी-सिंहात्मजश्रीबाबूहिंदूपतिसंमते अमरतिलके नामप्रकाशे तृतीयकांडे अनेकार्थवर्गसंपूर्णम्।

इससे स्पष्ट है कि इसका नाम *नामप्रकाश* ही है। *अमरतिलक* उसका विशेषण है। यह *अमरकोश* का तिलक है। एक भाषा से दूसरी भाषा में करने को भी *तिलक* शब्द से व्यक्त करते थे। *बिहारीसतसैया* के भाषांतर को भी *तिलक* कहा गया है। यह केवल *अमरकोश* का भाषा तिलक भर नहीं है। 'औरौ नाम आनि भाषाग्रंथन सों हरिकै' से पता चलता है कि मुंशीजी ने हिंदी के शब्द भी जहाँ तहाँ जोड़े हैं। जैसे—

सोंठि के नाम

(दोहा)

विस्व विस्वभेषज अपर सुंठी नागर जानि।
नाम महौषध पाँच हैं भाषा सौंठि बखानि॥

संवत् १७९५ में नामप्रकाश पूर्ण हुआ।

शतरंजशतिका

यह शतरंज के खेल पर लिखी पुस्तक है। इसके आरंभ में यह गणेश-स्तुति है—

राजन्ह श्रीप्रद मंत्रिन्ह मंत्रद सूर सुबुध्यनि कौं जु सहायक।
उंदुर-अस्व अरूढ़ ह्वै प्यादहू दौरिकै दास मनोरथदायक।
चौसठि चारु कलानि को लाभु बिसातिन बूझिये बंदि बिनायक।
सिंधुर आनन संकटभानन ध्यान सदा सतरंजन्ह लायक॥१॥

फिर परमपुरुष की वंदना यों है—

(दोहा)

परम पुरुष के पाय परि, पाय सुमति सानंद।
दास रचै सतरंज की, सतिका आनँदकंद॥ २॥

इसके अनंतर ग्रंथ का आरंभ हो जाता है। खोज में जिस *शतरंजशतिका* का विवरण दिया गया है वह केवल ५ पन्ने की पुस्तक है। उसका परिमाण १३० श्लोक है। ग्रंथ की पुष्पिका यों है—

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते सतरंजसतिका संपूर्णम्। शुभमस्तु। श्रीराधाकृष्णाय।

इस प्रति की पूरी प्रतिलिपि मेरे पास है। ४६ छंदों के अनंतर एक अध्याय समाप्त होता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है—

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते सतरंजसतिकायां मंगलाचरणवर्णनो नाम प्रथमोऽध्यायः॥ १॥

इसके अनंतर जो दूसरा अध्याय चला वह १० छंदों के अनंतर ही एकाएक समाप्त हो गया और 'लिखक' ने 'संपूर्णम्' लिख दिया। इस प्रकार इस प्रति में ५६ छंद हैं। इसलिए यदि 'शतिका' का अर्थ 'सौ छंद' हो तो अभी कम से कम ४० छंदों की कमी रह जाती है।

*भिखारीदास*जी की ग्रंथावली का संपादन करने के बीच श्रीउदयशंकर शास्त्री ने *शतरंजशतिका* की एक खंडित प्रति मेरे पास देखने को भेजी।

यह बीच बीच में खंडित है। पर पूर्ण फिर भी नहीं हुई है। प्रथम अध्याय के पाँचवें छंद का अंतिम अंश इसके आरंभ में है। प्रथम अध्याय पूर्वोक्त प्रति से मिलता है। इसमें प्रथम अध्याय की पुष्पिका यों है—

इति श्रीसतरंजसतिकायां ग्रंथारंभवर्णनं नाम प्रथमोध्यायः।

इसके अनंतर दूसरा अध्याय आरंभ होता है। इसके नवें छंद के आधे पर ही पहली प्रति समाप्त कर दी गई है। इसमें इस अध्याय के केवल ३२॥ छंद मिलते हैं। इसके बाद प्रति खंडित है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि दूसरे अध्याय में ठीक-ठीक कितने छंद हैं। तीसरे अध्याय का आरंभ नहीं है पर अंत १३ छंदों पर होता है।

इसकी पुष्पिका यों है—

इति श्रीसतरंजसतिकायां संकटविजयसाधारणवर्णनं नाम सप्तविधाने तृतीय अध्यायः॥ ३॥

फिर प्रति खंडित है पर चतुर्थ अध्याय की पुष्पिका का अंश मिल जाता है—

इति सतरंजसतिकायां संकटविजयरथार्पित द्वादसविधानवर्णनं नाम चतुर्थो अध्यायः॥ ४॥

चौथा अध्याय १६ छंदों का है। पाँचवें, छठे, सातवें अध्यायों की पुष्पिका खंडित होने से नहीं है। पर आठवें अध्याय की पुष्पिका यों मिलती है—

इति श्रीसतरंजसतिकायां सामर्थिखंडित एकादसप्रकारबर्ननं नाम अष्टमो अध्यायः॥ ८॥

इसमें १७ छंद हैं। नवें अध्याय के छंद ६ तक प्रति है। यदि इस खंडित प्रति में ५,६,७ अध्यायों की कोई छंदसंख्या न मानी जाय तो भी १३५॥ छंद हो जाते हैं। इसलिए स्पष्ट है कि 'शतिका' का अर्थ 'सौ छंद' कथमपि नहीं है। चार पाँच सौ छंद से कम का कोई ग्रंथ दास का नहीं है। अनुमान से यह ग्रंथ भी बड़ा होगा। मेरी धारणा है कि शतरंज पर दास का यह ग्रंथ सौ छोटे बड़े अध्यायों में रहा होगा। 'शतिका' का अर्थ सौ अध्यायों की पुस्तक ही जान पड़ता है।

इस पुस्तक में जैसी बारीकी मुंशीजी ने दिखाई है उससे यह भी अनुमान होता है कि इस विद्या की कोई पोथी उन्होंने फारसी या संस्कृत में देखी होगी उसी के आधार पर इसका निर्माण किया होगा। अपने

अनुभव की बातें भी रखी होंगी। इसलिए इसका निर्माणकाल भी *विष्णुपुराण* और *नामप्रकाश* के आसपास माना जाना चाहिए।

नामप्रकाश, विष्णुपुराण और *शतरंजशतिका* का संग्रह प्रस्तुत *भिखारीदास-ग्रंथावली* में नहीं किया गया। प्रथम दो तो अनुवाद मात्र हैं। तीसरी यदि अनुवाद न भी हो तो उसका साहित्यिक महत्त्व नहीं। फिर भी उसे प्रकाशित किया जा सकता था यदि कोई पूरा हस्तलेख मिल जाता। इसलिए केवल चार साहित्यिक ग्रंथों का ही संनिवेश इस ग्रंथावली में किया गया है। *आकर-ग्रंथमाला* के परामर्शमंडल के निश्चयानुसार एक खंड को लगभग ३०० पृष्ठों का होना चाहिए। इसलिए प्रथम खंड में सुभीते के विचार से *रससारांश, शृंगारनिर्णय* और *छंदार्णव* रखे गए हैं और दूसरे खंड में *काव्यनिर्णय*। कालक्रम से *रससारांश, छंदार्णव, काव्यनिर्णय* और *शृंगारनिर्णय* यों होना चाहिए। *रससारांश* के अनंतर *शृंगारनिर्णय* रखना अच्छा लगा, फिर *छंदार्णव*। ये ग्रंथ जिस क्रम से ग्रंथावली में रखे गए हैं उसी क्रम से इनकी संपादन-सामग्री का विस्तृत विचार किया जाता है।

रससारांश

खोज में इसकी आठ प्रतियों का पता चला है—

१—पूर्ण, लिपिकाल सं० १८४१; प्राप्तिस्थान—काशिराज का पुस्तकालय (०४-२१)।

२—पूर्ण, लिपिकाल सं० १६४२; प्राप्ति०—श्रीविपिनविहारी मिश्र, ब्रजराज पुस्तकालय, गधौली, सिधौली, सीतापुर (२३-५५ एफ)।

३—पूर्ण, लिपिकाल अनुल्लिखित, प्राप्ति०—ठाकुर महावीरबक्स सिंह तालुकेदार, कोठारा कलाँ, सुलतानपुर (२३-५५ जी)।

४—खंडित (आदि के २४ पन्ने नहीं हैं) लिपि०—सं० १६११; प्राप्ति०—श्रीभागीरथीप्रसाद, उसका, प्रतापगढ़ (२६-६१ जे)।

इस प्रति के लेखक भील कविराय हैं—

> ग्रंथ रसनि को सार यह, दास रच्यो हरषाइ।
> सो वान् सलतन कहँ लिख्यो भीख कविराइ॥

५—पूर्ण, लिपि० सं० १६१६; प्राप्ति०—महाराजा लाइब्रेरी, प्रतापगढ़ (२६-६१ के)।

६—पूर्ण, लिपि०-सं० १८७६; प्राप्ति०-श्री लालताप्रसाद पांडेय, सदहा, रेंडी गारापुर, प्रतापगढ़ (४७-२६१ च)।

७—पूर्ण, मुद्रित (लीथो) सं० १८६१ ई०; गुलशन अहमदी प्रेस में छपी (४७-२६१ छ)।

८—पूर्ण, लिपि०-१६१० वि०; प्राप्ति०-श्रीचक्रपाल त्रिपाठी, राजातारा, लालगंज, प्रतापगढ़ (४७-२६१ ज)।

इस विवरण से स्पष्ट है कि सबसे प्राचीन लिपिकाल की पुस्तक संख्या १ (०४-२१) है। तदनंतर संख्या ६ सबसे प्राचीन दूसरी प्रति सं० १८७६ लिपिकाल की है (४७-२६१ च)। यह उसी शाखा की है जिसकी पहली सं० १८४१ वाली। क्रम में तीसरी प्राचीन प्रति खोजविभाग की सूचना के अनुसार सातवीं संख्यावाली है। पर इसमें साहित्यान्वेषक को भ्रम हो गया है। गुलशन अहमदी प्रेस प्रतापगढ में जो प्रति छपी वह सन् १८६१ ई० में लीथो में छपी थी अर्थात् संवत् १६४८ में। इस प्रकार वह सबसे बाद की ठहरती है। इसमें स्पष्ट उल्लेख है कि यह सं० १६३३ के हस्तलेख के आधार पर है। इसके अंत में छपा है—

हस्ताक्षर पंडित शंकरदत्त तिवारी साकिन मौजे उदसई। पंडित कबि सन बिन्ती मोरि। टूट अक्षर धाँचब जोरि। श्रीसबत १६३३ आषाढ़पद मासे शुक्लपक्षे १० तिथौ शनिवासरे प्रातःकाल समये समाप्तमिदम्।

इसके नीचे लीथो लिखनेवाले का उल्लेख है—

हस्ताक्षर खैरातअली मास्टर जिला स्कूल प्रतापगढ़, २५।४।६१

इस प्रकार मुद्रण से यह सबसे पीछे की और लिपिकाल से ब्रजराज पुस्तकालयवाली प्रति से पूर्व है।

सं० १६१० वाली प्रति प्रथम संख्या (स० १८४३ वाली प्रति) की ही परंपरा की है। सं० १६११ वाली *भीरा कावराय* की लिखी प्रति *नागरी-प्रचारिणी सभा* के पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसकी शाखा प्रथम संख्या की प्रति और लीथोवाली दोनों से भिन्न है।

सं० १६१६ वाली प्रति के जो उद्धरण दिए गए हैं उनसे यह निर्णय करना कठिन है कि यह किस शाखा की है। पर अनुमान है कि यह भी प्रथम शाखा की ही प्रति होगी। स० १६४२ वाली ब्रजराज पुस्तकालय की प्रति प्रथम शाखा की ही है। ठाकुर महेश्वरबक्स वाली अज्ञात लिपिकाल

की प्रति की शाखा भी यही है। प्रस्तुत ग्रंथावली के *रससारांश* के संपादन के लिए सभी ग्रंथस्वामियों को प्रति या प्रतिलिपि भेजने का अनुग्रह करने के लिए पत्र दिए गए। पर प्रति या प्रतिलिपि भेजना तो दूर रहा किसी ने उत्तर तक नहीं दिया। इसी लिए इस ग्रंथ का संपादन निम्नलिखित चार प्रतियों के आधार पर करना पड़ा—

काशि०—काशिराज के पुस्तकालय की प्रति, लिपिकाल सं० १८४३ (खोज—०४-२१)।

सर०—सरस्वतीभंडार, काशीराज की प्रति, लिपिकाल, सं० १८७१ के आस-पास।

सभा—नागरीप्रचारिणी सभा की प्रति, लिपिकाल सं० १६११ (भीख मनिरायवाली खंडित प्रति) (खोज—२६-६१ जे)।

लीथो—लीथो में गुलशन अहमदी प्रेस, प्रतापगढ़ में सं० १६३३ के हस्तलेख से सं० १६४८ (सन् १८६१ ई०) में मुद्रित (खोज—४७-२६१६)।

यों तो चारो प्रतियों का पाठ यथास्थान भिन्न हो जाता है पर लीथो का पाठ आरंभ की तीन प्रतियों से बहुधा भिन्न है। लीथोवाली प्रति में बहुत सी अशुद्धियाँ तो मुद्रण की हो गई हैं। सर० नामक प्रति के संबंध में यह जान लेना आवश्यक है कि *भिखारीदास* के चारो साहित्यिक ग्रंथ इसमें एक ही जिल्द में संगृहीत हैं। एक ही समय के लिखकों के लिखे हुए हैं। *काव्यनिर्णय* के अंत में लिपिकाल सं० १८७१ दिया गया है। अन्यत्र लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। इसी जिल्द में *छंदार्णव* के अंत में *छंदप्रकाश* भी दिया है जो *छंदार्णव* के छंदों का केवल प्रस्तार बतलाता है।

शृंगारनिर्णय

खोज को इसकी केवल छह प्रतियों का पता है—

१—पूर्ण, लिपिकाल, अनुल्लिखित, प्राप्ति०—काशिराज का पुस्तकालय (खोज, ०३-४६)।

२—खंडित, लिपिकाल १६३६, प्राप्ति०—ब्रजराज पुस्तकालय, सीतापुर (खोज, २३-५५ एच)।

३—पूर्ण, लिपि० अनुल्लिखित; प्राप्ति०—श्री भैया सतनाम सिंह, गुठवारा, बहराइच (खोज, २३-५५ आई)।

४—पूर्ण, लिपि० १८६७, प्राप्ति०—महाराजा लाइब्रेरी, प्रतापगढ (खोज, २६-६१ एल)।

५—पूर्ण, लिपि० १६४७ वि०; प्राप्ति०—श्रीकृष्णविहारीजी मिश्र, माडेल हाउस, लखनऊ (खोज, २६-६१ एम)।

६—पूर्ण, लिपि० अनुल्लिखित; प्राप्ति०—श्रीरामबहादुर सिंह, बढ़वा, प्रतापगढ़ (२६-६१ एन)।

इनमें प्रथम वही है जो काशिराज के पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसमें *भिखारीदास* के सभी साहित्यिक ग्रंथ एक ही समय के एक ही जिल्द में हैं। *शृंगारनिर्णय* में लिपिकाल अनुल्लिखित है, पर *काव्यनिर्णय* में १८७१ दिया गया है। अतः इसका लेखन १८७१ के पहले हुआ होगा। *शृंगारनिर्णय* के अनंतर *काव्यनिर्णय* की प्रतिलिपि की गई है इसलिए इसमें सबसे पहले *रससारांश* है (४८ पन्ना), फिर *शृंगारनिर्णय* (४६ पन्ना), फिर *काव्यनिर्णय* (१७१ पन्ना), फिर *छंदार्णव* (६७ पन्ना) अंत में छंदप्रकाश (५ पन्ना)। इसलिए *रससारांश* और *शृंगारनिर्णय* सं० १८७१ के पूर्व या उसी वर्ष और *छंदार्णव* सं० १८७१ या उस वर्ष के अनंतर १८७२ में लिखा गया होगा। इस प्रकार *रससारांश* के सभी ज्ञात हस्तलेखों से यह प्राचीनतम है। संख्या दो की खंडित प्रति और संख्या ४ की १८६७ वाली प्रति इससे बहुत कुछ मिलती है। संख्या ५ का १६४७ वाला हस्तलेख संख्या ४ से मिलता है। इसलिए यह भी उसी परंपरा का है। संख्या ३ की प्रति, जिसका लिपिकाल अज्ञात है, भारतजीवन प्रेस के छपे संस्करण (सं० १६५६ के आस-पास मुद्रित) से मिलती है। संख्या ६ के उद्धरण खोज में छापे नहीं गए हैं। पर लिखा है कि यह प्रति संख्या ४ वाले हस्तलेख से मिलती है। संवत् १६३३ के हस्तलेख के आधार पर प्रतापगढ़ के गुलशन अहमदी प्रेस से लीथो में सं० १६४८ (सन् १८६१) में मुद्रित संस्करण के पाठों की शाखा दोनों से बहुधा भिन्न है। इसके लिए तीन प्रतियाँ आधार रखी गई हैं—

सर०—सरस्वतीभंडार (काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के पूर्व

लीथो—गुलशन अहमदी प्रेस, प्रतापगढ़ से सन् १८६१ में मुद्रित।

भार०—भारतजीवन प्रेस में सं० १६५६ के लगभग मुद्रित प्रति।

छंदार्णव

खोज से छंदार्णव की आठ प्रतियों का पता लगता है—

१—पूर्ण, लिपिकाल सं० १८७१ के अनंतर; प्राप्ति०—काशिराज का पुस्तकालय। (खोज, ३-३१)।

२—अपूर्ण, लिपि० अज्ञात, प्राप्ति०—श्री भैजनाथ हलवाई, असनी, फतेहपुर (खोज, २०-१७ सी)।

३—पूर्ण, लिपि० सं० १६०४; प्राप्ति०—महाराज भगवानबक्स सिंह, अमेठी, सुलतानपुर (खोज, २३-५५ ए)। *

४—पूर्ण, लिपि० अज्ञात, प्राप्ति०—यादुप्रबक्स सिंह तालुकेदार, लवेदपुर, बहराइच (खोज, २३-५५ बी)।

५—पूर्ण, लिपि०—× ; प्राप्ति०—ठाकुर नौनिहालसिंह सेंगर, काँठा, उन्नाव (खोज, २३-५५ सी)।

६—पूर्ण, लिपि० सं० १८८१; प्राप्ति—श्री यशदत्तलाल कायस्थ, नौबस्त, दातागंज, प्रतापगढ़ (खोज, २६-६१ सी)।

७—पूर्ण, लिपि० सं० १६४२; प्राप्ति०—श्री लक्ष्मीकांत तिवारी रईस, बसुआपुर, लक्ष्मीकांतगंज, प्रतापगढ़ (खोज, २६-६१ डी)।

८—पूर्ण, लिपि० सं० १६०६; प्राप्ति०—श्री आद्याशंकर त्रिपाठी, रुपौली, सरसहा, जौनपुर (खोज, ४७-२६१ घ)।

इनमें प्रथम वही है जो महाराज बनारस के सरस्वतीभंडार पुस्तकालय में *भिखारीदास* की साहित्यिक ग्रंथावली के हस्तलेखोंवाली जिल्द में सुरक्षित है। संख्या ५ वाली प्रति के अतिरिक्त शेष सभी हस्तलेख इसी से मिलते हैं। यह हस्तलेख प्राचीनतम है।

छंदार्णव के संपादन में इसका उपयोग किया गया है। इसका नाम सर० है। इसके अतिरिक्त *छंदार्णव* पहले लीथो पर छपा था। प्रतापगढ़ से *भिखारीदास* के सभी ग्रंथ *शतरंजशतिका* को छोड़कर लीथो में छपे हैं। पर छंदार्णव की प्रतापगढ़वाली लीथो की प्रति प्रयत्न करने पर भी प्राप्त न हो सकी। लीथो की दूसरी प्रति काशी के किसी छापेखाने से छपी थी। इस प्रति का संपादन में उपयोग किया गया है। यह प्रति अनुमान से सं० १६२३ के लगभग छपी होगी। इस प्रति के अंत में इसके शोधन-कर्ता का उल्लेख यों है—

घने दिनन को ग्रंथ यह बिगरयो हतो घनाइ।
ताहि सुधारयो सुद्ध करि दुर्गादत्त चित लाइ॥

---

* *खोज* में इसका लिपिकाल १६१४ माना गया है। पर पुष्पिका में 'बत्सर उनइस सै चतुर वर्तमान संजोग' पाठ है जिससे १६०४ ही संवत् ठीक जान पड़ता है।

आदो जैपुर नगर को अब कासी में वास।
भाषा संस्कृत दुहुन में रासहुँ अति अभ्यास॥
गौड़ द्विजवरा जाहिरो दुर्गादत्त सु नाम।
प्राचीनन के ग्रंथ को साधेहु प्यारा जाम॥

इसी शोधित प्रति को पहले नवलकिशोर प्रेस ने सं० १६३१ में लीथो में मुद्रित किया। फिर उसकी कई आवृत्तियाँ हुईं। सं० १६८५ में नवीं बार मुद्रित प्रति का उपयोग उक्त लीथोवाली इसी प्रेस की प्रति के अतिरिक्त इसके संपादन में किया गया है। इसमें जिस आवृत्ति में हो शोधन कुछ और हुआ। यह शोधन सं० १६५५ के पूर्व हो गया होगा। क्योंकि सं० १६५५ में वेंकटेश्वर प्रेस से जो संस्करण प्रकाशित हुआ है वह नवलकिशोर प्रेस के इस मुद्रित संस्करण से एकदम मिलता है। इस प्रकार *छंदार्णव* के संपादन में इन प्रतियों को उपयोग हुआ है—

सर०—सरस्वतीभंडार वाली प्रति सं० १८७१ के अनंतर लिखित।

लीथो—लीथो में काशी में सं० १६२३ के आसपास छपी प्रति। जयपुर-निवासी गौड़ ब्राह्मण दुर्गादत्त द्वारा शोधित।

नवल १—नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) में लीथो में सं० १६३१ में छपी प्रति।

नवल २—नवलकिशोर प्रेस में स० १६८५ में नवीं बार मुद्रित। पुनः शोधित प्रति।

वेंक०—वेंकटेश्वर प्रेस (मुंबई) में सं० १६५५ में मुद्रित प्रति।

छंदार्णव हिंदी के पुराने पिंगल-ग्रंथों में बहुप्रचलित है। ऐसा व्यवस्थित और विस्तृत पिंगल दूसरा नहीं मिलता। काशिराज के यहाँ जब सं० १८७१ में *भिखारीदास*जी के साहित्यिक ग्रंथों की प्रतिलिपि हो रही थी तब इस पिंगल के प्रस्तार आदि को संक्षेप में समझाने के लिए काशीराज के किसी दरबारी कवि ने *छंदप्रकाश* नाम से इसमें परिशिष्ट जोड़ दिया। खोज (०३-३२) में यह *भिखारीदास* जी का स्वतंत्र ग्रंथ मान लिया गया है। पर इसमें स्पष्ट उल्लेख है—

(दोहा)

गनपति गौरी संभु को पग बंदौं यह जोइ।
जासु अनुग्रह अगम तें सुगम बुध्धि कौं होइ॥ १॥
श्रीमहराजनि मुकुटमनि उदितनरायन भूप।
संभुपुरी कासी सुथल ताको राज अनूप॥ २॥

(सोरठा)

रहत जासु दरबार सात दीप के अवनिपति।
रच्यौ ताहि करतार तिन्ह मधि उदित दिनेस सो ॥ ३ ॥

(दोहा)

रज सत दाया दान मैं रसमै राजित धीर।
जगपालक घालक खलनि, महाराज रनधीर ॥ ४ ॥

(सोरठा)

सुकवि भिखारीदास कियौ ग्रंथ छंदारनौ।
तिन छंदनि को प्रकास भो महराज - पसंद-हित ॥ ५ ॥

इसके अनंतर मात्राछंदों का प्रस्तार है। दो मात्रा से ४६ मात्रा तक। एक मात्रा का कोई छंद नहीं है। प्रत्येक छंद की मात्रा, वृत्ति और छंदसंख्या दी गई है। ३३, ३४, ३५, ३६, ३६, ४१, ४२, ४३ और ४४ मात्रा की छंदसंख्या नहीं है। *छंदार्णव* में जितने छंद आए हैं उन्हीं की संख्या छंदसंख्या में दी गई है। कुल २३३ जोड़ दिया गया है। इसके अनंतर वर्णप्रस्तार दिया गया है—एक वर्ण से ४८ वर्ण तक। ५, २८, २६, ३५, ३७, ३८, ४०, ४१, ४३, ४४, ४६, ४७ की छंदसंख्या नहीं है। वर्णप्रस्तार की छंदसंख्या का जोड़ १२८ है। दोनों का जोड़ ३६१ है।

मात्रा-प्रस्तार वर्णमर्कटी (खोज, ४७-२६१ ड) *छंदार्णव* की तीसरी तरंग मात्र है, कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं।

काव्यनिर्णय

खोज में *काव्यनिर्णय* की ११ प्रतियों का पता चला है—

१—पूर्ण, लिपि० सं० १८७१; प्राप्ति०—काशिराज का पुस्तकालय (खोज, ०२-६१)।

२—पूर्ण, लिपि० सं० १६१६; प्राप्ति०—श्रीरामशंकर, खड़गपुर, गोंडा (खोज, २०-१७ ए)।

३—पूर्ण, लिपि० सं० १६५३; प्राप्ति०—श्रीकन्हैयालाल महापात्र, असनी, फतेहपुर (खोज, २०-१७ बी)।

४—पूर्ण, लिपि० सं० १६०४, प्राप्ति०—महाराज भगवानबक्स सिंह, अमेठी, सुलतानपुर (खोज, २३-५५ डी)।

५—पूर्ण, लिपि० सं० १६०५; प्राप्ति०—राजा लालताबक्स सिंह, नीलगाँव, सीतापुर (खोज, २३–५५ ई)।

६—पूर्ण, लिपि० सं० १८७१; प्राप्ति०—श्रीशिवदत्त वाजपेयी, मोहनलाल गंज, लखनऊ (खोज, २६–६१ ई)।

७—पूर्ण, लिपि० सं० १६२६; प्राप्ति०—कुँवर नरहरदत्त सिंह, सँडीला, मछरहट्टा, सीतापुर (खोज, २६–६१ एफ)।

८—पूर्ण, लिपि० सं० १६३६; प्राप्ति०—श्रीकृष्णविहारी जी मिश्र, माडल हाउस, लखनऊ (खोज, २६–६१ जी)।

६—पूर्ण, लिपि० सं० १६३६; प्राप्ति०—श्रीरामबहादुर सिंह, बदवा, प्रतापगढ़ (खोज, २६–६१ एच)।

१०—पूर्ण, लिपि० अज्ञात; प्राप्ति०—मुंशी भजनबहादुरलाल, प्रतापगढ़ (खोज, २६–६१ आई)।

११—पूर्ण, लिपि० सं० १६३६; प्राप्ति०—श्रीकृष्णविहारीजी मिश्र, ब्रजराज पुस्तकालय, गंधौली, सीतापुर (खोज, ४७-२६१ ज)।

इनमें से ८ और ११ तो एक ही प्रति है। भिन्न-भिन्न समय में उसके विवरण भिन्न-भिन्न स्थानों पर लखनऊ और सीतापुर में लिए गए हैं। संख्या ८ और ६ एक ही मूल प्रति की दो विभिन्न प्रतिलिपियाँ जान पड़ती हैं। ऐसा चलन था कि यदि किसी प्राचीन पुस्तक से प्रतिलिपि की जाती थी तो आधारवाली मूल प्रति का संवत् ज्यों का त्यों दे दिया जाता था, भले ही प्रतिलिपि बाद में हुई हो। यहाँ ऐसी ही संभावना जान पड़ती है। प्रतापगढ़वाली प्रति से ब्रजराज पुस्तकालयवाली प्रति उतारी गई या इसका विपर्यास हुआ इसका निश्चय प्रतियों को देखे बिना नहीं हो सकता। इन सबमें प्रथम प्रति सबसे प्राचीन है।

अलंकार (खोज, ४७–२६१ ख) *काव्यनिर्णय* का आठवाँ उल्लास मात्र है, कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं।

इनके अतिरिक्त खोज (२६–६१ ओ) में *तेरिज काव्यनिर्णय* भी है। यह *काव्यनिर्णय* का सार-संक्षेप है। सार-संक्षेप करने में उदाहरण हटा दिए गए हैं। मूल लक्षण (सिद्धांत मात्र) रखे गए हैं। इसका प्राप्तिस्थान महाराजा लाइब्रेरी प्रतापगढ़ है। लिपिकाल सं० १६१५ है।

तेरिज रससारांश के संबंध में खोज विभाग का विवरण-पत्र यह सूचना देता है—

"यह पुस्तक भिखारीदास (दास) जी के रससारांश नामक पुस्तक की सतिग्रौनी है। मूल दोहे ले लिए गए हैं और बाकी विस्तार छोड़ दिया गया है।"

यही *तेरिज काव्यनिर्णय* के संबंध में भी समझना चाहिए। *तेरिज* या *तेरीज* शब्द का अर्थ कोश में 'लेख्यपत्रसंग्रह, लेखासार' दिया है। अँगरेजी में 'एन ऐब्स्ट्रैक्ट आव् दि डाकुमेंट्स्, ऐन ऐब्स्ट्रैक्ट अफाउट फंडाइल्ट फ्राम अदर डिटेल्ड अकाउंट्स्' दिया है। अन्यत्र 'ऐन ऐब्स्ट्रैक्ट आर् लाग लिस्ट आव् अकाउंट्स् (मिल्सन)'—(देखिए डिक्शनरी आव् दि हिंदुस्तानी लैंग्वेज बाइ फार्ब्स)। मध्यकाल में यह शब्द बहुत चलता था, जैसे तेरीज गोशवारा, जिसवार असामीवार, तेरीज जमाखर्च, तेरीज असामीवार आदि। यह शब्द कैसे बना। नागरीप्रचारिणी सभा का कोश-विभाग इसे तर्ज या *तिराज* (अरबी) से निकालता है जिसका अर्थ ढंग और तहरीर होता है।

प्रश्न होता है कि यह *तेरीज* या सारसंग्रह स्वयम् *भिखारीदास* ने किया या किसी और ने। इन दोनों (*तेरिज रससारांश* और *तेरिज काव्यनिर्णय*) के अभी तक दो ही हस्तलेख मिले हैं। एक एक प्रत्येक का। *तेरिज रससारांश* की पुष्पिका यों है—

इति श्रीरससारांश कै तेरिज संपूर्ण शुभमस्तु सिद्धरस्तु ॥ संवत १८१४॥ मार्गमासे कृष्णपक्षे अमावस्यां सोमवासरे दशपत दुरगा लाल हेतवे भवानीनकस सिंह जीव, समाप्ताः।

'तेरिज काव्यनिर्णय' की पुष्पिका यों है—

"संवत १८१५ दसपत दुरगाप्रसाद कायस्थस्य हेतवे श्रीलाल भवानीवक्स सिंह जीव।"

इन दोनों तेरिजों में कहीं यह नहीं लिखा है कि कौन सार-सकलन कर रहा है। जान पड़ता है कि मुशी *भिखारीदास* ने स्वयम् यह 'सतिग्रौनी' नहीं की है। मुशी दुर्गाप्रसाद ने ही *श्रीलाल भवानीबक्ससिंह* जीव हेतवे यह सार-सकलन किया है। पुष्पिका प्रतिलिपि की नहीं, तेरिज-लिपि के लिए है। उसका *काव्यनिर्णय* के संपादन में विशेष उपयोग नहीं जान पड़ता। *भिखारीदास* के ये दो नए ग्रंथ नहीं हैं।

काव्यनिर्णय के संपादन में जिन प्रतियों का उपयोग किया गया वे ये हैं—

सर०—सरस्वतीभंडार, काशीराजमाला हस्तलेख।

भारत—भारतजीवन प्रेस से सं० १९५६ में प्रथम बार प्रकाशित प्रति।

वेंक०—वेंकटेश्वर प्रेस (मुंबई) से सं० १९८२ में प्रकाशित प्रति।

बेल०—बेलवेडियर प्रेस (प्रयाग) से सं० १९८३ में प्रथम बार प्रकाशित प्रति।

मुद्रित प्रतियों को लेने में विशेष प्रयोजन यह है कि प्रत्येक प्रति में आधारभूत प्राचीन हस्तलेखों के संबंध में महत्त्वपूर्ण उल्लेख है। भारत-जीवन प्रेसवाली पुस्तक की भूमिका में श्रीरामकृष्ण वर्मा लिखते हैं—

"इस ग्रंथ के छापने की अनुमति श्रीयुत अयोध्यापति आनरेब्ल महाराजा प्रतापनारायण सिंह बहादुर के० सी० आई० ई० ने हमको दी और उन्हीं के दर्बार से एक हस्तलिखित प्राचीन कापी भी हमको प्राप्त हुई। दूसरी कापी श्रीमान् राजासाहब राजा राजराजेश्वरी प्रसादसिंह बहादुर सूर्यपुरानरेश ने हमको दी, और इन्हीं दोनों कापियों की सहायता से यह ग्रंथ छपा है।"

वेंकटेश्वर प्रेस वाली प्रति की प्रस्तावना कहती है—

"प्रायः ऐसे प्राचीन कवियों की काव्य प्रकाश करने का साहस इस यंत्रालय ने विद्वज्जनों के अनुरोध से किया है जिसमें अपने प्राचीन कवियों की काव्य लुप्त न हो। इस ग्रंथ को डुमरॉवनिवासी पं० नकछेदी तिवारी जी से व आगरावाले कुँवर उत्तमसिंह जी से शुद्ध कराया है और मुद्रित होते कार्यालय में भी भली भाँति शुद्ध कर प्रकाश किया है।"

बेलवेडियर प्रेस (प्रयाग) की प्रस्तावना में टीकाकार श्रीमहावीर प्रसाद मालवीय 'वीर' लिखते हैं—

"पूर्व में एक बार हमने काव्यनिर्णय की विस्तृत टीका लिखने का प्रयत्न किया था, उस समय वेंकटेश्वर तथा भारतजीवन की मुद्रित प्रतियाँ प्राप्त हुई थीं।··दैवयोग से अयोध्या जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ कविवर लछिरामजी से भेंट हुई। उन्होंने··· काव्यनिर्णय की हस्तलिखित एक पुरानी प्रति प्रदान की।····· उन्होंने (राजा प्रतापबहादुर सिंह ने) प्रतापगढ़ के एक लेथो प्रेस

की छपी काव्यनिर्णय, रससारांश और शृंगारनिर्णय की एक एक प्रतियाँ भेजने की कृपा की।''

प्रतापगढ़ से लीथो में छपी भी एक प्रति है। पर उसका उपयोग नहीं किया जा सका।

× × ×

जिन जिन संस्करणों का उपयोग और जिन जिन हस्तलेखों का प्रयोग किया गया है उन उन के संपादकों और स्वामियों के प्रति मैं विनम्र भाव से कृतज्ञता-ज्ञापन करता हूँ। तत्रभवान् काशिराज महाराज श्रीविभूतिनारायण सिंह जी के प्रति विशेष कृतज्ञ हूँ जिनके सरस्वतीभंडार से श्रीभिखारीदास के ग्रंथों के सर्वाधिक प्राचीन हस्तलेख यथावंछित समय के लिए प्राप्त हो सके। इसके प्रस्तुत करने में कार्यगत सहायता पहुँचानेवालों में प्रमुख रूप से उल्लेख्य ये भविष्णु व्यक्ति हैं—आकर-ग्रंथमाला के संपादक-सहायक श्रीभुवनेश्वर गौड़ जिन्होंने अनुक्रमणिका, प्रतीकसूची, शब्दसूची प्रस्तुत की, संपादन-सहायक श्रीरामादास जिन्होंने आदि से अंत तक पाठांतर मिलाए तथा सर्वश्री विष्णुस्वरूप, उदयशंकर सिंह, प्रेमचद्र मिश्र, कृष्णकुमार वाजपेयी जो समय समय पर पाठांतर, प्रतिलिपि, अपेक्षित ग्रंथ-संकलन एवम् सामग्री-संग्रहार्थ यात्रा में योगदान करते रहे।

अंत में अपने साकेतवासी गुरुदेव लाला भगवानदीनजी को प्रणतिपुरस्सर वारंवार स्मरण करता हूँ जिनका अमोघ आशीर्वाद पाकर मैं प्राचीन काव्यों में अभिनिवेश प्राप्त कर सका और जो श्रीभिखारीदास के अवतार ही माने जाते थे।

वाणी वितान भवन
ब्रह्मनाल, बनारस-१
मकर संक्रांति, २०१२ वि० } विश्वनाथप्रसाद मिश्र

अनुक्रमणिका

रससारांश

(१ से ८५)

शृंगारनिर्णय

(८७ से १६१)

छंदार्णव

(१६३ से २७५)

संकेत

रससारांश

काशि०—काशिराज के पुस्तकालय का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८४३।

सर०—सरस्वती-भंडार (रामनगर, काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के पूर्व।

सभा—नागरीप्रचारिणी सभा (काशी) के आर्यभाषा-पुस्तकालय का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १९११।

लीथो—लीथो में गुलशन अहमदी प्रेस (प्रतापगढ़) में संवत् १९३३ के हस्तलेख से सं० १९४८ में मुद्रित।

सर्वत्र—उपरिलिखित सभी प्रतियाँ।

शृंगारनिर्णय

सर०—सरस्वती-भंडार (रामनगर, काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के पूर्व।

लीथो—लीथो में गुलशन अहमदी प्रेस (प्रतापगढ़) में सं० १९३३ के हस्तलेख से सं० १९४८ में मुद्रित।

भार०—भारतजीवन प्रेस (बनारस) में मुद्रित, सं० १९५६ के आसपास।

छंदार्णव

सर०—सरस्वती-भंडार (रामनगर, काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के अनंतर।

लीथो—लीथो में सं० १९२३ के आसपास काशी में मुद्रित।

नवल १—नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) में लीथो में सं० १९३१ में मुद्रित।

नवल २—नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) में सं० १९८५ में नवीं बार मुद्रित, संशोधित संस्करण।

नवल०—नवल १ और नवल २ ।
वेंक०—वेंकटेश्वर प्रेस (मुंबई) में सं० १६५५ में मुद्रित ।
वही—पूर्वगामी संकेत ।

चिह्न

+—हस्तलेख में संशोधित पाठ ।
÷—हस्तलेख का मूल पाठ ।
×—हस्तलेख में अभावसूचक ।
'—अक्षरलोप-सूचक ।
०—शब्दलोपन-सूचक ।
[ ]—प्रस्तावित ।
\ —लघु-उच्चारण-सूचक ।
[illegible]

संपादकीय

हिंदी साहित्य का अन्य भारतीय साहित्यों में सबसे अधिक महत्त्व उसके प्राचीन आकर (क्लैसिकल) ग्रंथों के कारण है। हिंदी-साहित्य के मध्य-काल में इतने प्रचुर आकर ग्रंथों का प्रणयन हुआ जितने अन्य किसी साहित्य में, यहाँ तक कि संस्कृत में भी, नहीं प्रणीत हुए। इनका बहुलांश अद्यावधि हस्तलिखित रूप में ही पड़ा है। आधुनिक मुद्रण-कला के चलन-प्रचलन के साथ ही इन्हें छापकर व्यावसायिक दृष्टि से प्रकाशित करने की प्रवृत्ति जगी। पहले प्रस्तर छाप में कई छापेखानों ने इनमें से कुछ को छापा। फिर मुद्रायंत्रों का प्रसरण होने पर उनमें भी प्राय उसी दृष्टि से इनमें से कतिपय का मुद्रण हुआ। अधिक संख्या में ऐसे ग्रंथ छापनेवालों में प्रमुख लाइट, भारतजीवन, वेंकटेश्वर, नवलकिशोर, नगवासी आदि छापे-खाने रहे हैं। प्रस्तर-छाप का प्रसार तो जिलों तक में हो गया था। भिखारीदास के प्रायः सभी ग्रंथ सबसे पहले प्रतापगढ के गुलशन अहमदी छापेखाने में छपे। इन छापघरों में छपे इन ग्रंथों के प्रकाशन में उनको सुलभ बनाने की लालसा ही प्रबल थी। कोई सुनिश्चित योजना उन्हें छापते हुए और संपादन की कोई सुव्यवस्था उन्हें प्रस्तुत करते हुए दृष्टिपथ में नहीं रखी गई। उस समय हस्तलेखों की उपलब्धि और एक ही ग्रंथ के अनेक हस्तलेखों की उपलब्धि भी दुरूह एवम् दुस्साध्य थी। पर ग्रंथों के महत्त्व का कुछ भी ध्यान न रखा जाता रहा हो सो नहीं या संपादन कराया ही न जाता रहा हो, वह भी नहीं। परंपरा से जिन कवियों की या ग्रंथों की सुख्याति थी उन्हीं की ओर विशेष ध्यान दिया गया। संपादन बहुधा संस्कृत के पंडित किया करते थे, जो 'वे दरद' को 'वेद-रद' समझ लेते, जिसका पता पार्श्वस्थ छपी टिप्पनी से चलता है। फिर भी तत्कालिक उस कार्य के लिए हम उनके अत्यंत कृतज्ञ हैं। जितने प्राचीन ग्रंथों का उस समय मुद्रण प्रकाशन हुआ उसका शतांश भी आज हम वैविध्य की दृष्टि से मुद्रित प्रकाशित नहीं कर पा रहे हैं। उनकी दी हुई नींव पर अधिकतर हमारे नए भवन खड़े होते आ रहे हैं।

लाइट प्रेस और भारतजीवन के संस्करण अपेक्षाकृत अच्छे माने जाते रहे हैं। पर उनमें शब्द अर्थ के साहित्य के बदले केवल शब्द पर अधिक ध्यान दिया जाता था। काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने प्राचीन ग्रंथमाला के अंतर्गत जब से ऐसे ग्रंथों के प्रकाशन का सूत्रपात किया तब से शब्द के साथ साथ अर्थ का भी कुछ ध्यान रखा जाने लगा। फिर तो तुलसीदास, सूरदास और मलिक मुहम्मद जायसी की ग्रंथावलियों के प्रकाशन द्वारा शब्दार्थ के साहित्य पर बहुत कुछ ध्यान देकर सभा ने प्राचीन ग्रंथों के संपादन का परिनिष्ठित समारंभ कर दिया। इसके अनंतर प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन की निश्चित योजना की ओर भी ध्यान दिया गया। नागरीप्रचारिणी सभा का, साथ ही व्यावसायिक प्रकाशनों में से भी किसी किसी का, ध्यान इधर गया। गंगा पुस्तकमाला ने भी प्राचीन काव्यों के संपादित संस्करण निश्चित योजना के अंतर्गत प्रकाशित करने का विज्ञापन किया था। कुछ ग्रंथ प्रकाशित भी किए। पर पूरी योजना न सभा में कार्यान्वित हो सकी, न अन्यत्र।

हिंदी के प्राचीन ग्रंथों के सुसंपादित संस्करण प्रकाशित करने का सुअवसर आए आए तब तक प्राचीन ग्रंथों के पाठशोध के संबंध में वैज्ञानिक विधि का प्रवाह चल पड़ा। संस्कृत के महाभारत और वाल्मीकीय रामायण के वैज्ञानिक संस्करणों के संपादन प्रकाशन का महाप्रयास हिंदीवालों के सामने आदर्श रूप में आया। इससे अनेक और प्रामाणिक हस्तलेखों के आधार पर प्राचीन ग्रंथों के संपादन की ओर हिंदीवालों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ। शब्द पर अधिक और अर्थानुसंधान पर अपेक्षाकृत कम ध्यान देते हुए कुछ प्रयास हुए, जिनसे हिंदी-साहित्य में प्राचीन काव्य के पाठशोध और संपादन के क्षेत्र में जागरूकता एवम् जागर्ति के दर्शन होने लगे। इस क्षेत्र में कार्य करनेवाले विद्वान् उँगलियों पर गिने जा सकते हैं, सबकी तो चरचा ही क्या, अधिकतर साहित्यज्ञों की अभिरुचि प्राचीन ग्रंथों के संपादन की ओर नहीं है। साहित्यिकों की नई पीढ़ी कारयित्री प्रतिभा को अधिक उभार रही है और उससे छुट्टी पाती है तो आलोचना-रस में जा डूबती है। प्राचीन ग्रंथों का अनुशीलन, संपादन आदि अधिकतर पुरानी पीढ़ी के ही मत्थे मढ दिया गया है। पुराना काम पुराने करें नया काम नए। चँटवारा ठीक प्रतीत होता है। उधर प्राचीन ग्रंथों के पाठशोध में परिश्रम अधिक है और प्राप्ति थोड़ी। पहाड़ खोदकर चुहिया पानी है। न यश ही अधिक और न अर्थोपलब्धि ही पुष्कल। संतोष यही है कि कुछ सज्जन इस

प्रकार के संकट झेलकर भी इसमें संलग्न हैं। ग्रंथों के प्रस्तुत करने में व्ययाधिक्य के कारण उनका मूल्य हिंदी-साहित्य-सेवी की गाँठ से अधिक रखना पड़ता है। अतः इनका प्रचार-प्रसार भी अपेक्षित-वांछित नहीं हो पाता।

नागरीप्रचारिणी सभा में आकर-ग्रंथमाला की स्थापना और उसके लिए सरकारी अनुदान की स्वीकृति से प्राचीन ग्रंथों की ऐसी सुनिश्चित योजना कार्यान्वित करने और उनके सुसंपादित संस्करण छापने का सुयोग प्राप्त हुआ। सभा ने इसकी व्यवस्था का कार्य मुझे सौंपा, पर तब जब प्राचीन ग्रंथों के चक्कर में मैं उत्तमाग में से नेत्र की ज्योति मंद कर चुका और शरीर का बंध भाराधिक्य से झुककर ढीला हो चला। प्राचीन ग्रंथ के पाठशोध में श्रम-परिश्रम क्या महाश्रम करना पड़ता है। सबसे अधिक भार सुकोमल नेत्रों पर आता है। फिर भी प्रसन्नता है कि आकर-ग्रंथमाला की आयोजना में मेरे नए पुराने सभी मित्रों ने और नई-पुरानी दोनों ही पीढ़ियों ने योगदान द्वारा सहारे का हाथ बढ़ाया है। ग्रंथमाला में कम से कम १०८ और सुमेरु-सहित १०९ गुरियों को पिरोना है जिनमें से लगभग एक चौथाई गुरियों को साफ-सुथरी करने और वेधकर पिरोने योग्य बना देने का कार्य संपादक मित्रों ने स्वीकार कर लिया है, इसके लिए उनका उपकृत हूँ। शरीर की शिथिलता नवोन्मेष में परिणत हो गई है।

पर नेत्रज्योति के लिए अभी तक कोई ठीक अवलंब नहीं मिल पा रहा है। इस गद्य-युग में गद्य के ग्रंथ इतने अधिक छपे कि नागरी के कार्यकर्ता उन्हीं के अभ्यासी हो गए। पद्य ग्रंथों में आधुनिक कवियों की रचना से ही कुछ सरोकार रखते हैं। फल यह हुआ कि प्राचीन काव्य के वैज्ञानिक और समीक्षात्मक संस्करणों के मुद्रण और अक्षरशोधन की दृष्टि ही नागरी के मुद्रकों और प्रूफशोधकों ने नहीं पाई। जहाँ 'आधी न' होना चाहिए वहाँ वे 'आधीन' के अधीन हो जाते हैं। 'जोति हारी' चाहता हूँ तो जोति को अँधेरे में टालकर 'जा तिहारी' समझते हैं। 'नासा हरत' को 'नासा हरत' करके रुलाते हैं। उनकी नाक हरती है, संपादक की हर जाती है। जो प्रतीक-सूची और शब्दसूची में 'अ अ.' को बारहखड़ी के नियत ग्यारहवें बारहवें स्थान पर रखना ही ठीक समझते हों, जिनमें 'च ग ज' को 'श ष स ह' के अनंतर ही स्थापित करने का पांडित्य हो, जो 'आकर' का अर्थ 'आकार' करते हों, जिन्हें 'शताब्दी' को 'शताब्दि', 'पउ' को 'पउम'

लिखने-छपाने का महावरा पड़ गया हो तथा जो 'हन' और 'हँस'
अद्वैत साधते हों, जो 'गौरी' और 'गोरी' में शक्तिभेद न करते हों, 'हो
को 'हो रहा' कर देते हों एवम् जो 'प्रतिष्ठान' को 'प्रतिष्ठा' का
समझते हों उन्हें संपादक की प्रतिष्ठा की क्या चिंता। ऐसे साथी सह
प्राचीन पाठशोध में कैसे खट-खप सकते हैं जहाँ चंद्रबिंदु के प्रयोग का
'ए, ओ' के लघु उच्चारणों को चिह्नों द्वारा प्रकट करने का हठ संपा
लिए बैठा हो। इसी से संपादक को ही आरंभिक से लेकर अंतिम अ
शोधन तक का सारा काम करना पड़ा, आँखों पर क्या बीती इसे होन
ही बता सकेगी। पाठसंकलन का जैसा कार्य पूना आदि में हो रहा है उ
परिकल्पना के लिए सरस्वती की ही नहीं लक्ष्मी के आवाहन की भी आ
है। आकर से रत्न खोदकर निकालने में श्रमिकों के पारिश्रमिक की म
आवश्यकता है। जहाँ थैली खुलनी चाहिए वहाँ गाँठ खोलने में भी सके
भीति हो तो सरस्वती का लाल क्या करे। जब आँखों के आगे काला ध
दिखता हो और कोई लाल सहायता का हाथ न बढ़ाता हो तब भी नेत्र
स्वास्थ्य की बाजी लगाकर सारा कार्य किसी प्रकार सुसपन्न करने-कराने
संपादक ने व्रत ले रखा है। संपादक मित्रों के सहयोग का ही भरोसा
नई पीढ़ी में भी पूर्ण उमंग जगेगी ऐसा विश्वास है।

जो योजना प्रस्तुत हुई है उसके अनुसार ऐतिहासिक क्रम से प्रका
करना कठिन है। इसलिए जिस क्रम से ग्रंथ प्रस्तुत होते जायँगे उसी
से उनका प्रकाशन होता रहेगा। आरंभ में उन कवियों की ग्रंथावलियों के
प्रस्तुत करने का प्रयास है जिनके ग्रंथों की साहित्यानुशीलन में परमावश्यक
है पर जिनके ग्रंथ या तो अभी अप्रकाशित हैं या यदि कभी प्रकाशित
हो चुके हों तो अधुना अप्राप्य हैं। प्रत्यक खंड लगभग ३०० पृष्ठों का र
जाएगा। संधान अनुसंधान के सुभीते के लिए पद्यों की प्रतीक-सूची अ
प्रयुक्त शब्दों के अर्थों का 'अभिधान' भी दिया जाएगा। हिंदी-साहित्य
अध्ययन की ओर अहिंदी भाषी भी अग्रसर हैं और जो अर्थ की कठिनाई
कारण अग्रसर नहीं हो पा रहे हैं उन सबके लाभार्थ शब्दार्थ की योज
विस्तार से करनी पड़ी। कोश कार्य की सरलता सुगमता के लिए शब्दा
सूची ग्रंथ के अंत में तथा पद्य-संख्या के निर्देशपूर्वक दी जाएगी। प्रत्यक
का मूल्य कम से कम होगा। यदि इससे प्राचीन हिंदी साहित्य के पठ
पाठन, अनुशीलन-संपादन, संग्रह-संकलन की प्रवृत्ति संवर्द्धित हुई तो
अपना अहोभाग्य समझूँगा।

भिखारीदास रीतिकाल के आचार्यों में प्रमुख हैं अपनी मौलिक संयोजना के कारण। इनके ग्रंथ पहले मुद्रित अवश्य हो चुके हैं पर बहुत दिनों से अप्राप्य हैं। दो खंडों में यह ग्रंथावली निकल रही है। प्रथम खंड में रससारांश, शृंगारनिर्णय और छंदार्णव तीन ग्रंथ हैं। दूसरे खंड में अकेला काव्यनिर्णय है। इनके अन्य ग्रंथ भी हैं पर उनका साहित्यिक महत्त्व और उनमें मौलिकता का तत्त्व इन ग्रंथों का समानशील नहीं है, इससे वे इसमें संमिलित नहीं किए गए।

भिखारीदास-ग्रंथावली के 'अभिधान' की अर्थयोजना में सहायता पहुँचानेवाले इतने नवयुवक धन्यवादार्ह-आशीर्वादार्ह हैं—सर्वश्री चंद्रशेखर शुक्ल (बृहत् कोशविभाग), श्यामनारायण तिवारी 'श्याम' (संक्षिप्त कोशविभाग), रामवली पांडेय (आकर-ग्रंथमाला के वर्तमान संपादक-सहायक)।

वाणी-वितान भवन
ब्रह्मनाल, वाराणसी-१
शारदीय नवरात्र,
सं० २०१३ वि०

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
संपादक
आकर-ग्रंथमाला

भिखारीदास

(ग्रंथावली)

प्रथम खंड

रससारांश

रससारांश

(दोहा)

प्रथम मंगलाचरन को तीनि आतमक जानि।
नमस्कार अरु ध्यान पुनि आसिरवाद बखानि ॥ १ ॥

नमस्कारात्मक मंगलाचरण, यथा

कदन अनेकन विघन को एकरदन गनराउ।
वंदनजुत वंदन करौं पुष्कर पुष्करपाउ ॥ २ ॥

ध्यानात्मक मंगलाचरण, यथा (छप्पय)

बक्रतुंड कुंडलितसुंड नगबलित पांडुरद।
अलिधुमंड-मंडलित दानमंडित सुगंधमद।
धाहुदंड उद्दंड दुष्टखुंडनि अमुंडकर।
विघ्नखंड कर खंड ओज सत-मारतंड-वर।
श्रीखंडपरसुनंदन सुखद 'दास' चंड चंडीतनय।
अभिलाष लाख लाहन समुझि राखु आखुवाहन हृदय ॥ ३ ॥

आशीर्वादात्मक मंगलाचरण, यथा (सोरठा)

करौ चंद-अवतंस, मो मन कौं अगमौ सुगम।
काढ़ौं 'रससारांस' सुमति-मथानी मथनु करि ॥ ४ ॥

वस्तुनिर्देश-कथन (दोहा)

जान्यो चहै जु थोरेही रस-कबित्त को बंस।
तिन्ह रसिकन्ह के हेतु यह कीन्ह्यो रससारंस ॥ ५ ॥

(सोरठा)

बानो लता अनूप, काव्य-अमृतरस-फल फली।
प्रगट करै कबिभूप, स्वादवेत्ता रसिकजन ॥ ६ ॥

---

[३] कुंडलित०—कुंडलि भसुंड (सर०)। दान-गंड (काशि०)।
[५] जान्यो०—चाहत जानि जु (लीथो)।
[६] रस०—फल रस फल्यो (लीथो)।

(दोहा)

अधर-मधुरता, कठिनता-कुच, तीक्षनता-त्यौर।
रस-कवित्त-परिपकता जानै रसिक न और ॥ ७ ॥
रसिक कहावैं ते जिन्हैं रस-बातन तें हेत।
रस बातें ताकों कहत जो रसिकनि सुख देत ॥ ८ ॥

नवरस-नाम-कथन

नवरस प्रथम सिंगार पुनि हास करुन अरु वीर।
अद्भुत रुद्र बिभत्स भय सांत सुनौ कवि धीर ॥ ९ ॥

रस को विभाव-अनुभाव-स्थायीभाव-कथन

जासों रस उत्पन्न है सो विभाव उर आनि।
आलंबन-उद्दीपनौ सो द्वै विधि पहिचानि ॥१०॥
कहूँ क्रिया कहुँ बचन तें कहूँ चेष्टा देखि।
जी की गति जानी परै सो अनुभाव बिसेखि ॥११॥
एक एक प्रतिरसन में उपजै हिये बिकार।
ताको थाई नाम है बरनत बुद्धिउदार ॥१२॥

अथ शृंगाररस-लक्षण

बरनि नायिका - नायकहि दरसालंबन - नीति।
सोई रस सृंगार है ताको थाई प्रीति ॥१३॥

अथ शृंगाररस-आलंबन-विभाव को उदाहरण

राधा राधारमन को रस सिंगार में अंग।
उन्ह पर वारौं कोटि रति उन्ह पर कोटि अनंग ॥१४॥

आलंबन-विभाव-नायिका-लक्षण

सुंदरता बरननु तरनि सुमति नायिका सोइ।
सोभा कांति सुदीप्ति जुत बरनत हैं सब कोइ ॥१५॥

शोभा-कांति-सुदीप्ति को लक्षण

सोभा रूप 'रु साहिबी झलक निमलता कांति।
दीपति उजियारी अपर अधिकारी बहु भाँति ॥१६॥

[८] बेचा–बेदता (काशि०, सर०, लीथो)। तें–सों (काशि०, सर०)।

शोभा को उदाहरण (कवित्त)

कमला सी चेरी हैं घनेरी बैठीं आसपास
विमला सी आगे दरपन दरसावती।
चित्ररेखा मेनका सी चमर डोलावैं
लिये अंक उरवसी ऐसी बीरन रधावती।
रति ऐसी रंभा सी सची सी मिलि ताल भर
मंजु सुर मंजुघोपा ऐसी ढिग गावती।
मध्य छवि न्यारी प्यारी विलसे प्रजंक पर
भारती निहारि हारी उपमा न पावती ॥ १७॥

कांति को उदाहरण (दोहा)

रूपो पावत कनक-दुति कनक प्रभा मिलि जाइ।
मुकुननि कौं तिय तनु करै मनि कपूर के भाइ ॥१८॥
कीन्हो अमल सुदेस तन अतन नृपति अति धीर।
दुहुँ दिसि द्वै द्वै लरि परैं करन-सँजोगी बीर ॥१९॥

दीप्ति को उदाहरण

पहिरि विमल भूपन वसन बैठी थाल प्रजंक।
मानो उड़गन जोन्हजुत आयो अवनि मयंक ॥२०॥

नायिकाभेद-कथन

सुकिया परकीया अपर गनिका धर्मनि जानि।
पतिव्रता लज्जा सुकृत सील सुकीया वानि ॥२१॥

स्वकीया, यथा

मनसा वाचा कर्मना करि कान्हर सौं प्रीति।
पारवती-सीता सती-रीति लई तूँ जीति ॥२२॥
सील सुधाई सुघराई सुभ गुन सकुच सनेह।
सुवरन-वरनि सुहाग सौं सनी वनी तुत्र देह ॥२३॥

---

[१७] दरपन–है दर्पन (सर०)।

[१८] मिलि–मिटि (सर०) । जाइ–जात (लीथो) । भाइ–भाँत (वही)।

[२१] पति०–पतिव्रत लज्जा सुकृत गुन (सर०) ।

मुग्धादिभेद

होत बहिक्रम भेद तें जिती नायिका मित्त।
लक्षन सब क्रम तें कहौं लखि सुनौ दै चित्त ॥२४॥

मुग्धाभेदयुक्त मध्या-प्रौढ़ा के लक्षण (सवैया)

जोबन-आगम मुग्ध वही बिन जानें अज्ञात प्रभापट ओढ़ै।
जानि परै सु है जोबना ज्ञात नवोढ़ डरै पिय-संग न पोढ़ै।
थोरेऊ प्रीतम सों जो पत्याइ कहैं कवि ताहि बिस्रब्धनवोढ़ै।
मध्यहि लाज मनोज बराबरि प्रीतम-प्रीति-प्रबीन सो प्रोढ़ै ॥२५॥

मुग्धा, यथा (दोहा)

जितन चह्यो उरजनि अचल, कटि कटि-केहरि बेस।
श्रुति-परसन तिय-दृग चले छवा-छुवन कों केस ॥२६॥

(कवित्त)

कहा जौ न जान्यो जात अंकुर उरोजनि को
बंकुर न मान्यो जात लोचन बिसाल को।
परिवा-ससी लौं वै सुभागिनि लखी मैं आजु
कालिह घढ़ि दरसैहै रूप-बिधु बाल को।
हास के बिलास अलि आँगी पहिरत सोई
संभवत तनि जैसो तंबू ततकाल को।
करियै बधायो लाल सैसव सिधायो आयो
बाल-तन पेसखेमा मैन-महिपाल को ॥ २७ ॥
उरज उलाकनिहूँ आगम जनायो आनि
बसन सँभारिबे की तऊ न तलास सी।
गति की चपलता दई है 'दास' नैननि कों
तऊ न तजत पग लीन्हे बह आस सी।

---

[२४] सब-कहि (सर०)। दै-धरि (काशि०)। [२५] डरै-ररै (काशि०)। [२७] कहा-कही (काशि०)। करियै-करियो (सर०)। पेसखेमा-पेसखान (काशि०)। [२८] चपलता०-चपलताई भई (काशि०, सर०)।

चाहतैं सलाह करि नेवाती नितंब अब
लूट्यो लंक-पुर चढ़ि चढ़ि तजि त्रास सी।
सब तन जोबन अमीर की दुहाई फिरी
रही लरिकाई अड़ि अचल मवास सी ॥ २८ ॥

(दोहा)

भगी चपलता मंद गति लगी पगन में जाइ।
हतन बालपन को कियो अतन बाल-तन आइ ॥ २९ ॥

अज्ञातयौवना, यथा

खेलति कित करि चेत चित बिगलित बसन सँभारु।
उरजनि कन्यो उभारु अब उर जनि करै उघारु ॥ ३० ॥
सखियाँ कहँ सु साँच है लगत कान्ह की डीठि।
कालि जु मो तन तकि रह्यो उभन्यो आजु सो ईठि ॥ ३१ ॥

ज्ञातयौवना, यथा

करि चंदन की खौरि दै बंदन बँदी भाल।
दरपन री दिन द्वैक तैं दरपन देखति बाल ॥ ३२ ॥

(सवैया)

कान सौं लागी बतान कछू हँसि लेन लगी मन मीठी जुबान सौं।
धान सौं मान्यो मनोज अबै कहि आवत नेक उरोज-उठान सौं।
ठान सौं लागी चलै दुति दूनी बढ़ी सुख की सुषमा सरसान सौं।
सान सौं डीठि चलै लगी जोरि दोऊ दृग कोर गई मिलि कान सौं ॥३३॥

नवोढ़ा, यथा (दोहा)

स्याम-संक पंकजमुखी चकै निरखि निसि-रंग।
चौंकि भजै निज छाँह तकि तजै न गुरजन-संग ॥ ३४ ॥

---

[२९] हतन–हनन (लीथो)।
[३०] कन्यो–कियो (सर०)।
[३१] सखियाँ०–सखिजन कहत (काशि०)।
[३२] दरपन भरी–दरप भरी (काशि०, लीथो)।
[३४] चकै–जकै (काशि०)।

विश्रब्धनवोढा, यथा

डरत डरत सौंहैं भई सों सों सौंहैं रात।
फिरी सुमन धरि ढिग, सु मन धरी न पिय की बात ॥ ३५ ॥
चितवति रजनि सलाम करि करि करि कोटि क्लाम।
सुनत सौगुनो सुरत तें सुख पावत सुखधाम ॥ ३६ ॥

मध्या, यथा

जदपि करत रतिराज तेहि निदरि निदरि सब काज।
तदपि रहत तिय के हिये किये निलजई लाज ॥ ३७ ॥
तिय-हिय सही दुटूक है तुम्हैं चाहि सुखधाम।
रही एक में लाज भरि दूजे में भरि काम ॥ ३८ ॥

प्रौढ़ा, यथा

मुख सों मुख, उर सों उरज पिय-गातनि सों गात।
तज्यो न भावति भाव विहि आवत भयो विभात ॥ ३९ ॥

मुग्धा-मध्या-प्रौढ़ा के लक्षण, सब ठौर को साधारण

मुग्धा दुहुँ वयसधि मिलि मध्या जोबन पूर।
प्रौढा सिगरी जानई प्रीति - भाव - दस्तूर ॥ ४० ॥
मध्या-प्रौढ़ा-भेद यहु सो नहि कह्यौं निसेरि।
छवि रति में अनुभाव मैं चर भावन में टेरि ॥ ४१ ॥

---

[३५] न पिय–नायिका (सर०) ।
[३६] चितवति–चितवति (काशि०, लीथो) ।
[३७] तेहि–ते (काशि०+) ।
[३८] रही–रहेच (लीथो) ।
[३९] इसके अनंतर काशि० में यह दोहा अधिक है—
ए करकस गड़ि जात हैं मिलत स्याम मृदु गात।
यों बिचारि वर नारि को उर भूषन न सुहात ॥
[४०] मिलि-भय (काशि०) । दस्तूर–दस्तूर (सर०) । चर–वर (काशि०, लीथो) ।

प्रगल्भवचना-लक्षण

जो नायक सों रस लिये मध्या बोलै बोल।
प्रगलभवचना कहत हैं तासों सुमति अमोल ॥ ४२ ॥
दृढ़ हूजै छूजै न तन पूजैगो चित चाइ।
ढिग सजनी रजनी न गत वजनी वजनी पाइ ॥ ४३ ॥
सदन सदन जन के रहे मदन मदन के माति।
लाज छाड़ि आए कहूँ दिनहूँ परति न सोंति ॥ ४४ ॥

धीरादिभेद

मानभेद तें तीनि विधि मध्या प्रौढ़ा मानि।
धीरा और अधीर पिय धीराधीरा जानि ॥ ४५ ॥

मध्या-धीरादि-लक्षण

व्यंगि वचन धीरा कहै प्रगट रिसाइ अधीर।
तीजी मध्या दुहुँ मिलित बोलै ह्वै दलगीर ॥४६॥

मध्या-धीरा, यथा

हम तुम तन ह्वै प्रान इक आज फुल्यो बलबीर।
लाग्यो हिय नख रावरे मेरे हिय में पीर ॥४७॥

---

[४४] के–सों (सर०)। छाड़ि–धरे (काशि०)। परत–परी (वही)।
[४७] इसके अनंतर काशि० और सर० में यह कवित्त अधिक है—
तैं जो हिय निरखि सनरस अनुमान्यो सो हौं
निरखत लीन्हो है अनरस अनुमानियै।
तोहि अरसीली से हैं जग में रसीले गात
ए हैं सीलसदन असील जिय जानियै।
बाहर हो निरगुन माल दरसावै हिय
अंतर सगुन जो गुनिन में बखानियै।
आली तूँ कहति है सुरग दृग प्यारे के
सु आले हैं सुरग अवलोकि उर आनियै ॥
लाग्यो०–जागत ये (सर०)।

मध्या-अधीरा, यथा (सवैया)

सोहैं महाउर को रँग भाल मैं लाल विलोचन रूप छकोहैं ।
को है चढ़ावत पँच ढिलौहैं इराहू के दाग न होत लजौहैं ।
जो है कछू अँग मैं रँग औ ढँग सो सब याही के प्रेम पगोहैं ।
गोहैं ये रावरी जी को जलाइयो सो हैं भुलाइनो आइयो सौहैं ॥४८॥

मध्या-धीराधीर, यथा (दोहा)

हौं अपनो तन मन दियो जाके हित बृजनाथ ।
सो हीरो तुम सँति ही दियो सौंति के हाथ ॥४९॥

प्रौढ़ा-धीरादि-लक्षण

एक दुरावै कोर कौं एक उरहनै देइ ।
प्रौढ़ा धीराधीर तिय दूनो लक्षन लेइ ॥५०॥

प्रौढ़ा-धीरा, यथा

याही तें जिय जानि गो मान हिये को लाल ।
अरसीली ढीली मिलनि मिली रसीली बाल ॥ ५१ ॥

प्रौढ़ा-अधीरा, यथा

ग्वाल बाल के सँग जगे भए लाल-दृग लाल ।
ऐगुन बूझि हनो सखी करि दृग लाल मृनाल ॥ ५२ ॥
सुमन चलावनि मानिनी सखी कहति जदुराइ ।
ओट रही मृदु गात मैं चोट न कहूँ लगि जाइ ॥ ५३ ॥

प्रौढ़ा-धीराधीर, यथा

अंकु भरै आदर करै धरै अरोप-निधान ।
लोयन कोयन लाल पै प्रगटे गोप मान ॥ ५४ ॥

---

[४८] को०--चागर (सर०) ।
[४९] हीरो--हमरो (काशि० +) ।
[५२] दृग लाल--दृग अरुन (सर०) ।

अपरं च

प्रौढा धीराधीर ज्यौं मध्या धीरा मानि।
देख्यो कवित-बिचार में प्रगट ब्यंगि रचनानि ॥ ५५ ॥

यथा

प्रानप्रिया ही कर जु दै रतन लै आए भाल।
ठयो नयो व्यौहार यह राजराज ब्रजपाल ॥ ५६ ॥

अथ ज्येष्ठा-कनिष्ठा-लक्षण

जाहि करै पिय प्यार अति ताही ज्येष्ठा जानि।
जापर कछु घटि प्रेम है ताहि कनिष्ठा मानि ॥ ५७ ॥

यथा

हासी-मिसु धर बाल के दृग मूदे दुहुँ हाथ।
सैननि मैं बातैं करै स्याम सलोनी साथ ॥ ५८ ॥

अथ परकीया-लक्षण

परनायक अनुराग चित परकीया सो लेखि।
चीन्हि चतुर बात किया दृष्टिचेष्टा देखि ॥ ५९ ॥

दृष्टिचेष्टा की परकीया, यथा

तुरत चतुरता करत अलि गुरजन-संग लखै न।
परसि जात हरि-गात है सरसि जात तिय-नैन ॥ ६० ॥

असाध्या-परकीया-लक्षण

जार मिलन सों बचि रहै ताहि कहत कवि लोइ।
कोऊ असाध्या परकिया अधम सुकीया कोइ ॥ ६१ ॥

---

[५५] कवित–चित्त (लीथो)।
[५६] भाल–लाल (सर०)।
[५७] घटि०–अति प्रेम नहिँ (लीथो) घटि प्रीति है (सर०) ।
[५९] चित–तिय (लीथो)।
[६०] अलि–अति (लीथो)।

भेद

गुरुजनभीता दूतिका - वर्जित धर्मसभीत।
अतिकांत्या खलवेष्टिता गनौ असाध्या मीत ॥ ६२ ॥

गुरुजनभीता, यथा

बसत नयन - पुतरीन में मोहन - वदन - मयंक।
डर दुरजन ह्वै अड़ि रही गुर गुरजन की संक ॥ ६३ ॥

दूतीवर्जिता, यथा

तुम सी सौं हिय की कहत रही रहत जिय भीति।
मोहि अली निज छाँह की नहीं परति परतीति ॥ ६४ ॥

धर्मसभीता, यथा

सखि सोभा सरवर निरखि मन-गयंद बलवान।
जोरन करि तोरन चहत कुल को ज्ञान-अलान ॥ ६५ ॥

अतिकांत्या, यथा

मुख कौं डरै चकोर तें सुक तें अधर 'रु दंत।
स्वास लेत भौंरनि डरै नवला रहै एकंत ॥ ६६ ॥

खलवेष्टिता, यथा

इहाँ बचै को बावरी कान्ह नाम कहि रंच।
चरचि चरचि चरचनि बिना रचै पंच परिपंच ॥ ६७ ॥

साध्या-परकीया-लक्षण

वृद्धवधू रोगीवधू बालकवधू बखानि।
ग्रामवधू आदिक सकल साध्या - लच्छन जानि ॥ ६८ ॥

उदाहरण (सवैया)

छैल छबीले रसीले हौ तौ तुम आपनी प्यारी के भाग के भाय सौं।
आपने भालहि काहे कौं दूखिये और को चंदन चाहि बनाय सौं।

---

[६४] सी सौं—सो सौं (काशि०)।
[६६] अधर०—अधरनु (लीथो०)।
[६७] कहि—लै (लीथो०)।

लाल कहा तुमकों छतिलाभ हमैं चित चाय सों औ नित चाय सों।
घाघरो बूढ़ो बुरो चहिरो तौ हमारो है प्यारो तिहारी बलाय सों ॥६६॥

दुःसाध्या-परकीया-लक्षण (दोहा)

बड़े जतन जारहि मिले दुदसाध्या है सोइ।
सामादिको उपाय सब यामें सोभित होइ ॥ ७० ॥
तो लगि जगि सब निसनि पगि प्रेम रह्यो धरि ध्यान।
चलि अब परसन होहि चलि देहि सुदरसन-दान ॥ ७१ ॥

ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण

ऊढ़ा ब्याही और सों प्रीति और सों चाहि।
बिन ब्याहे परपुरुष-रत वहै अनूढ़ा आहि ॥ ७२ ॥

ऊढ़ा, यथा

मन बिचारि बृजराज सों झूठहु लगै कलंक।
गोप-बधू फिरि फिरि लखति भादौं चौथि-मयंक ॥ ७३ ॥

अनूढा, यथा

को जानैं सजनी कितै पाती पठई तात।
घर बृजराज समान को तुम यह कहति न बात ॥ ७४ ॥

उद्बुद्धा-उद्बोधिता-लक्षण

मिलन पेच आपुहि करै उद्बुद्धा है सोइ।
जो नायक-पेचनि मिलै उद्बोधिता सा होइ। ७५।

उद्बुद्धा, यथा

करहि दौर वहि ओर तूँ और जतन सब चूक।
मनमोहन-पद परस बिनु मिटै न हिय की हूक ॥ ७६ ॥

---

[७१] निसनि–रैनि (सर०)। रह्यो–रहे (वही)।
[७२] चाहि–जाहि (सर०, लीथो)।
[७५] आपुहि–आपुन (काशि०)।

उद्बोधिता, यथा

आज सोहागिनी मो कही बानी आनी कान।
लियो तिहारी पातियो दीन्हो प्यारी पान ॥ ७७ ॥

परकीया के प्रकृति-भेद

सुनिये परकीयानि में प्रकृति जो पट विधि होइ।
तिनके बारह नाम धरि बरनत हौं जिय जोइ ॥ ७८ ॥

(छप्पय)

गुप्ता - सुरत - छपाव भयो होने ब्रतमानहि।
नारि विदग्धा बचन - क्रिया - चतुराई ठानहि।
कुलटा बहु मित्रिनी मुदित मुदिता बांछित लहि।
सुरत - हेत लहि सखी कहत लक्षिता प्रकासहि।
संकेत मिटो, अब क्यों मिलिहिं हौं न गई तहँ गयो पिय।
कवि त्रिविधि अनुसयाना कहैं तीनि भाँति पछिताइ हिय ॥७९॥

भूतगुप्ता, यथा (दोहा)

कौन साँच करि मानिहै अलि अचरज की बात।
ये गुलाब की पाँखुरी परौं खरौंटें गात ॥ ८० ॥

भविष्यगुप्ता, यथा

भँवर डसै कंटक लगै चलै कुचरचा गाउँ।
नँदनंदन के बाग में कहे सुमन कौं जाउँ ॥ ८१ ॥

वर्तमानगुप्ता, यथा

दुति लखि छ्वै हैं चोरिनी दुरी जु हैं सब संग।
रही दुराए मोहिं तुम स्याम साँवरे अंग ॥ ८२ ॥

---

[७७] पातियो—पाति अरु (सर०)।
[७८] जो—सो (काशि०)।
[७९] लहि०—लखि सखिन (सर०)।
[८०] पाँखुरी—पाँखुरिन (काशि०, सर०)।
[८१] नँद०—नंदनंद (काशि०)। कहे—कहाँ (वहीं); कहा (सर०)।

वचनविदग्धा, यथा

खरी लाल सारी अली नहि सोहाइ कछु मोहि।
हरी मिलै तौ लाइयै अरी निहोरौं तोहि॥ ८३॥
सजनी तरसत रहत हैं दरसत बनत न हाल।
कहौ पीर कैसैं मिटै परे नयन जुग लाल॥ ८४॥
छोड़ि दियो इहि बाग कौं बगवानहूँ अभार।
आइ स्याम घन थँभि रहे करियै कौन विचार॥ ८५॥

क्रियाविदग्धा, यथा

सैन - उतर सैननि दियो गन्यो न भीर बिसाल।
बाल सुधारयो बेंदुली पाग छुवत लखि लाल॥ ८६॥
लिखि दरसायो प्रिय सखिहि आजु न्याइ नँदलाल।
दूजी बाँचत लखि लिख्यो मुकुन-माल-हित हाल॥ ८७॥

कुलटा, यथा

सुरा सुधा दुर तुअ नजरि तू मोहनी सुभाइ।
अळकेन्ह देति छकाइ है सर-मरेन्ह कौं ज्याइ॥ ८८॥

मुदिता, यथा

कहन बिथा जिय की लली चली अली-आगार।
मग मिलि गो जिय-भावतो बाढ्यो हरष अपार॥ ८९॥
अदभुत अतुल उछाह दिन गुरलोगनि उरदाह।
लघु पति लखि दुलही-हिये दीरघ होत उछाह॥ ९०॥

हेतुलक्षिता, यथा

तैं कछु कह्यो गोपाल सौं तिरछौंहीं अँखियानि।
लखि लीन्ही वनमानि मैं लखि लीन्ही उन मानि॥ ९१॥

---

[८३] अरी–अली (सर०)।
[८४] कहौ–कहै (काशि०)। परे–पर्यो (वही, सर०)।
[८५] करियै–कहियै (काशि०)।
[८६] भीर–भीत (सर०)। लखि–सखि (काशि०)।
[८७] माल–मौल (काशि०)। हित–कहि (वही)।
[८८] तुअ–तू (लीथो)। सर–मार (लीथो)।

सुरतलक्षिता, यथा

प्रगट कहै ढीलो कसनि चुवत स्वेदकन-जाल।
ऐननैनि ऐनी भई बेनी गुही गुपाल ॥ ९२ ॥

लक्षिता, यथा

औरनि की आँखैं दुखैं तौ दुख करै बलाइ।
स्याम सलोने रूप त राख्यो दृगनि बसाइ ॥ ९३ ॥

अनुशयाना प्रथम, यथा

लखि लखि बन-बेलीन के पीरे पीरे पात।
जाति नवेली बाल के परी पियरई गात ॥ ९४ ॥
कहा होत बढ़ि बावरो भलो बुरो जिय जोहि।
कुंज-किनारे कों हते नारे धृग धृग तोहि ॥ ९५ ॥
को मति देइ किसान कौं मेरे जिय की जानि।
खरी ऊख रस पाइये परी ऊख-रस हानि ॥ ९६ ॥

अनुशयाना दूजी, यथा

मिल्यो सगुन पिय घर चलन अब कत होत मलीन।
लखे कलस-कुच रसभरे परे लाल-चख मीन ॥ ९७ ॥

अनुशयाना तीजी, यथा

भई बिकल सुधि-बुधि गई लई बिरह की ज्वाल।
हुन्यो सकल सुख सिर धुन्यो सुन्यो कोकिल लाल ॥ ९८ ॥
सीस रसिक सिरमौर के लखि रसाल को मौर।
वही ठौर कौं समुझि तिय हिय गहि रही मरोर ॥ ९९ ॥

अपर च

कछु पुनि अंतरभाव तें कही नायिका जाहि।
बिना नियम सब नियन मैं सुन्यो कबिसिन पाहि ॥ १०० ॥

---

[९३] तें–हों (भार०)।
[९५] हते–हरे (काशि०, भार०)।
[९९] मौर–बौर (नीको)। वही–रही (भार०)।

भेदकथन

कामवती अनुरागिनी प्रेमग्रसक्ता धन्य।
तीनि गर्विता मानिनी सुरतदुखिता अन्य ॥ १०१ ॥

कामवती, यथा

निज उरजनि मीड़त रहै अलिन गहै लपटाइ।
स्याम लहे बिनु बावरी कामदहनि नहिं जाइ ॥ १०२ ॥

अनुरागिनी, यथा

माल छबीले लाल को उर तैं धरति न दूरि।
वाहि रहति वहई भई प्रान - सजीवन-मूरि ॥ १०३ ॥
बेनी गूँधति लखि जियै दरपन जाकी छाँह।
कहा दसा ह्वैहै दई ताके बिछुरन माँह ॥ १०४ ॥

प्रेमासक्ता, यथा

अपनाइतहूँ सौं नहीं अब परतीत बिचारि।
मो नैननि मनु मेरई राख्यो हरि मैं डारि ॥ १०५ ॥
मन कौं और न भावतो छोड़ि भावतो और।
नेकु नहीं बरजो रहै जाइ मिलै बरजोर ॥ १०६ ॥
जने घने सुख स्याम लखि गने न गुरजन गेह।
कियो मने माने न ये नैना सने सनेह ॥ १०७ ॥

गर्विता, यथा

ज्यौं ज्यौं पिय पगनत सुनति आसमुद्र छितिराउ।
त्यौं त्यौं गर्वीले दृगनि प्रिया लखति निज पाउ ॥ १०८ ॥

रूपगर्विता, यथा

दुरे अँध्यारी कोठरी तनदुति देति लखाइ।
बचौं अलिन की भीर सौं आली कौन उपाइ ॥ १०९ ॥

---

[१०१] धन्य–गन्य (काशि०), मन्य (लीथो)।
[१०५] हूँ सौं नहीं–होतै नहीं (लीथो)। मेरई–मोरई (वही)।
[१०७] मने–मना (सर०)।
[१०८] सुनति–सनत (सर०)।
[१०९] लखाइ–देखाइ (सर०)।

प्रेमगर्विता, यथा

सखि तेरो प्यारो भलो दिन न्यारो ह्वै जात।
मोतें नहि चलनीर कौं पल बिलगात सोहात ॥ ११० ॥

गुणगर्विता, यथा

अरी मोहनै मोहि दै कि तौ मोहि दै धीन।
करी घरी आधीन मैं करौं हरी आधीन ॥ १११ ॥

मानवती, यथा

गई ऐंठि तियभ्रुअ धनुष नवत न जतन अनेक।
लाल जाइ कीजै सरल हृदय आँच की सेंक ॥ ११२ ॥

अन्यसंभोगदुःखिता, यथा

यह केसरि के खार मैं लागी इतो अगार।
केसर के सर कुच लगे नहि ढिग हरि केदार ॥ ११३ ॥
स्वेद थकी पुलकित जकी कंपित तनु कँपि मीत।
अधर निरंग चकी बसन बदल्यो हेत प्रतीत ॥ ११४ ॥
अली भले तनसुख लह्यो मेरैं हर्ष बिसेषि।
मनभावन की यह बिमल बक्सी सारी देखि ॥ ११५ ॥
रोम रोम प्रति सौतितन लखि लखि पतिरति भाइ।
तियहिय रिसि - दावा बढै दावा ज्यौं तृन पाइ ॥ ११६ ॥

अथ अष्टनायिका-लक्षण, अवस्थाभेद तें

आठ अवस्थाभेद तें दस बिधि बरनी नारि।
लक्षन सबके देखिकै क्रम तें लखि निहारि ॥ ११७ ॥

(छप्पय)

पीउ बस्य स्वाधीन, मिलै कहुँ रमि खंडित पति।
विप्रलब्ध संकेत सून देखति दुख प्रगटति।

[११०] इसके अनंतर काशि० और सर० में यह दोहा अधिक है—
सकल अंग सिथिल करैं करैं न गुरजन - भीति।
सैनहि मैं राख्यो चहै नाह नींद की रीति ॥
[११२] कीजै०–सीधी करौ (सर०)। सरल–सूल (काशि०)।
[११३] यह–यह (काशि०), तें (सर०)। लागी–लाइ (सर०)।

पिय-आगम-सुरत-सोच बाससेज्या उत्का तिय।
कलही कुकि पछिताइ मिलनु साधै अभिसारिय ।
दै अवधि गयो परदेस पिय प्रोषितपतिका सहति दुख।
दुख चलत प्रवत्स्यत्प्रेयसी आगतपति आगमन-सुख ॥ ११८ ॥

स्वाधीनपतिका, यथा (दोहा)

भूषित संभु-स्वयंभु सिर जिनके पग की धूरि।
हठ करि पाय झँवावती तिन सौं तिय मगरूरि ॥ ११६ ॥

परकीया

दाँउ घात लै आइये लखिये ठाँउ कुठाँउ।
नाँउ धरैं निजु जाने ही नाँउ घचाई गाँउ ॥ १२० ॥
अनुरागिनि की रीति यह गनै न ठौर कुठौर।
पितु-अंकहु निधरक तकत मित्र पद्मिनी ओर ॥ १२१ ॥

खंडिता, यथा

भाल अधर नैननि लसै जावक अंजन पीक।
न्हान किये मिटि जाइगी लाल बनी छबि ठीक ॥ १२२ ॥
आए लाल सहेट तें मान्यो मैं सु बिसेषि।
किंसुक-दल हिय मैं लग्यो नखरेखा सम देखि ॥ १२३ ॥

विप्रलब्धा, यथा

फिरी बारि वृषभान की लखि न निकेत सुजान।
वदनचंद दिनचंद भो सीतभानु वृषभानु ॥ १२४ ॥
अस्तु ढरे संकेत लखि परे सकज्जल गात।
बिथा लिख्यो निज बाल सो बलि चंपक के पात ॥ १२५ ॥

---

[११८] सहति–सही (काशि०), सहित (लीथो)।
[१२०] नाउँ०–लाल जने ही बिन धरे (काशि०, लीथो)।
[१२२] लाल–कान्ह (काशि०)।
[१२३] लग्यो–लगे (सर०)।
[१२४] फिरी०–चली लली (सर०)।
[१२५] बिथा०—लिख्यो सो बाल निज दु [+ख] बिथा (काशि०); कछू लिख्यो सो लखि पर्यो (सर०)।

वामकमज्ञा, यथा

जानि जाम जामिनि गई पिय - आगम अनुमानि ।
भपि नैननि तिय सैन मिस विदा करी सखियानि ॥ १२६ ॥
बैठ ठानि सब अलिन सों पिय सहेट-थल जानि ।
सुंदरि मान सयान धरि ड्योढ़ी पौढ़ी आनि ॥ १२७ ॥

उत्कंठिता, यथा

निसिमुख आई देखिकै ससिमुख आई भाति ।
चली जाति पिय राति लखि लली जाति पियराति ॥ १२८ ॥
आजु मिलत हरि बंचकहि नजरि बंद करि लेउँ ।
जतन कराऊँ प्रात सों अन कहुँ जान न देउँ ॥ १२९ ॥
नहे और के नेह करि रहे आपने धाम ।
किते रमि रहे अलि किते निरमि रहे घनस्याम ॥ १३० ॥

कलहांतरिता, यथा

कहे आनही आन के हौं भरि रही अयान ।
आन करौं अब कान्ह सों कबहूँ करौं न मान ॥ १३१ ॥

(सवैया)

नेह लगावत रूखी परी नत देखि गही अति उन्नतताई ।
प्रीति बढ़ावत बैरु बढ़ायो तूँ कोमलि बात गही कठिनाई ।
जेती करी अनभावती तूँ मनभावती तेती सजाइ कों पाई ।
भाकसी भौन भयो ससि सूर मलै बिष ज्यों सर सेज सुहाई ॥ १३२ ॥

(दोहा)

कुल सों मुहुँ मोरे धन्यो बोन्यो लाज जहाजु ।
हरि सों हित जोन्यो दई खोऊ तोन्यो आजु ॥ १३३ ॥

अभिसारिका, यथा (सवैया)

निसि स्याम सजे पट स्याम सनै तऊ सिंजित सोरन ही सों डरै ।
गहि अंगहि अंग अटोल कियो बलयानि को बोल सुन्यो न परै ।

---

[१२७] धरि—करि (सर०) ।
[१२८] हरि—नहि (सर०) ।
[१३४] सोरनहीं—सोरन हूँ (सर०) ।

जलजातमुखी प्रिय के थल जात लजात हरैं हरैं पाय धरै।
गुरु लोगनि को लगु आहट लै हठि किंकिनिया कटि सों पकरै ॥१३४॥

(दोहा)

जिहि तनु दियो जु नहिं दुरै निसि यहि नीलहि चीर।
तिहि निधि ताहि अभिसारिके दियो भँवर की भीर॥ १३५ ॥
भलैं चल्यो मिलि जोन्ह रँग पट भूषन दुति अंग।
मुख न उघारैं विधुवदनि जैहै उघरि प्रसंग॥ १३६ ॥
कारी रजनि उज्यारहूँ तनदुति बढ़ै अपार।
विधि करि दियो निहारु अब दिनहि चल्यो अभिसार॥ १३७ ॥

प्रोषितपतिका, यथा

हरि तन तजि मिलतो तुम्हैं प्रानप्रिया को प्रान।
रहती जौ न घरी घरी अवधि परी दरम्यान॥ १३८ ॥
वही कदंब कलिंदजा वही केतकी-कुंज।
सखि लखिये घनस्याम बिनु सबमैं पावक पुंज॥ १३९ ॥

आगतपतिका, यथा (कवित्त)

धौरे धौरहर पर अमल प्रजंक धरि
दूरि लौं बगारि दीन्हो चाँदनी सुछंद कौं।
फूलनि फैलाइ पट-भूषन पहिरि सेत
सेज पर बैठी मिलि स्याम सुखकंद कौं।
मृदु मुसुकाइ हिमकर तन हेरतहीं
कहिबे कौं दाँउ पर्‌यो प्यारे नंदनंद कौं।
कारो मुख कीन्हे जात दुरत दिगंत अब
काहे कौं लजावति है प्यारी चंद मंद कौं॥ १४० ॥

(सवैया)

देखादेखी भई ग्वै इहि गाँउ के बोलिबे की पै न दाँउ रही है।
साधि घरी घर जैबो भलो कहि द्वारही प्यारे सलाह गही है।
आपने आपने भौन गए न दुहून की चातुरी जात कही है।
ह्याँ मिसिही मिसिकै रिसिकै गृहलोग सौं न्यारो है प्यारी रही है ॥१४१॥

को लगु०-आहट लै हठि किंकिनिया (लीथो)।

[१३५] नीलहि-निसलहि (लीथो), नीले (काशि०)। निधि०-बीते (लीथो)। दियो-दई (रर०)।

आगच्छत्पतिका-लक्षण (दोहा)

आगच्छत्पतिका जहाँ प्रीतम आवनहार ।
पत्री सगुन सँदेस तैं उपजै हर्ष अपार ॥ १४२ ॥

यथा (कवित्त)

कंचन कटोरे खीर खाँड भरि भरि तेरे
हेत उठि भोर ही अटान पर धारिहौं ।
आपने ही हार तैं निकारि नीको मोती कंठ
भूषन सँवारि नीको तेरे गल डारिहौं ।
एरे कारे काग तेरे सगुन सुभाय आज
जौ मैं इन अँखियन प्रीतम निहारिहौं ।
और प्रान प्यारे पै नेवछावरि करँगी, मैं
लै तन मन धन प्रान तोहि पर वारिहौं ॥ १४३ ॥

प्रवत्स्यत्प्रेयसी (दोहा)

प्रान चलत परदेस कौं तेरो पति परभात ।
तूँ चलि रहिहै अगमनै कै बनिहै सँग जात ॥ १४४ ॥

(सवैया)

भूख औ प्यास सबै बिसरी जब तैं यह कानन बात परी है ।
आपने प्रान पयान गुनै सु जु प्यारे पयान की साज सजी है ।
वेगि चलौ दुरि देखौ दसा यह जानि मैं लाल तुम्हैं बरजी है ।
रावरे जौ पलु आवे गहे तौ सो रावे न जीहै न जीहै न जीहै ॥ १४५ ॥

(दोहा)

फेरि फिरन कौं कान्ह कत करत पयान अनाथ ।
रही रोकि मग ग्वारनी नेहकारनी साथ ॥ १४६ ॥

---

[१४२] पत्री-सपनो (सर०) ।
[१४३] धन-मन [जन] (सर०) ।
[१४४] अगमनै-आगमन (काशि०, लीथो) ।
[१४५] भौ०-पियास (काशि०) ।

तिनि तिनि विधि मुग्धादि को भेद दसौ में मानि।
डरु लज्जा अरु काम तें बुधजन लैहैं जानि॥ १४७॥

इति अष्टनायिका

अथ उत्तमा-मध्यमा-अधमा-लक्षण

होइ नहीं है करि छुटै नाहकहूँ जहँ मान।
कही उत्तमा मध्यमा अधमा तीनि प्रमान॥ १४८॥

उत्तमा, यथा

जावक को रँग भाल तें अधर नै कज्जल-लीक।
पट गोयो तिय पोंछिकै पिय-नैननि तें पीक॥ १४९॥
जाको जावक सिर धरौ प्यारे सहित सनेह।
हमकों अंजन उचित है उन चरनन की खेह॥ १५०॥

मध्यमा, यथा

वदन-प्रभाकर लाल लखि निकस्यो उर-अरविंद।
कह्यो रह्यो क्यों निसि वस्यो हुत्यो जु मान-मलिंद॥ १५१॥

अधमा, यथा

नाह-गुनाह कहूँ नहीं नाहकहूँ जहँ मानु।
देख्यो बहुतेरो न वहु तेरो सरिस अयानु॥ १५२॥
दरपन में निज छाँह सँग लखि प्रीतम की छाँह।
खरी ललाई रोस की ल्याई अँखियन माँह॥ १५३॥

इति स्वकीया परकीया

अथ गणिका-लक्षण

केवल धन सों प्रीति वहु गनिका सोई लेखि।
येई सब यामें गुनौ गर्बितादि सु बिसेषि॥ १५४॥

---

[१४७] जानि०—जानिकै बारक मैं (सर०)। जौ पलु०—के निरहा पल आधे सो (काशि० +), पथ गहे पग आधे के (सर०)।
[१५०] है०—तिन चरनन तर की (काशि०, सर०)।
[१५१] कह्यो०—कहौ रहे (काशि०)।
[१५२] देख्यो—देखो (लीथो)।
[१५४] बहु—जिन्ह (काशि०, सर०)।

विस्तर जानि न मैं कह्यौं उदाहरन सब मित्त ।
धन रति व्यंगि लखाउ हित कीन्ह्यो एक कवित्त ॥ १५५ ॥

(सवैया)

ढिग आइके बैठी सिंगार सजे नख तें सिख लौं मुकता - लरियाँ
मुसुकाइकै नैन नचाइकै गाइ कियो बस बैन गुवालरियाँ।
दरसावत लाल कौं बाल नई जु सजैं सिर भूपन झालरियाँ।
छबि होती भली गजमोती के बीच जु होतीं बड़ी बड़ी लालरियाँ ॥१५६॥

अथ चतुर्विध नायिका

पद्मिनी-चित्रिणी-हस्तिनी-शंखिनी-लक्षण

भई पद्म-सौगंध सों अंग जाकी वही पद्मिनी नाइका बर्न्य कीजै।
रली राग चित्रोपमा चित्रिनी है सबै भेद तौ कोक सों जानि लीजै।
कहे संखिनी हस्तिनी नाम जो हैं सो तौ ग्राम्य नारीनहीं में गनीजै।
इन्हैं सुभ्र सोभामई काव्य के बीच केहूँ नहीं बर्निबो चित्त दीजै ॥१५७॥

इति नायिका

अथ नायक-लक्षण (दोहा)

छबिमै गुनमै ग्यानमै धनमै धीरधुरीन।
नायक रजमै रसनि मै दान दया लौ-लीन ॥ १५८ ॥

(कवित्त)

अंगनि अनूप मरकत मनि संचि संचि
मदन - बिरंचि निज हाथनि बनायो है।
जानै नयजूह बलविधनि को व्यूह
सील - सुपमा - समूह करुनायतन ठायो है।
चंदन की खौर उर खीन कटितट 'दास',
केसरि - रँगनि पट निपट सोहायो है।
इंदीवरबदन गोबिंद गोपछंदन मैं
इंदुजुन नखत बिनिंद छबि पायो है ॥ १५९ ॥

(दोहा)

चितवनि चित चोरै अली अति अनंद की दानि।
नंदनंद मुखचंद की मंद मंद मुसुकानि ॥ १६० ॥

पति-उपपति-वैशिक-लक्षण

निज तिय सों परतियन सों अरु गनिका सों प्रीति ।
पति उपपति वैसिक त्रिविधि नायक कहै सुरीति ॥ १६१ ॥

पति नायक, यथा

पियत रहत नित दुलहिया-वदनसुधाधर - जोति ।
प्यारे नैन - चकोर कों कबहूँ निसा न होति ॥ १६२ ॥
कल न परै पलको भट्ट लट्टू कियो सुव नेह ।
गोरे मुहुँ मन गड़ि रह्यो रहै अगोरे गेह ॥ १६३ ॥

उपपति, यथा

सुरस भरे मानसहु तें ऐंचि लियो मन चित्त ।
मृगनैनी बैनी भई मोहि कुवैनी मित्त ॥ १६४ ॥

(सवैया)

हेरत घातैं फिरै चहुधा तें ओनात है घातैं देवाल तरी सों।
साधे रहै जिय राधे रसीली दृगाधे निहारै न काहू दरी सों।
देखति हौं अलवेले विचित्र कों आली चरित्र मैं चारि घरी सों।
आहट पाइ रहै टहराइ न डीठि डोलाइ सकै झँझरी सों ॥१६५॥

वैशिक, यथा (दोहा)

सुबरनबरनी लै गई बिहसति मन - धन साथ ।
कहा करौं कैसे जियौं कछू न मेरे हाथ ॥ १६६ ॥

अनकूल-दच्छिण-शठ-धृष्ट-लक्षण

इक-तियव्रत अनुकूल है दच्छिन सील समान ।
सठ कपटी मिठबोलनो ढीठो धृष्ट निदान ॥ १६७ ॥

अनुकूल, यथा

पगु भाँवत भूपन सजत लखत हुकुम की आस ।
राधेपति कहिये तुम्हैं कैधौं राधेदास ॥ १६८ ॥

---

[१६५] अलवेले–अलवेली (काशि०, लीथो) । विचित्र–चरित्र (लीथो) ।

दक्षिण, यथा

घर ब्रजबनितन को हियो बिमल आरसी-भाइ।
मूरति मोहनलाल की सबमें परति लखाइ॥ १६९॥
सब तिय निज निज प्रेममय मन मन गुनै स-नेह।
लाल आरसी में लखै सबको बदन सनेह॥ १७०॥
मोहू पास जु हास की बातैं कहत लजात।
तेहि सखि वहु नायक कहै कहै न लायक बात॥ १७१॥

शठ नायक, यथा

तो उर बचन सरोस कढ़ि अधरनि आइ मिठाइ।
मिलै खटाई मधुरई खरो स्वाद सरसाइ॥ १७२॥
मूँदि जात है आभरन सजत गात छवि चारु।
मो रुचि राख्यो दूरि करि भामिनि भूषन भारु॥ १७३॥
रिस रसाइ सरसाइ रस बतिया कहत बनाइ।
देह लगावत लाइ फिरि नेह लगावत आइ॥ १७४॥

धृष्ट नायक, यथा

सीस पिछौरी और की छला और को हाथ।
चले मनावन भावती भलें बने ब्रजनाथ॥ १७५॥
कुलटन सौं रसकेलि करि रति-श्रम-जल सौं न्हाइ।
लाज-लीक पिय दृगनि सौं दीन्हो धोइ बहाइ॥ १७६॥

मानी-प्रोषित-चतुर-नायक-लक्षण

मानी ठाने मान जो बिरही प्रोषित जानि।
बचनबिदग्ध क्रियाचतुर नायक चतुर बखानि॥ १७७॥

---

[१७०] गुनै—गुहै (लीथो)। स-नेह—सप्रेम (काशि०, सर०)।
बदन सनेह—बदन सनेम (वही)।

[१७२] कढ़ि—ढिग (सर०)।

[१७४] रसाइ०—सरसाइ रस हरस (सर०)। देह—दियें (वही)।

[१७५] और—कौन (सर०) भावती—भावतिहि (वही)।

[१७६] जल०—स्वेद अन्हाइ (सर०)। दीन्हो—दीन्हो (काशि०, सर०)।

मानी, यथा

करि उपाउ वलि जाउँ पुनि मान धरौ मन मानि।
बोरन चाहत फेरि वृज बाल बरषि असुवानि ॥ १७८ ॥

गोपित, यथा

स्यामा सुगति सुनंस की आठौ गाँठि अनूप।
छुटी हाथ तें पातरी प्यारी छरी-स्वरूप ॥ १७९ ॥
लखि जु रंक सकलंक भो पंकज रंक मयंक।
कन प्रजंक सु मयंकमुखि भरयी अंक निसंक ॥ १८० ॥

वचनचतुर, यथा

कालिंदीतट लेहु लै कदमकुंज की छाँह।
कहाँ दही लै जात हौ दहन दुपहरी माँह ॥ १८१ ॥
गहत न एक सु बोस इहि निमल बुद्धि जिन पाँहि।
परघर बालनि जड़ जनक पठवत अगहन माँहि ॥ १८२ ॥
नेहभरे दीपति बरै फूल भरै घतिआनि।
लखी लाल तुम बाल नहिं दीपमालिका जानि ॥ १८३ ॥

क्रियाचतुर, यथा

चली भवन कौं भामिनी जानि जामिनी जाम।
पहुँचवे मिस सँग लगे रूप रगमगे स्याम ॥ १८४ ॥
चालि ऐये आतुर कहूँ न्हैये जाइ यकंत।
भये नये जापक न ये करिहैं जप को अंत ॥ १८५ ॥

उत्तम-मध्यम-अधम-नायक-लक्षण

उत्तम मनुहारिन करै मानै मानिनि संक।
मध्यम समयी अधम निजु अरथी निलजु निसंक ॥ १८६ ॥

उत्तम, यथा

बाल रिसौं हैं ह्वै रही भौंहैं धनुष चढाइ।
लाल सँकित पीछे खरे सकत न सौंहैं जाइ ॥ १८७ ॥

---

[१८०] जु–सु (लीथो)।
[१८२] जनक–गनक (काशि०, सर०)।
[१८४] रगमगे–रगमग (सर०)।

मध्यम नायक, यथा

चरचा करी विदेस पिय क्यौं ह्वाँ मिसु ह्वै आपु।
सुनि मानिनि उठि अंक में आइ लगी चुपचापु ॥ १८८ ॥

अधम नायक, यथा

काह करौं कपटी छली तापर निलज निसंक।
मान कियेहूँ मोहिं सखि भरत धन्याई अंक ॥ १८९ ॥

नायक-सखा-लक्षण

पीठिमर्द विट चेटकी विदुप और अनभिज्ञ।
चतुर सखा नायक तिन्हैं जानत कविनाविज्ञ ॥ १९० ॥

(अरिल्ल)

पीटमर्द करै भूठ मान जो है फुरो।
सो विट जो अति कामकला बिच चातुरो।
चेटकु देइ मुलाइ करै जु सुपास कौं।
तीन विदूषक जौन करै परिहास कौं ॥ १९१ ॥

(दोहा)

वाहि कहै अनभिज्ञ हैं है जु न संज्ञा दक्ष।
सुन्यो सखा पुनि नायकहु लखि लीजहु कहुँ लक्ष ॥ १९२ ॥
यहि विधि औरो जानिये जितने तिय के जोग।
तितने नायक होतु पै नहि बरनत कवि लोग ॥ १९३ ॥

दर्शन-वर्णन

दरसन चारि प्रकार को सुतुल सपनो चित्र।
श्रवन सहित लक्षन प्रगट उदाहरन सुनि मित्र ॥ १९४ ॥

---

[१८८] पिय०—पी पिय क्यौं ह्वै मिस आपु (कासि०, सर०)।
[१८९] काह—कहा (सर०)। कियेहूँ—ठानेहू (वही)। भरत—गहति (वही)
[१९०] कासि० में नहीं है।
[१९२] कहै—कहत (कासि०, सर०)। पुनि—यह (लीथो)।
[१९३] कासि० में नहीं है।

मौंतुरा-दर्शन

पद-पुष्कर है दाहिने कुच कौंत्या गिरि लाइ।
बदन-सुरसती सेइ दग बेनी बस्यो घजाइ ॥ १६५ ॥
परी हठीली हरि नजरि जूरो बाँधत जाइ।
भुज अभरन मैं करन मैं चिकुरन मैं लपटाइ ॥ १६६ ॥

स्वप्न-दर्शन

नँदनंदन सपने लख्यो कहूँ नदी के तीर।
जागि करति तिय ठौरहीं नदी दगनि के नीर ॥ १६७ ॥

चित्र-दर्शन

तन-सुधि-बुधि दीन्हो रितै चितै चित्रहीं बाल।
जानत नहीं समीप ही खरे लाल गोपाल ॥ १६८ ॥

श्रवण-दर्शन

मनमोहन-छबि प्रगट करि सखी तिहारे बैन।
तेहि दरसन कौं नैन हैं श्रवन हमारे ऐन ॥ १६६ ॥

इति आलंबन विभाव

अथ उद्दीपन-विभाव-वर्णन

सखी दूतिका प्रथमहीं उद्दीपन मैं जानि।
बरनौं जाति-प्रमान जो चतुराई की खानि ॥ २०० ॥

धाइ सखी, यथा

तन की ताप बुझाइहौं ल्याइ सीतता धाम।
सोच तजौ हौं धाइ हौं करिहौं पूरन काम ॥ २०१ ॥

जनी, यथा

ठकुराइनि अवलोकिये मुकुतमाल की भाँति।
बैठी तरुन तमाल पर बिमल बकन की पाँति ॥ २०२ ॥

नाइनि, यथा

लाल महाउर अनखुले लली लगै तुव पाइ।
मलिन निमल तन नाह के करहि न नेह लगाइ ॥ २०३ ॥

---

[१६५] पद०-पद-पुष्कर (काशि०)।

नटी, यथा

दूरि रसिक पति घरत करि चढ़ी कालि मैं वंस।
फेरि न तुम फेरो कियो वहि दिसि ब्रज-अवतंस ॥ २०४ ॥

सोनारिनि

धनी लाल मनभावती पहुँची मेरे धाम।
अब तुमहूँ तूरन चलौ पूरन करिये काम ॥ २०५ ॥

परोसिनि

लखी जु ही मो भौन ढिग कनकलता तुम लाल।
अब वह घरपति रहति है निसि दिन मुकुतामाल ॥ २०६ ॥
कै चलि आगि परोस की दूरि करौ घनस्याम।
कै हमकौं कहि दीजिये बस औरहीं ग्राम ॥ २०७ ॥

चुरिहारिनि

लाल चुरी तेरे अली लागी निपट मलीन।
हरियारी करि देउँगी ह्याँ तो हुकुम - अधीन ॥ २०८ ॥

पटइनि

घड़े घड़े दाना लगे हैं जेहि सुमिरन माहि।
लली भली तेहि बीच मैं गाँठि राखिबी नाहि ॥ २०९ ॥

बरइनि

बरइहि निसा करार नहि करत चितायो चेतु।
पान धरति मैं आजु धन मिलिहैं बनिहै हेतु ॥ २१० ॥
भागिमान सुनि राधिके तो समान को आन।
कान्ह पान साज्यो करै बैठो जासु दुकान ॥ २११ ॥

---

[२०५] तूरन–पूरन (काशि०)।
[२०६] लता–बरन (सर०)। वह–सो (वही)।
[२०९] लली–अली (सर०)
[२१०] करार–कराइ (लीथो)। करत०–सुनत चितायो (वही); करत चितायो (सर०)। मिलिहैं—मिलहीं (काशि०, सर०)।
[२११] बैठो–बैठे (काशि०)।

रामजनी

तुम सुघराई-वस कियो लाल घनेरी वाम।
तुम्हैं नसीकरि मेरियै ललित गूजरी स्याम॥ २१२॥
तैं जु अलाप्यो मोहिं मिलि वहै अपूरब राग।
सुनि हरि पूरब राग सों गहै पूर बैराग॥ २१३॥

संन्यासिनि

को बरजै लीन्हे रहौ सकति कुलभगति धाम।
गोरी पिय की रति बिना नहिं पूजै मन काम॥ २१४॥

चितेरिनि,

बहु दिन तें आधीन लखि मैं लिखि दियो बनाइ।
चित्र चितै तुव चित्रिनी भए चित्र जदुराइ॥ २१५॥

(सवैया)

फल्यो सरोज बनाइकै ऊपर तापर खंजन द्वै थिरकाइहौं।
बीच अनोखो सुवा उनयो इक चित्र को लालच देहौं बताइहौं।
श्रीफल से फल द्वैक निहारिकै रीझिहौं लाल कहौं समुझाइहौं।
कंचन की लतिका इक आजु अनूप बनाइ तुम्हैं दरसाइहौं॥ २१६

धोबिनि (दोहा)

निपटहिं भर्‍यो सनेह तूँ हरि निसि अंग लगाइ।
ललो पीतपट-मलिनई कैसैं मेटी जाइ॥ २१७॥

रँगरेजिनि

निसि आए रँग पाइहौ अब ही मोहै काम।
आवति हैहै बसन कौं राजलाडिली धाम॥ २१८॥

कुंदेरिनि

तेरी रुचि के हैं लट्टू लाल मेरे ही धाम।
भली खेलिबे की समै कहौ तो ल्याऊँ बाम॥ २१९॥

---

[२१२] रामजनी—गंधर्विनी (लीथो)।
[२१७] निसि-मिलि (सर०)। मेटी—मेट्यौ (वही)।
[२१८] मोहै—मोको (सभा)।
[२१९] कहौ—कहि (सभा)।

अहीरिनि

करौ जु हरि सौं परचयन आपुन गोरस लेहु।
माख न मानौ राधिके दही बृथा ही देहु ॥ २२० ॥

वैदिनी

मैन-बिथा जानति भटू नारी धरै न धीर।
होइ परी जुरसाल की तहीँ जाइ मिटि पीर ॥ २२१ ॥

गंधिनि

सरस नेह की बात हौँ तो पै कहत डेराति।
विनय करत धन मिलन की तू रूखी परि जाति ॥ २२२॥

मालिनि

जेहि सुमनहि तूँ राधिके लायो करि अनुराग।
सोई तोरत साँवरो आपुहि आयो बाग ॥ २२३ ॥

(कवित्त)

जोहैँ जाहि चाँदनी की लागत मलीन छबि
चंपक गुलाब सोनजुही जो तिहारी है।
जामते रसाल लाल करुनाकदंब धीले
बाढ़िहै नवेली सुनि केतकी सिधारी है।
कहै 'दास' देखो इहि तपन बृषादित की
कैसी बिधि जाति दुपहरिया नवारी है।
प्रफुलित कीजिये बरषि रस बनमाली
जाति कुँभिलाति बृषभानजू की बारी है ॥ २२४ ॥

(दोहा)

मेरे कर तेँ छीनि लै हरि सुनि तेरो हार।
निज गूँथ्यो कंपित करनि कैसो बन्यो सुढार ॥ २२५ ॥

---

[२२१] धरै–धरत (सर०, सभा)।
[२२२] परि–है (सभा)।
[२२३] जेहि–जो (लीथो)। सुमनहि–सुमनन (सर०)।
[२२४] कदंब–कदम्ब (सर०)। बाढ़िहै–चढ़िहै (काशि०)।

अथ सखी-लक्षण

तिय पिय की हितकारिनी अंतरवर्तिनि होइ।
और निदग्धा सहचरी सखी कहावै सोइ ॥ २२६ ॥

हितकारिणी सखी (कवित्त)

बिमल अँगौछे पौंछि भूषन सुधारि सिर
आँगुरिन फोरि तिन तोरि तोरि डारती।
उर नखछद रदछदनि मैं रदछद
पेखि पेखि प्यारे कौं झुकति झमकारती।
भई अनखौंहो अवलोकति लली कौं फेरि
अंगन सँवारती डिठौना दै निहारती।
गात की गोराई पर सहज भाराई पर
सारी सुदराई पर राई-लोन वारती ॥ २२७ ॥

अंतरर्तिनी, यथा (दोहा)

बात चलति अति तन तपत बात चलत सियराइ।
वेदन बूझति है न यह वैद न बूझति हाइ ॥ २२८ ॥

निदग्धा सखी, यथा

बरज्यो कर सुक लेत मैं याही बर उहि ठौर।
लग्यो ठौर ही ठौर रत लगी और की ओर ॥ २२९ ॥
आवत अजन अधर दै भाल महाउर लाल।
हँसी खिसी ह्वै जाइ जौ सही गुनै कहुँ बाल ॥ २३० ॥

सहचरी, यथा

मुदित सकल तिय कुमुदिनी निरखि निरखि ब्रज-इंदु।
वलि मुद्रित कत होत है तुव दग ज्यौं अरबिंदु ॥ २३१ ॥

---

[२२७] फोरि०—फोरि फोरि तृन तोरि (सभा)
[२२८] तन०—तपति पति (काशि०, सर०, सभा)।
[२२९] याही०—यही बार यहि (सभा)।
[२३०] गुनै—गुनौ (काशि०)।

दूती-लक्षण

पठई आवै और की दूती कहिये सोइ।
अपनी पठई होत है वान-दूतिका जोइ ॥ २३२ ॥

दूती-भेद

अनसिखई सिखई मिली सिखई एकहि जाइ।
उत्तम मध्यम अधम यों तीनि दूतिका भाइ ॥ २३३ ॥

उत्तम दूती, यथा

हिय हजार महिला भरी वहै अमाति न स्याम।
करति जाति छामोदरी देह छाम तें छाम ॥ २३४ ॥
बिलखि न हरि विद्रुम कहत तुव अधरन बिन आन।
स्वाद न जानै तेहि लगै मिसिरी फटिक समान ॥ २३५ ॥

मध्यम दूती, यथा

कहत सुनागर बाल के रहत बन्यो नहिं गेहु।
जरत बाँचि आई ललन बाँचि पाति ही लेहु ॥ २३६ ॥

अधम दूती, यथा

लाल तुम्हैं मनभावती दीन्ह्यो सुमन पठाइ।
माँग्यो ज्वर की औषधी कहौ कहाँ त्यों जाइ ॥ २३७ ॥

वानदूती-लक्षण

हित की, हित अरु अहित की, अरु अहितै की बात।
कहै बानदूतीन के गुन तीन्यो गनि जात ॥ २३८ ॥

हित, यथा

कियो चहौ बनमाल तौ आजु रहौ इहि धाम।
फूलमाल कौं आइहै फूलमाल सी बाम ॥ २३९ ॥

---

[२३२] है-सो (सर०, सभा)।
[२३४] भरी-भमरि (सर०)। न-किन (वही)।
[२३५] जानै-जानत (सर०, सभा)। लगै-लगत (वही)।
[२३७] माँग्यो-माँगे ज्वर के औषधे (काशि०, लीथा)।
[२३९] तौ-जौर (सर०)।

हिताहित, यथा

पहिरि स्याम पट स्याम निसि क्यों आवै वर बाल।
होउ कितोऊ निबिड़ तम दुरत न परत मसाल ॥ २४० ॥

अहित, यथा

पावति .चंदनहीन अरु दावन घैरु बिसाल।
है न घरी असतीन क्यों चहौ एकतहिं लाल ॥ २४१ ॥

अपरं च उद्दीपन-भेद

सुरितु चंद सुर घास सुभ फल अरु फूल-समाजु।
अवलोकन आलाप मृदु सब उद्दीपन-साजु ॥ २४२ ॥

ऋतु वा चंद को उदाहरण (कवित्त)

परम उदार महाराज रितुराज आजु
बिमल जहानु करिबे की रुचि ठाई है।
सीतकर-रजक रजाइ पाइ ताही समै
अंबर की सोभा करि उज्जल दिखाई है।
छटा जनि जानो तरु अटा औ दिवालनि मैं
ब्यौंत करि आछी विधि वाही सों मढ़ाई है।
चहूँ ओर अवनि बिराजै अवदात देखो
ऐसी अदभुत एक चाँदनी बिछाई है ॥ २४३ ॥

सुर को उद्दीपन—(कवित्त)

भूल्यो खान-पान भूली सुधि बुधि ज्ञान-ध्यान
लोगनि कौं भूलि गयो बासु औ निवासु री।
चकि रहीं गैयाँ चारा चौंचनि चिरैयाँ भरि
चितवै निचल नैन चेत चित नासु री।
द्वै घरी सौं मरी सी परी है वृषभानजाई
जीवत जनावै बहि आवैं दृग आँसु री।
कान्हर तें कैसेहूँ छुड़ाइ लै री मेरी आली
कब की बिसासिनि बगारै बिपु बाँसुरी ॥ २४४ ॥

---

[२४३] सीत-स्वेत (सर०)। मैं-पै (वही)।
[२४४] बहि-कहै (लीथो); बहे (सर०, सभा)।

सुवास फल फूल को उद्दीपन (सवैया)

भाँतिन भाँतिन फूल विराजत अंगन अंगन की छवि धारी।
'दास' सुवास-विभूषित देखिये गुंजत भौंरन की अधिकारी।
चारु सदाफल श्रीफल में उरजातन की छवि जात निहारी।
सुंदर स्याम विलास करो सुभ सुंदर रूप बनी फुलवारी॥ २४५॥

अवलोकन को उद्दीपन

हारि गो वैद उपावनि कों करि एकनि कों विरहागि सों वारि गो।
वारि गो एक की भूख औ प्यास कछू मृदु हास सों मोहनी डारि गो।
डारि गो मानो कछू गथ नैं इमि व्याकुल कै इक गोपकुमारि गो।
मारि गो एक कों मैन के बाननि साँवरो साननि नेकु निहारि गो॥२४६॥

आलाप मृदु को उद्दीपन (दोहा)

उद्दीपन आलाप ये रससमूह सरसाइ।
प्रीतम तिय सखि दूतिका चारयौ उक्ति सुभाइ॥ २४७॥
मंडन सिक्षा गुनकथन उपालंभ परिहास।
स्तुति निंदा पत्री विनय विरह-प्रबोध-प्रकास॥ २४८॥

मंडन, यथा (कवित्त)

पहिरत रावरे घरति यह लाल सारी
जोति जरतारिहू तें अधिक सोहाई है।
नाकमोती निंदत पदुमराग-रंगनि कों
गुलित ललित मिलि अधर-ललाई है।
औरै तन भूषन सजत निज सोभा हित
भामिनी तू भूषननि सोभा सरसाई है।
लागत विमल गात रूपन को आभरन
आभा बढ़ि जात जातरूप तें सवाई है॥ २४९॥

---

[२४५] धारी–भारी (लीथो)। जात–जान (काशि०)।
[२४६] को–नैं (सर०, सभा)। करि–उर (वही)। को–के (सर०, सभा, लीथो)। सों–मों (काशि०)। मैन–नैन (सर०)।
[२४७] सुभाइ–सुहाइ (सर०)।
[२४९] निंदत–निंदक (लीथो)। निज–निन (काशि०)।

शिक्षा, यथा (दोहा)

गहि बंसी मन-मीन कौं ऐंचि लेत बरजोर।
डारि देत दुख-जाल में अलि यह महर-किसोर ॥ २५० ॥
फिरि न बिसारी बिसरिहै कियेँ कोरि उपचार।
बीर सुनत कर बाँसुरी बारबार कढ़ि बार ॥ २५१ ॥

(कवित्त)

इत वर नारी बनि गुरजन-बीच ह्वै ह्वै
सुमन छरी लै कर करी रस-ढारने।
उत मनमोहन सखा लै संग रंग रचि
करत अबीर पिचकारिन सौं मारने।
एरी मिसु फागुन के उदित यह तेरो भाग
हरषि हिये को सोच सकल नवारने।
चलि चलि बौरी बेगि होरी को समाज सजि
आजु तजि लाज बृजराजहि निहारने ॥ २५२ ॥

गुणकथन (सवैया)

बाहिर होति है जाहिर जोति यौं गोपकुमारिन की अवली में।
जैसे बिसाल मसाल की दीपति दीपति दीपसमूह-थली में।
मोहन रावरी केतिक बात मैं मोहि रही बृषभान-लली में।
भाँति भली बतलात अली-सँग जात चली मुसुकात गली में ॥ २५३ ॥

उपालंभ (दोहा)

अहे मोहनै ज्यौं हनै दृग-बिषबान चलाइ।
त्यौं किन जाइ जिवाइये अधर-सुधारस प्याइ ॥ २५४ ॥

---

[२५१] फिरि–यौ (काशि०, सर०), अब न (सभा)।
[२५२] गुरजन–गूजरिनि (लीथो)। करी–बढै (काशि० लीथो), करकस (सर०)। चलि–चालु चलि (लीथो)।
[२५४] त्यौं–जो (सभा०, लीथो)। जिवाइये–व ज्याइये (सर०, सभा)।

विया वढ़ै उपचारहू जिनके सहजै घाइ ।
कहरु कियो तिन मैं दियो कज्जल-जहरु लगाइ ॥ २५५ ॥

परिहास, यथा

हरिनख हरि निसि सहत हैं गहत मंक कछु नाहि ।
नए उरज करिकुंभ ए भए तरुनि-तन माहि ॥ २५६ ॥
चंद्रावलि चंपकलता चंद्रभाग ललिता हु ।
वहसि वहसि मिलयो सवनि हसि हसि धरि धरि वाहु ॥ २५७ ॥

स्तुति, यथा (सवैया)

तेरे ही नीको लगै मृग नैननि तोही कौं सत्य सुधाधर मानैं ।
तोही सों होत निसा हरि कौं हम तोहि कलानिधि काम की जानैं ।
तेरे अनूपम आनन की पदवी इहि कौं सब देत सयानैं ।
तू ही है वाम गोविंद को लोचन चंदहि तौ मतिमंद वखानैं ॥ २५८ ॥

(दोहा)

अद्भुत अहिनी यह बड़ी वेनी सुषमा खानि ।
दरसतहीं हित ही भरै परसतहीं सुखदानि ॥ २५९ ॥

---

[२५६] इसके अनंतर काशि० सर०, सभा में यह कवित्त अधिक है-

सिंह कटि मेख'ला' स्यौं कुंभ कुच मिथुन त्यौं
मुखबास अलि गुंजै भौंहैं धनु सीक है ।
वृष'भान' कन्या मीन-नैनी सुबरन अगी
नजरि तुला में तौलौं रति सी रतीक है ।
ह्वै है निलगात उर करक कटाछन तें
चहिये गलग्रह तें लोग मुवरीक है ।
कुंडल मकर वारे सों लगी लगन अब
वारहो लगन को बनाउ बन्यो ठीक है ॥

[२५७] वहसि०-विहँसि विहँसि (लीथो) सवनि-दुहुन (सर०, सभा) । धरि०-गहि गहि (सर०) ।

[२५८] नीको०-नीके लखे (काशि०) ।

[२५९] हित०-तौ हित (सभा०) ।

निंदा, यथा (सवैया)

भोरी किसोरी सु जानै कहा उकसौहँ उरोज भयो दुख भारो।
बूझिये धौं किन मंत्र सिखायो भयो कब तें अन झारनहारो।
झारतु है कर कुंकुम लाइकै देख्यों मैं जाइकै कौतुक सारो।
खोटो महा यह ढोटो भयो अब छोटो न जानो जसोमति वारो॥ २६०॥

(दोहा)

धरो छिनक गिरि हाथ तुम तिय-उर थिर ह्वै मेरु।
देखि सरस सुबरनबरनि स्याम होहु किन जेरु॥ २६१॥
हियो भरयो बिरहागि सों दियो तुम्हैं तहँ बास।
मोहन मिलि तुम सों तऊ चाहति सकल सुपास॥ २६२॥

पत्री, यथा

जानि बृथा जिय की बिथा लाजनि लिखी न जाइ।
पतित प्रान बिन प्रानप्रिय तन में रह्यो बजाइ॥ २६३॥
तम दुख हारिनि रबि कि दृग-सीतलकारिनि चंद।
बिरह-कतल-काती किधौं पाती आनँदकंद॥ २६४॥
बारिधार सी बरत की बूड़त की जलजान।
बिरह-मृतक-संजीवनी पठई पति पतिया न॥ २६५॥

विनय, यथा

बिनय पानि ओरैं करौं तजहि बानि यह धीर।
तुव कर लागत कोर-नख होति लला-ही पीर॥ २६६॥
लखि रसमय चख-झख लगे कढ़त बढ़त अति पीर।
भई सुबेनी रावरी नई कुबेनी बीर॥ २६७॥

विरहनिवेदन, यथा

जिन्हैं कहत तुम सीतकर मलयज जलज अतूल।
यई उहाँ के रजनिचर अहिसंगी बिस-फूल॥ २६८॥

---

[२६०] अब–यह (लीथो)। छोटो–ढोटो (काशि०)।
[२६५] बरत०–बर मगर ताकै बूड़त जलजान (सभा)।
[२६६] तजहि०–सजहि पानि (काशि०)। लला०–लालहिय (वही)।
[२६७] चख–अब (काशि०)। अति–यह (लीथो)। भई–भनी (वही)। नई–मोहि (वही)।

प्रबोध

आजु कह्यो वृषभानजू उन सम दूजो है न
अब नारी तुव लखन कों आवत है रसऐन ॥ २६९ ॥

सखीकर्म

सखीकृत संकेत-संयोग-कथन

रस बढ़ाइ करि देति हैं सखी दरस-संजोग।
बचन क्रिया की चातुरीं समुझो सकल प्रयोग ॥ २७० ॥

रसोत्कर्पण

अवसि तुम्हैं जौ आवनो साँझ समय बृजनाथ।
राखि जाउ तौ तरुनि-कुचद्वय-संकर-सिर हाथ ॥ २७१ ॥

दर्शन, यथा

देखति आषाढी प्रभा सखी बिसाखा संग।
लाल लखौ जिहि जपत निति तपत कनकदुति अंग ॥ २७२ ॥

संयोग, यथा

गौरीपूजन कों गई बौरी औरी बाल।
तू चलि चलि यहि धौहरे मूरतिवंत गोपाल ॥ २७३ ॥
भले मोहनी मोहनैं करि बनकुंज मिलापु।
फले मनोरथ दुहुँन के चली फूल कों आपु ॥ २७४ ॥

उक्ति-भेद

पिय तिय तिय पिय सों कहैं तिय सखि सखि सों तीय।
सखि सखि सों सखि पीय सों कहैं सखी सों पीय ॥ २७५ ॥

---

[२६९] फलो—नद (काशि०)।
[२७१] तुम्हैं—आजु (सर०, सभा)। आवनो—आइये (काशि०)। जाउ०—जाइयै कुच (काशि०, सर०, सभा)। संकर—माला (सभा)। सिर—गिरि (वही)।
[२७२] निति—निज (सभा)।
[२७५] कहैं०—सखी तिय सों (काशि०)।

कहुँ प्रस्न उत्तर कहूँ प्रश्नोत्तर कहुँ होइ।
स्वतःसभवी होत कहुँ उक्ति इती निधि जोइ ॥ २७६ ॥

प्रश्न, यथा

दृग कमलन की इंदिरा मन-मानस की हस।
कत बिमान-बनितानि को करति न मान-निधंस ॥ २७७ ॥

उत्तर, यथा

स्वास वास अलिगन घिरैं लोग जगे अलि सोर।
तनदुति दरसावै तिन्हैं क्यों आवै इहि ठौर ॥ २७८ ॥

प्रश्नोत्तर, यथा

किये बहुत उपचार मैं सखि कल पलक परै न।
पीत बसन कों चोप तें रहौ लगाए नैन ॥ २७९ ॥

स्वतःसंभवी

सब जग फिरि आवत हुत्यो छिन मेरे मन नीच।
अब क्यों रह्यो भुलाइ है तन्वी तन के बीच ॥ २८० ॥

इति विभाव

इहि बिधि रस सृगार को गनौ बिभाव समस्तु।
तिहि बिनु रस ठहरै नहीं निरालंब ज्यों वस्तु ॥ २८१ ॥
आलंबन बिनु कैसहूँ नहि ठहरै रस-अंग।
उद्दीपन तें बढत ज्यों पावक पवन-प्रसंग ॥ २८२ ॥

अथ शृंगाररस को भेद अनुभावयुक्त कथन

सुभ संजोग वियोग मिलि है सिंगार द्वै भाइ।
काहू श्रम मिश्रित मिले दीन्हो चारि गनाइ ॥ २८३ ॥

---

[२७६] कहुँ–है (सभा०)। इती–रती (काशि०)।
[२७७] मन–मनि (काशि०)।
[२७९] उपचार०–हिय लाज सखि कल पल एक (लीथो)।
[२८०] मेर–मैं ये (सर०, सभा)।
[२८२] अग–रग (सर०)।

संयोग शृंगार या सामान्य शृंगार को लक्षण

मिलि विहरैं दंपति जहाँ सो संजोग सिंगारु।
भिन्न भिन्न छवि वरनिये सो सामान्य विचारु ॥ २८४ ॥

संयोग शृंगार, यथा

तिय-तन-द्युति विपरीति-रति प्रतिबिंबित ह्वै जाइ।
परत साँवरे अंग को हरित रंग दरसाइ ॥ २८५ ॥

सुरतांत, यथा (सवैया)

क्योंहूँ नहीं बिलगात सोहात लजात औ घात गुने मुसुकात हैं।
तेरी सौं स्रात हैं लोचन रात हैं सारस-पातहू तें सरसात हैं।
राधिका माधौ उठे परभात हैं नैन अघात हैं पेखि प्रभा तहैं।
लागि गरें अँगिरात जँभात हैं आरस गात भरे गिरि जात हैं ॥ २८६ ॥

(दोहा)

प्रात रात-रति-रगमगी उठि अँगिराति रसाल।
सुरससागर अवगाहि थकि थाह लेति जनु वाल ॥ २८७ ॥

संयोग-संकेत-वर्णन

सूने-सदन सखीसदन घन वाटिका समेत।
क्रियाचातुरी होत पुनि बहुत सँजोग सँकेत ॥ २८८ ॥

सूने सदन को मिलन

कस्यो अंक लहि सून गृह रस्यो प्रेमरस नाह।
कियो रसीली वसि निहसि ढीली चितवनि माह ॥ २८९ ॥

---

[२८५] रति—लखि (लीथो)।
[२८६] स्रात हैं—स्रान हौं (सर०), न्यात हौं (सभा)।
[२८७] जनु—मनु (सर०)।
[२८९] इसके अनंतर काशि० में यह गद्यांश है—यों नाम लिये तें सखी-सदन घन वाटिका दिक जानवी।

क्रियाचातुरी को संयोग (सवैया)

_र खरो भयो भावतो नेह तेँ मेह तेँ आयो उनै अँधियारो।
ऐसे में चातुर आतुर ह्वै मुरली-सुर दै कियो नेक इसारो।
ह्वाँ मनभावती मंदहि मंद गई करिबे चहँ बंद कैवारो।
अग में लाइ निसंक ह्वै जाइ प्रजक बैठाइ लियो पिय प्यारो॥ २६०॥

'अथ सामान्य शृंगार में हाव-लक्षण (दोहा)

सम संयोग सिँगारहूँ तिय-कौतुक है हाव।
जाते लखिये प्रीति को बिबिधि भाँति अनुभाव॥ २६१॥
क्रिया बचनु अरु चेष्टै जहँ बरनत कबि कोइ।
ताहू कोँ हावै कहैँ अनुभव होइ न होइ॥ २६२॥

हावन के लक्षण (छप्पय)

चितवनि हसनि बिलास ललित सोभा-प्रकासकर।
बिभ्रम संभ्रम-काज बिहित आड़ै लज्जा उर।
किलकिंचित बहु भाव हिये अंगनि मोट्टाइत।
केलि-कलह कुट्टमित कपट-नादर बिब्बोक चित।
बिच्छित्ति बिना कै थोरहो भूषन-पट सोभा बढ़ति।
पिय स्वाँग करै तिय-प्रेम-बस कहियत लीला हाव गति॥ २६३॥

बिलास हाव (दोहा)

भृकुटि अधर को फेरिबो बंक बिलोकनि हास।
मनमोहन को मन हर्‍यो तिय को सकल बिलास॥ २६४॥

(कवित्त)

पै बिनु पनिच बिनु कर की कसीस बिनु
चलत इसारे यह जिनको प्रमान हैं।

---

[२६०] उनै-जौने (लीथो)। मदहि०-मदहि बद (सर०)। में लाइ-लगाइ (लीथो)।
[२६२] चेष्टै-चेष्टा (सर०), चेष्ट ते (सभा)। अनुभव०-मन में अनुभव होइ (काशि०), अनुभव जोई होइ (सभा)।
[२६४] बिलास-सुपास (सर०)।

आँखिन अडत आइ उर मैं गड़त घाइ
परत न देखे पीर करत अमान हैं।
वंक अवलोकनि के वान औरई निधान
कज्जलकलित जामैं जहर समान हैं।
तासौं वरवस वेधैं मेरे चित चंचल कौं
भामिनी ये भौंहैं कैसी कहर कमान हैं ॥ २९५ ॥

(दोहा)

छुवै गो अंगहि अग कहुँ कहा करैगी ग्वारि।
यहि बिधि नंदकुमार पर न दरि अधर सुकुमारि ॥ २९६ ॥
फिरि फिरि चितवावत ललन फिरि फिरि देत हसाइ।
सुधा-सुमन-वरषा निरखि हरष हिये सरसाइ ॥ २९७ ॥

ललित हाव

पट भूषन सुकुमारता थल जल वाग निहार।
लाल मनोहर बाल को सकल ललित ब्यौहार ॥ २९८ ॥
बाला-भाल प्रभा लहै वर वंदन को विदु।
इदुवधूहि गह्यो मनो गोद मोदजुत इंदु ॥ २९९ ॥
गिलमनहूँ निहरै न तू लली निपट मृदु अग।
चुवन चहत एड़ीन सौं ईंगुर कैसो रंग ॥ ३०० ॥
मूदे दृग सरसाइ दुति दुन्यो देति दरसाइ।
वलि तुव सँग दृगमिहिचनी खेलै कौनि उपाइ ॥ ३०१ ॥
जानि न वेली वृंद मैं नारि नवेली जाइ।
सोनजुही के वरन तन कलरव वचन सुभाइ ॥ ३०२ ॥

---

[२९५] धाइ–धाइ (सर०)। देखे–पेखे (वही)।
अरास–अरवट (वही)। कैसी–तेरा (फारि० +)।
[२९६] न–नि (सर०)।
[२९८] सकल–सकृत (सभा)।
[२९९] लहै–लगै (लीथो)।
[३००] लली–अली (सर०, सभा)।
[३०२] के–से (लीथो)।

चलि दवि या डरु अलिन के लली दुरावत अंग।
तऊ देह दीपति लिये जात गुंजरत संग॥ ३०३॥

विभ्रम हाव

अदल-बदल भूषन प्रिया यातें परत लखाइ।
नूपुर कटि ढीलो भयो सकसि किंकिनी पाइ॥ ३०४॥

विहृत हाव

मौं बसि होइ तौ बसि रहै मोहन मूरति मैन।
उर तें उत्कंठा बढ़ै कढ़ै न मुख तें बैन॥ ३०५॥
अँचवन दियो न आजु अलि हरि-छवि-अमी अघाइ।
आइयो प्यासे दृगनि कौं लाज निगोडी आइ॥ ३०६॥

किलकिंचित् हाव

बाँह गही ठठकी सकी पकी छकी सी ईठि।
चकी जकी बिथकी थकी तकी झुकी सी डीठि॥ ३०७॥

मोट्टाइत हाव

करनि करन कंडू करति पग अँगुठा भुव लेखि।
तिय अँगिराति जँभाति छकि मनमोहन-छवि देखि॥ ३०८॥
काली नथि ल्यायो समुझि वा दिनवाली बात।
आली बनमाली लखें थरथरात मो गात॥ ३०६॥

कुट्टमित हाव

नहीं नहीं सुनि नहि रह्यो नेह-नहनि में नाह।
त्यों त्यों भारति मोद सों ज्यों ज्यों झारति बाँह॥ ३१०॥

---

[३०३] चलि दवि या डरु—चली दूनि फर (लीथो)।
[३०४] पाइ—जाइ (सर०)।
[३०५] उर तें—उत्तर (सभा)।
[३०७] सकी—लकी (काशि०)। पकी—थकी (सर०, सभा०, लीथो)।
[३०८] कडू—कड करन (काशि०), कुडा करति (लीथो),
कँड कूरतिय (सर०)।

विव्बोक हाव

लगि-लगि विहरि न साँवरो विमल हमारो गात।
तुव तन की झाईं परैं लगि कलंक सो जात ॥ ३११ ॥
गुज गरैं गाँथैं धरैं माथैं मोर परवान।
एतनेहीं ठिकु टान पर एतो बड़ो गुमान ॥ ३१२ ॥
ज्यौं ज्यौं विनवै पगु परै बृथाँ मानहूँ पीय।
त्यौं त्यौं रुख रूखी करैं लगी खमासे तीय ॥ ३१३ ॥

विच्छित्ति हाव

देह दुरावत बाल जनि करै आभरन-जाल।
दै सौतिन-दृग-मदहरनि मृगमद-बैंदी भाल ॥ ३१४ ॥

लीला हाव

सजि सिंगार सब रावरे सिर धरि मोर परवान।
आजु लेत मनमोहनौ घरही में दधि दान ॥ ३१५ ॥
उत हेरौ हेरत किते ओढ़े सुवरन-काँति।
पीत पिछौरी रावरी वहै जरकसी भाँति ॥ ३१६ ॥

अपरंच हाव-भेद (छप्पय)

मूरखता कछु मुग्ध क्रियाचातुर्ज सु बोधक।
तपन दुरख मय वचन चकित ह्वै जात कछुक जक।
हसित हँसी आइबो कुतूहल कौतुक पैबो।
वचन हाव उद्दीप्त केलि करि हास रिझैबो।
बौरई प्रेम विक्षेप कहि रूपगर्व लखि मद कहेउ।
दस हाव विदित पहिले गुनौ फेरि सुनौ दस हाव येउ ॥ ३१७ ॥

---

[३११] साँवरो-साँवरे (सर०, सभा)। हमारो-हमारे (वही)।
[३१२] एतने ही-इते बडे (सर०, सभा)।
[३१३] मानहूँ-मानहीं (लीथो)।
[३१४] देह०-छरिति (सर०)। दुरावत-दुरावहि (सभा)।
जनि-निज (लीथो)।
[३१५] घर ही-घरहू (सर०, सभा)।
[३१६] वहै-वही (सर०, लीथो)।
[३१७] बौरई-जहँ बौरि (सभा)। लखि-सखि (वही)।

मुग्ध हाव

पहिरत होत कपूरमनि कर के धरत प्रवाल।
मोहि दई मनभावते कैसी मुक्तामाल ॥ ३१८ ॥

बोधक हाव

लखि ललचौंहै गहि रहे केलि तरुनि बृजनाथ।
दियो जानि तिय जानिमनि रजनी सजनी हाथ ॥ ३१६ ॥

तपन हाव

लाल अधर में को सुधा मधुर किये बिनु पान।
कहा अधर में लेत हौ धर मैं रहत न प्रान ॥ ३२० ॥
दई निरदई यह बिरहमई निरमई देह।
ये अलि ज्यौं बाहर बसे त्यौं ही आए गेह ॥ ३२१ ॥

चकित हाव

दह दिसि आए घेरि घन गई अँध्यारी फैलि।
झपटि सुबाल रसाल सौं लपटि गई ज्यौं बेलि ॥ ३२२ ॥

हसित हाव

रुख रूखी करत न बनै बिहसे नैन निदान।
तन पुलक्यो फरक्यो अधर उघरयो मिथ्या-मान ॥ ३२३ ॥
अनिमिप दृग नखसिख बनिक रही गवारि निहारि।
मुरि मुसुकानी नववधू मुख पर अंचल डारि ॥ ३२४ ॥

कुतूहल हाव

रह्यो अधगुह्यो हार कर दौरी सुनत गोपाल।
गुलिक गिरे जनु फल झरे कनक बेलि वर बाल ॥ ३२५ ॥

---

[३१८] होत–होइ (सर०)।
[३२०] किये–करै (लीथो)।
[३२२] दह–दुहु (लीथो)
[३२३] बनै–बन्यो (सर०, सभा)। कुतूहल हाव का उदाहरण लीथो में नहीं है। हसित हाव का दूसरा उदाहरण वहाँ कुतूहल का माना गया है।
[३२५] गिरे–गिरयो (सर०, सभा)। झरे–भरयो (वही)।

उद्दीप्त हाव

अनरस-भरी धुनि अलिन की बचन अलीक अमान।
कान्ह निहारे रावरे सब सुनिये दै कान ॥ ३२६ ॥
पा पकरो बेनी तजो धरमै करिये आजु।
भोर होत मनभावतो भलो भूलि सुभ काजु ॥ ३२७ ॥

केलि हाव

भरि पिचकी पिय पाग मैं बोरयो रंग गुलाल।
जनु अपने अनुराग की दई बानगी बाल ॥ ३२८ ॥
जेंवत धरयो दुराइ लै प्यारे को परिधान।
मागति मैं बिहसति नटति करति आन की आन ॥ ३२९ ॥

विक्षेप हाव

सुद्धि बुद्धि को भूलिबो इत उत बृथा चितौनि।
अधर भृकुटि को फेरिबो बिक्षेपहि की ठौनि ॥ ३३० ॥
निरखि भई मोहनमई सुधि बुधि गई हिराइ।
संगति छूटी अलिन की चली स्याम-सँग जाइ ॥ ३३१ ॥
आवति निकट निहारिकै मान-सिखावनिहारि।
हौं रिसाति तुम कीजियहु बहु मनुहारि मुरारि ॥ ३३२ ॥

मद हाव

सारसनैनी रसभरी लखति आरसी ओर।
छकी छाँह छवि छाँह ही छकयो नंदकिसोर ॥ ३३३ ॥

---

[३२६] सुनिये०–सुनियत है (सर०)।
[३२८] बोरयो–डारयो (काशि०)। बानगी–चुनौटी (सर०), नमीला (सभा)।
[३२९] जेंवत–जब तें (लीथो)।
[३३०] भूलिबो–फेरिबो (सर०, सभा)।
[३३१] चली–चकी (काशि०)।
[३३३] रस–मद (सर०)।

अथ हेलाहाव-लक्षण

प्रीति भाव प्रौढ़त्व में जहँ छूटति सब लाज।
सम संजोग सिगारहू उपजै हेला साज ॥ ३३४ ॥

धाल बहस करि लाज सों बैरिनि समुझि निदान।
हरि सों चर विपरीति रति करति अधर मधुपान ॥ ३३५ ॥

(सोरठा)

सखि सिखवै कुलकानि पीठि दिये हाँ हाँ करै।
उत अनिमिष अँखियान मोहनरूप - सुधा भरै ॥ ३३६ ॥

अपरं च (दोहा)

उदारिज्ज माधुर्ज पुनि प्रगल्भता धीरत्व।
ये भूषन तरुनीन के अनुभावहि में सत्व ॥ ३३७ ॥

औदार्य

महाप्रेम रसबस परै उदारिज्ज कहि ताहि।
जीवन धन कुल लाज की जहाँ नहीं परवाहि ॥ ३३८ ॥
जो मोहन-मुखचंद में होइ भरे मनु लीन।
सौध्य कौमुदी-म्हार मैं छार करौं तन छीन ॥ ३३९ ॥
तोरि तोरि लै ललित कर मुकुतमाल रमनीय।
दारिम के मिस हरि सुकहि रहति चुनावति तीय ॥ ३४० ॥
दूरि जात भजि भूरि सिख चूरि जाति कुलकानि।
मनमोहन सजनी जहाँ आनि परत अँखियानि ॥ ३४१ ॥
सोर घेरु को नहिं गनै निरखत नंदकिसोर।
लखति चारु मुख ओर कछु करत विचारु न और ॥३४२॥

---

[३३४] प्रौढत्व-प्रौढोक्ति (सर०, सभा)। छूटति-छूटी (लीथो)।
[३३५] रति-हूँ (काशि०), सजि (सर०, सभा)।
[३३६] भरै-पियै (सर०, सभा)।
[३३८] लाज-कानि (लीथो)।
[३४०] तोरि०-तोरि जो ढीले (लीथो)। के-त्यों (सर०, सभा)।
[३४१] आनि०-आपनि परत अपानि (सर०)।
[३४२] गनै-धनै (लीथो)।

माधुर्य, यथा

सोभा सहज सुभाय की नवला सील सनेह।
ये तिय के माधुर्ज हैं जानत त्यौरन तेह॥ ३४३॥
सवनि बसन भूषन सजे अपने अपने चाड़।
मन मोहति प्यारी दिये वा दिनवारी आड़॥ ३४४॥
मनमोहन आगे कहा मानु बनैगो ऐन।
भौंहनि सौं रूखी परै रूखे होत न नैन॥ ३४५॥

प्रगल्भता-धीरत्व-लच्छन

कहुँ सुभाव प्रौढ़ानि को प्रगल्भता जिय जानि।
कै पतिव्रत कै प्रेम दृढ़ सो धीरत्व बखानि॥ ३४६॥

प्रगल्भता, यथा

जिय की जरनि बुझाइकै पाइ समय भिदि भीर।
पुलकित तन बलबीर पर डारे जात अबीर॥ ३४७॥
फिरि फिरि भरि भरि भुज गहति चहति सहित अनुराग।
मधुर मदन मनहरनि छवि बरनि बरनि निज भाग॥ ३४८॥

धीरत्व, यथा

सूरो तजै न सूरता दीबो तजै न दानि।
कुलटा तजै न कुल-अटनि कुलजा तजै न कानि॥ ३४९॥
केलिरसनि सौं मैं रँग्यौ हियो स्याम रँग माहि।
दियो लाख अरकै सुरै सखी छूटिबे नाहि॥ ३५०॥

अथ साधारण अनुभाव

जदपि हाव हेला सकल अनुभावहि की रीति।
साधारन अनुभाव जहँ प्रगटै चेष्टनि प्रीति॥ ३५१॥

---

[३४४] बसन—बसन (सभा)। वारी—वाली (सर०, सभा०, लीथो)।
[३४५] भौंहनि—भौंहूँ (सर०, सभा, लीथो)।
[३४६] प्रगल्भता०—प्रगल्भ मानिय (काशि०)। कै प्रेम—को प्रेम (लीथो)।
[३४७-३४८] ये दानों छंद काशि० में नहीं हैं। मन—छवि (लीथो)। निज—छवि (वही)।
[३५१] जदपि—उदपि (लीथो)। जहँ—दे (काशि०)।

यथा

फिटकत लाल गुलाल लखि लली अली डरपाइ ।
बरज्यो ललचौंहैं पलनि रसना दसन दबाइ ॥ ३५२ ॥

सात्त्विक भाव

उपजत जे अनुभाव में आठ रीति परतच्छ ।
तासों सात्त्विक कहत हैं जिनकी मति अति स्वच्छ ॥ ३५३ ॥
स्तंभ स्वेद रोमांच अरु स्वरभंगहि करि पाठ ।
बहुरि कंप वैवर्न्य है अश्रु प्रलय जुत आठ ॥ ३५४ ॥

स्तंभ, यथा

सब तन की सुधि स्याम में लगी लोचननि साथ ।
खात गिरी मुख की मुराहि रही हाथ की हाथ ॥ ३५५ ॥
परी घरी नोरहि रही नीरें लखि सुखदानि ।
हँसी ससीमुख में लसी रसी रसीली पानि ॥ ३५६ ॥

स्वेद, यथा

कैसो चंदन बाल के लाल चढ़ाए गात ।
रहत पसीना न्हात को अजहूँ लौं न सुखात ॥ ३५७ ॥

रोमांच, यथा

तजौ खेलि सुकुमारि यह निपट कहाँ कर जोरि ।
लगे गेंद उर गात सन गए ददोरे दौरि ॥ ३५८ ॥

स्वरभंग, यथा

निकस्यो कंपित कंटस्वर निरखे स्याम प्रवीन ।
गुआ लगी कहि ग्वालि यों डारि दियो महि बीन ॥ ३५९ ॥

---

[३५३] में–तें (लीथो) । अति–है (सभा) ।
[३५६] पानि–बानि (लीथो) ।
[३५७] कैसो–केसरि (लीथो) । को–सो (काशि०) ।
[३५९] बीन–हीन (काशि०) । गुआ०–ग्वाल गोप कहि ग्वारियौ (सर०), धुवाँ लगी कहि ग्वारिया (सभा) ।

कंप भाव

अहो आज गरमी बस न काहू बसन सोहात।
सीत सताए रीति अति कत कंपित तुव गात॥ ३६०॥

वैवर्ण्य, यथा

धरे हिये मैं साँवरी मूरति सनी सनेह।
कहैं अमल तैं रावरी भई साँवरी देह॥ ३६१॥
लगी लगनि बलबीर सौं दुरैब क्यों बलबीर।
सुबरन-तन-पीरी करै परगट मन की पीर॥ ३६२॥

अश्रु, यथा

तुम दर्सन दुरलभ दई भई सु हर्षित हाल।
ललन वारती तिय पलनि भरि भरि मुक्तामाल॥ ३६३॥

प्रलय, यथा

डीठि डुलै न कहूँ भई मोहित मोहन माहिं।
परम सुभगता निरखि सखि धरम तजै को नाहिं॥ ३६४॥
बूझति कहति न बचन कछु एकटक रहति निहारि।
किहि इहि गोरी कौं दई दई ठगौरी डारि॥ ३६५॥

प्रीतिभाव-वर्णन

केवल वर्नन प्रीति को जहाँ करै कवि कोइ।
प्रीतिभाव-वर्नन सु तौ सब तैं न्यारो होइ॥ ३६६॥

---

[३६०] गरमी०—गरमीय बस (सभा)।
[३६१] साँवरी—रावरी (सर०); रावरे (सभा)।
[३६२] सौं०—की बस्यो दूर (सभा)। परगट—प्रगट मान (लीथो)।
[३६३] तिय—निह (लीथो)। इसके अनंतर काशि० में यह दोहा अधिक है—

प्रलय, यथा

अनिमिष दृग पर पद अचल बोलति हसति न बाल।
उन चितयो चित्रित भई चितवति तुम्हें गोपाल॥

[३६५] दई—भई (लीथो)।
[३६६] जहाँ—जहीं (लीथो)। करै—करे (सभा)। तैं—सौं (वही)।

यथा

बढ़त बरतहू दिवस निसि प्रगट परत लखि नाहि।
नयो नेह निरखै न यो तिय-तन-दीपक माहि॥ ३६७॥
मिलि बिछुरत बिछुरत मिलत तजि चकई-चकवान।
रतिरस-पारावार को पावत पार न आन॥ ३६८॥

अथ वियोग-शृंगार-लक्षण

जहँ दंपति के मिलन बिनु होत निथाबिस्तार।
उपजत अंतर भाव बहु सो वियोग सृंगार॥ ३६९॥

यथा

क्षीरफेन सी सैनहू पीर घनी सरसात।
चौसर चंदन चाँदनी पिय बिनु जारै गात॥ ३७०॥

वियोग-शृंगार-भेद

है वियोग विधि चारि को पहिले मानु बिचारि।
पूरबराग प्रवास पुनि करुना उर में धारि॥ ३७१॥

मान-भेद

इरषा गरब उदोत तें होत दंपतिहि मानु।
गुर लघु मध्यम सहित सों तीनि भाँति को जानु॥ ३७२॥
लखि सचिन्ह सुख नाम सुनि बोलत देखत देखि।
गुर मध्यम लघु मान ज्यौं आन-बाम-रत लेखि॥ ३७३॥

गुरु मान, यथा

स्याम पिछौरी छोर मैं पेखि स्यामता लागि।
लगे महाउर आँगुरिन लगी महा उर आगि॥ ३७४॥
इष्ट-देवता लौं लग्यो जिय जाहा जेहि नाम।
तासु पास तजि आइये कौन काम इत स्याम॥ ३७५॥

---

[३६७] बरत–बढ़त (लीथो)। परत–करत (वही)।
दीपक–दीपति (वही)।
[३६८] आन–जान (सभा)।
[३७३] ज्यौं–यों (सभा +)। लेखि–पेखि (सर०)।
[३७५] लग्यो–लगैं (काशि०)। जिय०–लगी जीह (सभा)।

मध्यम मान, यथा

सुनि अघाइ बतलाइ उत सुधासने तिय - बैन।
हठि कत लाल बोलाइअत मोहि अरोचक ऐन ॥ ३७६ ॥

लघु मान, यथा

अहो रसीले लाल तुम सकल गुनन की खानि।
सुन्यो दुख्यों सखियान पै सो देख्यों अखियानि ॥ ३७७ ॥

अथ मान-प्रवर्जन-उपाय (सवैया)

साम बुझाइबो दान है दीबो औ भेद जू बात बनै अपनावै।
पाय परै नति भै डरुपैवो उपेक्षा जु औरियै रीति जनावै।
ताहि प्रसगविध्वंस कहैं जहँ छाड़ि प्रसंग सुकाज बनावै।
मानप्रवर्जन की यों उपाइ करै बहु रीति सु 'दास' गनावै ॥ ३७८ ॥

सामोपाय, यथा

उनको बहुरत प्रान है तुम्हैं न तनकौ ज्यान।
नेकु निहारो कान्ह पै सुधाभरी अँखियान ॥ ३७९ ॥

दानोपाय, यथा (सवैया)

भाँवरी दै गयो रावरी पौरि में भावतो भोर तें केतिक दाँव री।
दाँवरी पै न मिटै उर की बिनु तेरे मिले करै कोटि उपाव री।
पाँवरी पैन्हि लै प्यारी जराइ की ओढ़ि लै चाँचरि चारु असावरी।
साँवरी सूरति ही में बसाव री बावरी बीतत बादि विभावरी ॥३८०॥

---

[३७६] कत–कै (लीथो)। बोलाइअत–बोलाइए (सर०)। ऐन–नैन (वही)।

[३७८] साम०–स्याम समुझाइयो (लीथो)। नति०–न तिन्है (सर० +)। डरु०–डरपाइ (सर०)। औरियै–चातुरी (सर०, सभा)।

[३७९] तनको०–तन की आन (लीथो)।

[३८०] पौरि–पैंड (सर०)। उर–जिय (सर०, सभा)। करै–किये (सर०)। चाँचरि–चादरी (सर०, सभा, लीथो)।

(दोहा)

अहे चाह सों पहिरिके हरिकर-गुंथित फूल।
सब सोभा सुख लूटि लै दै सौतिन कौं सूल ॥ ३८१ ॥

भेदोपाय

तेरे मानु किये हियैं लगी हितुन कैं लाइ।
हरि सौं हँसि हाँती करैं तौ हीती है जाइ ॥ ३८२ ॥
कहा भयो बिहरयो कहूँ लालन तजि तूँ बाल।
चहती पाइ उपाइ कै सौति सज्यो निज माल ॥ ३८३ ॥

प्रणति, यथा

अहे कहै चाहति कहा कियो इतैइ तमाम।
जगभूपन सिरभूपनहि पगभूपन करि बाम ॥ ३८४ ॥

भयोपाय, यथा

प्रफुलित निरखि पलासबन परिहरि मानिनि मान।
तेरे हेत मनोज खलु लियो धनंजय-बान ॥ ३८५ ॥

उत्प्रेक्षा, यथा

ज्यों राखै जिय मान त्यों अब राखौ पिय मान।
जानि परै जिहि मानिनी दोहुन को परिमान ॥ ३८६ ॥
डसे रावरी वेनिहीं परे अधर्से स्याम।
तिन्हैं ज्याइबो रावरे अधरन ही को काम ॥ ३८७ ॥

प्रसंगविध्वंस

दिन परिहै चिनगी चुनैं बिरह-बिकलता जोर।
पाइ पियूप मयूखपी पी भरि निसा चकोर ॥ ३८८ ॥

इति मान

---

[३८१] 'सर०' और 'सभा' में नहीं है।
[३८२] हीती–होती (लीथो); हाती (सर०, सभा)।
[३८३] चहती०–चहति उपाइ (लीथो); चाहति पाइ (सर०)।
[३८४] इतैइ–इतोइ (सर०)।
[३८५] निरखि–देखि (सभा)। खलु–खल (लीथो, सभा)।
[३८८] चुनैं–चुगैं (सर०)। पी पी–ई पी (लीथो), कर पी (सर०)।

अथ पूर्वानुराग-लक्षण

लगनि लगै सु हाँ लखैं उत्कंठा अधिकाइ।
पूर्वराग अनुरागियन होत हियैं दुख आइ॥ ३८६॥

श्रुतानुराग

लगी जासु नामैं सुनत अँसुवा झरि अँखियानि।
कहि गहिलौ क्यों तुअ कहैं ताहि मिलाऊँ आनि॥ ३६०॥

दृष्टानुराग

जेहि जेहि मगु नित पगु धर्‌यो मोहन मूरति स्याम।
मोहि करत मोहित महा जोहतहीं वह ठाम॥ ३६१॥
परस परसपर चहत हैं रहे चितै हित-बाढ़ि।
रटनि अटपटी अटनि पर अटनि दुहुन की गाढ़ि॥ ३६२॥

इति पूर्वानुराग

अथ प्रवास-लक्षण

सो प्रवास द्वै देस में जहँ प्यारी अरु पीउ।
सिगरौ उद्दीपन-निपै देखि उठै दहि जीउ॥ ३६३॥

यथा (कवित्त)

पावस-प्रवेस पिय प्यारो परदेस यो
अँदेस करि झाँकै चढ़ि महल दरी दरी।
बकन की पाँति इंदुवधुन की काँति
भाँति भाँति लखि सादर बिसूरति घरी घरी।
पवन की झूकैं सुनि कोकिल की कूकैं सुनि
उठै हिय हूकैं लगी काँपन डरी डरी।

---

[३८६] अनुरागि०—अनुरागधन (लीथो), अनुराग मह (सर०)।
[३६०] तुअ—तू (लीथो)। मिलाऊँ—मिलावै (सर०)।
[३६१] धर्‌यो—धरै (लीथो) परयो (काशि०)।
[३६२] रहे—दहत (काशि०)। रटनि—हठनि (सभा)।
[३६३] दहि—इहि (सर०)।
[३६४] यो—छायो (लीथो)।

परी अलबेली हिये खरी सलबेला तकै
हरी हरी बेली थकै व्याकुल हरी हरी ॥ ३६४ ॥

(दोहा)

खरी धारजुत धाढि अरु पान्यो घाट निहारि।
नहिं आवति जमुना बहीं वही समर-तरवारि ॥ ३६५ ॥
अरी घुमरि घहरात घन चपला चमक न जान।
काम कुपित कामिनिन्ह पर धरत सान किरवान ॥ ३६६ ॥

अथ दश-दशा-कथन (कवित्त)

अभिलाषा मिलिबे की चाह गुनबर्नन सराह
स्मृति ध्यान चिंता मिलन-बिचारु है।
कछू न सोहाइ उद्वेग व्याधि ताप
कृसता प्रलाप बकिबो सहित दुखभारु है।
बावरी लौं रोइ हँसै गावै उनमाद भूलै
खानपान जड़ता दसा नव प्रकारु है।
पूरबानुरागहू मैं प्रगट प्रवासहू मैं
मरन समेत दस करत सुमारु है ॥ ३६७ ॥

अभिलाप दशा, यथा (दोहा)

दृगनि लख्यो श्रवननि सुन्यो ये तलफैं तौ न्याइ।
हिय तिय बिन लखेहीं सुनैं मिलिबे कौं अकुलाइ ॥ ३६८ ॥

(कवित्त)

लीन्हो सुख मानि सुषमा निरखि लोचननि
नील जलजात नयो जा तन यौं हारि गो।
वाही जी लगाइ कर लीन्हो जी लगाइ कर
मनि मोहनी सी मोहनी सी उर डारि गो।

---

[३६५] पान्यो-पानिय (लीथो) । आवति-अवाति (सभा) ।
समर-समन (काशि०, सभा, लीथो) ।
[३६६] चमक-समक (सर०) ।
[३६८] बिन०-बिना लखे (काशि० +) ।
[३६९] यौं-धौं (काशि०) । वाही-ऐही (लीथो) । मति-मानि

लावे पलकौ न पलकौ न निसरै री
निसवासी या समै तें घास मैं धिय धगारि गो।
मानि आनि मेरी आनि मेरे ढिग वाकौं तूँ न
काहूँ बरजो री बरजोरी मोहि मारि गो॥ ३६६॥

गुण-वर्णन (दोहा)

भरत नेह रूरे हिये हरत बिरह को हार।
बरत नयन सीरे करत वर तरुनी के वार॥ ४००॥

(कवित्त)

दधि के समुद्र न्हायो पायो न सफाई तायो
आँच अति रुद्रजू के सेपर-कृसान की।
सुधाधर भयो सुधा-अधरन हेत
द्विजराज भो अकस द्विजराजी की प्रभान की।
घटि घटि पूरि पूरि फिरत दिगंत अजौं
उपमान बिन भयो ग्लान अपमान की।
'दास' कलानिधि कला कैयो कै देखायो पै न
पायो नेक छबि राधे बदन-बिधान की॥ ४०१॥

स्मृति-भाव (दोहा)

ध्याइ ल्याइ हिय रावरी मूरति मदन मुरारि।
दृगनि मूँदे प्रमुदित रहति पुलकि पसीजति नारि॥ ४०२॥
चित चोखी चितवनि बसी चलनि अनोखी काँति।
बसी करन बतिया जु है बसीकरन की भाँति॥ ४०३॥

चिंता दशा

दुख सहनो दिन रैन को और उपाइ न जाइ।
इक दिन अलि बृजराज कौं मिलिये लाज बिहाइ॥ ४०४॥

(काशि०) पलकौ–बलकौ (वही)। मेरे–मेरी (काशि०, सभा)। काहूँ–कहूँ (सभा)।
[४००] सीरे०–सीकरत है (लीथो)।
[४०१] पायो–पाई (लीथो)।
[४०२] ध्याइ–ध्यान (सभा)।
[४०३] बसी–बनी (सर०)।
[४०२ से ४०४ तक] काशि० में नहीं है।

उद्वेग दशा

पलिका तें पशु भुव धरैं भुव तें पलिका माहिं।
तुम बिनु नेकु न कल परै कलप रैन दिन जाहिं ॥ ४०५ ॥
इत नेकौ न सिराति यह इतने जतन करैंहुँ।
उत पल भरत न धीर वै उतपत्र-सेज-परैंहुँ ॥ ४०६ ॥

व्याधि दशा

सौधरंध्र मग ह्वै लख्यो हरितन-जोति रसाल।
भई छाम परिमान तें तेहि छवि में परि बाल ॥ ४०७ ॥

(कवित्त)

जा दिन तें तजी तुम ता दिन तें प्यारी पै
कलाद कैसो पेसो लियो अधम अनंगु है।
रावरे को प्रेम खरो हेम निरखरो है भ्रम
धवत उसासनि हरत बिनु ढंगु है।
कहा करौं घनस्याम वाकी अति आँचन सौं
औरहू को भाग्यो खानपान रसरंगु है।
काठी कै मनोरथ विरह हिय भाठी कियो
पट कियो लपट अँगारो कियो अंगु है ॥ ४०८ ॥

प्रलाप, यथा (दोहा)

चातिक मोही सौं कहा पी पी कहत पुकारि।
मेरी सुधि दै वाहि जिहि डारी मोहि बिसारि ॥ ४०९ ॥
किये काम कमनैत दृढ़ रहत निसानो मोहि।
अहे निसा तौहूँ नहीं निसा निसासिनि तोहि ॥ ४१० ॥

---

[४०५] काशि० में द्वितीय दल केवल + में यों है—
भई चिकल मनभावती परै न कल मन मोहि।
[४०६] परैंहुँ—करैंहुँ (लीथो)।
[४०७] लख्यो—कढ्यो (सर०) परिमान—प्रमान (लीथो)।
[४०८] कलाद—कसाई (लीथो)।
[४०९] मोहि—निपट (सर०)।
[४१०] हूँ—है (काशि०)। निसासिनि—निसादिन (लीथो)।

तनु तनु करे करेज [कौं अतनु कसाई ल्याइ ।
छनदा छन छन दाहती लोनो नेह लगाइ ॥ ४११ ॥
बिसवासी बेदन समुझि तजि परपीड़न साज ।
कहा करत मधु-मास-रुचि जग कहाइ द्विजराज ॥ ४१२ ॥

उन्माद दशा

कुचनि सेवती संभु सुनि कामद समुझि अधीर ।
दृग-अरघानि घरी घरी रहति चढ़ावति नीर ॥ ४१३ ॥
बोल कोकिलनि को सुनै यकटक चितवत चंद ।
श्रीफल लै उर में धरै तुम बिन करुनाकंद ॥ ४१४ ॥

जड़ता दशा

रही डोलिबे बोलिबे खानपान की चाल ।
मूरति भई पखान की वह अनला अन लाल ॥ ४१५ ॥

इति दश दशा

अथ करुणा-विरह-लक्षण

मरन बिरह है मुख्य पै करुन करुन इहि भाइ ।
मरिबो इच्छति ग्लानि सौं होत निरास बनाइ ॥ ४१६ ॥

(सवैया)

यह आगम जानती आगमनै जु न तो पहँ जाइगो संग दियो ।
तो ह्याँ काहे कौं नाहक नैननि नीदि कै तोही कौं सौंपती प्रानपियो ।
कहि ए रे कसूर कहा तूँ कियो कुलिसौं कठिनाई में जीति लियो ।
धृग तो कहँ हा मनमोहन के बिहरे बिहराइ गयो न हियो ॥४१७॥

---

[४११] दाहती०—दहति है (लीथो) ।
[४१२] बिसवासी—बिसबासिनि (सभा) । रुचि—मुचि (वही) ।
[४१३] अरघानि—अध्यारि (सर०) ।
[४१४] धरै—धरत (लीथो) । करुना०—करुन बिरह (सर०) ।
[४१७] पहँ—यह (लीथो) । तोही—तोहूँ (वही) । में—को (वही) । तो०—तोकों हहा (वही) । बिहरे०—बिछुरे बिरहागि दहो (वही) ।

(दोहा)

यह कबहुँक यह सहत है सदा पाइ घनघोर ।
हीरा कहौ कठोर कै हीरा कहौ कठोर ॥ ४१८

इति वियोग-शृंगाररस समाप्त

अथ मिश्रित शृंगार

संजोग ही वियोग कै वियोग ही संजोग ।
करि मिश्रित सृंगार कौं बरनत हैं सब लोग ॥ ४१६

संयोग में वियोग, यथा

सौतुख सपने देखि सुनि प्रिय बिछुरन की बात ।
सुख ही मैं दुख को उदय दंपतिहूँ है जात ॥ ४२० ॥

यथा

कहा लेत क्यो चलन की चरचा मिथ्या चालि ।
ऐसी हाँसी सों भली फाँसीयै घनमालि ॥ ४२१ ॥
क्यौं सहिहै सौतुख-बिरह सपन-बिरह के तेजु ।
गई न तिय-हिय-धकधकी भई थकथकी सेजु ॥ ४२२ ॥

वियोग में संयोग

पत्री सगुन सँदेस लखि पिय-बस्तुनि कौं पाइ ।
अनुरागिनी वियोग मैं हर्षोदय ह्वै जाइ ॥ ४२३ ॥

---

[४१८] कबहुँक०—कबहूँ कै यह सहत सदा (सभा) । काशि० में यह रूप है—

(÷) यह कठोर जगमद्धि ÷ कै हीरा कहौं कठोर
बिहरानो नेको नहीं बिहरे नंदकिशोर +

[४१६] वै—है (लीथो) । सब—कबि (काशि०) ।
[४२०] ह्वै—ह्यो (काशि०) ।
[४२२] के—को (लीथो) । न तिय—तिया (सभा) ।
[४२३] अनु०—अनुरागीन (सर०) । हर्षो०—हर्षद्दय (वही)

यथा (सवैया)

पायो कछू सद्दिदानी सँवेस तें आइ कि प्यारो मिल्यो सपने मैं।
कै री तुँ ग्वालि गुनौती बड़ी सगुनौती बड़ी कछु पायो गने मैं।
कालि तौ ऊभि उसास भरै औ परेहूँ जरै घनसार घने मैं।
आजु लसी हुलसी सब अंगनि फैली फिरै सु कहा इतने मैं॥४२४।

इति मिश्रित शृंगार समाप्त

अथ शृंगार-नियम-कथन (दोहा)

यौं सब भेद सिंगार के बरने मति-अनुसार।
कछू नेम ताके कहौं सुनिये सहित बिचार॥ ४२५॥

(सोरठा)

सात बरिस कन्यत्व, पुनि छ सात दस दस बरिष।
गौरी बाला सत्व, तरुनी प्रौढ़ा जानिये॥ ४२६॥
नवलबधू मुग्धाहि मैं नवजोबन अग्यात।
ग्यातजोबना नव मदन नवढ़ा डर लज्यात॥ ४२७॥
लखि अभिलाष दसा कहै लालसमती कबीस।
चुंबनादि तें घिन करै बाल बिरक्त घतीस॥ ४२८॥
भाव और हेला तपन तीनि कहत कबि-ईस।
जोबन मैं नारीन के अलंकार हैं बीस॥ ४२९॥
चारि उदारिज आदि दै सोभादिक त्रय जानि।
ये दस, दस पुनि हाव हैं बिलासादि उर आनि॥ ४३०॥
बचे ज वै नव हाव ते इनहीं दस तें हेरि।
जुदे लगत से जानिकै लक्षन बरन्यो फेरि॥ ४३१॥

---

[४२४] सगुनौती०–कछु पायो किधौं सगुनौती (लीथो)। जरै–मरै (वही)। सु–तूँ (सभा), तौ (सर०)।
[४२५] यौं–यें (सर०)। ताके–ताते (सर०, सभा, लीथो)।
[४२६] जानिये–देखि कहि (काशि०, सभा)।
[४२८] घिन–छिन (सर०)।
[४२९] तपन–कहत (सर०)।
[४३०] बिलासादि–बीसादी (सर०)।
[४३१] जुदे–जुरे (सभा)।

पिय लखि सात्विक भाव जो होत लगत अनुभाव।
भरत-ग्रंथ-मत देखि तेहि भाव कहत कविराव ॥ ४३२ ॥
हाव कहावत भावई जिनमें अंग-सिंगार।
भावै पुनि हेला कहूँ होत निपट विस्तार ॥ ४३३ ॥
सपनहि में गनि लेत हूँ सकल विरह की रीति।
उदाहरन में भिन्न करि वरनि जनायो नीति ॥ ४३४ ॥
भाव हाव बिन नेम ही होत नाइकनि माहिं।
बहुधा प्रौढ़ा परकिया तिनमें जानी जाहिं ॥ ४३५ ॥
है ही होन है गए तीन्यौ विरह प्रमानि।
एकै करि दस कौं गनै अष्ट नाइका जानि ॥ ४३६ ॥
कामवती अनुरागिनी प्रौढ़ा भेद विचारि।
स्वाधीनापतिकाहु में गर्वितानि निरधारि ॥ ४३७ ॥
होत भेद धीरादि के खंडिताहु में आइ।
ज्येष्ठ कनिष्ठा मैं त्रिविधि मानभेद मैं पाइ ॥ ४३८ ॥
करै चलन-चरचा चलै पहुँचे लौं पिय-पास।
बोलि पठाए सिख सुनै अभिसारिकै प्रकास ॥ ४३९ ॥
देवतिया दिव्या कही नरतिय कही अदिव्य।
अमरनारि भुव अवतरी सो कहि दिव्यादिव्य ॥ ४४० ॥
गुप्त विदग्धा लक्षिता मुदिता तिय को भाइ।
किये बनै सुकियाहु में त्रपा हास्यरस पाइ ॥ ४४१ ॥
त्योंही परकीयाहु में है मुग्धादिक कर्म।
जैसें अस्त्र काऊ गहैं क्षत्रिजाति को धर्म ॥ ४४२ ॥

---

[४३२] मत–महँ (लीथो)।
[४३४] रीति–प्रीति (सभा +)। नीति–रीति (सभा)।
[४३५] बिन०–बिनही नियम (काशि०, सभा)।
[४३७] गर्वितानि–गर्वितादि (सर०, सभा +)।
[४३८] धीरादि–धीरानि (सभा –)।
[४३९] पठाए–पठावै (लीथो)।
[४४१] त्रपा–मैन (सर०)।
[४४२] सभा में नहीं है। काऊ०–गहै सबै (सर०)।

मानवती अनुरागिनी प्रोषितपतिका नारि।
क्रम तें इन्हैं वियोग के आलंबन निरधारि ॥ ४४३ ॥
दुखद रूप ह्वै विरह में सब उद्दीपन गोत।
समय समय निजु पाइकै अनुभावी मन होत ॥ ४४४ ॥
आलिंगन चुंबन परस मरदन नखरद-दानु।
इत्यादिक संभोग के उद्दीपन जिय जानु ॥ ४४५ ॥
जानौ नाम वियोग को विप्रलंभ सृंगार।
सुरत-समय संयोग मैं सो संभोग विचार ॥ ४४६ ॥

इति शृंगाररस वर्णन

अथ शृंगाररस-कथन जन्य-जनक करिकै पूर्ण रस को स्वरूप

कह्यो बंस सृंगार को फिरि सिंगाररस आनि।
नवरस की गिनती भरौं लक्षन लक्ष्य बखानि ॥ ४४७ ॥
जहँ बिभाव अनुभाव थिर चर भावन को ज्ञान।
एक ठौरहीं पाइये सो रसरूप प्रमान ॥ ४४८ ॥
उपजावै सृंगाररस निजु आलंबन दोउ।
जन्य-जनक तासौं कहै उदाहरन सुनि सोउ ॥ ४४९ ॥

नायिकाजन्य शृंगाररस, यथा (सवैया)

मिस सोइबो लाल को मानि सही हरहैं उठी मौन महा धरिकै।
पटु टारि लजीली निहारि रही मुख की रुचि कौं रुचि कौं करिकै।
पुलकावलि पेखि कपोलनि मैं सु खिसाइ लजाइ मुरी अरिकै।
लखि प्यारे विनोद सौं गोद गह्यो उमह्यो सुख मोद हिये भरिकै ॥४५०॥

नायकजन्य शृंगाररस (दोहा)

ललकि गहति लखि लाल कौं लली कंचुकी-बंद।
मिसहीं मिस उठि उठि हसति अलीं चलीं सानंद ॥ ४५१ ॥

---

[४४६] मैं०—सो संभोगादि (लीथा)।
[४४८] ही—की (लीथो)।
[४५०] मौन—चैन (लीथो)। मुख०—मुख की सुखमा (वही)। सुख–रस (वही), मुद (सर०, सभा)। हिये–हियो (काशि०)।

हास्यरस-लक्षण

व्यंगि बचन भ्रम आदि दै बहु विभाव है जासु।
ख्याल स्वाँग अनुभव तरक हँसिबो थाई हासु ॥ ४५२ ॥
अनुभव इन सब रसनि को सात्त्विक भावै मित्त।
होइ जु वैही भाँति पुनि सोऊ समझौ चित्त ॥ ४५३ ॥

यथा

गौरी-अंबर-छोर अरु हरगर विषधर पूँछि।
गँठिजोरा कौं तिय गहै तजै हँसै कहि छूँछि ॥ ४५४ ॥

(कवित्त)

सुनियत उत गहि भसम के भाजनहि
चंद-सीकरन कहि, फेरि देती दार है।
तरुनि तहाँ की ताहि लेती हैं वे साहि चाहि
विकच करत अंग लै लै कर छार है।
बिसन हमारो तौ गयो है हरि-संग हरि
जिन बिनु लागत सिंगार ज्यौं अँगार है।
ऊधोजू सिधारौ मारवार कौं अबार होति
उहाँ राखवारन को बड़ो रोजगार है ॥ ४५५ ॥

करुणरस-लक्षण (दोहा)

हित-दुख बिपति बिभाव तें करुना बरनै लोक।
भूमि-लिखन बिलपन स्वसन अनुभव थाई सोक ॥ ४५६ ॥
सजल नयन बिलखित बदन पुनि पुनि कहत कृपाल।
जोवत उठि न अराति-दल सोवत लछिमन लाल ॥ ४५७ ॥

---

[४५४] छोर०—औह छो नरगर (सर०)। तजै०—हँसै कहै छुठि (मार०, सभा)।

[४५५] सुनियत०—एकै सुनियत उत गहि भस्म-भाजनहि (काशि +)। सी—सो (वही +)। दार—द्वार (सभा)। जिन—जाहि (सर०)।

[४५६] बिलपन—बिलखन (काशि०)।

[४५७] पुनि०—फिरि फिरि (सभा)।

मानवती अनुरागिनी प्रोषितपतिका नारि।
प्रेम तें इन्हें वियोग के आलंबन निरधारि ॥ ४४३ ॥
दुगद रूप हैं विरह में सब उद्दीपन गौन।
समय समय निजु पाइकै अनुभावौ मन हौन ॥ ४४४ ॥
आलिंगन चुंबन परस मरदन नखरद-दानु।
इत्यादिक संभोग के उद्दीपन जिय जानु ॥ ४४५ ॥
जानौ नाम वियोग को विप्रलंभ सृंगार।
सुरत-समय संयोग मैं सो संभोग विचार ॥ ४४६ ॥

इति शृंगाररस-वर्णन

अथ शृंगाररस-कथन जन्य-जनक करिकै पूर्ण रस को स्वरूप

कह्यो वंस सृंगार को फिरि सिंगाररस आनि।
नवरस की गिनती भरौं लच्छन लच्छ्य बखानि ॥ ४४७ ॥
जहँ बिभाव अनुभाव थिर चर भावन को ज्ञान।
एक ठौरहीं पाइये सो रसरूप प्रमान ॥ ४४८ ॥
उपजावै सृंगाररस निजु आलंबन दोउ।
जन्य-जनक तासौं कहै उदाहरन सुनि सोउ ॥ ४४९ ॥

नायिकाजन्य शृंगाररस, यथा (सवैया)

मिस सोइबो लाल को मानि सही हरुएँ उठी मौन महा धरिकै।
पटु टारि लजीली निहारि रही मुख की रुचि कौं रुचि कौं करिकै।
पुलकावलि पेखि कपोलनि मैं सु खिसाइ लजाइ मुरी अरिकै।
लखि प्यारे विनोद सौं गोद गह्यो उमह्यो सुख मोद हिये भरिकै ॥४५०॥

नायकजन्य शृंगाररस (दोहा)

ललकि गहति लखि लाल कौं लली कंचुकी-बंद।
मिसहीं मिस उठि उठि हसति अलीं चलीं सानंद ॥ ४५१ ॥

---

[४४६] मैं०—सो संभोगादि (लीथो)।
[४४८] ही—की (लीथो)।
[४५०] मौन—बैन (लीथो)। मुख०—मुख की सुखमा (वही)। सुख-रस (वही), मुद (सर०, सभा)। हिये-हियो (काशि०)।

हास्यरस-लक्षण

व्यंगि बचन भ्रम आदि दै बहु बिभाव है जासु।
ख्याल स्वाँग अनुभव तरक हँसिबो थाई हासु॥ ४५२॥
अनुभव इन सब रसनि को सात्विक भावै मित्त।
होइ जु वैही भाँति पुनि सोऊ समझौ चित्त॥ ४५३॥

यथा

गौरी-अंबर-छोर अरु हरगर बिषधर पूँछि।
गँठिजोरा कौं तिय गहै तजै हँसै कहि छूँछि॥ ४५४॥

(कवित्त)

सुनियत उत गहि भसम के भाजनहि
चंद-सीकरन कहि फेरि देती द्वार है।
तरुनि तहाँ को ताहि लेती हैं बेसाहि चाहि
विकच करत अंग लै लै कर छार है।
बिसन हमारो तौ गयो है हरि-संग हरि
जिन बिनु लागत सिंगार ज्यौं अँगार है।
ऊधोजू सिधारौ मारवार कौं अवार होति
उहाँ रायवारन को बड़ो रोजगार है॥ ४५५॥

करुणरस-लक्षण (दोहा)

हित-दुख बिपति बिभाव तें करुना बरनै लोक।
भूमि-लिखन बिलपन स्वसन अनुभव थाई सोक॥ ४५६॥
सजल नयन बिलखित बदन पुनि पुनि कहत कृपाल।
जीवत उठि न अराति-दल सोवत लछिमन लाल॥ ४५७॥

---

[४५४] छोर०–ग्रौह छो नरगर (सर०)। तजै०–हँसै कहै सुठि (सर०, सभा)।

[४५५] सुनियत०–एकै सुनियत उत गहि भस्म-भाजनहि (काशि+)। सी–सो (वही+)। दार–द्वार (सभा)। जिन–जाहि (सर०)।

[४५६] बिलपन–बिलखन (काशि०)।

[४५७] पुनि०–फिरि फिरि (सभा)।

मलिन बसन बिलपन स्वसन सिय भुव लिखत निहारि।
सोचन सोचत पवनसुत लोचन मोचत बारि॥ ४५८॥

बीररस-लच्छण

जानो बीर बिभाव ये सत्य दया रन दानु।
अनुभव टेक 'रु सूरता उत्सह थाई जानु॥ ४५९॥
बरने चारि बिभाव ते चार्यौ नायक बीर।
उदाहरन सबके सुनो भिन्न भिन्न करि धीर॥ ४६०॥

सत्यबीर

तजि सुत बित घर घरनि लै सत्यसुधा सुखकंद।
छाइ त्रिजग जसचंद्रिका चंद जितो हरिचंद॥ ४६१॥

दयाबीर

दीनबंधु करुनायतन देखि बिभीषन-भेस।
पुलकित तनु गदगद बचनु कह्यो आउ लंकेस॥ ४६२॥

रणबीर

ब्रीड़ित मेरे बान हैं बानर-बृंद निहारि।
सनमुख ह्वै संग्राम करि मोसों खरो खरारि॥ ४६३॥

दानबीर

सब जगु द्वै ही पगु कियो तनु तीजो करि छिप्र।
यो अधार आधेय जगु अधिक जानि लै बिप्र॥ ४६४॥

अद्भुतरस-लच्छण

नई बात को पाइबो अति बिभाव छवि चित्र।
अद्भुत अनुभव थाकिबो बिस्मय थाई मित्र॥ ४६५॥

---

[४६०] ते–के (लीथो)।
[४६१] सुख–बिष (लीथो)।
[४६२] बचनु–गिरा (लीथो)।
[४६५] थाकिबो–थाकियो (लीथो)।

(कवित्त)

दरवर दासनि को दोष दुख दूरि करै
भाल पर रेखा बाल दोषाकर रेखिये।
चाहै न विभूति पै विभूति सरवंग पर
वाह विन गंग-परवाह सिर पेखिये।
सदासिव नाम भेष असिव रहत सदा
कर धरे सूल सूल हरत विसेषिये।
माँगत है भीख औ कहावै भीख-प्रभु हम
धरैं याकी आसा याकौं आसा धरे देखिये ॥४६६॥

(दोहा)

ठाढ़े ही द्वै पगु कियो सकल भुवन जिन हाल।
नंद-अजिर सु न हद लहत जानुपानि की चाल ॥ ४६७ ॥

रौद्ररस-लक्षण

असहन वैर विभाव जहँ थाई कोप-समुद्र।
अरुन वरन अधरन दरन अनुभव यौं रस रुद्र ॥ ४६८ ॥

यथा (सवैया)

जुध्ध विरुध्धित उध्धत क्रुध्धित वीर बली दसकंधर धावै।
कज्जल भूधर से तनु उज्जल बोलन राम कहाँ करि दावै।
धीसहु हथ्थ अतथ्थहि लुक्कित कीसहि मुक्कित सैलु जु आवै।
निम्मझल कज्जलसंजुत भिड्डिकै भालुक पिड्डिकै भूमि गिरावै ॥४६९॥

---

[४६६] दरवर–हरवर (लीथो); दरबदर (सभा)। को०–को दुख दूरि करै बरै (वही)। बाह०–बाहन वृषभ गंग सिर पर (लीथो)। याकी–याको (वही), वाको (सर०, सभा) धरे–धर (काशि० +)।

[४६७] जिन–जे (लीथो)।

[४६९] दावै–दावै (लीथो), धावै (सर०)। हथ्थ०–हत्थ अतत्थहि मुक्कत सैल जु आवै (काशि० +), हत्थ समथ्थ अकत्थहि पथ्थलो मुक्कल सैल जु आवै (काशि० +) निम्झल–सिम्झल (लीथो), निर्झर (सर०, सभा)। कज्जल–के जल (काशि०)। भालुक–आलुक (काशि०, सभा)।

बीभत्सरस-लक्षण (दोहा)

थाई घिनै बिभाव जहँ घिनमै वस्तु अस्वच्छ।
बिरचि नाँदि मुख मूँदिबो अनमुख रस बीभच्छ ॥ ४७० ॥

यथा (कवित्त)

कंस की गोवरहारी जातिपाँतिहू सौं न्यारी
मलिन महा री अब कछू न कह्यो परै।
चाड़ के समैहूँ चाहियत एक गाड़ बिना
कूबर की आड़ कैसे राँड़ सौं रह्यो परै।
टेढ़ी सब अंग औ निपट बिन ढंग दई
कैसें धौं गोपालजू सौं गोद मैं गह्यो परै।
जाकी छिन सुधि कीन्हे महा घिन आवै ताके
संग सुख ऊधो उनही सौं पै सह्यो परै ॥ ४७१ ॥

भयानकरस-लक्षण (दोहा)

धात बिभाव भयावनी भै है थाई भाव।
सुखि जैबो अनुभाव तें सु रस भयानक ठाव ॥ ४७२ ॥

यथा

भूमि तमकि अंगद हनै डरे निसाचर-बृंद।
तन कंपित पीरे बदन भयो बोलियो बंद ॥ ४७३ ॥

(कवित्त)

वह सकै हिरिकिनि यह तकै फिरिकिनि
दौरि दौरि खिरकिनि जाइकै थिरतु है।
गयो अकुलाइ वाको सपने भुलाइ जीव
जहाँ जहाँ जाइ तहाँ जाइ अभिरतु है।
खोयन खायन नाकै दायन धायन ताकै
पायन पाथन पारावार लौं तिरतु है।

---

[४७०] बिरचि–बिरच (सभा)।
[४७१] मलिन०–अति मानहारी (सभा)।
[४७२] जैबो–जैये (काशि०)।
[४७४] तकै–सकै (सर०)। जाइ तहाँ–तहाँ तहाँ (सभा)।

पारन वारन बचै भारन भारन नचै
डारन डारन लेत वारन फिरतु है ॥ ४७४ ॥

शांतरस-लक्षण (दोहा)

देवक्रिया सज्जन-मिलन तत्वज्ञान उपदेस।
तीर्थ विभाव सुभक्ति सम थाई सांत सुदेस ॥ ४७५ ॥
क्षमा रुत्य वैराग्य थिति धर्मकथा मैं चाउ।
देवप्रनति अस्तुति विनय गुनौ सांत-अनुभाव ॥ ४७६ ॥

यथा (कवित्त)

संपति-विपति-पति भूपति भुवनपति
दिसिपति देसपतिहू को पति न्यारो है।
जाइयोऊ ज्याइयोऊ छार मैं मिलाइयोऊ
वाको अखत्यार और काहू को न चारो है।
यातैं 'दास' बंदनि की बदगी विफल जानि
सेवतो बहरहाल हरि-दरबारो है।
राखैगो बहाल तौ हैं बंदे हम वाके
औ बिहाल करि राखैगो तौ साहब हमारो है ॥४७७॥
चितु दै समुझि काहू दीबे है जवाब कौन
काज इत आयो कै पठायो यहि ठौर है।
वाही की रजाइ रह्यो ल्याइबे बजाइ तोहि
मान्यो न सिखायो तूँ नसायो दुहूँ ओर है।
कैसे निबहैगो ओछे ईसनि पै सीस
नाइ एरे मन बावरे करत कैसी दौर है।
तेरो औ सबनि केरो जाके कर निरधार
ताके दरबार तौ सलाम हू को चोर है ॥४७८॥

---

[४७७] संपति०—संपतिपति विपतिपति भुवनपति (सभा)। जाइयोऊ०—ज्याइयो न ज्याइबो अरु (लीयो); । वाको—याको (सर०)।

[४७८] समुझि०—समुद्रि कहि (काशि०)। इत—हेत (वही) कै—क्यों (सभा)। रह्यो—रही (सर०)।

भाव निषाद हानि जिहि ठौरै। चहिये और होइ कछु औरै।
इरषा पर-उद्देस जिय आवै। सहि न जाइ गुन गर्ब परावै ॥४९३॥
चपलता जु आतुरता करई। इच्छा चरै न सिरर चित धरई।
उत्कंठा रुचि हिय मैं भारी। पैये हेत विषय जो प्यारी ॥४९४॥
उन्मादहि धौरैयो ल्यावै। बिनु बिचार आचारहि ठावै।
अवहित्था आकृतिहि छिपैबो। औरै औरयहि भाँति लखैबो ॥४९५॥
अपसमार सो कवि उर धरई। मृगी रोग लौं व्याकुल करई।
गर्ब जानि कुल-गुन धन मद तैं। अहंकार-अधिकारी हद तैं ॥४९६॥
जड़ता जहँ अक्षम ह्वै जाई। कारज मैं आवै जड़ताई।
उग्रता जु निरदयता ह्वौ मैं। कहै प्रचारि क्रोध अति जी मैं ॥४९७॥
आवेगहि भ्रम होइ हिये मैं। जानि अचानक कर्म किये मैं।
सुप्त सुभाव निभर ह्वै सोवै। सपन अनेक भाँति जिय जोवै ॥४९८॥
त्रपा भाव लज्जा अधिकाई। सवही ठौर जानि लै भाई।
त्रास छोभ कछु देखि डरै जू। चौंकादिक अनुभाव धरै जू ॥४९९॥
व्याधि व्यथा कछु है मन माहीं। विकित तनु अनुभाव कहाहीं।
निर्वेदहि विराग मन मनिये। मरन भाव तैंतीसो गनिये ॥५००॥

उदाहरण सबके क्रम तैं—निद्रा भाव, यथा (दोहा)

अलस गोइ श्रम खोइये नेक सोइयहि सैन।
लाल उनींदे रैन के झँपि झँपि आवत नैन ॥ ५०१ ॥

---

[४९३] चहिये–चाही (लीथो)। पर०–परज देखि (सर०)।
४९४] चरै–चरै (लीथो); करै (सभा)। धरई–धरई (काशि०)। जो–जे (सर०)।
४९५] औरै०–और औरिऔ (सर०)।
४९६] अहंकार–मदहंकार (काशि०)। अधिकारी–ठकुराई (सर०, सभा)।
४९७] कहै–करै (लीथो)।
४९८] होइ–जाइ (सर०, सभा)। मैं–जू (काशि०, सभा)। निभर–जो मर (सभा)। अनेक०–अनगतादि (सर०)।
५०१] आवत–आवै (सर०, सभा, लीथो)।

ग्लानि भाव (सवैया)

जानि तियानि को मोहन नीकैं नजीकैं ह्वै जाइ दुहूँ दृग जोयो।
ठानि लै वैर अलीन सों आपुहि भाँति भली कुलकानि लै खोयो।
कैसी करौं केहि दोष धरौं अब कासों लरौं हियरैं दुख भोयो।
हौं तो भट्ठू हठि आपु ही आपु तैं आपने हाथनि सों विष बोयो ॥५०२॥

श्रम भाव, यथा (दोहा)

डगमगात डगमग परत चुवत पसीना-धार।
केलि-भवन तैं भवन को पैंडो भयो अपार ॥ ५०३ ॥

धृति भाव (सवैया)

चाह्यो कछू सो कियो उन साहेब सो तौ सरीर के संग सन्यो है।
फेरि सुधारयो चहै तब को बिगरयो सिगरयो यह मूढ़पन्यो है।
'दासजू' साधुन जानि यहै सुख औ दुख दोऊ समान गन्यो है।
काहे कौं सोचु करै बिन काज बनैगो सोई जो बनाव बन्यो है ॥५०४॥

मद भाव, यथा (दोहा)

डोलति मंद गयंद गति अति गरबीली भाँति।
करी रूपमद प्रेममद सोभामद सौं माँति ॥ ५०५ ॥

कठोरता भाव (कवित्त)

केकी-कूक-लूकनि समीर-तेज-तापनि कौं
घने घन-घायनि कौं राख्यो है निदरि हौं।
बैठिकै हुतासन से फूलन के बासन मैं
बरत ही चंदन चढ़ायो धीर धरि हौं।
साँझ ही तैं कीन्ह्यो है तूँ तहस नहस सो
मैं तेरियै बहस आइ बाहिर निसरिहौं।

---

[५०२] आपु ही–आपु को (काशि०, सर०, सभा)। विष–दुख (सर०, सभा)।
[५०३] परत–धरत (सर०)। अपार–पहार (सर०, सभा)।
[५०५] करी–रही (सर०)। सोभा–जोबन (सर०, सभा)।
[५०६] लूकनि–कूकनि (सर०)। तूँ–है (लीथो)।
किरननि–तीरननि (वही)।

(सवैया)

मीठी घसीटी लगी मन की गुर की सिख तौं निपु सी पहिचान्यो ।
आपनी बूझि सँभारयो नहीं तब 'दास' कहा अब जौ पछितान्यो ।
मूरख तूँ तरुनी-तन कौं भवसागर की तरनी अनुमान्यो ।
ऐसो डरयो हरिनाम के पाठहि काठहि की हरि कौं जिय जान्यो ॥४७९॥

(कवित्त)

गैयर चढ़ावौ तौ न गहिये गरूर नाँगे
पैरन चलावौ तौ न यासों दुख भारी है ।
माँगिकै खवावौ तौ मगन रहियत
मागननि दै खवावौ तौ दया की अधिकारी है ।
जाहि तुम देत ताहि देत प्रभु आप रुचि
रावरे की रीझि-बूझि सबही सों न्यारी है ।
यातें हम गरजी हैं रावरी रजाइ ही के
मरजी तिहारी ही में अरजी हमारी है ॥ ४८० ॥

इति नवरस विभाव-अनुभाव-स्थायीभावयुक्त समाप्त

अथ संचारीभाव-लक्षण (दोहा)

नौहूँ रसनि सभावहीं बरने मति - अनुसार ।
अब संचारी कहत हौं जो सबमें संचार ॥ ४८१ ॥
सात्विकादि बहु होत हैं इनहू मैं अनुभाव ।
अरु विभाव कछु नेम नहिं जहँ ज्यों ही बनि आव ॥ ४८२ ॥
बिना नियम सब रसनि मैं उपजैं थाई ठाउ ।
चर बिभिचारी कहत हैं अरु संचारी नाउ ॥ ४८३ ॥

---

[४७९] मीठी—नीको (लीथो) । जौ—ज्यौं (वही) ।
पाठहि—नामहि (काशी०) । कौं—कै (काशि०, सर०, सभा) ।
[४८०] मागननि०—माँगे बिनु (सभा); मागननि दैवावो (काशि०) ।
दया०—न याको सुखकारी (वही) ।
[४८१] हीं—हौं (सर०) ।
[४८२] बहु—सब (सभा) ।

संचारीभावन के नाम (छप्पय)

नींद ग्लानि श्रम धृत्ति मद कठोरता हर्ष कहि।
संका चिंता मोह सुमति आलस्य तर्क लहि।
अमरष दीनति सुमृति विषाद इरषा चपलतनि।
उत्कंठा उन्माद अवहिथा अपसमार गनि।
पुनि गर्ब सु जड़ता उग्रता सुसावेग त्रपा बरनि।
स्यौं त्रास व्याधि निर्वेद मृतु तैंतीसो चर भाव गनि॥४८४॥

लक्षण तैंतीसो संचारीभाव को (चौपाई)

निद्रा को अनुभव जमुहैबो। आलसादि तें नैन मिलैबो।
ग्लानि जानि जहँ बल न बसावै। दुरबलता असहन दुख ल्यावै॥४८५॥
श्रम उत्पत्ति परिश्रम कीन्हे। थके पसीना प्रगटे चीन्हे।
धृति संताप पाइ बिनु पाए। बिधि गति समुझि धीरजहि आए॥४८६॥
मद बातें जहँ गरबै की सी। अति गति मति लखि परति छकी सी।
कठोरता हठ भाव बनिये। घाम सीत सूलादि न गनिये॥४८७॥
हर्ष भाव पुलकादिक जानौ। परमानंद प्रसन्न बखानौ।
संका इष्टहानि-भय पाई। तेहि बिचार दिनरैन बिहाई॥४८८॥
चिंता फिकिरि हिये महँ जानी। जहँ कछु सोच करत है प्रानी।
मोह चेत की हानि जु होई। भ्रम अनुभाव बिकलता जोई॥४८९॥
मति है भाव सिखापन पाए। बिधि-गति समुझि धीरतहिँ आए।
आलस गर्ब परिश्रम टावै। जागत जो घरीक तन छावै॥४९०॥
तर्क सँदेह बिबिधि बिधि होई। गुननादिक सौं जानहु सोई।
अमरष दुख लागौ मन माहीँ। निज अपमान भए चहुधाहीँ॥४९१॥
दीनता सु जहँ मलिन सरीरै। होइ दुखमय बचन अधीरै।
सुमृति कहिय जासौं चित दीजै। सो रँग रूप देखि सुधि कीजै॥४९२॥

---

[४८५] बल-बस (सर०)।
[४८८] बिहाई-गँवाई (सर०, लीथो)।
[४९०] धीरतहिँ-धीरजहि (काशि०, सर०, सभा)। आए-स्याए (सर०, सभा)।
[४९१] होई-टोई (लीथो)। चहुधाहीँ-चहु याही (सर०)।
[४९२] जहँ-तहँ (लीथो)।

तीगे तीखे किरननि छेदि क्यों न डारै तनु
एरे मंद चंद मैं न तेरे मारे मरिहौं ॥ ५०६ ॥

(दोहा)

चले जात इक मंगहीं राधे नंदकिसोर।
सीतल सुमनमई भई आतप अरनि कठोर ॥ ५०७ ॥

हर्ष भाव (कवित्त)

स्याम तन सुंदर स्वरूप उपमा कों केहूँ
लागत न नीलकंज नीरद तमाल हैं।
मोतीमाल बनमाल गुंजन को माल गरें
फूले फूले फूलनि के गजरा रसाल हैं।
माथे मोरपंखन के मजुल मुकुट लखि
रीझि रीझि लोचननि लूट्यो सुखजाल हैं।
मुरली अधर धरें निकस्यो निकुंजनि तें
आजु हम नीके ह्वै निहारयो नंदलाल हैं ॥ ५०८ ॥

शंका भाव (सवैया)

आरतबंधु को बानो वृथा करिबे कों उपाउ करैं बहुतेरो।
'दास' यही जिय जानिके मोहि भरयो मनु मानि निधानि घनेरो।
गेह कियो सब देहनि में हरिनाम को नेहु नराखब नेरो।
रावरेहू तें महाप्रभु लागत मोहि अभाग जोरावर मेरो ॥५०९॥

चिंता भाव

जौ दुख सों प्रभु राजी रहैं तौ सबै सुख सिद्धिनि सिंधु बहाऊँ।
प यह निंदा सुनौं निज श्रौन सों कौन सों कौन सों मौन गहाऊँ।
मैं यह सोच बिसूरि निसूरि करौं बिनती प्रभु साँझ पहाऊँ।
तीनिहूँ लोक के नाथ समथ्थ हौ मैं ही अकेलो अनाथ कहाऊँ ॥५१०॥

---

[५०८] केहूँ–क्हूँ (काशि०); दास (सर०, सभा)। लखि–लहि (सर०, सभा)। हैं–कै (सर०)।

[५१०] सबै–चहौं (काशि०, सर०, सभा)। श्रौन०–श्रौनन सों (काशि० +); श्रवननि (सभा)। कौन सों०–कौन सों हौं कहि (सभा)।

(दोहा)

धनि तिनको जीवन अली जनम सफल करि लेखि।
जिनको जीवन जात बँधि ब्रजजीवन मुख देखि ॥ ५११ ॥

मोह भाव

निरख्यो पीरो पट धरैं कारो कान्ह अहीर।
यह कारो पीरो लखै तन तें व्याकुल बीर ॥ ५१२ ॥

मति भाव, यथा (सोरठा)

यहै रूप संसार मैं समभयो दूजो नही।
करि दीन्हो करतार, चसमा चखनि हजार नी ॥ ५१३ ॥

आलस्य भाव (दोहा)

कुंभकरन को रन हुयो गह्यो अलसई आइ।
सिर चढि श्रुति नासा हसत जु न रोक्यो हरिराइ॥ ५१४ ॥

तर्क भाव (कवित्त)

जौ पै तुम आदि ही के निठुर न होते हरि
मेरी बार एती निठुराई क्यों कै गहते।
तुम ऐसे साहब जौ दीन के दयाल होते
हम ऐसे दीन क्यों अधीन ह्वै ह्वै रहते।
जसनि की रीति है जु ओर लौं निबाहैं जसु
तुमकौं क्यों न एती बात ओर लौं निबहते।
करुनामै दयासिंधु दीनानाथ दीनबंधु
मेरी जान लोग यह झूठे नाम कहते ॥ ५१५ ॥

(दोहा)

क्यौं कहि जाइ कहाइये त्रिभुवनराइ कन्हाइ।
बंदत्ति बिपति सहाइ नहि निनयहु लगत सहाइ ॥ ५१६ ॥

---

[५११] ब्रज०—मनमाहन-छबि (सर०, सभा)।
[५१२] नबी-नहीं (काशि०, सर०, सभा)। बी–बिधि (सर०)।
[५१५] यह–सब (सर०, सभा)।
[५१६] ०राइ–०नाह (काशि० +); ०नाय (सर०)।
कन्हाइ–कहाइ (सर०)।

अमर्ष भाव (कवित्त)

भोरें भोरें नाम लै अजामिल से अधमनि
पायो मन भायो सुने सुमृति-कथानि में।
अनुदिन राम राम राम रटि लाए मोहि
दीनबंधु देखत हौ केती बिपदानि में।
सुखी करि दीने घने दीन दुखियान प्रभु
नजरि न कीने कहूँ काहू की क्रियानि में।
मेरवै गुन ऐगुन बिचारि कत पारियत
कारी छाँट बिमल बिपतिहारी बानि में ॥५१७॥

(दोहा)

ललित लाल बेंदा लसै बाल-भाल सुखदानि।
दरपन रबि-प्रतिबिंब लौं दहै सौति-अँखियानि ॥ ५१८ ॥

दीनता भाव (कवित्त)

नामा औ सुदामा गीध गनिका अजामिल सौं
कीन्हो करतूति सो बिदित राव-खाने में।
मेरे ही अकेले गुन औगुन बिचारे बिना
बदलि न जैहै है बडे अदलखाने में।
एती तकरार तुम्हैं ताही सौं जरूर प्रभु
राखै जो गरूर तुम्हहूँ सौं या जमाने में।
'दास' कौं तौ ज्यौं ज्यौं प्रभु पानिप चढैहौ
त्यौं त्यौं पानिप चढैहौ बेस रावरे के बाने में ॥ ५१९ ॥

(दोहा)

जोगु नही बकसीस के जौ गुनही गुनहीन।
तौ निज गुन ही बाँधिये दीनबंधु जन दीन ॥ ५२० ॥

---

[५१७] दीन-बिनु (लीथो)। मेरवै०-मेरेई अकेलो (सर०)।
[५१८] बेंदा-बिंबा (काशि०)।
[५१९] प्रभु०-प्रभु पानिप चढैहौ (काशि०, सभा)। चढैहौ-बढैहौ (सर०)। चढैहौ-चढैगो (काशि० -, सर०, सभा०, लीथो)।
[५२०] गुनही गुन-गुनगन ही (लीथो)।

स्मृति भाव (कवित्त)

मोर के मुकुट नीचे भौंर की सी भौंवरैं है
छबि सौं छहरि छितु ऊपर थिरतु है।
नासा सुकतुंड घर कुंडल मकर नैन
खंजन-किसोरन सौं खेलन भिरतु है।
उरझन बनमाल त्रिबली तरंगनि मैं
बूड़त तिरत पदकंजनि गिरतु है।
कीन्हो बहुतेरो कहूँ फिरत न फेरो मन
मेरो मनमोहन के गोहन फिरतु है ॥ ५२१ ॥

विषाद भाव (दोहा)

करी चैत की चाँदनी धरी चेत की हानि।
भई सून संकेत की केतकीउ दुखदानि ॥ ५२२ ॥

ईर्षा भाव

कुमति कूबरी दूबरी दासी सौं करि भोग।
मधुप न्याय कीन्ही हमैं तुमसौं पठयो जोग ॥ ५२३ ॥

चपलता भाव (सवैया)

हेरि अटानि तें बाहिर आनिकै लाज तजी कुलकानि बहायो।
कानन कान न दीन्हो सखी सिख कानन कानन लीन्हो फिरायो।
जाहि बिलोकिबे कौं अकुलात ही सोऊ भटू भरि डीठि दिखायो।
तापर नेकु रहै नहिं चैननि मोहिं तौ नैननि नाच नचायो ॥५२४॥

उत्कंठा भाव (दोहा)

सोभा सोभासिंधु की द्वै दृग लखत बनै न।
अहह दई किन करि दई रोम रोम प्रति नैन ॥ ५२५ ॥

---

[५२४] तजि–तज्यौ (काशि०, सभा) । कानि–काज (काशि०) । बहायो–गवायो (सर०) । दीन्हो०–आनन दीन्हो (काशि०) । दीठि–आँखि (सर०, सभा) ।

प्रस्तावित, यथा (सवैया)

केते न रक्त प्रसूननि पेखि फिरे खग आमिषभोगी भुलाने ।
केते न 'दास' मधुव्रत आइ गए बिरसैनि रसैं पहिचाने ।
तूलभरे फल सेमर सेइके कीर तूँ काहे कों होत अयाने ।
आस लिये यहि रूखे पै ह्वै बहु भूखे निरास गए बिलखाने ॥ ५४१ ॥

चेतावनी, यथा

घात सह्यो औ निपात लह्यो परस्वारथ कारन बौरो कहायो ।
भोरतहूँ झकझोरतहूँ गहि तोरतहूँ फल मीठो खवायो ।
मंदनहूँ औ अमंदनहूँ कहँ आपनी छाँहँ सुवास बसायो ।
क्यों न लहै महि में महिमा बहु साधु रसाल तु ही जग आयो ॥५४२॥
ल्यायो कछू फल मीठो विचारिकै दूरि तें दौरे सबै ललचाने ।
हाथ लै चाखिकै राखि दयो निसवादिल बोलि सबै अलगाने ।
'दासजू' गाहक चीन्ह्यो न लीन्ह्यो तूँ नाहक दीन्ह्यो पसारि दुकानै ।
रे जड़ जौहरी गाँव, गँवारे मैं कौन जवाहिर के गुन जानै ॥५४३॥
पेखन देखनहार सु साहब पेखनिया यह कालु महा है ।
बानर लौं नर लोगनि को बहु नाच नचावत सोई सदा है ।
ठौरहि ठौर सु लीन्हे मँगावत सोई करावत कोटि कला है ।
लोभ की डोरि गरे बिच डारि कै डोलत डोरैं जहाँ जहँ चाहै ॥ ५४४ ॥

मरण भाव (दोहा)

बैन-बान कानन लगे कानन निवसे राम ।
हा भू में, रा गगन, मे बैठि कही सुरधाम ॥ ५४५ ॥

इति सचारीभाव

---

[५४१] भरे०–भरयो सेमरु (काशि०, सभा) । बहु–दुख (लीथो) । निरास०–फिरे कितने (वही) ।
[५४२] औ–त्यौ (लीथो) लह्यो–सह्यो (सर०) ।
[५४३] के–को (काशि०, सर०, सभा) ।
[५४५] हा०–हा भूमै कहि (काशि० +) । बैठि०–गयो सुरुप (काशि०), कह्यो म त्रिप (सभा), कह्यो म नृप (सर०) ।

अथ रसभावनि के भेद जानिबे को दृष्टांतपूर्वक

(कबित्त)

जाए नृप मन के बयालिस बिचारि देखौ
थाई नव बिभिचारी तैंतिस धरानिये।
थाई थदि निज रजधानी करि मानस मैं
रस कहवाए बिभिचारी संगी जानिये।
रजधानी आलंबन संपति उद्दीपता कौं
चीन्हिबे के लछन कौं अनुभाव मानिये।
कोऊ रचै भूपन सौं कोऊ बिन भूपनहि
कबिन कौं तिन को चितेरो पहिचानिये ॥ ५४६ ॥

अथ भावमिश्रित भेद (दोहा)

तिन रस भावन की सुनौ संधि उदै अरु सांति।
होति सबल प्रौढ़ोक्तिजुत बृत्ति सु बहुती भाँति ॥ ५४७ ॥

भावसंधि, यथा

तजि संसय कुलकानि की मन मोहन सौं बंधि।
ह्वैहै नृप दसरथ-दसा नेम-प्रेम की संधि ॥ ५४८ ॥
मोहन-बदन निहारि अरु बिमल बंस की गारि।
रही अहोनिसि प्रीति-डर संध्या ह्वै सुकुमारि ॥ ५४९ ॥
वह पर ऊपर तें तकत नीच अन्यो वह नीच।
बिधि बचएँ बचिहै बिहँग ब्याध बाज के बीच ॥ ५५० ॥

भावोदय-भावशांति, यथा

प्रीतम-सँग प्रतिबिंब लखि दरपन-मंदिर माहिं।
उदित होत मुद्रित भई इर्षा तिय-हियराहिं ॥ ५५१ ॥

---

[५४६] जाए-जाइ (लीथो), जायो (सभा)। करि-कियो (सर०, सभा)। भूपन-भूपननि (सर०, सभा)। भूपनहि-भूपननि (वही)।
[५४७] सधि-भाव (सर०, सभा)। बृत्ति०-बृत्तिन सौं बहु (लीथो)।
[५५०] अरथो-बसै (लीथो)।

उन्माद भाव

हिय की सब कहि देत है होत चेत की हानि।
छकवति आसव-पान लौं कान्ह-तान बनितानि ॥ ५२६ ॥

अवहित्था भाव

जानि मान अनुमानिहै लाल लाल लखि नैन।
तिय सुवास मुख स्वास भरि लगी बफारो दैन ॥ ५२७ ॥
गिरद महल के द्विज फिरत फिरि फिरि कहत पुकारि।
कनक अटारी किन करी टाटी मेरी टारि ॥ ५२८ ॥

अपस्मार भाव

रस-बाहिर बंसी करी धारि बारिचर रंग।
फरफराति भुव पर परी थरथराति सब अंग ॥ ५२९ ॥

गर्व भाव

देखि कूबरी दूबरी रीझे स्याम सुजान।
कहौ कौन को भागु है मेरे भाग समान ॥ ५३० ॥

जड़ता भाव

बचन सुनत कत तकि रहे जकि से रहे निसूरि।
दूरि करौ पिय पग लगत लगी मुकुट मैं धूरि ॥ ५३१ ॥
इकटक हरि राधे लखै राधे हरि की ओर।
दोऊ आनन-इंदु मे चान्यौ नैन चकोर ॥ ५३२ ॥

उग्रता भाव

हेरि हेरि सब मारिहौं धरी परसधर टेक।
छपहुँ न बँचिहै छोनि पर छोनिप-छौना एक ॥ ५३३ ॥

---

[५२७] मुख–मुख (लीथो)। भरि–धरि (वही)।
[५२८] फिरत–फिरै (काशि०, सर०, सभा)। किन–कइ (सर०)।
[५३१] पिय–तिय (सर०)।
[५३२] मे–मै (सर०, सभा)।

सुप्त भाव

जात जगाए हूँ न अलि आँगन आए भानु।
रसमोए सोए दोऊ प्रेमसमोए प्रानु ॥ ५३४ ॥
सपने मिलत गोपाल सों ग्वालि परम सुख पाइ।
कंपनि विहसनि भुज गहनि पुलकनि देति जनाइ ॥ ५३५ ॥

आवेग भाव

कियो अकरपन मंत्र सो वंसीधुनि बृजराज।
उठि उठि दौरीं बाल सब तजे लाज गृहकाज ॥ ५३६ ॥

त्रपा भाव

ज्यौं ज्यौं पिय एकटक लखत गुरजनहूँ न सकात।
त्यौं त्यौं तिय-लोचन बड़े गड़े लाज में जात ॥ ५३७ ॥

त्रास भाव

सनसनाति आवत चली विषमय कारे अंग।
लहरैं देति कलिंदजा अली उरगिनी-रंग ॥ ५३८ ॥

व्याधि भाव

हाय कहा वै जानतीं पै न जानतीं पीर।
करी जात नहि औषधी करैं जातनहि बीर ॥ ५३९ ॥

निर्वेद भाव

प्रस्ताविक चेतावनी परमारथ बहु भेद।
सम संतोष विचार को ज्ञान देत निर्वेद ॥ ५४० ॥

---

[५३४] जगाए-जगायो (लीथो) । आए-आयो (वही) ।
[५३५] सों-कों (सर०) ।
[५३८] विषमय-विष् से (लीथो) ।
[५३९] करैं-धरी (लीथो) । बीर-धीर (वही) ।

मिलन-चाह तिय-चित चढ़ी उठति घटा लखि भूरि।
भई तड़ित घनस्याममय गई मानमति दूरि॥ ५५२॥

भावशवल, यथा

पिय-आगम परदेस तें सौति-सदन में जोइ।
हर्ष गर्व अमरष अनख रस रिस गई समोइ॥ ५५३॥

आठौ सात्विक को शवल, यथा (सवैया)

आनन में रँग आयो नवीन है भींजि रही है पसीननि सारी।
कंपित गात परें पग सूधे न सूधी न बात कढ़ै मुख प्यारी।
लाइ टकी क्यों विलोकि रही अँसुवानि रुके अखियाँ छमकारी।
रोम उठे प्रगटे कहे देत हैं कुंजनि में मिले कुंजविहारी॥ ५५४॥

नायिका को शवल (कवित्त)

एकनि के जी की व्यथा जानत न जीकी सखी
एकै दुख बूझे तें न बोलें लीन्हे लाज के।
एकै विरहाकुल विलाप करें एकै
बिलखित मगु आगें ठाढ़ी मिसु काहू काज के।
एकै कहैं कीजिये पयान सुखदानि पीछें
भए बृजमंडल बसेरे दुखसाज के।
गोपिन को हरष-विलास 'दास' कूबरी पै
चढ़ि चल्यो आगें ही चलत बृजराज के॥ ५५५॥

अथ भाव की प्रौढ़ोक्ति; हर्ष भाव की प्रौढ़ोक्ति (दोहा)

सपनें पिय पाती मिली मुदित भई मन बाल।
आइ जगायो भावतो को बरनै सुख हाल॥ ५५६॥

---

[५५३] जोइ—जाइ (लीथो)। अनख०—गई हरखा सरस समाइ (लीथो)।
[५५४] सूधी०—सुधियै (लीथो)।
[५५५] एकै बिलखित०—एकै एकै बिलखित मगु ठाढ़ी (सर०, सभा)। को—पै (सर०)।
[५५६] भावतो—भावतें (काशि०, सर०)।

स्वकीया की प्रौढ़ोक्ति

निज पिय-चित्र वियोगहू लखति न यह उर आनि।
दूजे सों मनु रमतु है होति पतिव्रत-हानि ॥ ५५७ ॥

अनुकूल नायक की प्रौढ़ोक्ति

तुँही मिली सपनें दई जरों दुखित जदुराय।
परम ताप सहि अप्सरा ज्यों क्योंहूँ छलि जाय ॥ ५५८ ॥

परकीया की प्रौढ़ोक्ति

इहि वन इहि दिन इनहि सँग लह्यो अमित सुखलाहु।
भए अरुचि सखि येउ सब भए इन्हैं सों व्याहु ॥ ५५९ ॥

अथ वृत्ति-कथन

वृत्ति कैसकी भारती सात्वतीहि उर आनि।
आरभटीजुत चारि विधि रस को सबल बखानि ॥ ५६० ॥
सुभ भावनि जुत कैसकी करुना हास सिंगार।
बीर हास सृंगार मिलि सात्वतीहि निरधारि ॥ ५६१ ॥
भय बिभत्स अरु रुद्र तें आरभटी उर आनि।
अद्भुत बीर सिंगारजुत सांत सात्वती जानि ॥ ५६२ ॥
सब विभाव अनुभाव कौं बहिरभाव पहिचानि।
चर अरु थाई भाव को अंतरभाव बखानि ॥ ५६३ ॥
भाव भाव रस रस मिलै त्यों त्यों धरिये नाम।
बुधिबल जान्यो परत नहिं समुझैबे को काम ॥ ५६४ ॥
जिहि-लक्षन कौं पाइये जहाँ कछू अधिकार।
वाही कौं वह कवित है बरनत बुद्धिउदार ॥ ५६५ ॥
रस सोभासित होत है जहाँ न रस की बात।
रसाभास तासों कहैं जे हैं मति-अवदात ॥ ५६६ ॥

[५६०-६१] कैसिकी–कौसकी (सर्वत्र)। सात्वतीहि–सात्विकीहि (सर्वत्र)।
[५६२] बिभत्स०–बीभत्स रु (काशि०, सर०, सभा)।
[५६६] तासों–ताकों (सर०, सभा)।

भ्रम तेँ उपजत भाव है सो है भावाभास।
पाँच भाँति रसदोप को लक्षन सुनो प्रकास ॥ ५६७ ॥

(सोरठा)

होइ कपट की प्रीति अनुचित करिये पुष्ट जहँ।
पहिलो नीरस रीति दूजो पात्रादुप्ट है ॥ ५६८ ॥
सोग भोग में जोइ आन आन रुचि दुहुँन के।
प्रथम विरस रस होइ दूजो दुरसंघान कहि ॥ ५६९ ॥

(दोहा)

जो बिभत्स सृंगार में भै में बीर बखानि।
बर्नन करुना रुद्र में प्रत्यनीक रस जानि ॥ ५७० ॥
जहाँ न पूरन होत रस मिलत कछू संजोग।
थाई भावहि को तहाँ नाम धरत कवि लोग ॥ ५७१ ॥
प्रीति हँसी अरु सोक पुनि क्रोध उछाहहि जानु।
भय निंदा बिसमय भगति थाई भाव बखानि ॥ ५७२ ॥
कहूँ हासरस पाइकै दोषांकुस अनुमानि।
दोषो गुन ह्वै जात है कहँ जानमनि जानि ॥ ५७३ ॥
तिय तिय बालक बालकहि बंधु बंधु सोँ प्रीति।
पितु सुत प्रेमादिक सबै कहै प्रेमरस-रीति ॥ ५७४ ॥
थाई भाव दया जहाँ कहुँ कैसेहू होइ।
बात स्वल्प रस कहत हैं करुना रस तेँ जोइ ॥ ५७५ ॥
बिप्र-गुरू स्वामी-भगति इत्यादिक जहँ होइ।
भक्तिभाव रस सांत तेँ प्रगट जान सब कोइ ॥ ५७६ ॥
सबै प्रछन्न प्रकास है छिपे प्रगट तेँ जानि।
भूत भविप ब्रतमान पुनि सब भेदनि मेँ मानि ॥ ५७७ ॥
सब सामान्य बिसेप है लक्षन सबै बिसेप।
होइ कछुक लक्षन लिये सो समान्य अवरेप ॥ ५७८ ॥

---

[५७०] जौ–जहँ (काशि०) । भै मेँ–भजे यै (वही) ।
[५७१] न पूरन–निरूपन (सभा) ।
[५७८] सबै–सकल (सभा) ।

जो रस उपजै आपु तेँ ताकोँ कहत स्वनिष्ठ।
होत और तेँ और पै ताहि कहत परनिष्ठ ॥ ५७९ ॥
सबके कहत उदाहरन ग्रंथ बहुत बढ़ि जाइ।
तातेँ संपूरन कियो बालगोपालहि ध्याइ ॥ ५८० ॥

(सवैया)

कर कंजन कंचन की पहुँची मुकुतानि को मंजुल माल गरेँ।
चहुँधाँ श्रुतिकुंडल घेरि रही घुघुरारी लटेँ घनसोभ धरेँ।
चतियाँ मृदु बोलनि बीच फबैँ दँतियाँ दुति दामिनि की निदरेँ।
मुनिबृंद-चकोर के चंद मनोहर नंद के गोद बिनोद करेँ ॥ ५८१ ॥
पद-पानिन कंचन चूरे जराइ जरे मनि लालन सोभ धरेँ।
चिकुरारी मनोहर पीत झँगा पहिरेँ मनि-आँगन मेँ बिहरेँ।
यहि मूरति ध्यानन आनन कोँ सुर-सिद्ध-समूहनि साध मरेँ।
बड़भागिनि गोपि मयंकमुखी अपनी अपनी दिसि अंक भरेँ ॥ ५८२ ॥
नवनील सरोरुह अंगनि केसरि-रंग दुकूल-प्रभा सरसेँ।
उर नाहर के नख संजुत चारु मयूरसिखानि के हार लसेँ।
बिचरेँ पद-पानिन आँगन मेँ झुलकेँ किलकेँ हुलसेँ बिहँसेँ।
अधराधर-खोलनि तोतरि बोलनि 'दास' हिये दिनरैन बसेँ ॥ ५८३ ॥

(दोहा)

सत्रह सै इक्यानवे नभ सुदि छठि बुधवार।
अरवर देस प्रतापगढ़ भयो ग्रंथ-अवतार ॥ ५८४ ॥
कुमति कुदूषन लाइहैँ सुधर्‍यो बर्न बिगारि।
सुमति समुझि सुख पाइहैँ बिगर्‍यो बर्न सुधारि ॥ ५८५ ॥

---

[५७९] पै–मै (काशि०, सर०, सभा)।
[५८२] यहि–जेहि (सर०, सभा)। आनन०–की सुर सिद्धि सिहात (वही)।

शृंगारनिर्णय

श्रृंगारनिर्णय

(सवैया)

मूस मृगेस बली वृष वाहन किंकर कीनो करोर तेंतीस कौं।
हाथन में फरसा करवाल त्रिसूल धरे खल खोइबे खीस कौं।
जक्तगुरु जग की जननी जगदीस भरे सुख देत असीस कौं।
'दास' प्रनाम करै कर जोरि गनाधिप कौं गिरिजा कौं गिरीस कौं ॥१॥

(कवित्त)

मच्छ ह्वैके वेद काढ़्यो कच्छ ह्वै रतन गाढ्यो
कोल ह्वै कुगोल रद राख्यो सबिलास है।
बावन ह्वै इंद्रै ह्वै नृसिंह प्रहलादै राख्यो
कीनो ह्वै द्विजेस जाने छिति छत्र-नास है।
राम ह्वै दसास्यबंस कान्ह ह्वै सँघार्‌यो कंस
बौध ह्वैकै कीनो जिन स्रावक-प्रकास है।
कलकी ह्वै राखे रहैं हिंदूपति पति देत
म्लेच्छ हति मोक्षगति 'दास' ताको दास है ॥ २ ॥

(दोहा)

श्रीहिंदूपति-रीझि-हित समुझि ग्रंथ प्राचीन।
'दास' कियो सृंगार को निरनय सुनौ प्रबीन ॥ ३ ॥
संबत बिक्रम भूप को अट्ठारह सै सात।
माधव सुदि तेरस गुरौ अरवर थल बिख्यात ॥ ४ ॥
बंदौं सुकबिन के चरन अरु सुकबिन के ग्रंथ।
जातें कछु हौंहूँ लह्यो कबिताई को पंथ ॥ ५ ॥

---

[१] खोइबे-खोइबो (सर०)।
[२] जाने-जाहि (सर०)। कलकी-कलंकी (वही)। रहैं-रहौ (वही)।
[३] हित-कौं (सर०)।
[५] लह्यो-लह्यौ (सर०)।

जिहि कहियत सृंगाररस ताको जुगल विभाव।
आलंबन इक दूसरो उद्दीपन कविराव ॥ ६ ॥
बरनत नायक-नायिका आलंबन के काज।
उद्दीपन सखि दूतिका सुख-समयो सुखसाज ॥ ७ ॥

नायक-लक्षण

तरुन सुघर सुंदर सुचित नायक सुहृद बखानि।
भेद एक साधारनै पति उपपति पुनि जानि ॥ ८ ॥

साधारण नायक, यथा (कवित्त)

मुख सुखकंद लखि लाजै दास' चंद-ओप
चोप सो चुभत नैन गोप-तनुजान के।
तैसो सब सुरभित बसन हिये को माल
कानन के कुंडल बिजायठ भुजान के।
नासा लखे सुकतुंड नाभी पै सुरस कुंड
रद है दुरद-सुड देखत दु-जान के।
नल को न लीजै नाम कामहू को कहा काम
आगें सुखधाम स्यामसुंदर सुजान के ॥ ९ ॥

पति-लक्षण (दोहा)

निज ब्याही तिय को रसिक पति ताकों पहिचानि।
आसिक और तियान को उपपति ताकों जानि ॥ १० ॥

पति, यथा (सवैया)

छोड़यो सभा निसिबासर की मजरे लगे पावन लोग प्रभातैं।
हासबिलास तज्यो तिनसों जिनसों रह्यो है हँसि बोलि सदा तैं।
'दास' भोराई-भरी है वही पै प्रयोग-प्रवीनी गनी गई यातैं।
आई नई दुलही जब तैं तब तैं लई लाल नई नई बातैं ॥११॥

---

[८] सुचित–सुखी (सर०)।
[९] सुरभित–सानन के (सर०)। सुरस–सरस (भार०)।
दु-जान–भुजान (वही)।
[११] जिन०–जिन्हहू सों रह्यो (सर०)।

उपपति, यथा

अलकावलि ब्याली बिसाली घिरै जहँ ब्वाल जवाहिर-जोति गहै।
चमकै वरुनी बरछी भ्रुव खंजर कैवर तीछ कटाछ महै।
बसि मैन महा ठग ठोढ़ी की गाड़ मैं हास के पास पसारे रहै।
मन मेरे कि 'दास' ढिठाई लखौ तहँ पैठि मिठाई लै आयो चहै॥१२॥

नायकभेद (दोहा)

अनुकूलो दक्षिन सठो धृष्टिति चारौ चारि।
इक नारी सौं प्रेम जिहि सो अनुकूल विचारि॥ १३॥

पति अनुकूल, यथा (सवैया)

संभु सो क्यों कहियै जिहि ब्याहो है पारवती औ सती तिय दोऊ।
राम-समान कह्यो चहै जीय पै माया की सीय लिये रहै सोऊ।
'दासजू' जौ यहि औसर होवतीँ तेरोई नाह सराहतीं वोऊ।
नारि पतिव्रत हैं बहुतै पतिनीव्रत नायक और न कोऊ॥१४॥

उपपति अनुकूल, यथा

तो बिन राग औ रंग वृथा तुव अंग अनंग की फौजन की सौँ।
आनन आनँदखानि की सौँ मुसुकानि सुधारस मौजन की सौँ।
'दास' के प्रान की पाहरू तू यहि तेरे करेरे उरोजन की सौँ।
तो बिन जीयो न जीयो प्रिया यहि तेरही नैन-सरोजन की सौँ॥१५॥

दक्षिण लक्षण (दोहा)

बहु नारिन को रसिक पै सब सौं प्रीति समान।
बचन क्रिया मैं अति चतुर दक्षिन लक्षन जान॥ १६॥

---

[१२] ब्याली०–ब्याल बिसाल (भार०)। लै–लि (वही)।
[१३] चारौ०–चौराचार (भार०))।
[१४] होवतीँ०–होते तौ तेतोई नाह सराहते (सर०)।
[१५] आनन०–मुसक्यान सुधारस मौजन की तुव आनन आनँद-खाननि की सौं (भार०)। प्रिया यहि०–प्रिया मुहि तेरई (वही)।
[१६] को–के (सर०)। सौं–पै (भार०)।

यथा (सवैया)

सीलभरी अँखियान समान चितै सबकी दुचिताई को घायक।
'दासजू' भूषन बास दिये सब ही के मनोरथ पूजिबे लायक।
एकहि भाँति सदा सब सोँ रतिरंग अनंगकला सुखदायक।
मैँ बलि द्वारिकानाथ की जो दस सोरह सै नवलान को नायक ॥१७॥

दक्षिण उपपति, यथा

आज बने तुलसीवन मेँ रमि रास मनोहर नंदकिसोर।
चारिहूँ पास हैँ गोपबधू भनि 'दास' हिये मेँ हुलास न थोर।
कौल उरोजवतीन को आनन मोहन नैन भ्रमैँ जिमि भौँर।
मोहन-आनन-चंद लखैँ बनितान के लोचन चारु चकोर ॥ १८ ॥

वचनचतुर, यथा

भौन अँध्यारहूँ चाहि अँध्यारी चवेली के कुंज के पुंज बने हैँ।
बोलत मोर करैँ पिक सोर जहाँ तहँ गुंजत भौँर घने हैँ।
'दास' रच्यो अपने ही बिलास कौँ मैनजू हाथन सौँ अपने हैँ।
कूल कलिंदजा के सुखमूल लतान के बृंद बितान तने हैँ ॥१९॥

क्रियाचतुर, यथा

जित न्हानथली निज राधे करी तित कान्ह कियो अपनो खरको।
जित पूजा करैँ नित गौरि की वै तित जाइ ये ध्यान धरैँ हर को।
इन भेदनि 'दासजू' जानै कछू ब्रज ऐसो बडो बुधि को घर को।
दधिबेचन जैबो जितै उनको यई गाहक हैँ तित के कर को ॥२० ॥

सठ-लक्षण (दोहा)

निज मुख चतुराई करै सठता ठहरै न्यान।
व्यभिचारी कपटी महा नायक सठ पहचान ॥ २१ ॥

---

[१७] दिये–कियो, (भार०)। दस–दन (वही)।
[१८] चारु–चाह (भार०)।
[१९] अँध्यार–अँधेरे (भार०)।
[२०] बड़ा–बसे (भार०)। कर–घर (वही)।
[२१] ठहरै०–बिरचै आइ (भार०)।

शठ पति, यथा (सवैया)

वा दिन की करनी उनकी सब भाँतिन कै ब्रज में रही छाइकै ।
'दासजू' कासौं कहा कहिये रहिये नित लाजन सीस नवाइकै ।
मेरे चलावतहीं चरचा मुकरै सखि सौं हैं घड़ेन की खाइकै ।
तूँ निज ओर सौं नंदकिसोर सौं क्यौंहूँ कछू कहती समुझाइ कै ॥२२॥

शठ उपपति, यथा

मिलिबे को करार करौ हम सौं मिलि औरन सौं नित आवत हौ ।
इन बातन हाँहीं गई करती तुम 'दासजू' धोखो न लावत हौ ।
नटनागर हौ जू सही सबही अँगुरी के इसारे नचावत हौ ।
पै दई हमहूँ विधि थोरी घनी बुधि काहे को बातैं बनावत हौ ॥२३॥

धृष्ट-लच्छन (दोहा)

लाज 'रु गारी मार की छोड़ि दई सब त्रास ।
देख्यो दोष न मानई नायक धृष्ट प्रकास ॥ २४ ॥

पति धृष्ट, यथा (सवैया)

उपरैनी धरे सिर भावती की प्रतिरोम पसीनन च्वै निकसे ।
मुसुकात इतै पर 'दास' सबै गुरुलोगनि के ढिग ह्वै निकसे ।
गुनहीन हरा उर में उपट्यो तिहि बीच नखक्षत द्वै निकसे ।
गृह आवत हैं बृजराज अली तन लाज को लेस न छ्वै निकसे ॥२५॥

उपपति धृष्ट, यथा

यह रीति न जानी हुती तब जानी जू आज लौं प्रीति गई निबही ।
नहि जायगी मोसौं सही उत ही करौ जाइकै ऐसी ढिठाई सही ।
पहिचान्यो भली विधि 'दास' तुम्हैं अबला-जन की अब लाज नहीं ।
मनभाइ ही की न करी डर जू मनभाई की दौरिकै बाँह गही ॥२६॥

इति नायक

---

[२२] क्यौंहूँ–क्यौं न (भार०) ।
[२४] लाज०–लाजन (सर०) । मार–मान (वही) ।
[२५] च्वै–ह्वै (सर०); यों (भार०) । द्वै–ह्वै (वही) । छ्वै–च्वै (वही) ।
[२६] मनभाइ–मनभाव (भार०) । जू–जो (वही) ।

अथ नायिका-लक्षण (दोहा)

पहिले आतमधर्म तें त्रिविधि नायिका जानि ।
साधारन धनिता अपर सुकिया परकीयानि ॥ २७ ॥

साधारण नायिका-लक्षण

जामें स्वकिया परकिया रीति न जानी जाइ ।
सो साधारन नायिका बरनत सब कविराइ ॥ २८ ॥
जुवा सुंदरी गुनभरी तीनि नायिका लेखि ।
सोभा कांति सुदीप्तिजुत नखसिख प्रभा निसेखि ॥ २६ ॥

सोभा, यथा (कवित्त)

'दास' आसपास आली ढारतीं चवँर भावै
लोभी ह्वै भवँर अरविंद से वदन में ।
केतीं सहवासिनी सुआसिनी खवासिनी
हुकुम जोहैं बैठी खडी आपने हृदन में ।
सची सुदरी है रतिरंभा औ घृताची पै
न ऐसी रुचिराची कहूँ काहू के कदन में ।
पूरे चित चाइनि गोविंद-सुखदाइनि
श्रीराधा ठकुराइनि विराजति सदन में ॥ ३० ॥

कांति, यथा

पहिरत खवरे धरत यह लाल सारी
जोति जरतारीहूँ सों अधिक सोहाई है ।
नाकमोती निदत पदुमराग रंगनि कौं
खुलित ललित मिलि अधर-ललाई है ।
औरे 'दास' भूपन सजत निज सोभाहित
भामिनी तूँ भूपननि सोभा सरसाई है ।
लागत विमल गात रूपन के आभरन
आभा चढ़ि जात जातरूप सों सवाई है ॥ ३१ ॥

---

[३०] हुकुम–हू नैन (भार०) । खड़ी–बड़ी (वही) । पूरे–पूरी (वही) ।

[३१] आभा०–आभा मिटि जात (सर०), बढि जात रूप (भार०) ।

दीप्ति-वर्णन

आरसी को आँगन सुहायो छवि छायो
नहरनि मैं भरायो जल उज्जल सुमन-माल।
चाँदनी विचित्र लखि चाँदनी बिछौना पर
दूरि कै चँदोवन कों बिलसै अकेली बाल।
'दास' आसपास बहु भाँतिन विराजैं धरे
पन्ना पोखराज मोती मानिक पदिक लाल।
चंद-प्रतिबिंब तें न न्यारो होत मुख औ
न तारे-प्रतिबिंबनि तें न्यारो होत नगजाल॥ ३२॥

पग-वर्णन

पाँखुरी पदुम कैसी आँगुरी ललित तैसी
किरनें पदुमराग-निंदक नखन मैं।
तरवा मनोहर सु एड़ी मृदु कोहर सी
सोहर ललाई की न ह्वैहै लालगन मैं।
अनत तें आकरषि अनत बरषि देत
भानु कैसो भाव देख्यो तेरे चरनन मैं।
आकरषि लीन्हो है सोहाग सब सौतिन को
दीन्हो है बरषि अनुराग पिय-मन मैं॥ ३३॥

जानु-वर्णन

करभ बतावै तो करभ ही की सोभा हित
गजसुंड गावै तो गजन की बड़ाई कौं।
एरी प्रानप्यारी तेरी जानु कै सुजान विधि
ओप दीन्हो आपनी तमाम सुघराई कौं।

---

[३२] ०नि तें-ते-तेन (भार०)। नग-नख (वही)।
[३३] सु-सी (भार०)। ह्वै-लै (वही)। अनत-अतन (वही)।
आकरषि-आँक रखि (वही)।
[३४] तो-ते (सर०, भार०)। तो-ते (सर०)। तेरी-तेरे
(भार०)।

'दास' कहै रंभा सुरनायक-सदनवारी
नेकहूँ न तुली एको अंग की निकाई कों।
रंभा घाग कौने की जो वाके ढिग सोने की है
सीस भरि आवै तौ न पावै समताई कों ॥ ३४ ॥

नितंब-वर्णन

तो तन मनोज ही की फौज है सरोजमुखी
हाइभाइ साइकै रहे हैं सरसाइकै।
तापर सलोने तेरे वस हैं गोविंद प्यारे
मैनहू के बस भए तेरे ढिग जाइकै।
तिनहू गोविंद लै सुदरसनचक्र एकै
कीन्हो वस भुवन चतुर्दस बनाइकै।
काहे न जगत जीतिबे कों मन राखै
मैन-दुर्लभ-दरस है नितंब-चक्र पाइकै ॥ ३५ ॥

कटि-वर्णन

सिंहिनी औ भृंगिनी की ता ढिग जिकिर कहा
आरहू सुरारहू तें खीनी चित धरि तूँ।
दूरि ही तें नैसुक नजरि भार पावतहीं
लचकि लचकि जात जी में ज्ञान करि तूँ।
तेरो परिमान परमान के प्रमान है
पै 'दास' कहै गरुआई आपनी सँभरि तूँ।
तूँ तौ मनु है रे वह निपट ही तनु है रे
लंक पर दौरत कलंक सों तौ डरि तूँ ॥ ३६ ॥

उदर-वर्णन

कैसी करी ए तौ ए तौ अद्भुत निकाई भरी
छामोदरी पातरी उदर तेरो पान सो।

---

[३५] प्यारे–प्यारो (भार०)। भए–भयो (वही)। मैन–मन (वही)।
[३६] भृंगिनी–मृगिनी (भार०)। रे लंक–री लंक (सर०)।

सरल सुदेस अंग विहरि थकित ह्वैके
पीवे को सिवान मेरे मन के मरान सों।
उरज सुमेरु आगे त्रिबली बिमल सीढ़ी
सोभासर नाभि सुभ तीरथ समान सों।
हारन की भाँति आवा-गौन की बँधी है पाँति
जुगुल सुमनबृंद करत नहान सों॥ ३७॥

रोमावली-वर्णन (सवैया)

बैठी मलीन अली अवली कि सरोज-कली नमों है विकली है।
मंजु-नली निबुरी ही चली किधौं नागलली अनुराग-रली है।
तेरी अली यह रोमावली कि सिंगारलता फल-बेल-फली है।
नाभिथली तें जुरे फल लै कि भली, रसराज-नली उछली है॥३८॥

कुच-वर्णन

गाढ़े गड़यो मन मेरो निहारिकै कामिनि तेरे दोऊ कुच गाढ़े।
'दास' मनोज मनो जग जीतिकै रास खजाने के कुंभ द्वै काढ़े।
चक्रवती द्वै एकत्र भए मनो जोम के तोम दुहूँ उर बाढ़े।
गुच्छ के गुंमज के गिरि के गिरिराज के गर्व गिरावत ठाढ़े॥३९॥

भुज-वर्णन

भाई सुहाई सराद-चढ़ाई सी भावती तेरी भुजा छबिजाल है।
सोभा सरोवरी तूँ है सही तहँ 'दास' कहै ये सकंज मृनाल है।
कंचन की लतिका तूँ बनी दुहूँधा ये बिचित्र सपल्लव डाल है।
अंग में तेरे अनंग बसै ठग ताहि के पास की फाँसी बिसाल है॥४०॥

---

[३७] करी०–करिये अति अद्भुत (भार०)। भाँति–भीति (सर०)।
नहान–जहान (भार०)।
[३८] गली–जगा (भार०)। बेल–बेलि (वही, लीथो)।
[३९] एकत्र०–एकनित मानो म जाम के जोम दुई (भार०)।
[४०] भाइ–सूत्र (भार०)। सरोवरी–सरोवर (वही)। दुहूँधा०–
दुहूँ छाये (वही)।

कर-वर्णन

पत्र महारुन एक मिलाइ फलाइ-छिमी तरुनी रँग दीने ।
पाँखुरी पंच की कंज की भानु में धान मनोज के श्रोनित-भीने ।
पंच दसानि को दीपक सो कर कामिनि को लखि 'दास' प्रवीने ।
लाल की चँदुली लालरी की लरियाँ जुत आइ निछावरि कीने ।।४१।।

पीठ-वर्णन

मंगलमूरति कंचनपत्र कै मैनरच्यो मन आवत नीठि है ।
काटि किधौं कदलीदल-गोफ कों दीन्हो जमाइ निहारि अगीठि है ।
'दास' प्रदीप-सिखा उलटी कै पतंग भई अवलोकति दीठि है ।
कंध तें चाकरी पातरी लंक लौं सोभित कैधौं सलोनी की पीठि है ।।४२।।

कंठ-वर्णन

कंबु कपोतन की सरि भाषत 'दास' तिन्हैं यह रीति न पाई ।
या उपमा कौं यही है यही है यही है बिरंचि त्रिरेख खचाई ।
कंचन-पंचलरा गजमोतीहरा मनिलाल की माल सोहाई ।
कै तिय तेरे गरे में परी तिहुँ लोक की आइकै सुंदरताई ।।४३।।

ठोढ़ी-वर्णन

छाक्यो महा मकरंद मलिंद रह्यो किधौं मंजुल कंज-किनारे ।
चंद में राहु को दंत लग्यो कै गिरी मसि भाग सोहाग-लिखारे ।
'दास' रसीली की ठोढ़ी छबीली की लीली के बिंदु पै जाइये वारे ।
मित्त की डीठि गड़ी किधौं चित्त को चोर गिर्‍यो छबिताल-गड़ारे ।।४४।।

---

[४१] मिलाइ०–मिलाय गुलाब कली तरुनी (भार०)। पंच की–पंच को (सर०)।

[४२] अगीठि–अपीठि (भार०)। भई–भई (वही)। लौं–सों (वही, लीथो)।

[४३] आइ–आनि (भार०, लीथो)।

[४४] कंज–मजु (सर०)।

अधर-वर्णन- (कवित्त)

एरी पिकबैनी 'दास' पटतर हेरे जब
जन इन तेरे अधरन मधुरारे को।
दाख दुरि जाइ मिसिरीयौ मुरि जाइ कंद
कैसे कुरि जाइ सुधा सटक्यो सवारे को।
ललित ललाई के समान अनुमाने रंग
बिंबाफल बंधुजीव विद्रुम निचारे को।
तातें इन नामनि को पहिलोई वर्न कहैं
मुख मूँदि मूँदि जात बरननवारे को॥ ४५॥

दशन-वर्णन

निधु सौं निकासि नीकी विधि सौं तरासि कला
लै करि सवारयो विधि बत्तिस बनाइ है।
हास ही में 'दास' उजराई को प्रकास होत
अधर ललाई धरे रहत सुभाइ है।
हीरा की हिरानी उड़गन की उड़ानी
अरु मुकुतनहूँ की छवि दीनी मुकताइ है।
प्यारी तेरे दंतन अनारीदाना कहि कहि
दाना ह्वैकै कवि क्यों अनारी कहवाइहै॥ ४६॥

हास-वर्णन

'दास' मुखचंद्र की सी चंद्रिका निमल चारु
चंद्रमा की चंद्रिका लगत जामें मैली सी।
बानी को कपूरधूरि ओढ़नी सी फहराति
बात बस आवति कपूर-धूरि फैली सी।

---

[४५] इन०—तेरे सुंदर अधर (भार०)। बर्न०—बरन कहत (सर०)।

[४६] बत्तिस—बत्तसो (भार०)। सुभाइ—सुभाय (वही), सवाइ (लीथो)। अनारीदाना—अनारदाने (भार०)।

विज्जु सी चमकि महताब सी दमकि उठै
उमगति हिय के हरष की उजेली सी ।
हाँसी हेमबरनी की फाँसी सी लगति ही मैं
साँवरे दगनि आगे फूलन चमेली सी ॥ ४७ ॥

वाणी-वर्णन (सवैया)

देव मुनीन को चित्त-रमावन पावन देवधुनी-जल जानो ।
'दास' सुने जिहिं ऊख मयूख पियूख की भूख भगी पहिचानो ।
कोकिल को किल कीर कपोतन की कल बोल की खंडनी मानो ।
बाल प्रबीनी की बानी को बानक बानी दियो तजि बीन को बानो ॥४८॥

कपोल-वर्णन (कवित्त)

जहाँ यह स्यामता को अंक है मयंक मैं
तहाँई स्वच्छ छबिहि सु छानि बिधि लीन्हो है ।
तामैं सुखजोग सबिसेष बिलगाइ
अवसेष सौं सुवेष सुरंग रचि दीन्हो है ।
आनन की चारुता मैं चारु हू तैं चारु चुनि
ऊपर ही राख्यो बिधि चातुरी सो चीन्हो है ।
तासौं यह अमल अमोल सुभ डोल गोल
लोलनैनी कोमल कपोल तेरो कीन्हो है ॥ ४६ ॥

श्रवण-वर्णन (सवैया)

'दास' मनोहर आनन-बाल को दीपति जाकी दिपै सब दीपै ।
श्रौन सोहाए बिराजि रहे मुकताहल-संजुत ताहि समीपै ।
सारी महीन सौं लीन बिलोकि बिचारत हैं कवि के अवनीपै ।
सोदर जानि ससीहि मिली सुत संग लिये मनो सिंधु मैं सीपै ॥५०॥

नासिका-वर्णन (कवित्त)

चारु मुखचंद कौं चढ़ायो बिधि किंसुक कै
सुक नचो बिंबफल-लालच उमंग है ।

---

[४७] मुख—महा (सर०) । मंदिर—रावर (वही) ।
[४८] कोकिल—कोकिला (सर०) । बोल०—बोलनि (भार०) ।
[४६] सुबेष—बिसेष (भार०) ।

नेह-उपजावन अतूल तिलफूल कैधौं
पानिप-सरोवरी की उरमी उतंग है।
'दास' मनमथ-साहि कंचन सुराही मुख
वंसजुत पालकी कि पाल सुभ रंग है।
एक ही में तीन्यौ पुर ईस को है अंस
कैधौं नाक नवला की सुरधाम सुर-संग है॥ ५१॥

नैन-वर्णन (सवैया)

कंज सकोचि गडे रहैं कीच मैं मीनन बोरि दियो दह-नीरनि।
'दास' कहै मृगहूँ कौं उदास कै बास दियो है अरन्य गँभीरनि।
आपुस मैं उपमा उपमेय ह्वै नैन ये निंदत हैं कवि धीरनि।
खंजनहूँ को उड़ाइ दियो हलके करि दीने अनंग के तीरनि॥५२॥

भृकुटी-वर्णन

भावती-भौंह के भेदनि 'दास' भले यह भारती मोसौं गई कहि।
कीन्हो चह्यो निकलंक मयंक जवै करतार विचार हिये गहि।
मेटत मेटत है धनुआकृति मेचकताई की रेख गई रहि।
फेरि न मेटि सक्यो सविता कर राखि लियो अति ही कविता लहि॥५३॥

भ्रूभार-चितवनि-वर्णन (कवित्त)

पै बिन पनिच बिन कर की कसीस बिन
चलत इसारे यह जिनको प्रमान है।
आँखिन अडत आइ उर मैं गड़त धाइ
परत न देखे पीर करत अमान है।
बंक अवलोकनि को बान औरई विधान
कज्जलकलित जामैं जहर समान है।
तातें बरबस बेधै मेरे चित्त चंचल कौं
भामिनी ये भौंहैं कैसी कहर-कमान है॥ ५४॥

---

[५१] नस-बास (भार०)।
[५२] उड़ाइ०–उए यो हलुको करि दीन्हो (सर०)
[५४] पै–जै (भार०)।

भाल-वर्णन (सवैया)

बैठक है मन-भूप को न्यारो कि प्यारो अखारो मनोज बली को।
सोभन की रँगभूमि सुभाव बनाव बन्यो कि सोहागथली को।
'दास' विसेषक जंत्र को पत्र कि जातें भयो बस भाइ हली को।
भाग लसै हिमभानु को चारु लिलारु किधौं वृषभानलली को ॥५५॥

मुखमंडल-वर्णन (कवित्त)

आवै जित पानिप-समूह सरसात नित
मानै जलजात सु तौ न्याय ही कुमति होइ।
'दास' जातरूप को दरप कंदरप को है
दरपन सम टानै कैसे बात सति होइ।
और अबलानन मैं राधिका को आनन
बरोबरी को बल कहै कवि कूर अति होइ।
पैये निसिबासर कलंकित न अंक जाहि
बरनै मयंक कविताई की अपति होइ ॥ ५६ ॥

माँग-वर्णन (सवैया)

चीकनी चारु सनेहसनी चिलकै दुति मेचकताई अपार सौं।
जीति लियो मखतूल के तार तमी-तम सार दुरेफकुमार सौं।
पाटी दुहूँ बिच माँग की लाली बिराजि रही यौं प्रभा-बिसतार सौं।
मानो सिंगार की पाटी मनोभव सींचत है अनुराग की धार सौं ॥५७॥

केश-वर्णन (कवित्त)

घनस्याम मनभाए मोर के पखा सोहाए
रस बरसाए घन-सोभा उमहत हैं।
मन उरझाए मखतूल तार जानियत
मोह उपजाए अहिछौने से कहत हैं।
'दास' यातैं केस के सरिस हैं मलिदवृंद
मुख-अरबिंद पर मंडई रहत हैं।
याही याही विधि उपमान ये भए हैं जब
और कहाँ स्यामता है समता लहत हैं ॥ ५८ ॥

---

[५५] विसेषक०-विसेष के तंत्रिका यंत्र को (भार०)।
[५७] सार-नार (भार०, लीथो)। [५८] मंडई-रोरई (भार०)।

वेणी-वर्णन

यह मोक्षदेनी पातकिन को तिनकी बीच
साधु-गन बाँधे यह कौन धौं बड़ाई है ।
गरे मरे लोगनि अमर करै वह यह
जीवत सुमार करै गुन की कसाई है ।
सिर तें चरन लौं मैं नीके कै निहारयो 'दास'
वेनी कैसी धारा यामें एक ना लखाई है ।
विष की सँवारी भयकारी कारी साँपिन सी
करी पिकवैनी यह वेनी क्यों कहाई है ॥ ५६ ॥

सर्वांग-वर्णन

अलक पै अलिवृंद भाल पै अरधचंद
भ्रू पै धनु नैननि पै वारों कंजदल मैं ।
नासा कीर मुकुर कपोल बिंब अधरनि
दारयो वारयो दसननि ठोढ़ी अंबफल मैं ।
कंबु कंठ भुजनि मृनाल 'दास' कुच कोक
त्रिवली तरंग वारौं भौंर नाभिथल मैं ।
अचल नितंबनि पै जंघनि कदलिखंभ
वाल पगतल वारौं लाल मखमल मैं ॥ ६० ॥

संपूर्ण-मूर्ति-वर्णन (सवैया)

'दास' लला नवला छवि देखिकै मो मति है उपमान-तलासी ।
चंपकमाल सी हेमलता सी कि होइ जवाहिर की लवलासी ।
दीपसिखा सी मसालप्रभा सी कहौं चपला सी कि चंदकला सी ।
जोति सों चित्र की पूतरी काढ़ी कि ठाढ़ो मनोजहि की अबला सी ॥६१॥

इति साधारण नायिका

अथ स्वकीया-लक्षण (दोहा)

कुलजाता कुलभामिनी सुकिया लक्षन चारु ।
पतिव्रता उदारिजो माधुर्जालंकारु ॥ ६२ ॥

---

[५६] सुमार-कौ मार (भार०) । कैसी-कै नि (वही) ।

श्री-भामिनि के भौन जो भोगभामिनी और ।
तिनहूँ कौं सुकियान में गनैं सुकवि-सिरमौर ॥ ६३ ॥

पतिव्रता, यथा (सवैया)

पान औ खान तें पी को सुखी लखै आपु तबै कछु पीवति खाति है ।
'दासजू' केलि थलीहि में ढीठो विलोकति बोलति औ मुसकाति है ।
सूनें न खोलति वेनी सुनैनी व्रती है बितावति वासर-राति है ।
आलियो जानै न ये बतियाँ यौं तिया पियप्रेम निबाहति जाति है ॥६४॥

औदार्य, यथा

हेम को कंकन हीरा को हार छोड़ावती दै दै सोहाग-असीसनि ।
'दास' लला की निछावरि बोलि जु माँगै सु पाइ रहै निसरीसनि ।
द्वार मैं प्रीतम जौ लौं रहै सनमानत देसनि के अवनीसनि ।
भीतरि ऐवो सुनाइ जनी तब लौं लहि जाति घनी बकसीसनि ॥६५॥

माधुर्य, यथा

प्रीतम-प्रीतिमई उनमानै परोसिनि जानै सु नीतिहि सौं टई ।
लाजसनी है बड़ीनि भनी बर नारिन में सिरताज गनी गई ।
राधिका को ब्रज की जुवती कहैं याहि सोहाग-समूह दई दई ।
सौति हलाहल-सौति कहैं औ सखी कहैं सुंदरि सील-सुधामई ॥६६॥

ज्येष्ठा-कनिष्ठा-भेद (दोहा)

इक अनुकूलहि दक्ष सठ धृष्ट तिय नियम धाम ।
प्यारी जेष्ठा, प्यार बिन कहैं कनिष्ठा नाम ॥ ६७ ॥

साधारण ज्येष्ठा, यथा (सवैया)

प्रफुलित निर्मल दीपतिवंत तूँ आनन सौतिनियाँ इक टेक ।
प्रभा रद होत है सारद कंज कहा कहिये तहँ 'दास' बिबेक ।
चितै तिय तो कुच-कुंभ के बीच नखच्छत चंदकला सुभ एक ।
भए इन सौतिन के मुख सारदी रैन के पूरन चंद अनेक ॥६८॥

---

[६३] सुकियान–सुकियाहु (वही, सर०) ।
[६७] तिय०–तिअबिन अँग (भार०) । नाम–धाम (वही) ।
[६८] दास–दान (लीथो) ।

दच्छिण की ज्येष्ठा-कनिष्ठा (सवैया)

'दास' पिछानि कै दूजी न कोइ भले सँग सौति के सोई है प्यारी।
देखि करोट सु ऐंचि अनोट, जगाइ लै ओट गए गिरिधारी।
पूरन काम कै त्यौं ही तहाँई सोवाइ कियो फिरि कौतुक भारी।
खोलि सु खोल उठाई दुहूँ मन रंजिकै गंजिफा-खेल पसारी ॥६९॥

शठ नायक की ज्येष्ठा (कवित्त)

हौं हूँ हुती संग रंग अंग अंग रंग रंग
भूषन बसन आज गोपिन सँवारी री।
महलसराय में निहारत सघन तन
ऊपर अटारी गए लाल गिरधारी री।
'दास' तिहि औसर पठाइकै सहेली कों
अकेलियै बुलाई वृषभान की कुमारी री।
लाल-मन बूड़िबे कों देवसरि-सोती भई
सौतिन चुनौटी भई वाकी सेत सारी री ॥ ७० ॥

शठ की कनिष्ठा (सवैया)

नैनन कों तरसैये कहाँ लौं कहा लौं हियो बिरहागि में तैये।
एक घरी न कहूँ कल पैये कहाँ लगि प्रानन कों कलपैये।
आवै यहै अब 'दास' बिचार सखी चलि सौतिहु के गृह जैये।
मान घटे तें कहा घटिहै जु पै प्रानपियारे कों देखन पैये ॥७१॥

धृष्ट की ज्येष्ठा, यथा

छोड़ि सबै अभिलाष भरोसो वै कैसो करैं किन साँझ सबेरे।
पाइ सोहागिनि को तनु छाड़िकै भूलिकै और के आइहै नेरे।
दीने दई के लहै सुख-जोगन 'दास' प्रयोग किये बहुतेरे।
कोटि करैं नहिं पाइबे कों अब तौ सखि लाल गरे परयो मेरे ॥७२॥

---

[६९] कोइ–कोप (भार०)। अनाट–अतोट (वही)। सोवाइ–सा आय (वहा, लाभा)।

[७२] किन–दिन (सर०)। और०–मेरे सु (भार०)।

धृष्ट की कनिष्ठा, यथा

ऊधोजू मानें तिहारी कही हम सीखें साईं जाई स्याम सिखावें।
जातें उन्हें सुधि जोग की आई दया कै वहै हमहूँ को पढ़ावें।
कूबरी कॉख्न जा दावे फिरै हमहूँ तिनकी समता कहूँ पावें।
पाठ करें सब जोग ही को जु पै काठहू की कुबरी कहूँ पावें ॥७३॥

ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण (दोहा)

ऊढ़ अनूढ़ा नारि द्वै ऊढ़ा ब्याही जानि।
बिन ब्याह ही सुधर्मरत ताहि अनूढ़ा मानि ॥ ७४ ॥

अनूढ़ा, यथा (सवैया)

श्रीनिमि के कुल दासिहू की न निमेष कुपंथनि ह्वै समुहाती।
तापर मो मन तौ ये सुभाव विचारि यहै निहचै ठहराती।
'दासजू' भावी स्वयंवर मेरे की बीसबिसै इनके रँग राती।
नातरु साँवरी मूरति राम की मो अँखियान में क्यों गड़ि जाती ॥७५॥

इति स्वकीया

अथ परकीया (दोहा)

दुरे दुरे परपुरुष तें प्रेम करे परकीय।
प्रगलभता पुनि धीरता भूषन द्वै रमनीय ॥ ७६ ॥

यथा (सवैया)

आलिन आगे न बात कढ़े न बढ़े उठि ओटनि तें मुसुकानि है।
रोष सुभाय कटाक्ष के छोरन पाय को आहट जात न जानि है।
'दास' न कोऊ कहूँ कबहूँ कहै कान्ह तें बातें कछू पहिचानि है।
देखि परै दुनियाई मैं दूजी न तो सी तिया चतुराई की खानि है ॥७७॥

प्रगल्भता-लक्षण (दोहा)

निधरक-प्रेम प्रगलभता जौं लौं जानि न जाइ।
जानि गए धीरत्व है बोलै लाज बिहाइ ॥ ७८ ॥

---

[७३] पढ़ावै-पठावै (सर०, भार०)। [७४] बिन०-बिना ब्याह सो (भार०)। [७५] मन०-मनि मेरो (भार०)। [७७] छोरन-छायन (भार०); छोर सो (लीथो)। कहूँ-कहै (भार०)।

यथा (सवैया)

लखि पौर मैं 'दासजू' प्यारो खरो तिय रोम-पसीननि च्वै चलती।
मिस कै गृहलोगन सों सुघरी सु घरीहि घरी ढिग ह्वै चलती।
जग-नैन बचाइ मिलाइकै नैननि नेह के बोजन व्वै चलती।
अपनी तनुछाँह सों तुंगतनी तनु छैल छबीले सों छ्वै चलती॥७६॥

धीरत्व, यथा

वा अधरा अनुरागी हिये पिय-पागी वहै मुसक्यानि सुचाली।
नैननि सूझि परै वहै सूरति बैननि बूझि परै वहै आली।
लोग कलंक लगाइहिंगी क्यों लुगाई कियो करैं कोटि कुचाली।
बादि बिथा सखि कोऊ सहै री गहै न भुजा भरि क्यों बनमाली॥८०॥

ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण (दोहा)

होति अनूढ़ा परकिया बिन ब्याहे परलीन।
प्रेम अनत ब्याही अनत ऊढ़ा तरुनि प्रवीन॥ ८१॥

अनूढ़ा, यथा (सवैया)

जानति हौं बिधि मीच लिखी हरि वाको तिहारे बिछोह के बानन।
जौ मिलि देहु दिलासो मिजाज को तौ कछु वाके परै कल प्रानन।
'दासजू' जाही घरी तैं सुनी निज ब्याह-उछाह की चाह कौ कानन।
वाही घरी तैं न धीरो रहै मन पीरो ह्वै आयो पियारी को आनन॥८२

ऊढ़ा, यथा (सवैया)

इहि आननचंद-मयूखन सों अँखियान की भूख बुझैवो करौ।
तन स्याम-सरोरुह दाम सदा सुखदानि भुजानि भरैवो करौ।
डर सास न 'दास' जेठानिन को किन गाँव चवाइ चवैवो करौ।
मनमोहन जो तुम एक घरी इन भाँतिन सों मिलि जैवो करौ॥८३

---

[७६] सों छ्वै–को छ्वै (भार०)।
[८०] तिय–जिय (भार०)। लगाइहिंगी०–लगावत लाग (वही)
बादि०–क्यों अपवाद वृथा ही (वही)।
[८२] धीरो०–धीर धस्यो परै (भार०), धीर धरे रहै (लीथो)।
[८३] दाम–दास (भार०, लीथो)। सास०–दास न सास (भार०)
चवाइ०–चवाव चलैवो (वही)।

उद्बुद्धा-लक्षण (दोहा)

उद्बुद्धा उद्बोधिता द्वै परकिया बिसेखि।
निज रीझे सुपुरुष निरखि उद्बुद्धा सो लेखि॥ ८४॥
अनूढानि को चित्त जो निरखै निहचल प्रीति।
तौ मुकियन की गति लहै सकुंतला की रीति॥ ८५॥

भेद

प्रथम होइ अनुरागिनी प्रेम-असक्ता फेरि।
उद्बुद्धा तेहि कहत पुनि परम प्रेमरस घेरि॥ ८६॥

अनुरागिनी, यथा (सवैया)

पाइ परौं जगरानी भवानी तिहारी सुन्यौं महिमा बहुतेरी।
कीजै प्रसाद परै जिहि कैसेहूँ नंदकुमार तें भाँवरी मेरी।
है यह 'दास' बड़ो अभिलाष पुरै न सकौ तौ करौ इकनेरी।
चेरी करौ मोहि नंदकुमार की चेरी नहीं करौ चेरी की चेरी॥८७॥

धीरत्न, यथा

होइ उज्यारो गँवारो न होइ उज्यारो लग्यौ तुम ताहि निहारो।
दीने हैं नैन निहारे से मेरेहू कीजै कहा करता सों न चारो।
आइ कही तुम कान मैं बात न कौनहू काम को कान्हर कारो।
मोहि तौ वा मुख देखे बिना रबिहू को प्रकास लगै अँधियारो॥८८॥

प्रेमासक्ता, यथा

'दासजू' लोचन पोच हमारे न सोच सकोच निधानन चाहैं।
कूर कहै कुलटा कहै कोऊ न केहूँ कहूँ कुलसानन चाहैं।

---

[८६] कहत०–कहत है (भार०), करत पुनि (सर०)।

[८७] सुन्यौं–सुनी (भार०)। सको०–सकौ तो कहौं (वही)। मोहि०–तौ करौ न करा मुहि नंदकुमार कि चेरी की चेरी (वही)।

[८८] उज्यारो लखो–जु प्यारो लगै (भार०)। दीन्हे०–दीने न (वही)।

तातें सनेह में बूड़ि रही इतने ही मैं जानें जो जानन चाहैं।
आनन दै कहैं छोड़ु गोपाल को आनन चाहियो आन न चाहैं ॥८९॥

उद्बुद्धा, यथा (कवित्त)

मेरी तू बड़ारिनि बड़ीयै हितकारिनि ह्याँ
कैसे कहौं मेरे कहे मोहन पै जावै तू।
नैन की लगनि दिन-रैन की दगनि यह
प्रेम की पगनि परि पगनि सुनावै तू।
यहऊ ढिठाई जो कहौं कि मोहि लै चलु कि
कान्ह ही कों 'दास' मेरे भौन लगि ल्यावै तू।
जथोचित देखि रितु देखि इत देखि चित
देहि तित आली जित मेरो हित पावै तू॥ ९० ॥

उद्बोधिता-लक्षण, (दोहा)

जा छवि पगि नायक कोऊ लावै दूतीघात।
उद्बोधिता सो परकिया असाध्यादि विख्यात ॥ ९१ ॥

भेद

प्रथम असाध्या सी रहै दुखसाध्या पुनि सोइ।
साध्य भए पर आप ही उद्बोधिता सु होइ ॥ ९२ ॥

असाध्या अनूढ़ा, यथा (कवित्त)

भौन तें कढ़त भाभी भौंडी भौंडी बातें कहै
लौंडी कै कनौड़ी छोड़ै थोढ़ी ही के जात लौं।
चौकी बँधी भीतर लोगाइन की जाम जाम
बाहिर अथाइ न उठति अधरात लौं।

---

[८९] कुल०-कुलसेननि (सर०)। जानें-जानौ (भार०)।
छोड़ु-आइ (वही)।
[९०] दगनि-दहनि (सर०, लीथो)। परि०-चित लगनि
(भार०, लीथो)। कि-री (भार०), की (लीथो)। रितु-चित
(भार०, लीथो)।
[९१] पगि-लगि (भार०); पर (लीथो)। असाध्यादि०-रह असाध्य
कहि जात (भार०), असाध्यै कहि जात (लीथो)।
[९२] सोइ-होइ (भार०, लीथो)।

'दास' परबसी घैरुहारिनि के डर हियो
　　　　　　चलदल-पात लौं है तोसों बतलात लौं।
मिलन-उपाइन को ढूढ़ियो कहा है आली
　　　　　　हाँ तो तजि दीनों हरि-दरसन-घात लौं॥ ९३॥

असाध्या ऊढ़ा, यथा

देवर की त्रासनि कलेवर कँपत है, न
　　　　　　सासु-उसुआसनि उसास लै सकति हौं।
बाहिर के घर के परोस-नरनारिन के
　　　　　　नैनन में काँटे सी सदा ही असकति हौं।
'दास' नाहिं जानौं हौं निगोर्‍यों कहा सब ही को
　　　　　　याही पीर धीर पेट पेट ही पकति हौं।
मोहिं मनमोहन मिलाप-मत देती तुम
　　　　　　मैं सो उहि ओर अवलोकति जकति हौं॥ ९४॥

दुःखसाध्या-लक्षण (दोहा)

साध्य करै पिय दूतिका विविध भाँति समुझाइ।
दुखसाध्या ताकौं कहैं परकीयन में पाइ॥ ९५॥

यथा (कवित्त)

भूख-प्यास भागी विदा माँगी लोकत्रास
　　　　　　मुख तेरी जक लागी अंग सीरक छुए जरै।
'दास' जिहि लागि कोऊ एतो तलफत वा
　　　　　　कसाइन सौं कैसे दई धीरज धर्‍यो परै।
जीतो जो चहै अजू तो रीतो घरो लै चलु
　　　　　　नहीं तौ सही तो सिर अजस वै परे मरै।
तूँ तौ परबसी घर आई घरो भरि हरि
　　　　　　घाट ही में तेरे नैन-घायन घरी भरै॥ ९६॥

---

[९३] कै–है (भार०)। घर–घैर (भार० लीथो)। घैर०–घैरुहाइन को (वही)।
[९४] उसुआसनि–उर आसिनि (भार०), डरै आसिन (लीथो)। असकति–करकति (भार०, लीथो)। बिगारयौँ–बिगारो (वही)। पेट०–नित पेट पकरति (भार०)। सो०–लो वह (वही)।
[९६] अजू०–तौ वेग (भार०)। परे–परै (सर०)।

अब तौ निहारी के वे बानक गए री
तेरी तनदुति केसरि कौं नैन कसमीर भो।
श्रौन तुव बानी-स्वातिबुंदनि को चातिक भो
स्वासनि को भरिबो द्रुपदजा को चीर भो।
हिय को हरष मरु-धरनि को नीर भो री
जियरो मदन-तीरगन को तुनीर भो।
एरी बेगि करिकै मिलाप थिर थाप
नत आप अब चाहत अतन को सरीर भो॥ ९७॥

उद्बोधिता साध्या (सवैया)

नायक ही सब लायक हो जु करौ सो सबै तुमकौं पचि जाहीं।
'दास' हमैं तौ उसास लिये उपहास करैं सब या बृज माहीं।
आइ परैगी कहूँ तें कोऊ तिय गैन में छैल गहौ जनि बाहीं।
द्वै ही दिना की तिहारी है चाह गई करि जाहु नियाहौगे नाहीं॥९८॥

परकीया-भेद-लक्षण (दोहा)

परकीया के भेद पुनि चारि बिचारे जाहिं।
होत बिदग्धा लक्षिता मुदिता अनुसयनाहिं॥ ९९॥

विदग्धा-लक्षण (दोहा)

द्विविध बिदग्धा कहत हैं कीन्हो कबिन बिबेक।
बचनबिदग्धा एक है क्रियाबिदग्धा एक॥ १००॥

वचनविदग्धा, यथा (सवैया)

नीर के कारन आई अकेलियै भीर परे सँग कौन कौं लीजै।
छोंऊ न कोऊ नयो दिवसोऊ अकेले उठाए घरो पट भीजै।
'दास' इतै लरुआन कौं ल्याइ भलो जल छाँह को प्याइजै पीजै।
एतो निहोरो हमारो हरी घट ऊपर नेकु घरो धरि दीजै॥१०१॥

---

[९८] निबाहौगे–निबाहिहौ (भार०)।

[१०१] नयो–गयो (भार०)। लरुआन–गउआन (वही)। घरो–घटो (सर०, लीथो)।

क्रियाविदग्धा, यथा

कसिबे मिस नीनिन के छिन तौ अँगअंगनि 'दास' देखाइ रही ।
अपने ही भुजान उरोजन कोँ गहि जानु सोँ जानु मिलाइ रही ।
ललचौहैँ हँसीहैँ लजौहैँ चितै हित सोँ चित चाइ बढ़ाइ रही ।
कनखा करिकै पग सोँ परिकै पुनि सूने निकेत मैँ जाइ रही ॥१०२॥

गुप्ता-लक्षण (दोहा)

जब पिय प्रेम छपावती करि विदग्धता धाम ।
भूत भविष बतमान सो गुप्ता ताको नाम ॥ १०३ ॥

भूतगुप्ता, यथा (सवैया)

पठावत धेनु-दुहावन मोहि न जाहुँ तौ देखि करौ तुम तेहु ।
छुटाइ गयो बछरा यह बैरी मरू करि हौँ गहि ल्याई हौँ गेहु ।
गई थकि दौरत दौरत 'दास' खरोट लगे भई बिह्वल देहु ।
चुरी गई चूरि भरी भई धूरि परो टुटि मुक्तहरो यह लेहु ॥१०४॥

भविष्यगुप्ता

दै हौँ सकौँ सिर तो कहे भाभी पै उख को खेत न देखन जैहौँ ।
जैहौँ तौ जीव डरावन देखिहौँ बीचहि खेत के जाइ छपैहौँ ।
पैहौँ खरोट जो पातन को फटिहैँ पट क्योँहूँ तौ हौँ न डरैहौँ ।
रैहौँ न मौन जो गेह के रोष करैँगे तौ दोष मैँ तेराई दैहौँ ॥१०५॥

वर्तमानगुप्ता

अब ही की है बात हौँ न्हात हुती अचकाँ गहिरे पग जाइ भयो ।
गहि ग्राह अथाह कोँ लै ही चल्यो मनमोहन दूरिहि तेँ चितयो ।
द्रुत दौरिकै पौरिकै 'दास' धरोरिकै छोरिकै मोहिँ बचाइ लयो ।
इन्हेँ भेटती भेटिहौँ तोहि अली भयो आज तौ मो अवतार नयो ॥१०६॥

---

[१०३] पिय०–तिय सुरति छपावही (भार०) ।
[१०४] छुटाइ–छुड़ाय (भार०) । खरोट–नरोट (वही) । गई–भई (वही) । टुटि–टुरि (वही) ।
[१०६] जाइ–जात (भार०) । गहि–मोहि (वही) ।

लक्षिता-लक्षण (दोहा)

लक्षिता सु आको सुरत-हेत प्रगट ह्वै जात ।
सखी व्यंगि बोले कहै निज धीरज धरि बात ॥ १०७ ॥

सुरत-लक्षिता, यथा (सवैया)

सावक बेनी-भुअंगिनि के कुच के चहुँ पासन ह्वै खुलि नाचे ।
ओठ पके कुँदुरू सुक नाक पै काहे न देखिये चोट सों वाँचे ।
आज अली मुकुराभ-कपोलनि कैसो भयो मुरचो जिहि माचे ।
दै यह चंद उरोजनि 'दासजू' कौने किये ससिसेखर साँचे ॥१०८॥

हेतु-लक्षण, यथा

नैन नचौ हैं हसौ हैं कपोल अनंद सों अंग न अंग अमात है ।
'दासजू' स्वेदनि सोभ जगी परै प्रेमपगी सी ठगी थहरात है ।
मोहि भुलावै अटारी चढ़ी कहि कारी घटा बकपाँति साहात है ।
कारी घटा बकपाँति लखैं यहि भाँति भए कहि कौन के गात है ॥१०६॥

धीरत्व, यथा

सब सूझै जौ तोहि तौ बूझै कहा बिन काजहि पीछे रही परि है ।
जिहि काम कौ कैबर कारी लगै सो दुचारी कौं 'दासजू' क्यों डरि है ।
हरि बेनी गुही हरि एड़ी छुही नख दंत को दाग दियो हरि है ।
कहती किन जाइ जहाँ कहिबे काऊ कोह कै मेरो कहा करिहै ॥११०॥

मुदिता-लक्षण (दोहा)

वहै बात बनि आवई जा चित चाहत होइ ।
तातैं आनदित महा मुदिता कहिये सोइ ॥ १११ ॥

यथा (सवैया)

भोर ही आनि जनी सौं निहोरिकै राधे कह्यो मोहि माधो मिलावै ।
ता हित-कारने भौन गई वह आप कछू करिबे कौ उपावै ।
'दास' तहाँ चलि माधो गए दुख राधेवियोग को वाहि सुनावै ।
पाइकै सूनो मिले मिलैं दूनो बढ़्यो सुख दूनो दुहूँ उर आवै ॥११२॥

---

[१०८] यह-नख (लीथो) । [१०६] जगी-लगी (सर०) । परै-दुरै (भार०) । थहरात-ठहरात (वही) । लखैं-सखी (वही) । को-के (सर०) । [११२] हित०-हितकाइ के (लीथो) । वह-बहु (भार०) । आवै-लावैं (वही) ।

अनुशयना-लक्षण (दोहा)

केलिस्थानविनासिता भावस्थान-अभाव ।
अरु संकेत निप्राप्यता अनुसयना त्रै भाव ॥ ११३ ॥

केलिस्थानविनाशिता, यथा (सवैया)

'दासजू' वाकी तौ द्वार की सूनी कुटी जरै यातैं करै दुख थोरै ।
भारी दुखारी अटारी चढ़ी यहै रोवै हनै छतिया सिर फोरै ।
हाइ भरै ररै लोगनि देखि अरे निरदै कोऊ पानी लै दौरै ।
आगि लगी लखि मालिनि के लगी आगि है ग्वालिनि के उर औरै ॥११४॥

भावस्थान-अभाव, यथा

आज लौं तौ उत दूसरे प्रानी के नाते हुतो वह बावरो घौनो ।
आवति जाति अबार सबार विहार समै न हुतो डरु कौनो ।
'दास' घनैगी 'व क्यौं पिय-भेंट सहेट के जोग न दूसरो भौनो ।
बैठी बिचारै यौं बाल मनैमन बालम को सुनि आवन गौनो ॥ ११५ ॥

संकेतनिःप्राप्यता, यथा

समीप निकुंज मैं कुंजबिहारी गए लखि साँझ पगे रसरंग ।
इतै वहु द्यौस मैं आइकै धाइ नवेली कौं बैठी लगाइ उछंग ।
उड़ीं तहँ 'दास' बसी चिरियाँ उड़ि गो तिय को चित वाही के संग ।
बिछोह तैं बुंद गिरे अँसुवा के सु वाके गने गए प्रेम-उमंग ॥ ११६ ॥

त्रिभेद-लक्षण (दोहा)

मुदिता अनुसयनाहु मैं विदग्धाहु मिलि जाइ ।
सबल भाव एहि भाँति वहु बरनत हैं कबिराइ ॥ ११७ ॥

मुदिता-विदग्धा, यथा (सवैया)

आवती सोमवती सब संग ही गंगनहान कियो चहती हैं ।
गेह को भार जसोमति-बार कौं आज ही सौंपि दियो चहती हैं ।

---

[११३] भाव–नाव (भार०) ।
[११४] करै–परै (लीथो) । ररै–कहै (भार०) । उर–सिर (सर०, लीथो) ।
[११५] दूसरे०–दूसरो प्रानी कोऊ ना (भार०) । बनैगी०–बनै अब (वही) । बालम–बालम (सर०); आवन (भार०) ।
[११८] सोमवती–सोमवती (सर०) । सब–स्याय (भार०) ।

मोहिँ अकेली इहाँ तजि 'दासजू' जोवन-लाहु लियो चहती हैँ।
आली कहा कहौं या घर की सिगरी मोहिं खाए जियो चहती हैँ ॥११८॥

अनुशयना-विदग्धा, यथा

चारि चुरैल बसैं इहि भौन कियो तिन चेरो सु चौधरी दानी।
केते निदेसी बसाइ बसाइ तिनै सनमानत हैँ छलध्यानी।
'दास' दयाल जौं होतो कोऊ तो भगावती याहि सिखाइ सयानी।
हाइ फँस्यो केहि हेत कहाँ तें धौं आइ चस्यो यह बावरो बानी ॥११९॥

दूजो अनुशयना-विदग्धा, यथा (कवित्त)

न्यारे के सदन तें उड़ाई गुड़ी प्रानप्यारे
संज्ञा जानि प्यारी मन उठी अकुलाइकै।
पावति न घात जात देख्यो सुरझ्यौंत बीतो
रीतो कियो घरो तब नीर ढरकाइकै।
घर की रिसानी कहा कीनी तूँ अयानी तब
तासौं कै सयानी या कहत अनखाइकै।
काहे कौं कुबातनि सुनावति है मेरी बीर
ढरि गो तौ हौं ही भरि ल्यावति हौं जाइकै ॥ १२० ॥

इति परकीया

अथ मुग्धादि-भेद (दोहा)

त्रिविधि जु बरनी नायिका तेऊ त्रिबिधि बिसेखि।
मुग्धा मध्या कहत पुनि प्रौढ़ा ग्रंथनि देखि ॥ १२१ ॥
जोवन के आगमन तें पूरनता लौं मित्त।
पंच भेद ह्वै जात हैँ त्रै मुग्धादिक चित्त ॥ १२२ ॥

मुग्धादि-लक्षण

सैसव-जोवन-संधि जिहि सो मुग्धा अवदात।
बिन जाने अज्ञात है जाने जानौ ज्ञात ॥ १२३ ॥

साधारण मुग्धा, यथा (सवैया)

बालकता में जुबा झलकी दल ओझल ज्यौं जुगनू के उजेरे।
लंक लचौं हैँ नितंब उँचौं हैँ नचौं हैँ से लोचन 'दास' निबेरे।

---

[१२२] आगमन-अग्यात (लीथो)।
[१२४] ओझल-चोझल (भार०)।

जानिबे जोग सुजानन के उर जात थली उरजातनि घेरे ।
स्यामता बीच दै अंग के रंग अनंग सुढार प्रकार सों फेरे ॥१२४॥

स्वकीया मुग्धा, यथा (कवित्त)

घटती इकंक होन लागी लंक-बासर की
केस-तम-बंस को मनोरथ फलीन भो ।
बढ़ि चले कानन तकत नैन खंजन औ
बैठि रहिबे कों मनु सैसव अलीन भो ।
साँझ तरुनापन बिकास निरखत 'दास'
आनँद लला के नैन कैरव-कलीन भो ।
दुलही-बदनइंदु उलही अनूप दुति सौति-
मुख-अरबिंद अति ही मलीन भो ॥ १२५ ॥

परकीया मुग्धा, यथा (सवैया)

उकसौं हैं भए उर मध्य छोटौं हैं सो चंचलता अँखियान लगी ।
अँखिया बढ़ि कान लगी अरु कानन कान्ह-कहानी सोहान लगी ।
बिन काजहु काजहु 'दास' लखौ जसुदा-गृह आवन जान लगी ।
ललिताहु सों नेक बतान लगी रसबात सुने सकुचान लगी ॥ १२६ ॥

अज्ञातयौवना साधारण, यथा

मोहिं सोच निजोदर-रेख लखें उर मैं अनखेप सो होन चहै ।
गति भारी भई बिधि कीधौं कहा कसि बाँधतहूँ कटि-नीबी ढहै ।
कहा भौंहनि भाव दिखावै भटू कहिबे कछू होइ सो खोलि कहै ।
पट मेरो चलै बिचलै तौ अलो तूँ कहा रद आँगुरी दाबि कहै ॥१२७।

अज्ञातयौवना स्वकीया

सखि तैंहूँ हुती निसि देखत ही जिन पै वै भई हौं निछावरियाँ ।
जिन्ह पानि गह्यो हुतो मेरो तबै सब गाइ उठीं ब्रजडावरियाँ ।
अँसुवा भरि आवत मेरे अजौं सुमिरें उनकी पग-पाँवरियाँ ।
कहि को हैं हमारे वे कौन लगैं जिनके सँग खेली ही भाँवरियाँ ॥१२८।

---

[१२५] तम—नम (भार०), सम (सर०)। तकन—लौं नीके (भार०)। मनु—अनु (वही)। बैठि०—उठि रहे जावन सैसवन (लीथो)। तरुनापन—तरुनायन (सर०, लीथो)। लला०—ललकि (लीथो)। [१२६] छोटौं है —छुटौ है (लीथो)। सो—सी (भार०, लीथो)। लखौ—लखी (सर०)। [१२७] रद—पद (लीथो)। [१२८] वै—यों (लीथो)। जिन्ह—तिन (भार०, लीथो)। डावरियाँ—गोंवरियाँ (भार०)। है—वै (लीथो)।

परकीया अज्ञातयौवना

हार गई तहँ मेह मिल्यो हरि कामरी ओढ़े हुत्यो उत वैसो।
आतुर आइकै अंग छपाइ बचाइकै मोहिं गयो जस लै सो।
'दास' न ऐसो लख्यो कबहूँ मैं अचंभो भयो वहि औसर जैसो।
स्वेद बढ़्यो त्यों लग्यो तन काँपन रोम उठ्यो यह कारन कैसो॥ १२९॥

ज्ञातयौवना, यथा

आनन मैं मुसुकानि सुहावनि बंकुरता अँखियान छई है।
बैन खुले मुकुले उरजात जकी बिथकी गति ठौन ठई है।
'दास' प्रभा उछलै सब अंग सुरंग सुबासता फैलि गई है।
चंदमुखी तन पाइ नवीनो भई तरुनाई अनंदमई है॥ १३०॥

ज्ञातयौवना स्वकीया

'दास' बड़े कुल की बतिया बतिया परबीननि सों जिय ज्वैहै।
बाहिर ह्वैहै न जाहिर औ॒र अमाहिर लोग की छाँह न छ्वैहै।
खेलन दै भरि साध सखी पुनि खेलिबे जोग यहै दिन द्वै है।
फेरि तौ बालपनो अपनो री हमैं लपनो सपनो सम ह्वैहै॥ १३१॥

ज्ञातयौवना परकीया (कवित्त)

मंद मंद गौने सो गयंदगति खोने लगी
बोने लगी बिष सो अलक अहिछौने सी।
लंक नवला की कुच-भारनि दुनौने लगी
होने लगी तन की चटक चारु सोने सी।
तिरछे चितौने सो बिनोदनि बितौने लगी
लगी मृदु बातनि सुधारस निचौने सी।
मौने मौने सुंदर सलोने पद 'दास' लोने
मुख की बनक ह्वै लगन लगी टोने सी॥ १३२॥

---

[१२९] हार–द्वार (भार०) । बचाइ–कै चाइ (लीथो) । बढ्यो०–बढे तें (सर०, लीथो) । काँपन–कंपन (भार०, लीथो) ।
[१३०] खुले–खिले (भार०) । ठौन०–रौनि खई (सर०) ।
[१३१] परबीननि०–परबीनी सों जीवन (भार०) । अमाहिर–अनाहिर (भार०, लीथो) । द्वै–है (सर०) लपनो–ललनो (भार०) ।
[१३२] बनक–चटक (भार०) ।

अविश्रब्ध नवोढ़ा (कवित्त)

सोवति अकेली है नवेली केलिमंदिर
जगाइ कै सहेली रसफैली लखै टरिकै।
'दास' त्यौं ही आइ हरि लीन्ही अंक भरि
न सँभारि सकी जागी जऊ सुंदरि भभरिकै।
मचलि मचलि चल निचल सिंगारन कै
कसमसै एजी एजी नाहीं नाहीं करिकै।
तकै तन झारै झकझारै करै छूटिवे कौं
उर थरहरै जिमि एनी जाल परिकै॥ १४३॥

विश्रब्ध नवोढ़ा

केलि पहिलीयै दुखमूल दूजी सुखमूल
ऐसी सुनि आलिन सों आई मतिढंग में।
बसन लपेटि तन गाढ़ी कै तनीनि तनि
सोन-चिरिया सी बनि सोई पियसंग में।
तापर पकरि नीवी जंघन जकरि बड़े
ढाढ़सनि करि 'दास' आवति उछंग में।
छ्वै छ्वै अधरामृत निहाल होत लाल
अनै आनँद बिसाल पाइबे है रतिरंग में॥ १४४॥

पुनः, यथा (सवैया)

हौं तौ कह्यो कछु बातैं करैंगे प्रबीन बडे बलदेव के भैया।
ये गुन जानती तौ यहि सेजहि भूलि न सोवती बीर दोहैया।
'दास' इतैं पर फेरि बोलावत यौं अब आवति मेरी बलैया।
आऊँ तौ तौ जौ कही करि सौंहैं कि आज करैंगे न काल्हि की नैया॥१४५

मुग्धा को सुरत

काम कहै करि केलि ढिठाइ सों लाज कहै यह क्यौंहूँ न होनो।
लाज की ओर तें लोचन ऐंचत काम की ओर तें प्रेम सलोनो।

---

[१४३] जगाइ–बलाइ (सर०), मे जाइ (लीथो)। एजी०–एजी एजी (भार०)। झ रै०–मारै झकझारै करै छूटिवे की डरै (लीथो)।

[१४५] आऊँ०–आवती हौं (भार०)।

'दास' चस्यो मन बाम के काम पै लाज तज्यो निज धाम न कोनो।
त्यों मन काम करयो करै प्यारी पै लाज औ काम लस्यो करै दोनो ॥१४६॥

झाँझरियाँ झनकैंगी खरी खनकैंगी चुरी तनकौ तन तोरे।
'दासजू' जागतौ पास अलीगन हास करैंगी सबै उठि भोरे।
सौं हैं तिहारी हौं भागि न जाउँगी आई हौं लाल तिहारेई घोरे।
केलि कौं रैंनि परी है घरीक गई करि जाहु दई के निहोरे ॥१४७॥

प्रौढ़ा-सुरत, यथा

'दासजू' रास कै ग्वालि गईं सब राधिका सोइ रही रँगभू मैं।
गाढ़े उरोजनि दै उर बीच सुजान कौं ऐंचि भुजान दुहू मैं।
भोर भए पिय सैन को सोनो न गेह को गौनो सकै करि दू मैं।
भौर बड़ीये परे जिमि सोनो बनै न भँजावत रासत सूमैं ॥१४८॥

पुनः

दीपकजोति मलीनी भई मनिभूपन-जोति की आतुरिया है।
'दास' न कोल-कली बिकसी निजु मेरी गई मिलि आँगुरिया है।
सीरी लगै मुकतावलि तेऊ कपूर की धूरिन सौं पुरिया है।
पौढ़े रहौ पट ओढ़े इती निसि बोलै नहीं चिरिया चुरिया है ॥१४९॥

इति बहिःक्रम-भेद।

अथ अवस्था-भेद (दोहा)

हेत सँजोग वियोग की अष्ट नायिका लेखि।
तिनके भेद अनेक मैं कछु कछु कहौं बिसेखि ॥ १५० ॥

संयोग शृंगार की नायिका-भेद

पिय संजोग सिंगार की कारन तीन्यौ जानि।
स्वाधीनापतिका अपर बासकसज्जा मानि ॥ १५१ ॥
अभिसारिका अनेक पुनि बरनत हैं कबिराव।
स्वकिया परकीयानि मिलि होत अनेकनि भाव ॥ १५२ ॥

---

[१४६] धाम–धर्म (भार०, लीथो)। त्यौं०–यौं गृह (भार०); मो मन (लीथो)। [१४८] भए–भयो (भार०, लीथो)। [१४९] इती–अबै (लीथो)। [१५१] स्वाधीना०–स्वाधिनपतिका अपर है (भार०), स्वाधीनहु पतिका अपर (लीथो)।

मध्या-लक्षण (दोहा)

नवजोबन - पूरनवती लाज मनोज समान।
तासों मध्या नायिका बरनत सुकवि सुजान ॥ १३३ ॥

साधारण मध्या, यथा (सवैया)

ह्वै कुचभारनि मंदगती करैं माते गयंदन को मद भूरो।
आनन-ओप अनूप लखें मिटि जात मयंक-गुमान समूरो।
'दास' भरी नख तें सिख लाज पै काम को साज बिलोकिये पूरो।
काम को रंग मनो रँगि अंग दई दयो लाज को रोगन रूरो ॥ १३४ ॥

स्वकीया-मध्या

नाह के नेह रँगे दुलही-दृग नैहर-गेह सकोचनि साने।
'दासजू' भीतर ही रहैं लाल तऊ लखिबे को रहैं ललचाने।
प्यो-मुख सामुहैं राखिबे कौं सखियाँ अँखियान को ब्योंत बिताने।
चंद निहारि नहीं बिकसैं अरबिंद हैं ये यह बात न जाने ॥ १३५ ॥

परकीया-मध्या (कवित्त)

पीन भए उरज निपट कटि छीन भई
लीन ह्वै सिंगार सब सीख्यो सखियान में।
'दास' तनदीपति प्रदीप के उजास कीन्हे
बैरिन की नजरि प्रकास पखियान में।
काम के कलोलन की चरचा सुनत फिरै
चंद्रावलि ललिता कौं लीन्हे कानियान में।
एक ब्रजराज को बदन द्विजराज
देखिबे की इन लाज लाजभरी अँखियान में ॥ १३६ ॥

प्रौढ़ा-लक्षण (दोहा)

जोबन-प्रभा प्रवीनता प्रेम सँपूरन होइ।
तासौं प्रौढ़ा नायिका कहैं सुमति कोइ ॥ १३७ ॥

---

[१३४] ह्वै-है (भार०)।
[१३५] रँगे-रगी (भार०)। तऊ-तेऊ (सर०)। प्यो-पी (लीथो)।
अरबिंद०-अरबिंदन को कछु बात न माने (भार०)।
[१३६] सीख्यो-सीखी (भार०, लीथो)। के-की (वही)।
[१३७] 'भार०' में नहीं है।

प्रौढ़ा साधारण, यथा

सारी जरकसवारी घाँघरो घनेरो घेस
छहरेँ छबीले केसछोर लौं छवान के।
पृथुल नितंब लंक नाम अवलंब लौट
गैंदुरी पै कुच द्वै कलस कल सान के।
'दास' सुरकंद चंदबदनी कमलनैनी
गति पै गयंद होनवारे कुरबान के।
पी की प्रेममूरति सु रति कीसी सूरति
सुबास हास पूरति अवास बनितान के ॥ १३८ ॥

प्रौढ़ा स्वकीया, यथा (सवैया)

केसरिया निज सारी रँगी लखि केसरि-खौरि गोपाल के गातनि।
'दास' चितै चित कुंजबिहारी बिछावति सेज नए तरु-पातनि।
आवत जानिकै आपने भौन मिलै पहिलै लै बिरी अवदातनि।
बीतै बिचारतै भावती कौं दिन भावते की मनभावती बातनि ॥१३९॥

प्रौढ़ा परकीया, यथा

भूलनि लागी लता मृदु भाइनि फूलनि लागी गुलाबकली अब।
'दास' सुबास-झकोरनि झोरत भौंर की बाइ बजाइ चली अब।
जागिकै लोग बिलोकिहैं टोकिहैं रोकिहैं राह सद्वार गली अब।
ऐसे मैं सूने सखी के निलै चलि सोवै सभागन बाग भली अब ॥ १४० ॥

मुग्धादि के संयोग (दोहा)

अब कहियत तिन तियन के रति-संजोग-प्रकार।
होत चपटा बचन तें प्रगट जु भाव अपार ॥ १४१ ॥
मुग्धा तिय संजोग मैं कही नवोढ़ा जाहिं।
अविस्रब्ध विस्रब्ध द्वै जे न पतिहि पतियाहिं ॥ १४२ ॥

---

[१३८] छहरैं०-छहरै छबीली (भार०)। सुर-सुख (सर०)। पै-पे (भार०)। पूरति-पूरनि (वही)।
[१३९] बिचारौ-बिचारत (सर०)। भावते-भावती (भार०)।
[१४०] बजाइ-बहाइ (भार०)। सोवै-सोवो (वही, लीथो)।

अविश्रब्ध नवोढ़ा (कवित्त)

सोवति अकेली है नवेली केलिमंदिर
जगाइ कै सहेली रसफैली लटै टरिकै।
'दास' त्यौं ही आइ हरि लीन्ही अंक भरि
न सँभारि सकी जागी जऊ सुंदरि भभरिकै।
मचलि मचलि चल विचल सिंगारन के
कसमसै एवी एवी' नाहीं नाहीं करिकै।
तकै तन भारै भमकारै करै छूटिवे कौं
उर थरहरै जिमि एनी जाल परिकै॥ १४३॥

विश्रब्ध नवोढ़ा

केलि पहिलीयै दुखमूल दूजी सुखमूल
ऐसी सुनि आलिन सों आई मतिढंग में।
वसन लपेटि तन गाढ़ी कै तनीनि तनि
सोन-चिरिया सी वनि सोई पियसंग में।
तापर पकरि नीवी जंघन जकरि वड़े
ढाढ़सनि करि 'दास' आवति उछंग में।
छ्वै छ्वै अधरामृत निहाल होत लाल
अवै आनँद विसाल पाइवे है रतिरंग में॥ १४४॥

पुनः, यथा (सवैया)

हौं तौ कह्यो कछु वातैं करैंगे प्रवीन बड़े बलदेव के भैया।
ये गुन जानती तौ यहि सेजहि भूलि न सोवती वीर दोहैया।
'दास' इतैं पर फेरि बोलावत यौं अब आवति मेरी बलैया।
आऊँ तातौ जौ कहौ करि सौंहैं कि आज करैंगे न काल्हि की नैया॥१४५

मुग्धा को सुरत

काम कहै करि केलि ढिठाई सौं लाज कहै यह क्यौंहूँ न होनो।
लाज की ओर तें लोचन ऐंचत काम की ओर तें प्रेम सलोनो।

---

[१४३] जगाइ–जताइ (सर०), मैं आइ (लीथो)। एवी०–एजी एजी (भार०)। भ रै०–मोरैं भकभारै करै छूटिवे की डरै (लीथो)।
[१४५] आऊँ०–आवती हौं (भार०)।

'दास' बस्यो मन बाम के काम पै लाज तज्यो निज धाम न कोनो।
त्यों मन काम करयो करै प्यारी पै लाज औ काम लरयो करैं दोनो॥१४६॥

झाँझरियाँ झनकैंगी खरी खनकैंगी चुरी तनकौ तन तोरे।
'दासजू' जागतीं पास अलीगन हास करैंगी सबै उठि भोरे।
सौंहैं तिहारी हौं भागि न जाउँगी आई हौं लाल तिहारेई धोरे।
केलि कौ रैनि परी है घरीक गई करि जाहु दई के निहोरे॥१४७॥

प्रौढ़ा-सुरत, यथा

'दासजू' रास कै ग्वालि गईं सब राधिका सोइ रही रँगभू मैं।
गाढ़े उरोजनि दै उर बीच सुजान कौं ऐंचि भुजान दुहू मैं।
भोर भए पिय सैन को सोनो न गेह को गौनो सकै करि दू मैं।
भौर घड़ीयैं परै जिमि सोनो घनै न भँजावत रावत सूमैं॥१४८॥

पुनः

दीपकजोति मलीनी भई मनिभूषन-जोति की आतुरिया है।
'दास' न कोल-कली बिकसी निजु मेरी गई मिलि आँगुरिया है।
सीरी लगै मुकतावलि तेऊ कपूर की धूरिन सौं पुरिया है।
पौढ़े रहौ पट ओढ़े इतो निसि बोलै नहीं चिरिया चुरिया है॥१४९॥

इति अहिक्रम-भेद।

अथ अवस्था-भेद (दोहा)

हेत सँजोग बियोग की अष्ट नायिका लेखि।
तिनके भेद अनेक मैं कछु कछु कहौं बिसेखि॥ १५०॥

संयोग शृंगार को नायिका-भेद

तिय संजोग सिंगार की कारन तीन्यो जानि।
स्वाधीनापतिका अपर बासकसज्जा मानि॥ १५१॥
अभिसारिका अनेक पुनि बरनत हैं कबिराय।
स्वकिया परकीयानि मिलि होत अनेकनि भाव॥ १५२॥

---

[१४६] धाम-धर्म (भार०, लीथो)। त्यौं०-त्यौं ही (भार०);
मो मन (लीथो)। [१४८] भए-भयो (भार०, लीथो)। [१४९]
इती-अबै (लीथो)। [१५१] स्वाधीना०-स्वाधिनपतिका अपर है (भार०),
स्वाधीनहु पतिका अपर (लीथो)।

स्वाधीनपतिका लक्षण (दोहा)

स्वाधीनापतिका वहै जाके बस है पीउ ।
होइ गर्विता रूप गुन प्रेम गर्व लहि जीउ ॥ १५३ ॥

स्वकीया स्वाधीनपतिका (सवैया)

माँग सँवारत माँगहि लै कचभार भिंगावत अंगसमेत हौ ।
रोम उठावत कुंकुम लेप कै 'दास' मिलाए मनौ लिये रेत हौ ।
बीरी खवावत अंजन देत नचावत आड कँपौ बिन हेत हौ ।
या सुघराई-भरोसे क्यौं दौरिकै छोरि सखीन को कारज लेत हौ ॥१५४॥

परकीया स्वाधीनपतिका (कवित्त)

कैना मैं निहारे पिछवारे की गली मैं अली
झाँकिकै झरोखे नित करत सलामैं हैं ।
कैना भेख भिक्षुक की ड्योढी बीच आइ आइ
सबद सुनायो दुपहर जल्ला मैं हैं ।
'दास' भनि कैना भीतरौं है निरास गए
पहिरि सुनारिनि के बसन ललामैं हैं ।
हाइ हौं गँवारिनि न घात मिलिबे की लहौं
मेरे हित कान्ह केती करत कलामैं हैं ॥१५५॥

रूपगर्विता, यथा (सवैया)

चद सो आनन मेरो बिचारो तौ चद ही देखि सिरावौ हियौ जू ।
बिंब सो जौ अधरान बखानो तौ बिंब ही को रस पीयौ जियौ जू ।
श्रीफल ही क्यौं न अंक भरौ जौ पै श्रीफल मेरे उरोज कियौ जू ।
दीपति मेरी दिये सी है दास तौ जाती हौं बैठि निहारौ दियौ जू ॥१५६॥

---

[१५३] स्वाधीना०—स्वाधिनपतिका है (भार०) ।
[१५४] लेप—लेय (भार०) । कारज—काजर (वही) ।
[१५५] भरोखे०—भरोखनि तह (भार०) । ड्योढी०—पागी बीच आय आय (भार०) ।
[१५६] जाती—जाऊँ (भार०) ।

प्रेमगर्विता

न्हान-समै जब मेरो लखै तब साज लै बैठत आनि अगाऊँ।
नायक हौ जू न रावरे लायक यौं कहि हौं कितनो समुझाऊँ।
'दास' कहा कहौं पै निज हाथ ही देत न हौंहूँ सँवारन पाऊँ।
मोहिं तौ साध महा उर मैं जौ महाउर नाइन तोसौं दिवाऊँ॥ १५७॥

गुणगर्विता (कवित्त)

औरनि अनैसो लगै हौं तौ ऐसी चाहती जौ
बालम के मो सी तिय ब्याहि कोऊ आवती।
क्यौंहूँ कछू कारज उठाइ लेती मेरो घरी
पहर कौं अली तौ हौं टाली होन पावती।
'दास' मनभावन के मन के रिझावन कौं
चारु चारु चित्रित कै चित्रैं दरसावती।
प्रेमरस धुनि को कवित्त करि ल्यावती कै
बीनै लै बजावती कै गीतै कछू गावती॥ १५८॥

वासकसज्जा-लक्षण (दोहा)

आवंती जहँ कंत की निज गृह जानै दार।
वासकसज्जा तिहि कहैं साजै सेज सिँगार॥ १५९॥

स्वकीया वासकसज्जा, यथा (कवित्त)

जानि जानि आवै प्यारो प्रीतम विहारभूमि
मानि मानि मंगलसिंगारन सिगारती।
'दास' दृग कंजन बंदनवार तानि तानि
छानि छानि फूले फूले सेजहिं सँवारती।

---

[१५७] पै–कै (सर०)।
[१५८] टाली–खाली (भार०)।
[१५९] कहैं–कहत (भार०)।
[१६०] फूले०–फूले फूले सेजहि (सर०)। पायपनि–पीउ बनि (भार०)।

ध्यान ही में आनि आनि पी कौं गहि पानि पानि
ऐंचि पट तानि तानि मैनमद मारती।
प्रेमगुन गानि गानि पीयूषनि सानि सानि
बानि बानि ठानि ठानि बैननि विचारती ॥ १६० ॥

परकीया वासकसज्जा (सवैया)

भावतो आवतो जानि नवेली चवेली के कुंज जो बैठति जाइकै।
'दास' प्रसूननि सोनजुही करै कंचन सी तनजोति मिलाइकै।
चौंकि मनोरथ ही हँसि लेन चलै पग लाल प्रभा महि छाइकै।
धीर करै करबीर भरै निखिलै हरषै छवि आपनी पाइकै ॥ १६१ ॥

आगतपतिका वासकसज्जा (दोहा)

पियआगम परदेस तें आगतपतिका भाउ।
है वासकसज्जाहि में बढ़ै बढ़ै चित चाउ ॥ १६२ ॥

यथा (सवैया)

भावतो आवत ही सुनिकै बड़ि ऐसी गई हद छामता जो गुनी।
कंचुकिहूँ में नहीं मढ़ती बढ़ती कुच की अग्र तौं भई दोगुनी।
'दास' भई चिकुरारिन में चटकीलता चामर चारु तें चौगुनी।
नौगुनी नीरज तें मृदुता सुषमा मुख में ससि तें भई सौगुनी ॥ १६३ ॥

अभिसारिका-लक्षण (दोहा)

मिलनसाज सब करि मिलै अभिसारिका सुभाय।
पियहिं बोलावै आपु कै आपुहि पिय पै जाय ॥ १६४ ॥

स्वकीया अभिसारिका (कवित्त)

रीझि-रगमगे दृग मेरे या सिंगार पर
ललित लिलार पर चारु चिकुरारी पर।
अमल कपोल पर कान्ह-बदन पर
तरल तरयौनन की रुचिर रवारी पर।

---

[१६१] निखिलै-नि बलै (भार०)।
[१६५] रगमगे-जगमगे (भार०)।

'दास' पगपग दूनो देहदुति दगदग
जगजग ह्वै रही कपूरधूरि-सारी पर।
जैसी छबि मेरे चित चढ़ि आई प्यारी आज
तैसियै तूँ चढ़ि आई बनिकै अटारी पर ॥ १६५ ॥

परकीया अभिसारिका (सवैया)

धौल अटा लखि नौल क्षपेस दियो छिटकाइ छटा छबिजालहि।
तापर पूरो सुगंध अतूल को दै गई मालिनि फूल के मालहि।
छोड़ि दियो गृहलोगनि भौन दई दियो 'दास' महासुख-कालहि।
आली दरीचो की नीचो उदीचो की बीचो निभीचो ह्वै ल्याउ री लालहि ॥
[१६६ ॥

शुक्लाभिसारिका (कवित्त)

सिरननग फूलन के भूपन विभूपित कै
बाँधि लीन्ही वलया बिगत कीन्ही बजनी।
तापर सँवान्यो सेत अंबर को डंबर
सिधारी स्याम-संनिधि निहारी काहू न जनी।
छीर के तरंग की प्रभा कों गहि लीन्ही तिय
कीन्ही छीरसिंधु छिति कातिक की रजनी।
आननप्रभा तें तनछाँहहूँ छपाए जाति
भौंरन की भीर संग लाए जाति सजनी ॥ १६७ ॥

कृष्णाभिसारिका, यथा

जलधर ढारैं जलधारन की अधिकारी
निपट अँध्यारी भारी भादव की जामिनी।
तामैं स्याम वसन विभूपन पहिरि स्यामा
स्याम पै सिधारी मत्त-सत-गजगामिनी।

---

[१६६] धौल०–लच्छन धौल (भार०)। नौल०–नौल दियो (वही); नौल वधू सु (लीथो)। के–की (भार०)। गृह–मोहि (वही)।
[१६७] काहू–कहूँ (भार०, लीथो)।
[१६८] भारी–भरी (लीथो)। मत्त०–प्यारी मत्तगज (भार०), मत्त मातंग (सर०)। कै हूँ–क्यों हूँ (वही)। सब–लोग (वही)।

'दास' पौन लागे उपरैनी उड़ि उड़ि जाति
तापर न केहूँ भाँति जानी जाति भामिनी ।
चारु चटकीली छबि चमकि चमकि उठै
सब कहँ दमकि दमकि उठै दामिनी ॥ १६८॥

इति सयोग

अथ बिरह-हेतु-लच्छन (दोहा)

बिरह-हेत उत्कंठिता बहुरि खंडिता मानि ।
कहि कलहंतरितानि पुनि गनौ बिप्रलब्धानि ॥ १६९ ॥
पाँचौ प्रोषितभर्तृका सुनौ सकल कबिराइ ।
तिनके लच्छन लच्छ अब आछे कहौं बनाइ ॥ १७० ॥

'उत्कंठिता लच्छण

प्रेमभरी उत्कंठिता जो है प्रीतम पंथ ।
बेर लगे त्यौं त्यौं बढ़ै मनसूबन के मंथ ॥ १७१ ॥

यथा (सवैया)

जौ कहौ काहू के रूप सौं रीझे तौ और को रूप रिझावनवारी ?
जौ कहौ काहू के प्रेम पगे हैं तौ और को प्रेम पगावनवारी ?
'दासजू' दूसरो बात न और इती बड़ी बेर-बितावनवारी ।
जानति हौं गई भूलि गोपाले गली इहि ओर की आवनवारी ॥१७२॥

पुनः

सनको तिन के खरके खरको तिनके सन को ठहरैबो करै ।
लखि बोलत मोर तमाल के डोलत चाय सौं चौंकि चितैबो करै ।
यह जानती प्रीतम आवहिंगे अधरात लौं ज्यौं नित ऐबो करै ।
अँखियान कौं 'दास' कहा करिये बिन कारन ही अकुलैबो करै ॥१७३॥

---

[१६९] गनौ–गने (भार०) ।
[१७२] को–के (सर०) ।
[१७३] करिये–कहिये (भार०, लीथो) ।

पुनः

आज अगार वड़ी करी थालम जौं अबकै सखि भेटन पैहौं।
कै मनकाम सपूरन तूरन तौ यह बात प्रमान करैहौं।
आतुर ऐसो करौ जू न तौ मग जोहत होती दुखी बहुतै हौं।
आपनी ठौर सहेट बदी तहँ हौं ही भले नित भेट कै ऐहौं ॥१७४॥

खंडिता-लक्षण (दोहा)

प्रीतम रैनि विहाइ कहुँ जापै आवै प्रात।
सु है खंडिता मान मैं कहै करै कछु बात ॥ १७५ ॥

यथा (कवित्त)

लोचन सुरंग भाल जावक को रंग मन
सुषमा उमंग अरुनोदै अवदात की।
भावती को अंगराग लाग्यो है सभाग-तन
छबि सों छिपन लागी महातम गात की।
'दास' विधुरेख सो नखच्छत सुवेष ओठ
अंजन की रेख अलिनी सी कंजपात की।
प्यारे मोहि दीन्हो आनि दरस प्रभात, प्रभा
तन मैं सु लै दरस पीछे कै प्रभात की ॥ १७६ ॥

धीरा, यथा

अंजन अधर भ्रुव चंदन सु बैंदी बाहु
सुषमा सिंगार हास करुना अकस की।
नख है न अंगराग कुंकुम न लाग्यो तन
रौद्र बीर भयवारी भलक रहस की।
पलन की पीक पर बसन हरा अलीक
'दास' छबि चिन अदभुत संत जस की।
पहिले भुलानी अब जानी मैं रसिकराय
रावरे कै अंगनि निसानी नवरस की ॥ १७७ ॥

---

[१७६] सु लै०-लै दरस के पीछे के (लीथो)।
[१७७] जस-रस (सर०)।

अधीरा, यथा

ब्याल उपजावन अब्बाल दरसावन
सुभाल यह पावक न जावक दिढ़ाए ही ।
देखि नखसिख उठी बिष की लहरि महा
कहा जो अधर-बीच अंजन सो लाए हौ ।
'दास' नहि पीकलीक ब्यालिनी बिसाली ठीक
उर में नखच्छत न खंजर छपाए ही ।
मेरे मारिबे कों वा बिसासिनि पठाई हरि
छल की बनाई लिये केतनी उपाए ही ॥ १७८॥

धीराधीरा, यथा (सवैया)

भाल को जावक ओठ को अंजन पोछिकै होते गलीपथगामी ।
ठोढ़ी की गाड़ नखच्छत मूँदी न 'दासजू' होती यौं बेसुधिकामी ।
कंस कुटाकुर नंद अहीर परोसिनि देत डरै बदनामी ।
यातें कहू डर लागै न तौ हमैं रावरेही सुख सौं सुख स्वामी ॥१७९॥

प्रौढ़ा-धीरादि-भेद-लक्षण (दोहा)

तिय जु प्रौढ़ अति प्रेममय सो न सकै कहि बात ।
ता रिस ताकी कियन तें जानें मति अवदात ॥ १८० ॥

यथा (सवैया)

होरी की रैनि बिहाइ कहूँ उठि भोरहीं भावते आवत जोयो ।
नेकु न बाल जनाई भई जऊ कोप को बीज गयो हिय बोयो ।
'दासजू' दै दै गुलाल की मारनि अंकुरियो उहि बीज को खोयो ।
भावते भाल को जावक ओठ को अंजन ही को नखच्छत गोयो ॥१८१॥

तिलक

प्रौढ़ा धीरादि के तीन्यौ भेद याही में हैं ।

मानिनी-लक्षण (दोहा)

पिय-पराध लखि मान कौं किये मानिनी बाम ।
लघु मध्यम गुरु मान को उदै होत जा काम ॥ १८२ ॥

---

[१७८] मुख०—सो सुखै सुख (लीथो)। [१८०] जु०—प्रौढ़ा (लीथो)। मति—मर्जे (सर०)। [१८२] बाम—नाम (भार०)।

लघुमान-उदय, यथा (सवैया)

हैं यह तो घर आपनेई उत तो करि आवौ मिलाप की घातैं।
यों दुचिताई में प्रेम सने न बनैगी कछू रसरीति सुहातैं।
'दास' ही मोहिं लगी अबलौं अब लौटि गई सु हौं जानती जातैं।
नाह कहीं की कहौं अँखियानहीं नाहक हौं हमसों करो बातैं॥ १८३॥

मध्यम मान, यथा

तन और की ओर निहारिबे कों जु करी निति मेरी दोहाइयें जू।
सु लख्या हम आपने नैनन सों कहा कीजे करौ चतुराइयें जू।
बतलात हो लाल जिते तित ही अब जाइ सुखै बतलाइयें जू।
इत जोरी जोरावरी सों न जुरै न जरै पर लोन लगाइयें जू॥ १८४॥

गुरु मान, यथा

लाल ये लोचन काहैं भिया है दियो ह्वै है मोहन रंग मजीठी।
मोतें उठी है जो बैठे अरीन की सीठी क्यों बोलो मिलाइ ल्यो मीठी।
चूक कही किमि चूकत सो जिन्हैं लागी रहै उपदेस-बसीठी।
झूठी सनै तुम साँचे लला यह झूठी तिहारेहू पाग की चीठी॥ १८५॥

इति खंडिता

अथ कलहांतरिता (दोहा)

कलहंतरिता मान कै चूक मानि पछिताइ।
सहज मनावन की जतन मानसौति ह्वै जाइ॥ १८६॥

---

[१८३] सनै–सुनै (सर०), परो (लाथा)। कछू–द्वै ह्वै (सर०)।
[१८४] निहारिबे०–निहारिकै जू (लीथो)। जु०–करा नितहिं (भार०, लीथो)। कीजे–कीजा (भार०)। जोरी–नेह (लीथो)।
[१८५] मोतें–मोतो (सर०)। है–हौ (वही)। मिलाइ०–मिठाइ लौं (भार०)। सो–हो (वही), से (सर०)। तिहारेहू–तुमारेहु (भार०)।

यथा (सवैया)

जीवों तो देखतें पाइ परौं अब सौतिहूँ के महले किन होई।
आज तें मान को नाउँ न लेउँ करौं टहलैं सहलैं अति जोई।
'दासजू' दै न सकी नृप दै सिस मान को बैरिनि प्रान लियोई।
एरी सखी कहूँ क्योंहूँ लखो पिय सौंकर मान जिये तिय कोई ॥१८७॥

लघुमान-शांति

जानिकै वापै निहारत मेरे गई फिरि बाँकी कमान सी भौंहैं।
'दासजू' डारि गरे भुज बाल के लाल करी चतुराई अगौंहैं।
प्रानप्रिया लखि तौ वा गवाँर के सामुहँ व्योम उड़े खग कौंहैं।
बोली हूँ सौंहैं जु दीजिये जान किये रहिये मुख मो मुख सौंहैं ॥१८८॥

मध्यममान-शांति

बातें करी उनसों घरी चारि लौं सो निज नैननि देखत ही हौं।
कीजै कहा जो घनावरी बाँधिके 'दास' कियो गुरु लोगन की सौं।
बैठो जू बैठो न सोच करौ हिय मेरे तौ रोष की जात भई दौं।
जान्यो मैं मान छोड़ाइबे की तुमें आवती लाल बड़ीयै वड़ी गौं ॥१८९॥

गुरुमान-शांति

जान्यो मैं या तिल तेल नहीं पहिले जब भामिनी भौंह चढ़ाई।
कान्हजू आज करामति कीन्ही कहाँ लौं सराहौं महा सुघराई।
'दास' बसौ सदा गोपन में यह अद्भुत बैदई कौने सिखाई।
पाइ लिलार लगाइ लला तिय-नैनन की लियो ऐंचि ललाई ॥१९०॥

साधारण मान-शांति

आज तें नेह को नातो गयो तुम नेम गहौ हौंहूँ नेम गहौंगी।
'दासजू' भूलि न चाहिये मोहि तुम्हैं अब क्योंहूँ न हौंहूँ चहौंगी।
वा दिन मेरे प्रजंक पै सोए हौ हौं वह दाव लहौं पै लहौंगी।
मानौ भलो कि बुरो मनमोहन सैन तिहारी मैं सोइ रहौंगी ॥१९१॥

---

[१८९] देखत ही०–देखति हौ है (सर०)। घनावरी–बावरी (वही)।
सौं–सौहै (वही)। दौं–दौ है (वही)। गौं–गौ है (वही)।

[१९०] या–वा (भार०)।

[१९१] मेरे–मेरी (सर०)। सैन–सेज (भार०)।

विप्रलब्धा-लक्षण (दोहा)

मिलन आस दै पति छली औरहि रत ह्वै जाइ।
विप्रलब्ध सो दुखिता - परसंभोग सुभाइ ॥ १६२ ॥

यथा (कवित्त)

जानिकै सहेट गई कुंजन मिलन तुम्हैं
जान्यो न सहेट के बदैया बृजराज से।
सूनो लखि सदन सिँगार ज्यौं अँगार भए
सुख देनवारे भए दुखद समाज से।
'दास' सुखकंद मंद सीतल पवन भए
तन तैं जु लाव-उपजावन-इलाज से।
बाल के बिलापन बियोग-तन-तापन सौं
लाज भई मुकुत मुकुत भए लाज से ॥१६३॥

अन्यसंभोगदुःखिता, यथा (सवैया)

ढीली परोसिनि बेनी निहारिकै जानि गई यह नायक गूँदी।
औरै बिचार बढ़ो बहुन्यो लखि आपनी भाँति की नीबी की फूँदी।
दासपनो अपनो पहिचानत जानी सबै जु हुती कछु मूँदी।
ऊमि उसासनहाँ बरुनी-बरुनीन मैं छाइ रही जलबूँदी ॥१६४॥

पुनः

केलि के भौन मैं सोवत रौन बिलोकि जगाइबे कौं भुज काढ़ी।
सैन मैं पेखि चूरीन को चूरन तूरन तेह गई गहि गाढ़ी।
'दास' महाउर-छाप निहारि महा उर ताप मनोज की बाढ़ी।
रोपभरी अँखियानि सौं घूरति मूरति ऐसी बिसूरति ठाढ़ी ॥१६५॥

पुनः (कवित्त)

ल्याई बाटिका ही सौं सिँगारहार जानति हौं
कंटन को लाग्यो है उरोजन मैं घाव री।

---

[१६३] जु लाव–सु ज्वाल (भार०)।
[१६४] पनो–बनो (सर०)। उसास०–उसास गही (भार०)।
१६५] कौं–के (भार०)। अँखियानि०–अँखिया नित (वही)।

दौरि दौरि टहल के कहल ह्वै कै वादिहीं
बिगार्‌यो उर-चंदन दृगंजन-वनाव री।
मेरो कहा दोष 'दास' घातें जौन बूझि लीनी
अपनी ही सूझि भरि आई व्रज भाँवरी।
पीतपटवारे कों बोलावन पठाई मैं तूँ
पीत पट काहे कों रँगाइ ल्याई बावरी ॥१९६॥

प्रोषितभर्तृका-लक्षण (दोहा)

कहिये प्रोषितभर्तृका पति परदेसी जानि।
चलत रहत आवत मिलत चारि भेद उनमानि ॥ १९७ ॥
प्रथम प्रवत्स्यत्प्रेयसी प्रोषितपतिका फेरि।
आगच्छतपतिका बहुरि आगतपतिका हेरि ॥ १९८ ॥

प्रवत्स्यत्प्रेयसी (सवैया)

बात चली यह है जब तें तब तें चले काम के तीर हजारन।
भूख औ प्यास चली मन तें अँसुआ चले नैनन तें सजि धारन।
'दास' चलो कर तें वलया रसना चली लंक तें लागी अबार न।
प्रान के नाथ चले अनतै तन तें नहिं प्रान चले किहि कारन ॥१९९॥

प्रोषितपतिका

साँझ के ऐबे की औधि दै आए बितावन चाहत याहू बिहानहि।
कान्हजू कैसे दया के निधान हौ जानो न काहू के प्रेम-प्रमानहि।
'दास' बड़ोई बिछोह कै मानती जात समीप के घाट नहानहि।
कोस कै बीच कियो तुम डेरो तौ को सकै राखि पियारी के प्रानहि ॥२००॥

---

[१९६] कहल–महल (भार०)। भरि०–तू तौ भरि आई भावरी (वही)। तूँ–तो (वहीं)

[१९९] यह–वह (भार०)। धारन–गारन (वही)। लंक०–अंत के (सर०)। लागी–लाग्यो (भार०)।

[२००] कै–के (सर०, भार०)।

आगच्छतपतिका

बाम दई कियो बाम भुजा अँखिया फरके को प्रमान टरो सो।
झूठे सँदेसिया औ सगुनौती-कहैयन को पर्यो एक परोसो।
'दासजू' प्रीतम की पतिया पतियात जो है पतियाइ मरो सो।
भागभरो सोइ छोड़ि दियो हम का गहिये अब काग-भरोसो ॥२०१॥

आगतपतिका

देखि परे सब गात कटीले न ऐसे में ऐसी प्रिया सके कोइ कै।
आदर-हेत उठै प्रति रोम है 'दास' यों दीनदयालता जोइकै।
कंत बिदेसी मिले सुख चाहिये प्रानप्रिया तूँ मिलै किमि रोइकै।
जीवननाथ-सरूप लख्यो यह मैं मलिनी निज आँखिन धोइकै ॥२०२॥

उत्तमादि-भेद (दोहा)

जितनी तिय बरनी ति सब तीन तीनि बिधि जानि।
तिन्हैं उत्तमा मध्यमा अधमा नाम बखानि ॥ २०३ ॥
उत्तम मानबिहीन है, लघु मध्यम मधि मान।
बिन पराधहूँ करति है अधम नारि गुरु मान ॥ २०४ ॥

उत्तमा, यथा (सवैया)

बावरी भागनि तें पति पाइये जो मति मोहै अनेक तिया की।
भोर की आवनि कुंजबिहारी की मेरी तौ 'दासजू' ज्यारी जिया की।
आजु तें मो सिखलै तूँ अली दै गली तजि सीखनि छीछीछिया की।
प्रानपियारे तें मान करै ते कसाइनि कूर कठोर हिया की ॥२०५॥

मध्यमा, यथा

सारी निसा कठिनाई धरे रहै पाहन सो मन जात बिचारो।
'दासजू' देखतै घाम गोपाल को पाला सो होत घरी घुरि न्यारो।

---

[२०१] झूठे-झूठा (भार०)।
[२०२] यह०–पै हमै (भार०)।
[२०३] तीनि०–तीनि भँति की (भार०)।
[२०४] हूँ–हीं (भार०)।
[२०५] पाइये–पाए (सर०); आवन (भार०)। ते–तो (वही)।

तेह की बातैं कहो तुम एती पै मो मन होत न नेक पत्यारो।
पूस को भान ह्वाई कृसान सो मूढ़ को ज्ञान सो मान तिहारो ॥२०६॥

अधमा, यथा (कवित्त)

माधो अपराधो तिल आधो ना विचारो सुद्ध
साध ही तें राधे हठ-आराधन ठानती।
'दास' यों अलीके बैन टीके करि मानों ज्ञान
हैहैं दुख जी के यह नीके हम जानती।
वाकी सिख पाई वहै ध्यान धन ठहराई
और की सिखाई कछू कानन न आनती।
मान करि मानिनीं मनाए मानै बावरी न
कोऊ गुरु मानै सतगुरु मान मानती २०७।

इति आलंबन-विभाव

अथ उद्दीपन-विभाव—सखी-वर्णन (दोहा)

तिय पिय की हितकारिनी सखी कहैं कविराव।
उत्तम मध्यम अधम त्रय प्रगट दूतिका-भाव ॥ २०८॥

साधारण सखी, यथा (कवित्त)

छविन्ह बरनि जिन सुरति बढ़ाई नई
लगनि उपाई घात घातनि मिलाई है।
मान में मनायो पीर-बिरह बुझायो
परदेस में बसीठी करि चीठी पहुँचाई है।

---

[२०६] घाम–धाम (भार०)। धुरि–धुरि (वही)। तेह–नेह (वही)।
कहौ–कैहौ (वही)। नेक०–नेकहू न्यारो (वही)। मान०–
मानहू वाइ (वही)। को०–अजान (वही)

[२०७] अलीकै–अली के (भार०)।

[२०८] *मध्यम०–अरु मध्यम अधम प्रगट (भार०)।*

[२०९] छविन्ह–छवि ना (भार०)। उपाई–उपाय (वही)। परदेस–
पद देस (वही)। प्रीतिनि–प्रीति न (वही)। रीतिनि–
रीति न (वही)।

'दासजू' सँजोग मैं सुबैननि सुनाइ मैन-
प्रीतिनि पढ़ाइ , रसरीतिनि पढ़ाई है।
चंद्रावलि राधाजू की ललिता गोपालजू की
सखियाँ सुहाई कैधौं भाग की भलाई है ॥२०९॥

नायक-हित सखी

तेरी रीझिबे की रुख रीझि मनमोहन की
यातें यहै साज सजि सजि नित आवते।
आपु ही तें कुंकुम की छाप नखछत गात
अंजन अधर भाल जावक लगावते।
ज्यौं ज्यौं तूँ अयानी अनखानी दरसावै
त्यौं त्यौं स्याम फुन आपने लहे को सुख पावते।
तिनहीं सिखावै 'दास' जो तूँ यौं सुनावै
तुम यौं ही मनभावते हमारे मन भावते ॥२१०॥

नायिका-हित सखी

केसरि के केसर को उर में नखच्छत कै
कर लै कपोलनि में पीक लपटाई है।
हारावली तोरि छोरि कचनि बिथोरि खोरि
मोहूँ गनि भोरि इत भोर उठि आई है।
पी के बिन प्रेम कोऊ 'दास' इहि, नेम
परपंच करि पंच में, सोहागिनि कहाई है।
हाँती करि हाँ ती मोहि ऐसी ना सोहाती
भेप कंत है तकत यह कैसी चतुराई है।२११॥

उत्तमा दूती, यथा (सवैया)

मोहि सौं आजु भई सिगरी बिगरी सब आजु सँवार करौंगी।
वीर की सौं बलवीर बलाइ त्यौं आज सुखी इकबार करौंगी।
'दास' निसा लौं निसा करिये दिन बूड़त ब्यौंत हजार करौंगी।
आजु निहारी तिहारी पियारी तिहारे मैं हीय को हार करौंगी ॥२१२।

[२११] केसर–केसुर (सर०)। गनि–गति (भार०)। भार–भोरै (वही)। पी के–पी को (वही)।

[२१२] आजु–भूज (भार०)। बूड़त–बूड़ते (वही)।

मध्यम दूती, यथा (कवित्त)

प्यारी कोमलांगी औ कुमुदबंधुवदनी
सुगंधन की खानि कों क्यों सकृत सताइहों।
वेनी लखि मोर दौरै मुख कों चकोर 'दास'
स्वासनि कों भौंर किन किन कों वराइहों।
वह तौ तिहारे हेत अवहीं पधारै पै धौं
तुमहीं विचारो कैसे धीरज धराइहों।
ह्वै है कामपाल की, बरसगाँठि वाही मिस
अब मैं गोपाल की सों पालकी मैं ल्याइहौं ॥२१३॥

अधम दूती, यथा (सवैया)

कित कंचन सी वह अंग कहाँ कहँ रंग कदंविनि के तुम कारो।
कहँ सेज-कली विकली वह होइ कहाँ तुम सोइ रहौ गहि डारो।
नित 'दासजू' ल्याय ही ल्याय कहौ कछु आपनो वाको न भेद विचारो।
वह कौल सों कोरी किसोरी कहौ औ कहाँ गिरधारन पानि तिहारो ॥२१४॥

सखीकर्म-लक्षण (दोहा)

मंडन संदरसन हँसी संघट्टन सुभ धर्म।
मानप्रवर्जन पत्रिकादान सखिन के कर्म ॥ २१५ ॥
उपालंभ सिक्षा स्तुती विनय उदक्षा उक्ति।
विरहनिवेदन जुत सुकवि वरनन हूँ बहु जुक्ति ॥ २१६ ॥
इन बातनि पिय तिय करै जहाँ सुऔसर पाइ।
वहै स्वयंदूतत्व है सो हौं कहौं बनाइ ॥ २१७ ॥

मंडन, यथा (सवैया)

प्रीतम-पाग सँवारी सखी सुघराई जनायो प्रिया अपनी है।
प्यारी कपोल के चित्र बनावत प्यारे निचिन्तता चारु सनी है।

---

[२१३] कों भौंर–तें भैंर (भार०)।
[२१४] कदंविनि–कदवन (भार०)। सेज०–कंजकली विकसी (वही)। जू–हा (वही)। सों०–सी गोरी (वही)। कहौ–कहाँ (वही)।
[२१५] मंडन०–मंडन में (सर०)।

'दास' दुहूँ को दुहूँ कौं सराहियो देखि लह्यो सुख लूटि घनो है।
वै कहैं भावतो कैसो बनो वे कहैं मनभावती कैसी बनी है ॥२१८॥

संदर्शन, यथा

आहट पाइ गोपाल को बाल सनेह के गाँसनि सौं गँसि जाती।
दौरि दरीची के सामुहें ह्वै दृग जोरि सो मौंहन में हँसि जाती।
प्यारे के तारे कसौटिन में अपनी छवि कंचन सी कसि जाती।
'दास' न जानत कोऊ कहूँ तन में मन में छवि में बसि जाती ॥२१९॥

पुनः

काहे को 'दास' महेस महेस्वरी पूजन काज प्रसूननि तूरति।
काहे को प्रात नहाननि कै बहु दाननि दै व्रत संजम पूरति।
देखि री देखि अँगोटिकै नैननि कोटि मनोज मनोहर मूरति।
येई हैं लाल गोपाल अली जिहि लागि रहै दिनरैन विसूरति ॥२२०॥

परिहास

मोहन आपनो राधिका को विपरीति को चित्र विचित्र बनाइकै।
डीठि बचाइ सलोनी की आरसी में चपकाइ गयो बहराइकै।
घूमि घरीक में आइ कह्यो वहाँ बैठी कपोलन चंदन लाइकै।
दर्पन त्यों तिय चाह्यो तहाँ सिर नाइ रही मुसकाइ लजाइकै ॥२२१॥

संघट्टन, यथा

लेहु जू ल्याई सु गेह तिहारे परे जिहि नेह सँदेह खरे में।
भेटौ भुजा भरि मेटौ व्यथा निसि मेटौ जु तौ सब साध भरे में।
संभु ज्यौं आधे ही अंग लगावौ बसावौ कि श्रीपति ज्यौं हियरे में।
'दास' भरी रसकेलि सकेलिये आनंदबेलि सी मेलि गरे में ॥२२२॥

आपने आपने गेह के द्वार तें देखादेखी कै रहैं हिलि दोऊ।
त्यौं ही अँध्यारी कियो झपि मेघनि मैन के बान गए सिलि दोऊ।
'दास' चितै चहुँघां चित चाय सौं ओसर पाइ चले पिलि दोऊ।
प्रेम उमडि रहे रसमडित अनर की मडई मिलि दोऊ ॥२२३॥

---

[२१८] सराहियो–पँवारयो (भार०)।

[२१९] भार० में तीसरा चरण चौथा है।

[२२१] चंदन–नंदन (सर०)।

मानप्रवर्जन, यथा (कवित्त)

पंकज-चरन की सौं जानु सुबरन की सौं लंक
तनु की सौं जाकी अलख महति है।
त्रिबली-तरंग कुच-संभु जुग संग की सौं
हारावलि गंग की सौं जो उत बहति है।
श्रुति साजधारी वा बदन द्विजराज की सौं
एरी प्रानप्यारी कोप काप तूँ गहति है।
साँची हौं कहति तुव बेनी सौं कमलनैनी
तेरी सुधिसुधा मोहिं ज्यावति रहति है ॥२२४॥

पत्रिकादान, यथा (सवैया)

कैसो री कागद ल्याई ? नई पतिया है दई बृषभानकुमारी।
भीगी सु क्यों ? अँसुआन के धार जरी कहि कैसे ? उसासनि जारी।
आखर 'दास' दखाई न देत ? अचेत हुती बहुतै गिरिधारी।
एती तौ जीय में ब्यारी रही जब छाती धरे रही पाती तिहारी ॥२२५॥

उपालंभ, यथा (कवित्त)

मुख द्विजराज मखतूल अधिकारी अलकनि
को है तासौं बिना काज दुख लहिये।
नैन श्रुतिसेवी सर ह्वैकै उर लागत है
नाक मुकुतन संगी ताके दाह दहिये।
'दास' भनभावती न भावती चलन तेरी
अधर अमी के अवलोके मोहि रहिये।
ह्वैकै सभुरूपी द्वै उरज ये कठोर ये
कठोरताई एती करें कासौं जाइ कहिये ॥२२६॥

शिक्षा, यथा (सवैया)

वाही घरी तें न सान रहै न रहै सखियान की सीख सिगाई।
'दास' न लाज को साज रहै न रहै सजनी गृहकाज की धाई।

---

[२२४] साज–सनु (भार०)।
[२२५] ब्यारी–ज्वाल (भार०)। धर रही–धरे रहे (वही)।
[२२६] सेवी–भेदे (भार०)। सभी–सम (भार०)।

त्यों दिनसाध निवारे रही तबहीं लौं भटू सब भाँति भलाई ।
देखत कान्हे न चेत रहे री न चित्त रहे न रहे चतुराई ॥२२७॥

स्तुति, यथा (कवित्त)

राधे तो वदन सम होतो हिमकर तौ
अमर प्रतिमासनि बिगारते क्यों रहते ?
क्योंहूँ कर-पद-सरि पावते जौ इंदीवर
सर में गड़े तौ दिन टारते क्यों रहते ?
'दास' दुति दाँतन की देख्यो दई दारिमै
तौ पचि पचि उदर बिदारते क्यों रहते ?
एरी तेरे कुच सरि होत करिकुंभ तौ
वे उन पर लै लै छार डारते क्यों रहते ? ॥२२८॥

विनय, यथा (सवैया)

जात भए गृहलोग कहूँ न परोसिहू को कछु आहट पैये ।
दीनदयाल दया करिकै यहु औसनि को तनताप बुझैये ।
'दास' ये चाँदनी चाँदनी चौसर औसर बीते न औसर पैये ।
गोहन छाड़ि कछू मिस कै मनमोहन आज इहाँ रहि जैये ॥२२९॥

यद्वथा

सुनि चंदमुखी रहि रैनि लख्यो मैं अनंद-समूह सन्यो सपनो ।
दगमीचनि खेलत तो सँग 'दास' दयो बिधि फेरि सु बालपनो ।
लगी ढूढ़न चंपलता ललिका चलि ता छन मोहिं बन्यो छपनो ।
जनु पावै नहीं ते छिपाइ रही तूँ आढ़ाइकै अंचल ही अपनो ॥२३०॥

(कवित्त)

गति नरनारिन की पंछी देहधारिन की
तृन के अहारिन की एकै घार बँधई ।
दीनी बिकलाई सुधि बुधि बिसराई
ऐसी निर्दई कसाई तोसों करि न सकै दई ।

---

[२२७] दिन-सिन (भार०, लीथो) । तन-जन (लीथो) ।
[२२६] परोसि-परोस (भार०) । चाँदनी-चंदन (वही) । पैये-वैये (सर०) ।
[२३०] चंपलता०—चापलता ललिता (सर०) । ते.—तेहि पाइ (वही) ।

विधि के सँवारे कान्ह कारे औ कपटवारे
'दासजू' न इनकी अनीति आज की नई ।
सुर की प्रकासिनि अधर-सेजवासिनि सु-
वंस की है वंसी तू कुपंथिनि कहा भई ॥२३१॥

विरहनिवेदन, यथा (सवैया)

'दासजू' आलस लालसा त्रास उसास न पास तजै दिन रातैं ।
चिंता कठोरता दीनता मोह उनींदता संग कियो करै बातैं ।
आधि उपाधि असाधिता व्याधि न राधिकै कैसहू है सकै हातैं ।
तेरे मिलाप बिना बृजनाथ इन्हैं अपनाए रहै तिय नातैं ॥२३२॥

उद्दीपन विभाव, यथा (कवित्त)

बाग के बगर अनुरागरली देखति ही
सुषमा सलोनी सुमनावलि अछेह की ।
द्वार लगि जाती फेरि ईठि ठहराती बोलै
औरनि रिसाती मानी आसन अदेह की ।
'दास' अब नीके उनि भरनि उसाँसु री
सुबाँसुरी की धुनि प्रति पाँसुरी में बेह की ।
गँसी गाँसी नेह की बिसारनी मरु मेह की
रही न सुधि तेह की न देह की न गेह की ।२-३॥

अनुभाव-लक्षण (दोहा)

सु अनुभाव जिहि पाइये मन को प्रेम-प्रभाव ।
याही में बरनैं सुकवि आठौ सात्विक भाव ॥ २३८ ॥

यथा (सवैया)

जी बँधिहीं बँधि जात है ज्यौं ज्यौं सुनीनी-तनीन को बाँधति छोरनि ।
'दास' कटीले है गात कँपे निहँसौंही हँसौंही लसैं दृग लोरनि ।
भौंह मरारति नाक सकोरति चीर निचोरति औ चित चोरति ।
प्यारो गुलाब के नीर में बोरयो प्रिया पलटे रसभीर में बोरति ॥२३५॥

---

[२३१] प्रकासिनि–प्रभासिनि (लीथो) ।
[२३२] आलस–आयस (सर०) । उनींदता–उदीनता (भार०) ।
[२३३] में–मैं (सर०) ।
[२३५] बोरति–नो रति (भार०) । पलटे–लपटे (भार०, लीथो) ।

सात्त्विक भाव (दोहा)

स्तंभ स्वेद रोमांच स्वरभंग कंप वैवर्न ।
अश्रु प्रलै ये सात्त्वकी भाव के उदाहर्न ॥ २३६ ॥

यथा (कवित्त)

कहि कहि प्यारी अबै चढ़ती अटारिन पै
काहि अवलोक्यो यह कैसो भयो ढंग है ?
औरै ओर तकति चकति उचकति 'दास'
खरी सखि पास पै न जानै कोऊ संग है ।
थकि रही दीठि पग परत धरनि नीठि
रोमनि उमग भो बदलि गयो रंग है ।
नैन छलकौंहैं घर बैन बलकौंहैं औ
कपोल फलकौंहैं झलकौंहैं भए अंग हैं ॥२३७॥

व्यभिचारी-भेद

निरवेद ग्लानि संका असूया औ मद श्रम
आलस दीनता चिंता मोह स्मृति धृति जानि ।
व्रीड़ा चपलता हर्ष आवेग जड़ता विषाद
उतकंठा निद्रा गर्व अपसमार मानि ।
स्वपन विबोध अमरष अवहित्था गनि
उग्रता औ मति व्याधि उन्माद मरन आनि ।
त्रास औ वितर्क व्यभिचारी भाव तें तिस
ये सिगरे रसनि के सहायक से पहिचानि ॥२३८॥

यथा

सुमिरि सकुचि न थिराति सकि त्रसति
तरति उग्र बानि सगिलानि हरषाति है ।
उनीदति अलसाति सोवत सधीर चौंकि
चाहि चित श्रमित सगर्ब इरखाति है ।

---

[२३७] चकति–तकति (लीथो) । परत–धरत (वही) ।
[२३६] इरखाति–अनखाति (भार०) ।

'दास' पिय-नेह छिन छिन भाव बदलनि
स्यामा सबिराग दीन मति कै मखाति है ।
जल्पति जकाति कहरत कठिनाति माति
मोहति मरति बिललाति बिलखाति है ॥२३८॥

स्थायीभाव-लक्षण (दोहा)

स्थायीभाव सिंगार को प्रीति कहावै मित्त ।
तिहि बिन होत न एकऊ रसस्ंगार-कबित्त ॥ २४० ॥
थाईभाव बिभाव अनुभाव सँचारीभाव ।
पैये एक कबित्त में सो पूरन रसराव ॥ २४१ ॥

यथा (कवित्त)

आज चंद्रभागा चंपलतिका बिसाखा को
पठाई हरि बाग तें कलामेँ करि कोटि कोटि ।
साँझ समैं बीथिन में ठानी दृगमीचनी भोराई
तिन राधे कों जुगुति कै निखोटि खोटि ।
ललिता के लोचन मिचाइ चंद्रभागा सौं
दुरायबे कौं ल्याईं वै तहाँईं 'दास' पोटि पोटि ।
जानि जानि घरी तिय बानी लरबरी सब
आली तिहि घरी हँसि हँसि परीँ लोटि लोटि ॥१४२॥

शृंगार-हेतु-लक्षण (दोहा)

कहत सँजोग वियोग द्वै हेत सिंगारहि लोग ।
संगम सुखद सँजोग है बिछुरे दुखद वियोग ॥ २४३ ॥

संयोग शृंगार, यथा (कवित्त)

जानु जानु बाहु बाहु सुख सुख भाल
भाल सामुहें भिरत भट मानो थरु थरु है ।

२४०] मित्त–चित्त (सर०) ।
[२४२] लरबरी–रसभरी (भार०) ।

गाढ़े ठाढ़े उरज दलैत नख-घाइ लेत
ठाहै ढिग करन-सँजोगी थीर यरु है।
टूटे नग छूटे घान सिजित विरद घोलैं
मर्मरन मारू धाजैं धाजत प्रचरु है।
राधे हरि क्रीड़त अनेकनि समरकला मानौ
मँडी सोभा औ सिंगार सौं समरु है ॥२४४॥

सुरतांत, यथा (कवित्त)

उठी परजंक तें मयंकवदनी कौं लखि
अंक भरिबे कौं फेरि लाल मन ललकैं।
'दास' अँगिराति जमुहाति तकि झुकि
जाति दीने पट अंतर अनंत ओप झलकैं।
तैसैं अंग अंगन खुले हैं स्वेदजलकन
खुली अलकन खरी खुली छवि छलकैं।
अधखुली आँगी हद अधखुली नखरेख
अधखुली हाँसी तैसी अधखुली पलकैं ॥२४५॥

हाव-भेद (दोहा)

अलंकार घनितान के पाइ सँजोग सिंगार।
होत हाव दस भाँति के ताको सुनौ प्रकार ॥ २४६ ॥
लीला ललित विलास किलकिंचित विहित विछित्त।
मोट्टाइत कुट्टमिति बिब्बोक विभ्रमौ मित्त ॥ २४७ ॥

लीलाहाव-लक्षण

स्वाँग केलि को करत हैं जहाँ हास्य रसभाव।
दंपति सुख क्रीड़ा निरखि कहिये लीला हाव ॥ २४८ ॥

---

[२४४] ठाढ़े--गाढ़े (लीथो)। मर्म०--मरार न (भार०)। मँडी--मढ़ी (वही)।

[२४५] झुकि--मुकि (सर०)। अनंत--अतन (भार०)। ओप--चोप (सर०)।

[२४६] के पाइ--को पाइ (सर०)। को--के (वही)।

[२४७] विभ्रमौ--विमोहित (भार०)।

यथा (कवित्त)

चाँदनी मैं चैत की सकल ब्रजवारी वारी
'दास' मिलि रासरस खेलन भुलानी है ।
राधे मोरमुकुट लकुट बनमाल धरि
हरि ह्वै करत तहाँ अकह कहानी है ।
त्यौं ही तियरूप हरि आइ ताहि धाइ
धरि कहिकै रिसौंहैं चली बोल्यो नँदरानी है ।
सिगरी भगानी पहिचानी प्यारी मुसकानी
छूटि गो सकुच सुरत लूटि सरसानी है ॥२४९॥

केलिहाव (सवैया)

नाते की गारी सिखाइ कै सारी को पाँजरो लै पिय के कर दीने ।
मैना पढ़ौ सुनतै उहि 'दासजू' बार हजार वहै रट लीने ।
बूझति आली हँसौंहैं कहा कहैं होत रिसौंहैं लला रसभीने ।
आपु अनंदभरी हँसिगो करै चंचल चारु दृगंचल कीने ॥२५०॥

ललितहाव-लक्षण (दोहा)

ललित हाव बरन्यो निरखि तिय को सहज सिंगारु ।
अभरन पट सुकुमारता गति सुगंधता चारु । २५१ ॥

यथा (कवित्त)

पङ्कज से पायन मैं गूजरी जरायन की
घाँघरे को घेर दीठि घेरि घेरि रखियाँ ।
'दास' मनमोहनी मनिन के बनाय
घनि कंठमाल कंचुकी हवेलहार पखियाँ ।

---

[२४९] तिय०-हरिआइ सहँ धाइ धीर कहि कहि करिकै (लीथो) ।
ताहि-तहिँ (भार०) ।

[२५२] पायन-पायन (भार०) । जरायन-जराउन (वही) । को
घेर-के घेर (भार०) । बनाय-बनाय बने (भार०) ; बनाय
बने (लीथो) । पैनाग्रत०-पैनग तरग (लीथो) । चाल-
चली (वही) ।

अंगन की जोतिजाल फैलावत रंग लाल
आवत मतंगचाल लीने संग सखियाँ।
भागभरी भामिनी सोहागभरी सारी सुही
माँगभरी मोती अनुरागभरी अँखियाँ ॥२५२॥

सुकुमारता, यथा (सवैया)

घाँघरो भीन सौं सारी महीन सौं पीन नितंबनि भार उठ्यो खचि।
'दास' सुबास सिंगार सिंगारति बोझनि ऊपर बोझ उठै मचि।
स्वेद चलै मुखचंदनि च्वै डग द्वैक धरै महि फूलनि सौं सचि।
जात है पंकजवारि बयारि सौं वा सुकुमारि की लंक लला लचि ॥२५३॥

विलासहाव-लक्षण (दोहा)

बोलनि हँसनि बिलोकिबो और भृकुटि को भाव।
क्योंहूँ चकित सुभाव जहँ सो विलास है हाव ॥ २५४ ॥

यथा (कवित्त)

आदरस आगे धरि आँगन में बैठी बाल
इंदु से बदन को बनाव दरसति है।
भौंहनि मरोरि मोरि अधर सकोरि नाक
अलक सुधारति कपोल परसति है।
सखी व्यंग्य बोलि को उठावति बिहँसि
कंज चोलीतर सुषमा अमोली सरसति है।
खुलित पयोधर प्रकास बस 'दास'
नंद नंदजू के नैननि अनंद बरसति है ॥२५५॥

किलकिंचित हाव (दोहा)

हरप बिषाद अमादि जो हिये होत बहु भाव।
भाव सबल सिंगार को सो किलकिंचित हाव ॥ २५६ ॥

---

[२५४] और०-औ भृकुटी (लीथो)।
[२५५] बस०-लास बस (लीथो)।

यथा (कवित्त)

कान्हर कटाक्षन की जाइ झरि लाई
बाल बैठी ही जहाँई वृषभान महरानी है।
'दास' दृगसाधन की पूतरी लौं आरि
दृग-पूतरी घुमरि वाही ओर टहरानी है।
केती अनाकानी कै जँभानी अँगिरानी पै.
न अंतर की पीर यहराए वहरानी है।
थकी थहरानी छवि छकी छहरानी
धकधकी धहरानी जिमि लकी लहरानी है ॥२५७।

चकित हाव, यथा (सवैया)

आज को कौतुक देखिबे कौं हौं कहा कहिये सजनी तू कितै रही।
कैसी महाछवि छाइ अनेक छबीली छकाइ हितै अहितै रही।
ओट सैं चोट बिरी की करी पिय बार सुधारत बैठी जितै रही।
चंचल चारु दृगंचल कै वर चंदमुखी चहूँ ओर चितै रही ॥२५८॥

बिहृतहाव-लक्षण (दोहा)

हिलि मिलि सकै न लाज बस जियै भरी अभिलाष।
ललचावै मन दै मनहि बिहित हाव त्यौं दास ॥ २५९ ॥

यथा (कवित्त)

प्यारो केलिमंदिर तें करत इसारो उत
जाइबे कौं प्यारी हू के मन अभिलाख्यो है।
'दास' गुरुजन पास बासर प्रकास तें न
धीरज न जात केहूँ लाज-डर नाख्यो है।

---

[२५७] कान्हर–कहर (सर०)। आरि–वारि (लीथो)। घुमरि–
सँमरि (वही)। वहराए–वह रूप (भार०)।

[२५८] कितै–कहा (लीथो, भार०)। छाइ–छाये (भार०)। बिरी०–
बिरी करी पाँय के बार (लीथो, भार०)।

[२६०] प्यारो–प्यारे (सर०); प्यारे (भार०)। इसारो–इसारे
(भार०) केहूँ–क्यों हूँ (वही)।

नैन ललचौंहैं पै न केहूँ निरखत घने
ओठ फरकौंहैं पै न जात कछु भाख्यो है।
काजन के ब्याज वाही देहरी के सामुहें है
सामुहें के भौन आवागौन करि राख्यो है ॥२६०॥

बिच्छित्तिहाव-लक्षण (दोहा)

बिन भूषन कै थोरही भूषन छबि सरसाइ।
कहत हाव बिच्छित्ति हैं जे प्रवीन कबिराइ ॥ २६१ ॥

यथा (कवित्त)

काहे कौं कपोलनि कलित कै देखावती है
मकलिका पत्रन की अमल इयौंटि है।
आभरन जाल सब अंगन सँवारिकै
अनंग की अनी सी कत राखति अगौंटि है।
'दास' भनि काहे कौं अन्यास दरसावती
भयावनी भुअंगिनि सी बेनी लौटि लौटि है।
हम ऐसे आसिक अनकन के मारिबे कौं
कौलनैनी केवल कटाच्छ तेरी कोटि है ॥२६२॥

पुनः

फेरि फेरि हेरि हेरि करि करि अभिलाष
लाख लाख उपमा बिचारत है कहने।
बिधिहूँ मनावै जौ घनेरे दृग पावै तौ
चहत याही संतत निहारतहीं रहने।
निमिष निमिष 'दास' रीभत निहाल होत
लूटे लेत मानो लाख कोटिन के लहने।
एरी बाल तेरे भाल-चंदन के लेप आगें
लोपि जात और के हजारन के गहने ॥२६३॥

---

[२६१] बिन-बन (भार०)। थोरही-थोड़ो (वही)। जे-जो (वही)।

[२६२] कलित-कलिन (भार०)। मकलिका-कलिका सु (वही)।

[२६३] बिधिहूँ-बिधिहि (लीथो, भार०)। जौ-तौ (सर०)। ता-जौ (वही०)।

मोट्टाइतहाव-लक्षण (दोहा)

अनचाही बाहिर प्रगट मन मिलाप की घात।
मोट्टाइत तासों कहैं प्रेम उद्दीपति बात ॥ २६४ ॥

यथा (सवैया)

पिय प्रातक्रिया करै आँगन मैं तिय बैठी सु जेठिन के थल मैं।
सुरत के सुधि तें उमहैं अँसुवा ग्रहरावै जँभाइन के छल मैं।
[illegible] मैं।
[illegible] २६५॥

पुनः

मोहि न देखौ अकेलियै 'दासजू' घाटहू बाटहू लोग भरे सो।
बोलि उठैगी बरैतें लै नाउ तो लागिहै आपनी दाउ अनैसो।
कान्ह कुबानि सँभारे रहौ निज वैसी न हौं तुम चाहत जैसो।
ऐबो इतै करौं लेन वही कौं चलैबो कहाँ को कहाँ कर कैसो ॥२६६॥

कुट्टमितहाव-लक्षण (दोहा)

केलि कलहु कौं कहत हैं हाव कुट्टमित मित्त।
कछु दुख लै सुख सौं सन्यो जहँ नायक को चित्त ॥ २६७ ॥

यथा (सवैया)

रूखी ह्वै जैनो पियूष बगारियो बंक बिलोकिबो आदरियो है।
सौंहैं दिआइबो गारी सुनाइबो प्रेम - प्रसंसनि उचरिबो है।
लातनि मारिबो भारिबो बाँह निसंक ह्वै अरुन को भरिबो है।
'दास' नवेली को केलि-समै में नहीं नहीं कीबो हहाँ करिबो है ॥२६८॥

बिब्बोकहाव-लक्षण (दोहा)

जहँ प्रीतम को करत है कपट अनादर बाल।
कछु इरिषा कछु मद लिये सो बिब्बोक रसाल ॥ २६९ ॥

---

[२६५] घूङ्घिं-घूइने (भार०)।

[२६६] मोहि न०-॥ मोहि न ॥ [शीर्षक ?] देखो अकेलियै 'दासजू' घाट वह बाट भै लोग लोगाई भरे सो (भार०)। उठैगी०-उठो बीन्धरे ने (भार०) न हौं-नहीं (वही)।

[२६९] सो-है (भार०)।

यथा (सवैया)

मान में बैठी सखीन के समत बूझिवे कों पिय-प्रेम प्रभाइनि ।
'दास' दसा सुनि द्वार तें प्रीतम आतुर आयो भरयो दुचिताइनि ।
बूझि रह्यो पै न हेत लह्यो कहूँ अंत ह्वा कै गह्यो तिय-पाइनि ।
आली लखे भिन कौड़ी को कौतुक ठोढ़ी गहे बिहँसे टकुराइनि ॥२७०॥

पुनः

देखती हौं इहि ढीठे अहीर कौं कैसे धौं भीतरी आवन पायो ।
'दास' अधीन ह्वै कीनो सलाम न दूरि तें दीन ह्वै हेत जनायो ।
बैठि गो मेरे प्रजंक ही ऊपर जानै को याको कहाँ मन भायो ।
गाइन की चरवाही निहाइकै वेपरवाही जनावन आयो ॥२७१॥

बिभ्रमहाव-लच्छन (दोहा)

कहियत बिभ्रम हाव जहँ भूलि काज ह्वै जाइ ।
कौतूहल निक्षेप निधि याही में ठहराइ ॥ २७२ ॥

यथा (कवित्त)

उलटीयै सारी कि किनारीवारी पहिचानौ
यहि के प्रकास या जुन्हाई-बिमलाई में ।
'दास' उलटीयै बेंदी उलटीयै आँगी
उलटोई अतरौटा पहिरे हौ उतलाई में ।
भेद न बिचारयो गुंजमालै औ गुलीकमालै
नीली एकपटी अरु मीली एकलाई में ।
लली किहि गली कित जाती हौ निडर चली
कसे कटि ककन औ किंकिनि कलाई में ॥२७३॥

---

[२७०] में—कै (भार०) । ह्वा—फटा (लीथो, भार०) ।
[२७१] जनावन—जनावत (वही) ।
[२७२] याही—वाही (लीथो) ।
[२७३] औ०—अगुनी (लीथो) । किहि—किन (लीथो, भार०) ।

कौतूहल हाव, यथा (सवैया)

आस सु कौतुक सोध लै सोध पै धाइ चढ़ी वृषभानकिसोरी।
'दास' न दूरि तें डीठि थिरै सु दरी दरी झाँकति ही फिरै दौरी।
लोग लग्यो इहि कौतुक कौतुक कौतुकवारे को जात ही भोरी।
चंद-उदोत इतोत चितोत चकी सबकी चख-चारु-चकोरी ॥२७४॥

विक्षेप हाव, यथा

आज तौ राधे जकी सी थकी सी तकै चहुँ ओर बिहाइ निमेषै।
अंगनि तोरै खरो अँगिराइ जँभाइ झुकै पै न नींद बिसेषै।
केती भरै बिन काज की भाँवरी बावरी सी कहिये इहि लेखै।
'दास' काऊ कहै कैसी दसा है तो सूधी सुनावती साँवरो देखै ॥२७५॥

मुग्धहाव-लक्षण (दोहा)

जानि-बूझिकै भोरई जहाँ धरति है बाम।
मुग्ध हाव तासों कहैं बिभ्रम ही को धाम ॥ २७६ ॥

यथा (सवैया)

लाहु कहा खए बेंदी दिये औ कहा है तरौना के बाँह गड़ाए।
कंकन पीठि हिये ससि रेख, की बात बनै बलि मोहिं बनाए।
'दास' कहा गुन ओठ में अंजन भाल में जावक-लीक लगाए।
कान्ह सुभाव ही पूछति हौं मैं कहा फल नैननि पान खवाए ॥२७७॥

हेलाहाव-लक्षण (दोहा)

हावन मैं जहँ होत है निपटै प्रेम-प्रकास।
तासों हेला कहत हैं सकल सुकबिजन 'दास' ॥ २७८ ॥
एक हाव मैं मिलत जहँ हाव अनेकनि फेरि।
समुझि लेहिंगे सुमति यह लीला हावैं हेरि ॥ २७९॥

---

[२७४] आस०—न सासु (सर०, लीथो)। चकी—चकी (भार०); चकी (लीथो)।
[२७५] जकी०—जु कैसी (लीथो, भार०)। इहि—बिन (लीथो)।
[२७६] को—के (भार०)
[२७७] गड़—बढ़ी (भार०)। बेंद—बेद (लीथो, भार०)। ससि—सल (लीथो)।
[२७९] फेरि—केरि (भार०)।

यथा (कवित्त)

पी को पहिराव प्यारी पहिरे सुभाव पिय-
भाव ह्वै गई है सुधि आपनी न आवती ।
'दास' हरि आइ त्यों ही सामुहें निहारें खरे
रीति मनभावती की देखि मन भावती ।
आपनोइ आलै मुकुर लै उनमानि कै
गापालै आपनीयै प्रतिबिंब टहरावती ।
ल्याउ ल्याउ ल्याउ ल्याउ रूपरस प्याउ प्याउ
राधे राधे कान्ह ही लौं ललितै सुनावती ॥२८०॥

इति संयोग शृंगार

अथ वियोग शृंगार (दोहा)

बिन मिलाप संताप अति सो वियोग सृंगार ।
तपन हाव हू तेहि कहैं पंडित बुद्धिउदार ॥ २८१ ॥
ताके चारि विभाव हैं इक पूरवानुराग ।
विरह कहत मानहिं लहत पुनि प्रवास बड़भाग ॥ २८२ ॥
अनुरागी विरही बहुरि मानी प्रोपित मानि ।
चहूँ वियोग बिथानि तें चारो नायक जानि ॥ २८३ ॥

पूर्वानुराग

सो पूरवानुराग जहँ बढ़ै मिले बिन प्रीति ।
आलंबन ताको गनै सज्जन दरसन-रीति ॥ २८४ ॥
दृष्टि श्रुतौ द्वै भाँति के दरसन जानौ मित्र ।
दृष्टि दरस परतच्छ सपन छाया माया चित्र ॥ २८५ ॥

---

[२८०] रीति–राति (लीथो, भार०) । लै०–हेरै उनमानि गोपालै (सर०) ।
[२८१] तपन–तवन (भार०) ।
[२८२] लहत–मिलत (लीथो, भार०) ।
[२८३] बिथानि–बिथा चितें (सर०) ।
[२८४] मिले–मिलहि (सर०) ।
[२८५] परतच्छ०–परतछ ही छाया (लीथो) ।

प्रत्यच्छदर्शन, यथा (कवित्त)

आली दौरि सरस दरस लेहि लैरी
इंदु-बदनी अदा में नंदनंद भूमिथल में।
देखा-देखी होतहीं सकुच छूटी दुहुँन की
दोऊ दुहूँ हाथनि बिकाने एक पल में।
दुहूँ हिय 'दास' खरी अरी मैनसर-गाँमी
परी दि्ढ़ प्रेमफाँसी दुहुँन के गल में।
राधे-नैन पैरत गोबिंद-तन-पानिप मैं
पैरत गोबिंद-नैन राधे-रूप-जल में ॥२८६॥

स्वप्नदर्शन, यथा (सवैया)

मोहन आयो इहाँ सपने मुसुकात औ खात बिनोद सौं बीरो।
बैठी हुती परजंक में हौंहूँ उठी मिलिबे कहँ कै मन धीरो।
ऐसे में 'दास' निसासिनि दासी जगायो डोलाइ कैवार-जँजीरो।
झूठो भयो मिलिबो बृजनाथ को एरी गयो गिरि हाथ को हीरो ॥२८७॥

छायादर्शन, यथा

आज सखारहीं नंदकुमार हुते उन न्हात कलिंदजा माँही।
ऊपर आइ तूँ झाँकि उतै कछु जाइ परी जल में परछाँहीं।
तातें हूँ मोहित श्रीमनमोहन 'दास' दसा बरनी मोहिं पाँहीं।
जानति हौं बिन तोहि मिले बृजजीवन को अब जीवन नाँही ॥२८८॥

मायादर्शन, यथा

कालि जु तेरी अदा की दरी में खरी हुती एक प्रदीप-सिखा री।
मैं कह्यो मोहन राधे बदै हरि हेरि रहे पगि प्रेमनि भारी।
तातें तो 'दासजू' बारहीं बार सराहत तोहि निसा गई सारी।
या छबि चाहि कहा धौं करैंगे महासुख-पुंजनि कुंजबिहारी ॥२८९॥

---

[२८६] सरस-दरस (भार०)।
[२८८] झाँकि-छाँही (भार०); गरि (लीथो)।

चित्रदर्शन, यथा

कौनि सी औनि को है अवतंस कियौ केहि वंस कृतारथ काको।
नाम छ्वै पावन जन्म भए किन पॉतिन के अधरा अधरा को।
'दास' दै वेगि वताइ अली अब मो तन प्रान-निदान है याको।
सोहै कहा वह रूप उजागर मोहै हियो यह कागर जाको ॥२६०॥

श्रुतिदर्शन (दोहा)

गुनन सुने पत्री मिले जब तब सुमिरन ध्यान।
दृष्टिदरस विन होत है श्रुतिदरसन यों जान ॥ २६१ ॥

यथा (कबित्त)

जब जब रावरो बखान करै कोऊ
तब तब छबि-ध्यान कै लखोई उनमानते।
आनै पतिया न पतियान की प्रवीनताई
बीन-सुर लीन ह्वै सुरनि उर आनते।
चंद अरविंदनि मलिंदनि सों 'दास' मुख
नैन कच कांति से सुने ही नेह ठानते।
तन मन प्रानति वर्सायै सी रहति हौ
कहति हौ कि कान्ह मोहि कैसे पहिचानते ॥२६२॥

विरह-लक्षण (दोहा)

मिलन होत कबहुँक छिनक बिछुरन होत सदाहि।
तिहि अंतर के दुखन कौं विरह गुनौ मन माहि ॥ २६३ ॥

यथा (कबित्त)

जब तैं मिलाप करि केलि के कलाप करि
आनँद-अलाप करि आए रसलीन जू।
तब तैं तौ दूनो तन होत छिन छिन छीन
पूनो की कला ज्यों दिन दिन होति दीन जू।

---

[२६०] छ्वै-है (भार०)। मो तन-मोनन (वही)। वह-वइ (वही)।
[२६२] रहति०-रहति तुम कहति हौ कान्ह (सर०)।
[२६३] कबहुँक-कबहूँ (लीथो, भार०)।

'दासजू' सतावन अतनु अति लाग्यो अब
ल्यावन-जतन याकी तुमहीं अधीन जू।
ऐसोई जौ हिरदे के निरदै निनारे ही तौ
काहे कौं सिधारे उत प्यारे परबीन जू ॥२८४॥

मानवियोग लक्षण (दोहा)

जहँ इरषा अपराध तें पिय तिय ठानै मान।
बढ़ै वियोग दसा दुरुह मानविरह सो जान ॥ २८५ ॥

यथा (कवित्त)

नींद भूख प्यास उन्हैं व्यापत न तापसी लौं
ताप सी चढ़त तन चंदन लगाए तें।
अति ही अचेत होत चैनहू की चाँदनी में
चंद्रक ग्वाए तें गुलाब-जल न्हाए तें।
'दास' भो जगतप्रान प्रान को वधिक औ
कृसानु तें अधिक भए सुमन बिछाए तें।
नेह के लगाए उन एते कछु पाए तेरो
पाइबो न जान्यो अरु भौंहनि चढ़ाए तें ॥२८६॥

प्रवासवियोग (दोहा)

पिय बिदेस प्यारी सदन दुस्सह दुखद प्रवास।
पत्री संदेसनि सखी दुहूँ दिसि करै प्रकास ॥ २८७ ॥

प्रोषित नायक, यथा (कवित्त)

चंद चढ़ि देखै चारु आनन प्रवीन गति
लीन होत माते गजराजनि कौं टिलि टिलि।

---

[२८४] केलि०—वेलिन (भार०)। हिरदे०—हिरदे पो निरदै बिनारो (वही)।
[२८५] जहँ०—इरषा दया प्रभाव (लीथो)। दसा०—दसहूँ दसह (भार०); दसहु दिसह (लीथो)।
[२८६] चंदक०—चंद्रकन न्हाए (भार०)। उन०—उन सो तें (वही)।
[२८७] दुस्सह०—दुसह दुखद परवास (सर०)।

धारिधर धारनि तें धारनि पै ह्वै रहे
पयोधरनि छ्वै रहे पहारनि कौं पिलि पिलि।
दई निरदई 'दास' दीनो है विदेस तऊ
करौं न अँदेस तुव ध्यान ही सौं हिलि हिलि।
एक दुख तेरे हौं दुखारी नत प्रानप्यारी
मेरो मन तोसों नित आवत है मिलि मिलि ॥२९८॥

पुनः

लहलह लता डहडह तरु-डारें गहगह
भयो गगन कै आयो कौन धरिहै।
चहचह चिरीधुनि कहकह केकिन की
घहघह घनसोर सुनतै अररिहै।
'दास' पहपह ही पवन डोलि महमह
रहरह यहई सुनावत दवरि है।
सहसह समर की वहवह चोजु भई
नहँ तहँ तिय प्रान लेने की खबरि है ॥२९९॥

दशा-भेद (दोहा)

दरसन सकल प्रकार पुनि इनै तिहुँन मैं मानि।
चहूँ भेद में 'दास' पुनि दसौ दसा पहिचानि ॥ ३०० ॥
लालस चिंता गुनकथन स्मृति उद्वेग प्रलाप।
उन्मादहि व्याधिहि गनौ जडता मरन सँताप ॥ ३०१ ॥

लालसा दशा

नैन बैन मन मिलि रह्यो चाह्यो मिलन सरीर।
कथन-प्रेम लालस दसा उर अभिलाष गभीर ॥ ३०२ ॥

२९८] देखै-देखौं (लीथो भार०)। न अँदेस-ना अँदेसो (भार०)। तेरे०-तेरो है (वही)।
[२९९] लता०-डहडह तरु डारि गहगह भयो है गगनु कैसो आयो (लीथो)। गगन०-गजन कै आया (भार०)। पहपह-यहयह (वही)। रह०-हहर (लीथो)।
[३०१] लालस-लालच (सर०)।
[३०२] रह्यो-रहे (भार०)। अभिलाप-भमि लाप (सर०)।

'दासजू' सतावन अतनु अति लाग्यो अन
ब्यावन-जतन याकी तुमहीं अधीन जू।
ऐसोई जौ हिरदै के निरदै निनारे हौ तौ
काहे कौं सिधारे इत प्यारे परवीन जू ॥२६४॥

माननियोग-लक्षण (दोहा)

जहँ इरषा अपराध तें पिय तिय ठानै मान ।
बढ़ै नियोग दसा दुरह माननिरह सो जान ॥ २६५ ॥

यथा (कवित्त)

नींद भूख प्यास उन्हें ब्यापत न तापसी लौं
ताप सी चढ़त तन चंदन लगाए तें ।
अति ही अचेत होत चैतहू की चाँदनी मैं
चंद्रक खवाए तें गुलाब-जल न्हाए तें ।
'दास' भो जगतप्रान प्रान को वधिक औ
कृसान तें अधिक भए सुमन बिछाए तें ।
नेह के लगाए उन एतो कछु पाए तेरो
पाइगो न जान्यो अब भौंहनि चढ़ाए तें ॥२६६॥

प्रवासवियोग (दोहा)

पिय बिदेस प्यारी सदन दुस्सह दुसह प्रवास ।
पत्री संदेसनि सखी दुहूँ दिसि करै प्रकास ॥ २६७ ॥

प्रोषित नायक, यथा (कवित्त)

चंद चढ़ि देखै चारु आनन प्रबीन गति
लीन होत माते गजराजनि कौं ठिलि ठिलि ।

---

[२६४] केलि०—केलिन (भार०) । हिरदै०—हिरदै पो निरदै विनारो (वही) ।
[२६५] जहँ०—इरषा दया प्रमाख (लीथो) । दसा०—दसहूँ दसह (भार०); दसहु दिसह (लीथो) ।
[२६६] चंद्रक०—चंद्रकन न्हाए (भार०) । उन०—उन सों तें (वही) ।
[२६७] दुस्सह०—दुसह दुरव परवास (भार०) ।

प्रलाप दशा (दोहा)

सखिजन सों कै जड़नि सों तन मन भर्‍यो सँताप।
मोह बैन बकिबो करै ताकों कहत प्रलाप ॥ ३१६ ॥

यथा (सवैया)

तिहारे बियोग तें द्योस बिभावरी बावरी सी भई डावरी डोलै।
रसाल के बौरनि भौंरनि बूझती 'दास' कहाँ तज्यो नागर नोलै।
खरी खरी द्वार हरी हरी डार चितै चरराती घरी घरी होलै।
अरी अरी धीर न री न री धीर मरी मरी पीर धरी घरी बोलै ॥३१७॥

पुनः

चंदन पंक लगाइकै अंग जगावति आगि सखी बरजोरै।
तापर 'दास' सुबासन डारिकै देति है बारि बयारि झकोरै।
पापी पपीहा न जीहा थकै तुव पी पी पुकार करै उठि भोरै।
देत कहा है दहे पर दाहु गई करि जाहु दई के निहोरै ॥३१८॥

पुनः

जाति में होति सुजाति कुजातिन कानिनि फोरि करौ अधसाँसी।
केवल कान्ह की आस जियौं जग 'दास' करौ किन कोटिन हाँसी।
नारि कुलीन कुलीननि लै रमैं में उनमें चहौं एक न आँसी।
गोकुलनाथ के हाथ बिकानी हौं सो कुलहीन तो हौं कुलनासी ॥३१९॥

उन्माद दशा (दोहा)

सो उन्माद दसा दुसह धरै बौरई-साज।
रोइ रोज बिनवत उठै करै मोहमै काज ॥ ३२० ॥

यथा (सवैया)

क्यौं चलि फेरि पचावौ न क्योंहूँ कहा बलि बैठे बिचारौ बिचारनि।
धीर न कोऊ धरै बलबीर चढ्यो ब्रजनीर पहार पगारनि।

---

[३१६] जड़नि–डटनि (सर०)।
[३१७] तें–सें (भार०)। मरी०–भरी भरी (वही)।
[३१८] फरै–फहै (सर०)। कहा०–कहै हा (भार०)।
[३१९] सुजाति०–सुजानि कुजाननि (लीथो)। लैं–सै (भार०)। सो–वे (वही)।

पुनः

राधिका आधिक नैननि मूँदि हिये ही हिये हरि की छवि हेरति।
मोरपखा मुरली घनमाल पितंबर पावँरी मैं मनु फेरति।
गाइ चराइ हिये ही हिये लखि साँझ समै घरघाइ कौं घेरति।
'दास' दसा निज भूले प्रकास हरे ही हरे ही हिय। हियो टेरति ॥३१२॥

उद्वेग दशा (दोहा)

जहाँ दुखदरूपी, लगै सुखद जु वस्तु अनेग।
रहियो कहुँ न सोहात सो दुसह दसा उद्वेग ॥ ३१३ ॥

यथा (कवित्त)

एरी बिन प्रीतम प्रकृति मेरी औरै भई
तातें अनुमानौं अब जीवन अलप है।
काल की कुमारी सी सहेली हितकारी लगै
गत रसवारी मानो गारी की जलप है।
बिष से बसन लागैं आगि से असन जारैं
जोन्ह को जसन कला मानहु कलप है।
दसौं दिसि दावा सी पजावा सी पवरि भई
आवा सी अजिर-औनि तावा सी तलप है ॥३१४॥

पुनः (सवैया)

याहि खरायो खराद चढ़ाइ बिरंचि बिचारि कछू मलिनाई।
चूर वहै बगरयो चहुँ ओर तरैयन की जु लसै छवि छाई।
'दास' न ये जुगुनू मग फैले वहै रज सी इतहूँ भरि आई।
चाँदन है कियौं घाम अनोखो सखी न अली यह है सनिताई ॥३१५॥

---

[३१२] चराइ–चजाइ (भार०) चराइ (लीथो)। घरघाइ०–घर घाइनि (लीथो)। हियो०–हरा हरी (वही)।
[३१३] दुखद–दुख (लीथो, भार०)।
[३१४] अनुमानौं–अनुमान्यौ (लीथो)। लागैं–जारैं (भार०)। जारैं–लागैं (वही)। कला–काल (वही)।
[३१५] वहै रज०–कै चूर हरै दै (लीथो)। भरि–भरि (सर०)। चाँदन०–किये घाम अनोखा सखी न अली जनु आनि परे (लीथो)।

विकल्पचिंता, यथा (सवैया)

कोठनि कोठनि बीच फिर्‌यो यह भेष बनाइ बुलावनवारो।
ऊपरी बात सुनाइकै आपनी लै गयो भीतरी भेद हमारो।
'दास' लियो मन ओटि अगोटि उपाइ मनोज महीप जुआरो।
टूटे न क्यौं सखी लाज-गढ़ी पहिले ही गयो सुधि लै हरि कारो॥३०७॥

गुणकथन (दोहा)

'दास' दसा गुनकथन में सुमिरि सुमिरि तिय पीय।
अँग अंगनि बरनै सहित रसरंगनि रमनीय॥ ३०८॥

यथा (सवैया)

चंद सी आनन की चटकीलता कुंदन सी तन की छबि न्यारी।
मंजु मनोहर बार की बानक जागे कि वै अँखियाँ रतनारी।
होत बिदा गहि कंठ लगावत बाहु बिसाल प्रभा अधिकारी।
वे सुधि श्रीमनमोहन की मन आनत ही करैं बेसुधि भारी॥३०९॥

स्मृति दशा (दोहा)

जहँ इकाग्रचित करि धरै मनभावन को ध्यान।
सुमृति दसा तेहि कहत हैं लखि लखि बुद्धिनिधान॥ ३१०॥

यथा (सवैया)

स्याम सुभाय मैं नेहनिकाय मैं आपहू ह्वै गए राधिका जैसी।
राधे करैं अवराधे जु माधौमै प्रेमप्रतीति भई तन तैसी।
ध्यान ही ध्यान तें ऐसो भयो अब कोऊ कुतर्क करै यह कैसी।
जानत हौं इन्हैं 'दास' मिल्यो कहूँ मंत्र महा परपिंड-प्रवैसी॥३११॥

---

[३०७] काहू-काहे (लीथो)। मन-है मै (लीथो)। ओटि-यैं टैटि (भार०), पोटि (सर०)। जुआरो-जु मारो (वही)। टूटै-छूटै (वही); फूटै (लीथो)।
[३०९] लगावत-लगावहु (लीथो), लगावन (भार०)।
[३११] राधे०-राधो करै अव राधो (सर०)।

यथा (सवैया)

वारहो मास निरास रहै ज्यों चहै वहै चातिक स्वाति के बुंदहि ।
'दास' ज्यों कंज के भानु को काम विचारै न घाम के तेज के तुंदहि ।
ज्यों जल ही में जियें मपियों लखियाँ जड संगिन के दुखदुंदहि ।
त्यों तरसाइ मरें सखियाँ अँखियाँ चहैं मोहनलाल मुकुंदहि ॥२०३॥

चिंतादशा-लक्षण (दोहा)

मनसूथनि तें मिलन को जहँ संकल्प विकल्प ।
ताहि कहैं चिंता दसा जिनकी बुद्धि न अल्प ॥ २०४ ॥

यथा (सवैया)

ए विधि जौ विरहागि के बान सों मारत हौ तौ इहै वर माँगौं ।
जौ पसु होउँ तऊ मरि कैसहूँ पावँरी ह्वै हरि के पग लागौं ।
'दास' परेरुन मैं करौ मोर जु नंदकिसोर-प्रभा अनुरागौं ।
भूपन कीजिये तौ वनमालहि जातें गोपालहि के हिय लागौं ॥२०५॥

(कवित्त)

काहू कौं न देती इन बातन को अंत लै
इकंत कंत मानिकै अनंत सुख ठानती ।
ज्यों को त्यों वनाइ फेरि हेरि इत उत
हियराहि में दुराइ गृहकाजनि वितानती ।
'दासजू' सकल भाँति होती सुचिताई फेरि
ऐसी दुचिताई मन भूलिहूँ न आनती ।
चित्र के अनूप वृजभूप के सरूप कौं
जौ क्यौंहूँ आपरूप वृजभूप करि मानती ॥२०६॥

---

[२०३] तुंदहि–तुंगहि (भार०) । लखियाँ०–लखि आवउ संगति के दुख बूंदहि (वहीं), लखि आवउ संगनि के दुखदुंदहि (लीथो) ।
[२०४] न अल्प–अनल्प (भार०) ।
[२०५] वर–भर (भार०) ।

ग्रामता पाइ रमा ह्वै गई परजंक कहा करै राधिका रानी।
कौल में 'दास' निवास कियै है तलास कियेहूँ न पावत प्रानी ॥३२५॥

जड़ता दशा (दोहा)

जड़ता में सब आचरन भूलि जात अनयास।
तिमि निद्रा बोलनि हँसनि भूख प्यास रसत्रास ॥ ३२६ ॥

यथा (सवैया)

बात कहै न सुनै कछु काहु सों वा छिन तें भई वैसियै सूरति।
साठौ घरी परजंक परी सु निमेष भरी अँखियानि सों घूरति।
भूख न प्यास न काहू की त्रास न पास प्रतीन सों 'दास' कछू रति।
कौने मुहूरत सोने कही तुम कौने की है यह सोने की मूरति ॥३२७॥

मरण दशा (दोहा)

मरन दसा सब भाँति सों ह्वै निरास मरि जाइ।
जीवनमृत कै बरनिये तहँ रसभंग बराइ ॥ ३२८ ॥

यथा (सवैया)

नारी न हाथ रही उहि नारी के मारनी मोहि मनोज महा की।
जीवन-ढंग कहा तें रह्यो परजंक में अंग रही मिलि जाकी।
बात को बोलिबो गात को डोलिबो हेरे को 'दास' उसासउ थाकी।
सीरी ह्वै आई सताई सिधाई कहो मरिबे में कहा रह्यो बाकी ॥३२९॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृतः शृंगारनिर्णयः समाप्तः।

---

[३२६] तिमि–तम (भार०)।
[३२७] छिन–दिन (लीथो, भार०)। निमेष–निमेष (सर०)।
सोने कही–लोने कही (भार०)।
[३२८] मृत–मत (सर०)।
[३२९] अग–आपे (भार०)। सीरी–भोरी (लीथो)।

'दासजू' राख्यो बड़े बरषा जिहि छाँह में गोकुल गाइ गुआरनि।
छैलजू सैल सो बूड्यो चहै अब भावती को अँसुआन की धारनि ॥३२१॥

पुनः (कवित्त)

तो बिन बिहारी मैं निहारी गति औरई मैं
बौरई के बृंदनि समेटत फिरत है।
दाड़िम के फूलन में 'दास' दारयो दानो भरि
चूमि मधु रसनि लपेटत फिरत है।
खंजनि चकोरनि परेवा पिक मोरनि
मराल सुक भौंरनि समेटत फिरत हैं।
कासमीर हारनि कों सोनजुही भारनि कों
चंपक की डारनि कों भेटत फिरत है ॥३२२॥

व्याधिदशा (दोहा)

ताप दुबरई स्वास अति व्याधि दसा मैं लेखि।
आहि आहि बकिबो करै त्राहि त्राहि सब देखि ॥ ३२३ ॥

यथा (कवित्त)

एरे निरदई दई दरस तौ दे रे वह
ऐसी भई तेरे या बिरह-ज्वाल जागिकै।
'दास' आस पास पुर नगर के बासी उत
माह हू को जानति निदाहै रह्यो लागिकै।
लै लै सीरे जतन भिगाए तन ईठि कोऊ
नीठि ढिग जावै तऊ आवै फिरि भागिकै।
सीसी मैं गुलाब-जल सीसी मैं मगहि सूखै
सीसीयौ पघिलि परै अंचल सों दागिकै ॥३२४॥

जमता, यथा (सवैया)

कोऊ कहै करहाट के तंत में कोऊ परागन में उनमानी।
ढूँढ़हु री मकरंद के बुंद में 'दास' कहैं जलजा-गुन ख्यानी।

[३२१] की-के (भार०)। की-के (वही)।
[३२२] बृंदनि-बुदनि (सर०)। समेटत-अमेटत (भार०)। दानो-दोनों (लीथो, भार०)।
[३२५] करहाट०-करहाटक (भार०)। रमा-रमी (वही)।

छामता पाइ रमा है गई परजंक कहा करै राधिका रानी।
कौल में 'दास' निवास किये है तलास कियेहूँ न पावत प्रानी ॥३२५॥

जड़ता दशा (दोहा)

जड़ता में सब आचरन भूलि जात अनयास।
तिमि निद्रा बोलनि हँसनि भूख प्यास रसत्रास ॥ ३२६ ॥

यथा (सवैया)

बात कहै न सुनै कछु काहू सों वा छिन तें भई चैसिये सूरति।
साठौ घरी परजंक परी सु निमेष भरी अँखियानि सों घूरति।
भूख न प्यास न काहू की त्रास न पास व्रतीन सों 'दास' कछू रति।
कौने मुहूरत सोने कही तुम कौने की है यह सोने की मूरति ॥३२७॥

मरण दशा (दोहा)

मरन दसा सब भाँति सों ह्वै निरास मरि जाइ।
जीवनमृत कै बरनिये तहँ रसभंग बराइ ॥ ३२८ ॥

यथा (सवैया)

नारी न हाथ रही उहि नारी के मारनी मोहि मनोज महा की।
जीवन-ढंग कहा तें रह्यो परजंक में अंग रही मिलि जाकी।
बात को बोलिबो गात को डोलिबो हेरै को 'दास' उसासउ थाकी।
सीरी ह्वै आई तताई सिधाई कहो मरिबे में कहा रह्यो बाकी ॥३२९॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृतः शृंगारनिर्णयः समाप्तः।

---

[३२६] तिमि—तम (भार०)।
[३२७] छिन—दिन (लीथो, भार०)। निमेष—निमेष (सर०)।
सोने कही—लोने कही (भार०)।
[३२८] मृत—मत (सर०)।
[३२९] अंग—आधे (भार०)। सीरी—भोरी (लीथो)।

छंदार्णव

छंदार्णव

१

(त्रिभंगी)

करि-बदन-बिमंडित ओज-अखंडित पूरन पंडित ज्ञानपरं।
गिरि-नंदिनि-नंदन असुर-निकंदन सुर-उर-चंदन कीर्तिकरं।
भूपनमंगलक्षन बीर-बिचक्षन जन-प्रन-रक्षन पासधरं।
जय जय गन-नायक खल-गन-घायक 'दास'-सहायक बिघनहरं ॥१॥

(दंडक)

एक रद है न सुभ्र साखा बढ़ि आई
लंबोदर में बिबेकतरु जो है सुभ्र बेस को।
सुंडादंड के तव ध्यारु है उदंड यह
राखत न लेस अघ बिघन असेष को।
मद कहौ भूलि न भरत सुधासार यह
ध्यानहीं तें ही को दृढ़ हरन कलेस को।
'दास' गृह-बिजन बिचारो तिहूँ तापनि को
दूरि को करनवारो करन गनेस को ॥२॥

(छप्पय)

श्रीबिनतासुव देखि परम पटुता जिन्ह कीन्हेउ।
छंदभेद प्रस्तार बरनि बातनि मन लीन्हेउ।
नष्टोद्दिष्टनि आदि रीति बहु बिधि जिन भाख्यौ।
जैसो चलत जनाइ प्रथम बाचापन राख्यौ।
जो छंद भुजंगप्रयात कहि जात भयो जहँ थल अभय।
तिहि पिंगल नागनरेस की सदा जयति जय जयति जय ॥३॥

---

[२] तें ही–तेहि (नवल २, वेंक०)। को करन–करन को (नवल०, वेंक०)।

(दोहा)

जिन प्रगट्यो जग में विविध छंदनाम अभिराम।
ताहि निप्नुरथ कों करों विवि कर जोरि प्रनाम ॥४॥

(कवित्त)

अभिलाषा करों सदा ऐमनि का होय नित्य
सब ठौर दिन सब याही सेवा चरचानि।
लोभालई नीचे ह्वान हलाहल ही को अंनु
अंत है क्रिया पाताल निंदा रस ही को ग्लानि।
सेनापति देवीकर सोमागन वी को भूप
पन्ना मोती हीरा हेम सौदा हाम ही को जानि।
हीअ पर देव पर बढ़े जस रटें नाउँ खगासन
नगधर सीतानाथ कौलपानि ॥५॥

(दोहा)

या कवित्त अंतरबरन, लै तुकंत द्वै छंडि।
'दास' नाम कुल ग्राम कहि, रामभगतिरस मंडि ॥६॥
प्राकृत भाषा संसकृत, लखि बहु छंदोमंथ।
'दास' कियो छंदारनव, भाषा रचि सुभ पंथ ॥७॥

(विजया)

'दास' गुरु लघु णो ढ ड ठै ट गनाख्यनि भेदनि उचरि जानै।
जानै गनागन को फल मत्त बरन्न पथारनि कों करि जानै।
नष्ट उदिष्ट 'रु मेरु पताक निमर्कटि सूचिन कों भरि जानै।
वृत्ति औ जाति समुक्तक दंडक छंदमहोदधि सो तरि जानै ॥८॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मंगलाचरणवर्णनं

नाम प्रथमस्तरंगः ॥१॥

---

[६] राम—नाम (नवल०, वेंक०)।
[८] णो०—णो मनि सत्त्व विधाननि (सर०), णो ट ड ट ट गनाप्दनि (सीपो); णोड ढढ ठग नाप्पनि (नवल १), णो ट ढढ ठग नाप्पनि (नवल २, वेंक०)।

२

अथ गुरु-लघु-विचार (दंडक)

आ ई ऊ ए आदि स्वर बरन मिलेहूँ एहूँ
बिंदुजुक्त औ सँजुक्त पर गुरु बंक ऑंचि।
अ इ उ क कि कु ऐसे लघु सूधे बिधि कीन्हो
कहति अक्षरनि जो रसना द्रुतहि नाँचि।
र ह ल यो संजुक्त परहु बरनन्ह पर्‍यो
काहिह ज्यौं तो लहु लहै गुरु कौं गुरुवै वाँचि।
एकमत्त लहु भनि गुरु कौं दुमत्त गनि
याही में उदाहरन हेरि लै हृदय जाँचि ॥१॥

प्राकृते, यथा

अरे रे वाहहि कान्ह नाव (छोटि) डगमग कुगति न देहि।
तैं इथ नै संतारि दै जो चाहहि सो लेहि ॥२॥

(दोहा)

कहुँ कहुँ सुकनि तुकंत मैं, लघु कौं गुरु गनि लेत।
गुरुहू कौं लघु गनत हैं, समुझत सुमति सचेत ॥३॥

लघु को गुरु, यथा संस्कृते (श्लोक)

अद्यापि नोज्झति हरः किल कालकूटं
कूर्मो बिभर्त्ति धरणीं खलु पृष्ठकेन।
अम्भोनिधिर्वहति दुःसहवाडवाग्नि-
मंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति ॥४॥

तिलक—छंद बसततिलकु है याके तुकत में गुरु चाहिये लघु है सो गुरु गनिबी।

---

[१] आ०-ई ऊ आ ए (सर०), ई ऊ आ ये (लीथो, नवल०, वेंक०)। द्रुतहि-दुतहि (लीथो, नवल १), बुतहि (नवल २, वेंक०)। परहु०-बरनन्ह परैन मानि नियै गुरु लघु लघु गुरु कों (लीथो, नवल०, वेंक०)। हृदय-हृदय में (नवल २, वेंक०)।

[४] लघु को गुरु-गुरु को लघु (लीथो, नवल० वेंक०)। तुकत-तुक (वही)। है सो-है (वही)। गनिबी-गनिबो (वही)।

गुरु को लघु, यथा देव को (कवित्त)

पीछे पंखा चौंरवारी ज्यौं की त्यौं सुगंधवारी
ठाढ़ी धाएँ धाएँ घने फूलनि के हार गहैं।
दाहिने अतर और अँमर तमोर लीन्हे
सामुहे लपेटे लाज भोजन के थार गहैं।
नित के नियम हितू हित के बिसारे 'देव'
चित के बिसारे बिसराए सब धार गहैं।
संपा घन बीच ऐसी चंपा बन बीच फूली
डारि सी कुँवरि कुँभिलाति फूली डार गहैं॥ ५॥

तिलक—छंद रूपघनाक्षरी है, याके तुकंत में गुरु है सो लघु चाहिये लघु ही गनिबी।

लघुनाम (दोहा)

संख मेरु. काहल. कुसुम, करतल दंड असेपु।
सब्दगंध धर सर परस, नाम ल लहु को रेखु॥ ६॥

गुरुनाम

किंकिनि नूपुर हार फनि, कनक चौंर ताटंक।
केईरो कुंडल चलय, गो मानस गुरु बंक॥ ७॥

द्विकलनाम

गगन दुकल द्वै भेद सों, प्रथम नाम गुरु जानि।
निज प्रिय सुप्रिय परमप्रिय, पिय धिय लघुद्वि बखानि॥८॥

---

[५] गुरु को लघु–लघु को गुरु (लीथो, नवल०, वेंक०)। वार–बारि (वही)। गुरु है०–लघु चाहिए गुरु है सो लघु ही गनिबो (वही)।

[६] कुसुम–कुसुम (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[७] केईरो–कोऊरो (नवल०, वेंक०)।

[८] गगन–नगन (सर०, लीथो, नवल १, वेंक०)। द्वै–है (लीथो, नवल०, वेंक०)। सों–सो (लीथो, नवल०, वेंक०)। सुप्रिय–सप्रिय (लीथो०, नवल १, वेंक०)। पिय–प्रिय (सर०)।

आदिलघु त्रिकलनाम ।ऽ

तोमर तुंमर पत्त सर, धुज्ज चिरु चिह्न चिराल ।
पवन वलय पट आदि लघु, त्रिकल नूत की माल ॥ ९ ॥

आदिगुरु त्रिकलनाम ऽ।

तूर समुद निर्वान कर, तालो सुरपति नंद ।
नाम आदिगुरु त्रिकल को, पटह ताल अरु चंद ॥१०॥

[त्रिलघु] त्रिकलनाम ।।।

नारी रसकुल भामिनी, डंडव भास प्रमान ।
नाम त्रिलघु को जानि पुनि, त्रिकलहि ढगन बखान ॥११॥

द्विगुरु [चौकल] नाम ऽऽ

सुमति रसिक रसनाम्र पुनि, कहि मनहरन समान ।
कुंतीपुत्तो सुरवलय, कर्न दोइ गुरु जान ॥१२॥

अंतगुरु चौकलनाम ।।ऽ

कमल रतन कर बाहु भुज, भुजअभरन अभिराम ।
गजअभरन प्रहरन असनि, चकल अंतगुरु नाम ॥१३॥

[मध्यगुरु चौकलनाम] ।ऽ।

भूपति गजपति अस्वपति नायक पौन मुरारि ।
चक्रवती सु पयोधरो, मध्यगुरू कल चारि ॥१४॥

[आदिगुरु चौकलनाम] ऽ।

गंड दहन बलभद्रपद, नूपुर जंघा पाइ ।
तात पितामह आदिगुरु, चौकल नाम सुभाइ ॥१५॥

[सर्वलघु चौकलनाम] ।।।।

विप्र पंचसर परमपद, सिखर चारि लघु जाति ।
ढगन चकल कहि चौकलहि, गजरथ तुरग पदाति ॥१६॥

---

[९] तुंमर–तुंबर (सर०) । धुज–धुन (नवल०, वेंक०) । वलय–वलट (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

[१०] अरु–अत (नवल०, वेंक०) ।

[१२] सुमति–सुनति (नवल०, वेंक०) । पुत्तो–पूतो (लीथो, नवल०); पूता (वेंक०) ।

[१३] कमल०–कमलातन (लीथो०, नवल०, वेंक०) ।

पंचकलनाम ।ऽऽ

सुरनरिंद उडुपति अहित, दंती दंत तलंप।
मेघ गगन गज आदिलघु, पंचकलहि कहि भंप ॥१७॥

ऽ।ऽ

पक्षि बिडाल मृगेंद्र अहि, अमृत जोध लक लक्ष।
बीन गरुड़ कहि मध्यलघु, पंचकलहि परतक्ष ॥१८॥

पंचकल के क्रम तें नाम

इंद्रासन बीरो धनुक, हीरो सेखर फूल।
अहि पाइक गनि क्रमहिं तें, नाम पंचकल तूल ॥१९॥
टगन पकल पँचकलहि कहिं, टगन षटकलहि लेखि।
ताहि छकल के क्रमहिं तें, भेद तेरहो देखि ॥२०॥

षट्कल के नाम प्रतिभेद क्रम ते

हर ससि सूरज सक्र अरु, सेषो अहि कमलाषि।
ब्रह्म किंकिनी वधु ध्रुव, धर्म सालिचर भाषि ॥२१॥

अथ वर्णगण

म न य भ गन सुभ चारि हैं, र स ज त अगनौ चारि।
मनुजकवित के प्रथम तुक, कीजै इन्हैं बिचारि ॥२२॥
म तिगुरु न तिलघु भादि गुरु, यादिलघू सुभ दानि।
महि अहि ससि जल क्रमहि तें, इष्टदेवता जानि ॥२३॥
ज गुरुमध्य रो मध्यलघु, स गुरु अंत त लअंत।
इते असुभ गन रवि अगिनि, पवन व्य देव कहंत ॥२४॥

द्विगणविचार

म न हित य भ जन ज तहि उद, र स रिपु उर अवरेखि।
कवित आदि कुगनहि परें, दुगन बिचारहि देखि ॥२५॥

---

[१९] धनुक-धनुष (नवल २, वेंक०)।
[२२] अगनौ-अगुनो (लीथो०, नवल०, वेंक०)।
[२५] दुगन-द्विगुण (नवल २, वेंक०), दुगुन (लीथो, नवल १)

जन हित अति नीको त कछु, रिपु उदास मिलि मंद ।
रिपु उदास ही जो परै, तौ सब भाँति कुनंद ॥२६॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे गुरुलघुगणागणवर्णनं

नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

३

अथ मात्राप्रस्तार-वर्णन

सप्तकलप्रस्तार (सवैया)

द्वै द्वै कलानि को वंक बनै पहिले उबरे लघु आदि करो जू ।
भेद घटैबे को सीस के आदि गुरू के तरे लघु एक धरो जू ।
और जथा प्रति पंक्ति रचै बचै पीछे गुरू लघु लेखि भरो जू ।
याही बिधान तें सर्ब लघू लगि पूरन मत्तप्रथार थरो जू ॥१॥

प्राकृते, यथा

पढमं गुरू हेट्ठट्ठाणे लहुआ परिठ्ठवेहु ।
अप्प बुद्धि ये सरिसा (सरिसा)पंती उघरिया गुरू लहू देहु ॥२॥

(दोहा)

भयो जानि प्रस्तार को, क्रम तें दीजै अंक ।
संख्या नष्ट उदिष्ट की, कीजै उत्तर निसंक ॥३॥
इतने कल के भेद हैं, कितनो पूँछै कोइ ।
पूर्बजुगल सरि अंक दै, जानै संख्या होइ ॥४॥

---

[२६] कुनंद–कुनत (सर०) ।

[१] वंक–बंध (नवल०, वेंक) । पंक्ति०–देखि लिखो (सर०) ।

[२] पढमं–पटम (लीथो, नवल०, वेंक०) । ठवेहु–ठवहु (सर०) ।

[३] तें–सों (लीथो, नवल०, वेंक०) । उत्तर–उदर (नवल २, वेंक०) ।

पूर्वयुगल अंक (दंडक)

जै कल को भेद कोऊ पूँछै तेती कला कीजै
ताके पर अंक दीजै क्रमहीं तें एक दोइ।
एक दोइ जोरि तीनि लिखि लीजै तीजे पर
तीनि दोइ जोरि आगे पाँच लिखि जिय जोइ।
'दास' पाँच पीछे तीनि जोरि आगे आठ लिखि
याही बिधि लिखे जैये कहाँ लौं बतावै कोइ।
जितनी कला के पर जेतो अंक परै यह
जानि लीजै तेते पर प्रस्तार को अंत होइ ॥५॥

सप्तकलरूपं, यथा

१ २ ३ ५ ८ १३ २१
| | | | | | |

अथ नष्टलक्षणं (दोहा)

इते अंक पर होत है, भेद कहौ किहि रूप।
उतर हेत यहि प्रस्न के, नष्ट रच्यो अहिभूप ॥६॥

मात्रानष्ट की अनुक्रमणी (दंडक)

जै कल मैं भेद पूँछै तेतनीये कला कीजै
तापै लिखि पूरबजुगल अंक लीजिये।
पूछ्यो अंक अंत मैं घटाइ बाकी हाथ राखि
तामैं लिखे अंकनि घटैये रस भीजिये।
जौन यामैं घटै करौ ताके तर आगिली
कला लै गुरु 'दास' बचै यौं ही फेरि कीजिये।

---

[५] पाँच–नैंचि (नवल०, वेंक०), पाँन (लीथो), लैंन (नवल १)। दास–दस (नवल २, वेंक ०)।
[७] पूँछै–पूछ्यौ (सर०); पूंछे (नवल २, वेंक०)। रीति०–रीत्यौ परें येत्यौ (सर०)। ताके०–ताकी जिया दसयो पूँछ्यौ है सो (सर०)। मैं–से (नवल २, वेंक०)। घटतो–घटे सौ (लीथो, नवल०, वेंक०)। रस–रस (नवल०, वेंक०)। रहो–रहे (सर०)।

रीते पर्यो बीते नष्टकर्म बाकी लघु ही है
पूछ्यो जिन तिनकों देखाइ रूप दीजिये ॥७॥

अस्य तिलकं—काहूँ पूँछ्यो सतकल में दसयों रूप कैसो, ताके प्रस्न को अंक दस सो इक्कीस में घस्यो, बाकी रहे इग्यारह, तामें तेरह नहीं घटतो, आठ घस्यो, सो तेरह की तर की कला लैके गुरु भयो, बाकी रहे तीनि, तामें तीनिहीं घस्यो, सो पाँच के तर की कला को लैके गुरु भयो और सब दुहूँ ओर लघु ही रह्यो। (॥ऽऽ।)

अथ मात्राउद्दिष्टलक्षणं (कुंडलिया)

।ऽऽऽ	१
ऽ।ऽऽ	२
।।।ऽऽ	३
ऽऽ।ऽ	४
।।ऽ।ऽ	५
।ऽ।।ऽ	६
ऽ।।।ऽ	७
।।।।।ऽ	८
ऽऽऽ।	९
।।ऽऽ।	१०
।ऽ।ऽ।	११
ऽ।।ऽ।	१२
।।।।ऽ।	१३
।ऽऽ।।	१४
ऽ।ऽ।।	१५
।।।ऽ।।	१६
ऽऽ।।।	१७
।।ऽ।।।	१८
।ऽ।।।।	१९
ऽ।।।।।	२०
।।।।।।।	२१

कहिये केते अंक पर 'दास' रूप यहि साज।
करि उदिष्ट ताको उतर देन कह्यो अहिराज।
देन कह्यो अहिराज पूर्वजुअलंक कलनि पर।
लघु के सीसहि सीस गुरु के ऊपरहूँ तर।
पुनि गुर सिर को अंक जोरिकै ठीकहि गहिये।
अंत अंक सु घटाइ बचै बाकी सो कहिये ॥८॥

१ २ ३ ८ २१
। । ऽ ऽ ।
५ १३

अस्य तिलकं—सत कल में यह रूप लिखि पूँछ्यो जो कौन सो है। ताके पर अंक दियो है गुरु के सिर तीनि औ आठ परयो सो इग्यारह इकईस में घस्यो, बाकी दसयों भेद है।

मात्रामेरुलक्षणं (दोहा)

किते एक गुरुजुक्त हैं, किते हैं ति गुरुजुक्त।
ताको उत्तर मेरु करि, देहु अहीपति उक्त ॥९॥

---

[८] कौन-कैसरो (सर०)।

अनुक्रमणी (चौपाई)

द्वै कोठा दोहरो लिखि लीजै । तातर दोहरो तीन ठवीजै।
तातर दोहरो चारि बनायो । औ जित चाहो तितो बढ़ायो ॥१०॥
कोठनि आदि बिषम जो पैये । एकै एक आँक लिखि जैये।
सम कोठनि की आदि जो परो । द्वै ति चारि यहि क्रम तें भरो ॥११॥
पंति अंत इक इक लिखि आवो । तब रीतन भरिबो चित लावो ।
सिर-अंके तसु सिर पर अंके । जोरि भरहु क्रम तें निरसंके ॥१२॥

षट्‌मात्रामेरु

२	१	१			२
३	२	१			३
४	१	३	१		५
५	३	४	१		८
६	१	६	५	१	१३
७	४	१०	६	१	२१

पहिलो कोठ दुकल की जानै । दुतिय त्रिकल की बात बखानै।
यहि बिधि करै भेद सब जाहिर । चहहु तौ जाहु अंक दै बाहिर ॥१३॥
छठए चारि कोष्ठ जो परै । सप्त कलहि उलटै उद्धरै।
सब लहु एक एक गुरु छ है । दस दुग चारि त्रि गुरुजुत रहै ॥१४॥
सब लहु अंत अंक अहि उक्त । चलि गति बाम कहो गुरुजुक्त।
इहि बिधि करो जिते को चहो । सकल जोरि संख्याहू गहो ॥१५॥

पताकालच्छन (दोहा)

कह्यो जिते गुरुजुक्त तुम, ते हैं किहि किहि ठौर ।
उतर हेत इहि प्रस्न के, रचो पताका और ॥१६॥

पताका की अनुक्रमणी (चौपाई)

जै कल की पताक जिय लायो । खंडमेरु ताको अलगायो ।
ताही संख्या कोठा करिये । नाम पताका पाँती खरिये ॥१७॥

---

[११] तें—तेहि (सर०) ।
[१६] रचो—रचे (नवल २, बेंक) ।
[१७] लायो—ल्यायो (सर०) । अलगायो—अलगावो (वही) ।

(अरिल्ल)

पुरुवजुअल सरि अंक भिन्न लिखि देखिये।
अंत अंक इक अंत कोठ तेहि रेखिये।
तामहि क्रम तें इक इक अंक घटाइये।
या ढिग अध तें दुतिय पंक्ति लिखि जाइये ॥१८॥
तृतीय पंक्ति मैं द्वै द्वै जोरि कमी करो।
चौथि पंक्ति मैं तीनि तीनि चित में धरो।
इन भाँतिन प्रति पंक्ति एक घटि अंक जू।
घटै पताका रूप लिखो निरसंक जू ॥१९॥

(दोहा)

गनना होइ नहीं न क्रम, आयो अंक न आउ।
करि पताक प्रस्तार मे, सब गुरुजुक्त देखाउ ॥२०॥

४		१०	६		१
०	१	३	८	२१	०
	२	५	१३	१	
	४	६	१६	२	
	९	७	१८	३	
		१०	१९	५	
		११	२०	८	
		१२		१३	
		१४		२१	
		१५			
		१७			

।।।ऽऽ ३
।।ऽ।ऽ ५
।ऽ।।ऽ ६
ऽ।।।ऽ ७
।।ऽऽ। १०
।ऽ।ऽ। ११
ऽ।।ऽ। १२
।ऽऽ।। १४
ऽ।ऽ।। १५
ऽऽ।।। १७

द्वै कि तीनि गुरुजुतनि जो, लिखो चहो इक ठौर।
सिखि पताक प्रस्तार बिधि, जानो औरौ और ॥२१॥

(कुंडलिया)

सब लघु सब गुरु लिखि ठयो प्रथम भेद इहि भाँति।
पहिले गुरुतर लघु करहि पुनि करि सरिसै पाँति।
पुनि करि सरिसै पाँति उलटि लघु तर गुरु लिखिकै।
तजि आयो गुरु आदि 'दास' इहि रीतिहि सिखिकै।

---

[१८] पंक्ति-प्रति (लीथो, नवल०, वेंक०)।

इक इक गुरु इहि भाँति आदि दिसि ल्यावहि तब लहु।
जब लगि सब गुरु आदि परैं आगे करि सब लहु ॥२२॥
अस्य तिलकं—सप्त कल में द्वै गुरुयुक्त को प्रस्तार जाकी सख्या पताका के दस कोठे मेँ है।

(दोहा)
पताकाहि कों देखिकै, यामेँ दीजै अंक।
उद्दिष्टो प्रस्तार मेँ कीजै सही निसंक ॥२३॥
इति प्रस्तार

अथ मर्कटीलक्षणं (गीतिका)

छह पंक्ति कोठनि खैंचिकै प्रतिपंक्ति सिर चितु दीजिये।
तहँ वृत्तिभेद 'रु मात्रवर्न लहू गुरू लिखि लीजिये।
तिन आदि कोठनि एक एकनि ठानि गुरु ढिग सून है।
पुनि वृत्ति कोठ दुआदि गनती भरिय घटिय न ऊन है ॥२४॥
लखि भेद पंक्ति निचारि भरिये पुरुबजुअलै अंक ही।
करि वृत्ति भेदहि गुनन पुरवहु मात्रपंक्ति निसंक ही।
लघु पंक्ति एक जु अंक सो गुरुपंक्ति मेँ लिखि लेहु जू।
तेहि मात्रपंक्ति घटाइ बाकी बरन मेँ धरि देहु जू ॥२५॥
सोइ वर्न पंक्तिहु मेँ घटै लघुपंक्ति मेँ लिखि आनिये।
तेहि आनिकै गुरुपंक्ति मेँ घटना वहै फिरि ठानिये।
प्रस्तार प्रति जो भेदमात्रा लहू गुरु की ठीक है।
तेहि वृत्ति कोठनि संग मर्कटजाल कहत अलीक है ॥२६॥

वृत्ति	१	२	३	४	५	६
भेद	१	२	३	५	८	१३
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८
वर्ण	१	३	७	१५	३०	५८
लघु	१	२	५	१०	२०	३८
गुरु	०	१	२	५	१०	२०

---

[२२] ठ्यो—ठ्यै (सर०)। करहि—लिखहि (वही)।
[२४] छह—यह (भारत०, वेंक०) सिर—को (वही)। लहू—सो लघु (वही)। भरिय—भरी (वही)।

मर्कटीजाल (दोहा)

किते भेद लघु अंत हैं, किते भेद गुरु अंत।
इहि पूँछे प्रस्तार मे, सूची धरनै संत ॥२७॥
जिते अंक पर अंत है, ता पाछे लघु अंत।
ता पाछे को अंत लहि, गुरु अंतहि कहि तंत ॥२८॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राप्रस्तारे नष्टोदिष्टमेरुमर्कटीपताकासूचीवर्णनं नाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

४

(दोहा)

जितने मात्राभेद मे, प्रस्तारहि परकार।
तितनो बरनहु मे कियो, अहिनायक बिस्तार ॥ १ ॥

अथ वर्णप्रस्तार की अनुक्रमणी (विजया)

आदि को भेद सबै गुरु कै पुनि भेद पढ़ैबे की रीति रचै।
आदि गुरू के तरे लिखिकै लघु आगे जथाप्रतिपंक्ति खचै।

---

[२७] जाल–जान (वेंक०), ज्ञान (नवल० २)।
[२८] पाछे–पछिले (सर०)।
[१] प्रस्तारहि०–प्रस्तारादि प्रकार (सर०)। तितनो०–तितनहु बरनहु (वही)।

पाछें गुरुहि सो पूरन मर्न कै सर्न लहू लगि यों ही मचै।
ऐसें पयारु कै दोइ सों दूनाइ दूनो के मर्न की संख्या सचै॥ २॥

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	१
। ऽ ऽ ऽ ऽ	२
ऽ । ऽ ऽ ऽ	३
। । ऽ ऽ ऽ	४
ऽ ऽ । ऽ ऽ	५
। ऽ । ऽ ऽ	६
ऽ । । ऽ ऽ	७
। । । ऽ ऽ	८
ऽ ऽ ऽ । ऽ	९
। ऽ ऽ । ऽ	१०
ऽ । ऽ । ऽ	११
। । ऽ । ऽ	१२
ऽ ऽ । । ऽ	१३
। ऽ । । ऽ	१४
ऽ । । । ऽ	१५
। । । । ऽ	१६
ऽ ऽ ऽ ऽ ।	१७
। ऽ ऽ ऽ ।	१८
ऽ । ऽ ऽ ।	१९
। । ऽ ऽ ।	२०
ऽ ऽ । ऽ ।	२१
। ऽ । ऽ ।	२२
ऽ । । ऽ ।	२३
। । । ऽ ।	१४
ऽ ऽ ऽ । ।	२५
। ऽ ऽ । ।	२६
ऽ । ऽ । ।	२७
। । ऽ । ।	२८
ऽ ऽ । । ।	२९
ऽ । । । ।	३०
ऽ । । । ।	३१
। । । । ।	३२

अथ वर्णसंख्या, यथा

२ ४ ८ १६ ३२

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

इति पंचवर्णसंख्या

अथ नष्टलक्षणं (दोहा)

पूँछे अंकहि अर्ध करि, सम आएँ लघु जानि।
विषमे इक दै अर्ध करि, गुरु लिखि पूरन ठानि॥ ३॥

तिलक—पंद्रहों भेद पूँछ्यो सो पद्रह आधो नहीं है सक्तो, एक मिलाइ सोरह को आधो कियो, एक गुरु लिख्यो, बाकी रहे आठ, ताको आधो चारि पूरे पर्यो, लघु लिख्यो, [बाकी रहे चारि, ताको आधो चारि पूरे पर्यो, लघु लिख्यो, बाकी रहे दोइ] दोइ को आधो एक, पूरे पर्यो, लघु लिख्यो, एक में एक मिलाइ आधो कियो गुरु लिख्यो सब मिलाइ ऽ ।।। ऽ ॥ ३ अ॥

अथ वर्णउद्दिष्टलक्षणं (दोहा)

लिखि पूँछे पर एक तें, दून दून लिखि लेहि।
लघु सिर अंकनि जोरिकै, एक मिलै कहि देहि॥ ४॥

१ २ ४ ८ १६

ऽ । । । ऽ

[३ अ] एक में०-एक मिलाइ (नवल० २)।
[४] तें-ते (नवल०, वेंक०)।

अथ वर्णमेरुलच्छणं–(कुंडलिया)

सर पर कोठो दोइ तज, तीनि तासु तल चारि।
अक्षर मेरु बढ़ाइ यौं,- जत प्रस्तार निहारि।
जत प्रस्तार निहारि पाँति की आदिहु अंतहु।
एक एक लिखि जाहु कह्यो पन्नग भगवंतहु।
गनि द्वै गुरुजुक्त सकल जिय करहु न खरको।
सूने कोठनि भरहु जोरि द्वै द्वै सिर पर को॥ ५॥

अथ वर्णपताकालच्छणं–(दोहा)

कोष्ठ पताका को करहि, खंडमेरु की साखि।
ताके सिर धर एक लैं, दूनो दूनो राखि॥ ६॥

१	१	१
१	२	१	२
१	३	३	१	३
१	४	६	४	१	४
१	५	१०	१०	५	१	५
१	६	१५	२०	१५	६	१	६

(दंडक)

दूनो अंक राखि खरी पाँतिन लिखन लागे,
एक द्वै लै तीनि तीनि द्वै लै पाँच रेखिये।
याही क्रम उपजित अंकनि सौं आगे आगे,
जोरि जोरि खरी पाँति लिखन बिसेषिये।
एक पाँति भरि दूजी पाँति वहै रीति करि,
आयो अंक छाँडि ताके आगे ढूँढि लेखिये।
क्रम टूटे एकै भलो चलतहीं आगे चलो
'दास' ऐसे धरनपताका पूरो पेखिये॥ ७॥

---

[६] धर–धर (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[७] उपजित–उपजति (नवल० २)। लिखन–लिखित (वही); लिखिन (वेंक०)। आगे०–आगे ढूँढि (नवल० २, वेंक०)। पूरो–पूरे (वही)।

पाछे गुरुहि सो पूरन धर्नै के सर्व लहू लगि यों ही मचै।
ऐसे पयाठ के दोइ सों दुनोई दूनो के धर्न की संख्या सचै ॥ २ ॥

रूप	संख्या
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	१
। ऽ ऽ ऽ ऽ	२
ऽ । ऽ ऽ ऽ	३
। । ऽ ऽ ऽ	४
ऽ ऽ । ऽ ऽ	५
। ऽ । ऽ ऽ	६
ऽ । । ऽ ऽ	७
। । । ऽ ऽ	८
ऽ ऽ ऽ । ऽ	९
। ऽ ऽ । ऽ	१०
ऽ । ऽ । ऽ	११
। । ऽ । ऽ	१२
ऽ ऽ । । ऽ	१३
। ऽ । । ऽ	१४
ऽ । । । ऽ	१५
। । । । ऽ	१६
ऽ ऽ ऽ ऽ ।	१७
। ऽ ऽ ऽ ।	१८
ऽ । ऽ ऽ ।	१९
। । ऽ ऽ ।	२०
ऽ ऽ । ऽ ।	२१
। ऽ । ऽ ।	२२
ऽ । । ऽ ।	२३
। । । ऽ ।	१४
ऽ ऽ ऽ । ।	२५
। ऽ ऽ । ।	२६
ऽ । ऽ । ।	२७
। । ऽ । ।	२८
ऽ ऽ । । ।	२९
ऽ । । । ।	३०
ऽ । । । ।	३१
। । । । ।	३२

अथ वर्णसंख्या, यथा

२ ४ ८ १६ ३२
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ
इति पंचवर्णसंख्या

अथ नष्टलच्छन (दोहा)

पूँछे अंकहि अर्ध करि, सम आएँ लघु जानि।
विषमे इक दै अर्ध करि, गुरु लिखि पूरन ठानि ॥ ३ ॥

तिलक—पंद्रहों भेद पूँछ्यो सो पंद्रह आधो नहीं है सक्तो, एक मिलाइ सोरह को आधो कियो, एक गुरु लिख्यो, बाकी रहे आठ, ताको आधो चारि पूरे पर्यो, लघु लिख्यो, [बाकी रहे चारि, ताको आधो चारि पूरे पर्यो, लघु लिख्यो, बाकी रहे दोइ] दोइ को आधो एक, पूरे पर्यो, लघु लिख्यो, एक में एक मिलाइ आधो कियो गुरु लिख्यो सब मिलाइ ऽ ।।। ऽ ॥ ३ अ ॥

अथ वर्णउद्दिष्टलच्छन (दोहा)

लिखि पूँछे पर एक तें, दून दून लिखि लेहि।
लघु सिर अंकनि जोरिकै, एक मिलै कहि देहि ॥ ४ ॥

१ २ ४ ८ १६
ऽ । । । ऽ

[३ अ] एक में०-एक मिलाइ (नवल० २)।
[४] तें-वे (नवल०, वेंक०)।

अथ वर्णमेरुलक्षणं–(कुंडलिया)

सर पर कोठो दोइ रच, तीनि तासु तल चारि।
अक्षर मेरु बढ़ाइ यों, जत प्रस्तार निहारि।
जत प्रस्तार निहारि पाँति की आदिहु अंतहु।
एक एक लिखि जाहु कह्यो पन्नग भगवंतहु।
गनि द्वै द्वै गुरुजुक्त सकल जिय करहु न खरको।
सूने कोठनि भरहु जोरि द्वै द्वै सिर पर को॥ ५॥

अथ वर्णपताकालक्षणं–(दोहा)

कोष्ठ पताका को करहि, खंडमेरु की साखि।
ताके सिर घर एक तें, दूनो दूनो राखि॥ ६॥

| १ | १ | १
| १ | २ | १ | २
| १ | ३ | ३ | १ | ३
| १ | ४ | ६ | ४ | १ | ४
| १ | ५ | १० | १० | ५ | १ | ५
| १ | ६ | १५ | २० | १५ | ६ | १ | ६

(दंडक)

दूनो अंक रासि खरी पाँतिन लिखन लागे,
एक द्वै लै तीनि तीनि द्वै लै पाँच रेखिये।
याही क्रम उपजित अंकनि सौं आगे आगे,
जोरि जोरि खरी पाँति लिखन बिसेखिये।
एक पाँति भरि दूजी पाँति वहै रीति करि,
आयो अंक छाँडि ताके आगे ढूँढि लेखिये।
क्रम टूटे एकै भलो चलतहीं आगे चलो
'दास' ऐसे बरनपताका पूरो पेखिये॥ ७॥

---

[६] घर–धर (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[७] उपजित–उपजति (नवल० २)। लिखन–लिखित (वही), लिखिन (वेंक०)। आगे०–आगे ढूँढि (नवल० २, वेंक०)। पूरो–पूरे (वही)।

(दोहा)

परनमत्त को एक ही, है पताकप्रस्तार।
याही रूपनि पर धरो, याको अंक उद्दार॥ ८॥

पंचवर्णपताका

१	५	१०	१०	५	१
१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पंचवर्न में
द्वैगुरुजुक्त को
प्रस्तार।
।।।ऽऽ ८
।।ऽ।ऽ १२
।ऽ।।ऽ १४
ऽ।।।ऽ १५
।।ऽऽ। २०
।ऽ।ऽ। २२
ऽ।।ऽ। २३
।ऽऽ।। २६
ऽ।ऽ।। २७
ऽऽ।।। २९

अथ वर्णमर्कटीलक्षणं–(दंडक)

पटपाँति लिखि पहलीयै गनतीयै भरो,
दूजी पाँति द्वै तें दूनो दूनो अंक धरि देहु।

वृत्ति	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६
लघु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८
गुरु	१	४	१२	३२	८	१९२	४४८

दुहुन सों गुनि गुनि चौथी पाँति भरि ताको,
आधो आधो पँची छटी पाँतिन में भरि देहु।

[८] पचवर्न–पचकल (लाथो, नवल०, वैंक०)।

चौथी पँची पाँतिन के अंकन कों जोरि जोरि,
तीजी पाँति रीती है पूरन वहै करि देहु।
वृत्ति भेद मात्र धर्न लघु गुरु पूँछै 'दास'
ताके आगे धरनमरकटीयै धरि देहु ॥ ९ ॥

(दोहा)

जिते भेद पर अंत है, ता आधो गुरु अंत।
तितनोई लघु अंत है, अक्षरसूची संत ॥ १० ॥
नष्ट उदिष्ट पताक है, मत्ताहू की भाँति।
समुझि लीजिये सुमति सजि, अक्षरसंख्या पाँति ॥ ११ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे नष्टोद्दिष्टमेरुमर्कटीपताका-सूचीवर्णन नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

५

(दोहा)

चारि चरन चहुँ के धरन, मत्त होहिं यक रूप।
वृत्ति छंद तेहि लगि रच्यो, प्रस्तारनि अहिभूप ॥ १ ॥
जदपि धर्नप्रस्तार में, सकल वृत्ति को बोध।
तदपि मत्तप्रस्तारहू, सकल मिलै अनिरोध ॥ २ ॥

(छप्पय)

मत्त छंद की रीति 'दास' बहु भाँति प्रकासै।
आदि अंत कल दुकल घढ़े दूजो नहिं भासै।
चारयौ तुक सम कलनि परहि यह नेम निवाहिय।
कहुँ गुरु थल है लघू दियहु नहिं भ्रमगति चाहिय।
बिन गने होत पूरन कला, जति गति कबिग्यानीहि बस।
यह आनि नागनायक कह्यो, जिह्वा जानै छंदरस ॥ ३ ॥

---

[९] धरि–धरि (नवल० २, वेंक०)। में–को (वही)। है–होय (वही)। मात्र–मत्त (सर०), मात्रा (नवल० २, वेंक०)।
[१०] है–यो (सर०)।
[३] बढे०–बढ़ेहुँ कहुँ दुतिय न (सर०)।

(दोहा)

दुकल तिकल चौकल पकल, छकल निरद्रि प्रस्तार।
क्रम तें बरनत 'दास' तहँ, श्रुतिछंदविस्तार ॥ ४ ॥
मत्तछंद में श्रुतिहू, दरसावत इहि हेत।
बहु छंदन की गति मिले, एक सुकबि गनि लेत ॥ ५ ॥
नेम गह्यो यह 'दास' करि हरि हर गुरुहि प्रनाम।
उदाहरन के अंत मैं, परे छंद को नाम ॥ ६ ॥
द्वै कल के द्वै भेद मैं, जानो *श्री मधु* छंद।
मही सार अरु कमल ये, तीनि त्रिकल के बंद ॥ ७ ॥

१—श्री छंद ऽ

जै। है। *श्री*। की ॥ ८ ॥

२—मधु छंद ॥

तिय। जिय। बधु। *मधु* ॥ ९ ॥

१—मही छंद ।ऽ

रमा। समा। नही। *मही* ॥ १० ॥

२—सार छंद ऽ।

ऐनि। नैनि। चारु। *सारु* ॥ ११ ॥

३—कमल छंद ।।।

चरन। बरन। अमल। कमल ॥ १२ ॥

अथ चारि मात्रा के छंद—(दोहा)

चारिमत्त-प्रस्तार मैं, पाँच वृत्ति निरधारि।
कामा रमनि नरिंद अरु मंदर हरिहि बिचारि ॥ १३ ॥

१—कामा छंद ऽऽ

रामै। नामै। यामै। *कामै ॥ १४ ॥*

२—रमणी छंद ।।ऽ

घरनी। बरनी। रमनी। *रमनी* ॥ १५ ॥

३—नरिंद छंद ।ऽ।

सँभारु । सवारु । परिंद । *नरिंद* ॥ १६ ॥

४—मंदर छंद ऽ॥

ध्यावत । ल्यावत । चंदर । मंदर ॥ १७ ॥

५—हरि छंद ॥॥

जग महि । सुख नहि । भ्रम तजि । *हरि* भजि ॥ १८ ॥

पंचमात्राप्रस्तार के छंद—(सोरठा)

पंचमत्तप्रस्तार, आठभेदजुत हरि *प्रिया* ।
तरनिजा रु *पंचार बीर बुद्ध निसि यमक ससि* ॥ १९ ॥

१—शशि छंद ।ऽऽ

मही में । सही में । जसी से । *ससी* से ॥ २० ॥

२—प्रिया छंद ऽ।ऽ

है खरो । पत्थरो । तोहि या । री *प्रिया* ॥ २१ ॥

३—तरणिजा छंद ॥।ऽ

उर धरो । पुरुष सो । बरनिजा । *तरनिजा* ॥ २२ ॥

४—पंचाल छंद ऽऽ।

नच्चंत । गावंत । दै ताल । *पंचाल* ॥ २३ ॥

५—वीर छंद ॥ऽ।

हरु पीर । अरु भीर । बरु धीर । रघु*बीर* ॥ २४ ॥

६—बुद्धि छंद ।ऽ॥

भ्रमै तजि । हरै भजि । करै सुद्धि । धरै *बुद्धि* ॥ २५ ॥

७—निशि छंद ऽ॥।

सुक्ख लहि । दुक्ख दहि । भानि रिसि । याहि *निसि* ॥ २६ ॥

---

[२१] खरो–खरी (नवल० २, वेंक०) । पत्थरो–पत्थरी (वही) ।
[२२] बरनि–बरन (सर०, लीथो) ।
[२३] नच्चंत–नाचत (नवल० २, लीथो) । गावंत–गावत (वही) ।

८—यमक छंद ।।।।।

श्रुति कहहि । हरि जनहि । छुवत नहि । जमक वहि ॥ २७ ॥

छ मात्रा के छंद—(दोहा)

ताली रमा नगंनिका जानि *कला करता* हि ।
मुद्रा धारी वाक्य अरु *कृष्ण नायको* चाहि ॥ २८ ॥
हर अरु *विष्णु मदन गनो* अधिको होत न मित्त ।
पटकल तेरह भेद के प्रगट तेरहो वृत्त ॥ २९ ॥

१—ताली छंद ऽऽऽ

नच्चै है । संभू पै । वेताली । दै *ताली* ॥ ३० ॥

२—*रमा* छंद ।।ऽऽ

जग माहीं । सुख नाहीं । तजि कामै । भजि *रामै* ॥ ३१ ॥

३—नगंनिका छंद ।ऽ।ऽ

प्रसिद्ध हौं । अदंनिका । न गिद्ध हो । *नगंनिका* ॥ ३२ ॥

४—कला छंद ऽ।।ऽ

धीर गहो । आजु लहो । नंदलला । काम*कला* ॥ ३३ ॥

५—कर्ता छंद ।।।।ऽ

महि धरता । जग भरता । दुखहरता । सुख*करता* ॥ ३४ ॥

६—मुद्रा छंद ।ऽऽ।

भजै राम । सरै काम । न छापाहि । न *मुद्राहि* ॥ ३५ ॥

७—धारी छंद ऽ।ऽ।

दानवारि । चित्त धारि । पाप झारि । कोस *धारि* ॥ ३६ ॥

---

[२८] वाक्य–वाकि (सर०) ।
[२९] हर०–भेदर (सर०) ।
[३०] नच्चै–नाचै (नवल० २, वेंक०) ।
[३२] गिद्ध–सिद्ध (नवल २, वेंक०) ।
[३६] पाप०–पापकारि (सर०) । कोस०–कोँ सँवारि (वही) ।

८—वाक्य छंद ।।।ऽ।

जगतनाथ । गहत हाथ । सरन ताकि । कहत *वाकि* ॥ ३७ ॥

९—कृष्ण छंद ऽऽ।।

छाड़ै हठ । एरे सठ । तृष्नै तजि । कृष्नै भजि ॥ ३८ ॥

१०—नायक छंद ।।ऽ।।

सुखकारन । दुखटारन । सब लायक । रघु*नायक* ॥ ३९ ॥

११—हर छंद ।।ऽ।।।

जगज्जननि । दुखी जननि । कृपा करहि । बिथा हरहि ॥ ४० ॥

१२—विष्णु छंद ऽ।।।।

'दास' जगत । झूठ लगत । याहि तजहि । *बिष्नु* भजहि ॥४१॥

१३—मदनक छंद ।।।।।

तरुनिचरन । अरुनबरन । हृदयहरन । *मदनक*रन ॥ ४२ ॥

सात मात्राप्रस्तार के छंद–(दोहा)

सात मत्तप्रस्तारको, *सुभगति* जानो छंद ।
वृत्ति एकीस प्रकार है, चारि भाँति गति वंद ॥ ४३ ॥

शुभगति छंद

कृपासिंधो । दीनबंधो । सर्व सुरपति । देहि *सुभगति* ॥ ४४ ॥

पुनः

प्रभाविसाल । लालगुपाल । जसुमतिनंद । आनँदकंद ॥ ४५ ॥

पुनः

पलै धायक । सर्वलायक । कंसमारन । जनउधारन ॥ ४६ ॥

पुनः

दुख कौं हरो । सुख विस्तरो । बाधाकदन । करुनासदन ॥ ४७ ॥

आठ मात्रा के छंद–(दोहा)

आठ मत्तप्रस्तार के, *तिर्नादिक* उनमानि ।
सहित *हस मधुभार* गति, चौंतिस वृत्ति बखानि ॥ ४८ ॥

---

[३७] ताकि-वाक्य (नवल० २), ताक्य (वेंक०) ।

लक्षण प्रतिदल

कर्नो कर्नो। *तिर्नो* पर्नो ॥ भागनु कर्ना। *हंस* परन्ना ॥
न य हि प्रसंसा। कहि *चौवंसा* ॥ द्विजवर भासन। कहत *सवासन* ॥
नगन नगवती। कहिय *मधुमती* ॥ ४६ ॥

१—तिर्ना छंद ऽऽऽऽ

धर्मदाता। निर्भैदाता। तृष्ना हिंनो। जीवै *तिनो* ॥ ५० ॥

२—हंस छंद ऽ॥ऽऽ

पोखर दोऊ। दीह कितोऊ। जान न केहूँ। *हंस* लटेहूँ ॥५१॥

३—चौवंसा छंद ॥॥ऽऽ

उपजेउ पुत्ता। सुलगन जुत्ता। जगअवतंसा। चरत्रउ *वंसा* ॥५२॥

४—सवासन छंद ॥॥ऽ॥

सुनहु बलाहक। हुजियत नाहक।
बरषि हुतासन। अपजस *बासन* ॥५३॥

५—मधुमती छंद ॥॥॥ऽ

तप निकसत हो। धरि कच सिर हो।
विमल बनलती। सुरभि *मधुमती* ॥५४॥

लक्षण—(दोहा)

बिप्र जगन *करहंत* है, वाही गति *मधुभार*।
छवि त्रिपंच जति-जानिये, आठ मत्तप्रस्तार ॥५५॥

६—करहंत छंद ॥॥ऽ।

जसुमति किसोर। ससि जिमि चकोर।
मम सुख लखंत। यकटक *रहंत* ॥५६॥

७—मधुभार छंद

दक्षिनसमीर। अतिकृस सरीर।
हुअ मंद भाइ। *मधुभार* पाइ ॥ ५७ ॥

८—छवि छंद

मिलिहि किमि मोर। तकत ससि वोर।
थकित सो बिसेषि। बदन*छवि* देखि ॥ ५८ ॥

अथ नौ मात्रा के छंद—(दोहा)

नौ मत्ता की अमित गति, पचपनवृत्ति बिचारि।
कर्न यगन हारी गनो, कह बसुमती निहारि ॥ ५९ ॥

१—हारी छंद SS।SS

तौ मानु भारी। ठानै पियारी।
सौतै सुप्यारी। होती महा री ॥ ६० ॥

२—वसुमती छंद SS।।।S

सो सुभ्र ससि सो। जो दान असि सो।
साजै जसुमती। सारी वसुमती ॥ ६१ ॥

अथ दस मात्रा के छंद—(दोहा)

दस मत्ता के छंद में, वृत्ति नवासी होइ।
संमोहादिक गतिन सँग, वरनत हैं सब कोइ ॥ ६२ ॥

(सोरठा)

संमोहा गुरु पाँच कहि कुमारललिता ज स ग।
त यगन मध्या थाँच, तुंगा दुज सँग मा स गहु ॥ ६३ ॥

१—संमोहा छंद SSSSS

है चाहौं संता। जौ मेरे कंता।
तौ भंजो कोहा। लोभा संमोहा ॥ ६४ ॥

२—कुमारललिता छंद ।।S।।।SS

जु राधहि मिलावै। वहै मोहि जियावै।
कहत भरि उसासा। कुमारललिता सो ॥ ६५ ॥

३—मध्या छंद SS।।SS

तीनौं निधि जामै। लज्या अरु कामै।
बाँटो यह सोई। मध्या कुच दोई ॥ ६६ ॥

---

[६४] है-ह्यौ (लीथो, नवल० २, वेंक०)। मेरे-मेरो (वही)।
[६५] कहत-कहै (नवल० २)।

४—तुंग छंद ऽ।।।।ऽऽ

अंबर छबि छाजै। मुक्तअवलि राजै।
मेरुसिखर नीके। तुंग उरज ती के॥ ६७॥

५—तुंगा छंद ।।।।।।ऽऽ

सुभ मुख ससि ऐसो। निरखन जेहि सेसो।
छकि रहु है *गुंगा*। सुनहि उरज *तुंगा*॥ ६८॥

(दोहा)

द्विजवर ज ग *कमल* हि रचो, द्वै द्विज गो *कमला* हि।
त्यौं *रतिपद* सँग नाल है, *दीप* कला तें चाहि॥ ६९॥

६—कमल, यथा ।।।।ऽ।ऽ

पिय चख चकोर है। तिय नयन भोर है।
विधुबदन बाल को। *कमल*मुख लाल को॥ ७०॥

७—कमला छंद ।।।।।।।।ऽ

कब अँखियन लखिहौं। अरु भुज भरि रखिहौं।
ससिधर विमल कला। हृदय कमल *कमला*॥ ७१॥

८—रतिपद, यथा ।।।।।।।।ऽ

जुवति वह मरति तौ। उर तें यह टरति जौ।
हरनि हिय दरद की। *सुरति* पदपदुम की॥ ७२॥

९—दीप छंद

जय, जयति जगनंद। मुनिकौमुदीचंद।
त्रैलोक्य-अवनीप। *दसरत्थकुलदीप*॥ ७३॥

ग्यारह कला के छंद—(दोहा)

ग्यारह कल में एक सै चौवालिस गनि वृत्त।
तहँ *अहीर लीला* अपर *हसमाल* गनि मित्त॥ ७४॥

---

[६८] है-होइ (सर०)।
[७२] मरति-ररति (नवल० २, वेंक०)।

(सोरठा)

जाँत *अहीर* कहंत, राँत प्रगटि *लीला* भनो।
स ग यो ग्यारह मंत, छंद *हंसमाला* गनो ॥ ७५ ॥

१—अहीर छंद

कौतुक सुनहु न बीर। न्हान धसी तिय नीर।
चीर धर्‌यौ लखि तीर। लै भजि गयो *अहीर* ॥ ७६ ॥

२—लीला छंद

धन्य जसोदा कही। नंद बड़े भाग ही।
ईस्वर ह्वै जा घरें। अद्भुत *लीला* करें ॥ ७७ ॥

३—हंसमाला छंद ।।SS।SS

इहि आरन्य माहीं। सर मानुष्य नाहीं।
निकसे कंज आला। कुररै *हंसमाला* ॥ ७८ ॥

बारह मात्रा के छंद-(दोहा)

बारह मत्ता छंद गति, बरन्यो अमित फनीस।
होत किये प्रस्तार है, वृत्ति दु सै तेंतीस ॥ ७९ ॥

लच्छण प्रतिदल

तीन्यो कर्ना *सेषा*। मो सो गो *मदलेखा*।
चित्रपदा भ भ कर्नो। न न महि *जुका* धर्नो ॥ ८० ॥
रो न सो हि *हरमुख* ज्यौं। *अंमृतगति* द्विज भ स त्यौं।
न य सहि *सारंगिय* हो। दस लहु गुरु *दमनक* हो ॥ ८१ ॥

१—शेष छंद SSSSSS

ताकौं जो मैं ध्याऊँ। ताही को हौं गाऊँ।
पीरो जाको केसा। कंठे जाके *सेषा* ॥ ८२ ॥

---

[८०] प्रतिदल—प्रतिपद (सर०)।
[८२] जाको—जाके (लीथो, नवल० २, वेंक०)।

२—मदलेखा छंद SSS||SS

मिथ्यावादन कोहा। निर्लज्या अरु मोहा।
जेतो ऐगुन देखो। तेतो मैं *मद लेखो* ॥ ८३ ॥

३—चित्रपदा छंद S||S||SS

राम कह्यो जिन धोखे। स्वर्ग लह्यो तिन चोखे।
भक्तन कौन विचारो। *चित्र पदारथ* चारो ॥ ८४ ॥

४—युक्ता छंद ||||||SSS

दृग जुग मन को मोहैं। तिन सँग पुतरी सोहैं।
लखि यह उपमा उक्ता। कमल भ्रमरसंजुक्ता ॥ ८५ ॥

५—हरमुख छंद S|S|||||S

धन्य जन्म निज कहतीं। प्रान वारतहि रहतीं।
देखि ग्वारि लहि सुख कौं। मैनगर्वहर *मुख* कौं ॥ ८६ ॥

६—अमृतगति छंद ||||S||||S

फिरि फिरि लावति छतिया। लखत रहै दिन रतिया।
तुम जु लिखी उहि पतिया। *अमृतगती* मृदु बतिया ॥ ८७ ॥

७—सारंगिय छंद ||||SS||S

धनि धनि ताही तिय कौं। बस करती जो पिय कौं।
सुरनि रमावै हिय कौं। कर गहि *सारंगिय* कौं॥ ८८ ॥

८—दमनक छंद

विषधर धर परम प्रिया। जगतजननि सदय हिया।
जय जय जनदुरदहरी। प्रवल *दनुजदमनकरी* ॥ ८९ ॥

(दोहा)

गो स भ गो नराच है, चित्र न सो यो पूर।
स ज जी तोमर जानियो, *त्यौं तमो* लहै *सूर* ॥ ९० ॥

---

[८३] जिन–निज (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[८५] उक्ता–युक्ता (लीथो०, नवल०, वेंक०)।

९—मानवक्रीड़ा, यथा ऽ।।ऽऽ।।ऽ

धन्य जसोदाहि कही । नंद बड़ो भाग सही ।
ईस्वर हैं जाहि घरें । *मानव* को क्रीड़ करें ॥ ६१ ॥

१०—बिंब छंद ।।।।।ऽ।ऽऽ

अमियमय आस्य तेरो । हरत यह चेतु मेरो ।
मनहि यह क्यों न मोहै । अधर दुति *बिंब* सोहै ॥ ६२ ॥

११—तोमर छंद ।।ऽ।ऽ।।ऽ।

असतीन को सिरु मानि । तिय क्यों तजै कुलकानि ।
दुज जामिनी अपवाद । कहुँ छोड़तो *मरजाद* ॥ ६३ ॥

१२—सूर छंद ऽऽ।ऽऽऽ।

धीधे न बालानैन । श्री पाइ जे माहैं न ।
रागी नहीं हैं सूर । ते तो बडे हैं *सूर* ॥ ६४ ॥

(दोहा)

लीला रवि कल जॉतजुत, स ज करनो *दिगईस* ।
तरलनयन रवि लघु कला, प्रस्तार्‍यो फनिईस ॥ ६५ ॥

१३—लीला छंद

अवधपुरी भाग भारु । दसरथगृह छबिअगारु ।
राजत जहँ बिस्वरूप । *लीला*तनु धरि अनूप ॥ ६६ ॥

१४—दिगीश छंद ।।ऽ।ऽ।ऽऽ

बर मैं गोपाल मागौं । पदपद्म प्रेम पागौं ।
हर ध्याइ जो अनंदै । *दिगईस* जाहि बंदै ॥ ६७ ॥

१५—तरलनयन छंद ।।।।।।।।।।।।

कमलबदनि कनकबरनि । दुरदगमनि हृदयहरनि ।
बडहि सुकृति मधुरबयनि । मिलति तरुनि *तरलनयनि* ॥६८॥

---

[६१] बड़ा–बडे (सर०) ।
[६४] ते–के (सर०) ।
[६६] बिस्व०–बेस्वरूप (नाल० २, वेंक०) ।

तेरह कल के छंद–(दोहा)

नराचिकादिक तेरहै कल की गति गनि लेहु ।
वृत्ति धूमिकै. तीनिसै सतहत्तरि कहि देहु ॥ ६८ ॥
कर्नो जोर *नराचिका*, जो जो यगन *महर्ष* ।
रगन रगन अरु नंद तें है *लछिमी* उत्कर्ष ॥ ६६ ॥

१—नराचिका छंद ऽऽ।ऽ।ऽ।ऽ

भौं हैं करी कमान हैं । नैना प्रचंड बान हैं ।
रेखा सिरे जो तें दई । *नराचिका* यही भई ॥ १०० ॥

२—महर्ष छंद ।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

तमोर गुनीजत भाई । जवाहिर की गति पाई ।
जितो परभूमिहि जाई । तितोइ *महर्ष* बिकाई ॥ १०१ ॥

३—लक्ष्मी छंद ऽ।ऽऽ।ऽऽ।

वेद पावै न जा अंत । जाहि ध्यावैं सबै संत ।
ब्याइयो जक्त जा तंत । पाहि सो *लक्ष्मीकंत* ॥ १०२ ॥

चौदह मात्रा के छंद–(दोहा)

चौदह मत्ता छंदगति, *सिप्यादिक* अवरेखि ।
भेद छ सै दस होत हैं, प्रस्तारो करि देखि ॥ १०३ ॥

लक्षण प्रतिपद

सातौ गो *सिप्या* कीजै । विय दुज मगन *सुवृती* है ।
पाइत्ता मो भहि सगनो । है *मनिवधो* मौ म स को ॥ १०४ ॥
तीनि भगन ग *सारवती* । सुगुरि दुजो भ भ *हारवती* ।
न र ज गे *मनोरमा* कही । दुज स ज ग *समुद्रिका* वही ॥ १०५ ॥

१—शिप्या छंद ऽऽऽऽऽऽऽ

मोची पौंधी जाके ही । नाहीं पाच्यो ताको जी ।
एरे भाई मेटै को । *लिख्या सिख्या* मध्ये जो ॥ १०६ ॥

---

[६६] जो०—जो गो यगन (लीथो); जो गो यगन (नरम० २, वेंक०) ।
[१०१] जन–जन (सर०) ।
[१०६] मध्ये–यंध्ये (लीथो, नरम०, वेंक०) ।

२—सुवृत्ती छंद ।।।।।।।।SSS

असित कुटिल अलकै तेरी । उचित हरतु मति है मेरी ।
यह कत सुमुखि हनै जी कौं । घरजहि उरज सुवृत्ती कौं ॥ १०७ ॥

३—पाइत्ता छंद SSSSS।।।।S

नैना लागे विधुवदनी । वैरी जुट्टे प्रबल अनी ।
माँगो पासो अरिय अड़े । *पाइत्ता* है करम घड़े ॥ १०८ ॥

४—मणिबंध छंद S।।SSS।।S

आपुहि राख्यो जो न चहै । कर्म लिख्यो तौ पाइ रहै ।
कर्महि लागै हाथ साऊ । जो *मनि बाँध्यो* गाँठि कोऊ ॥ १०९ ॥

५—सारवती छंद S।।S।।S।।S

आवति बाल सिंगारवती । पीन - पयोधर - भारवती ।
कुंजर - मोतिय - हारवती । पुंजप्रभा दुधि*सारवती* ॥ ११० ॥

६—सुमुखी छंद ।।।।S।।S।।S

यह न घटा चहुँ ओर घनी । दह दिसि दौरति राहु अनी ।
तजि यहि औसर रूप-रुखी । चलि हरि पै रजनी *सुमुखी* ॥ १११ ॥

७—मनोरमा छंद ।।।S।S।S।S

जबहि बाल पालकी चढ़ी । तबहि अद्भुतै प्रभा बढ़ी ।
लखिय 'दास' पूरनोपमा । कमल में बसी *मनो रमा* ॥ ११२ ॥

८—समुद्रिका छंद ।।।।।।S।S।S

हरि मनु हरि गो कह्यो यही । नहि नहि नहि जू नही नही ।
सुनि सुनि बतियाँ मनो पिका । लखि लखि अँगुरी *समुद्रिका* ॥११३॥

---

[१०७] मति०—है मति मेरी (सर्वत्र) ।
[१०९] आपुहि०—आपुउ नाख्यो कोउ (सर०) ।
[१११] राहु—द्दार (लीथो, नवल० २, वेंक०) । रूप०—रूप सखी (नवल० २, वेंक०) ।
[११२] लखिय—लखी (लीथो, नवल० २, वेंक०) ।
[११३] यही—जही (सर०) ।

लक्षण—(दोहा)

चारि दसै कल *हाकली* लसलम सुद्धग संत।
सगन भुजा द्वै *संजुता* दुगति *सुरूपी* मंत ॥ ११४ ॥

९—हाकलिका छंद

परतिय गुरतिय तूल गनै । परधन गरल समान भनै।
हिय नित रघुवर नाम ररै । तासु कहा *कलिकाल* करै ॥ ११५ ॥

१०—शुद्धगा छंद ।SSS।SSS

अरी कान्हा कहाँ जैहै । सु तेरो 'दास' ह्वै रैहै।
सितारो लै बजावै तूँ । केदारा *सुद्ध गावै* तूँ ॥ ११६ ॥

११—संयुता छंद ।।S।S।।S।S

नहि लाल को मृदु हास है । मनमत्थ को यह पास है।
भ्रुव नैन संग न लेखिये । धनु *तीरसंजुत* पेखिये ॥ ११७ ॥

१२—स्वरूपी छंद

श्रीमनमोहन की मूरति । है तुव स्नेह की सूरति।
मैं निज मन यह अनुरूपी । तू मोहन प्रेम *सुरूपी* ॥ ११८ ॥

पंद्रह मात्रा के छंद—(दोहा)

पंद्रह मत्ता छंद गति, आदि *चौपाई* जानि।
नौ सै सत्तासी कहत, श्रुतिभेद उनमानि ॥ ११९ ॥

लक्षण

पंद्रह कला गनौ चौपई । हसी बिना दुज धुज ठई।
तरहरि रगन वपरलो कला । सकल कहत अहिपति *उज्जला* ॥१२०॥

१—चौपई

तुअ प्रसाद देख्यो भरि नैन । कह्यो सुनी मनभावति बैन।
कन परिहै मोहनगल बाँह । *चौप* ईठि इतनी मन माँह ॥ १२१ ॥

---

[११४] भुजा–सुजा (नवल०, वेंक०) । दुगति–दुरति (सर्वत्र) ।
[११६] तेरा–तौ तो (सर०) । बजावै०–बजावै तू (नवल० २, वेंक०) ।
[११९] चौपई–चौपही (सर०) ।
[१२०] कला–कलै (सर०) । बिना–तिनां (वही) ।
[१२१] चौप०–चौपइ ठई (नवल० २, वेंक०) ।

२—हंसी छंद SSSS।।।।S

आई पक्षोपरि चिकनई। छूटे लागी तन लरिकई।
लागी हासी मन मृदु दरै। पाला *हंसी* गति मधु धरै॥ १२२॥

३—उज्जला छंद ।।।।।।।।।S।S

धवल रजत परबत हो तबै। अरु पयनिधि कौं बरनै सबै।
तबहि बिमल दुति ससि की कला। जब न हुवेउ तुअ जस *उज्जला* १२३

लच्छण—(दोहा)

तीनि जगन यक है धुजा, *हरिनी* छंद सुभाउ।
तीनि रगन अहिपति कहे, *महालच्छमी* ठाउ॥ १२४॥

४—हरिणी छंद ।S।।S।।S।।S

बसै उर अंतर मैं नितही। मिलै कबहूँ भरि अंक नहीं।
लसो सब ठौर न चैन कहै। यहै *हरिनी* रसु रीति गहै॥ १२५॥

५—महालक्ष्मी छंद S।SS।SS।S

साखज्ञाता बड़ो सो भनो। बुद्धिवंतो बड़ो सो गनो।
सोइ सूरो सोइ संत है। जो *महालच्छमीवंत* है॥ १२६॥

सोरह मात्रा के छंद—(दोहा)

सोरह मत्ता छंद गति, रुप *चौपाई* लेखि।
पंद्रह सै सत्तानबे, जानो भेद बिसेखि॥ १२७॥

१—चौपाई छंद

तुअ प्रसाद देखो भरि नैनो। कही सुनी मनभावति बैनो।
कब परिहै मोहनगल बाँही। *चौपा* इठि इतनी मन माही॥ १२८॥

लच्छण

चार्‌यो कर्नो *विद्युन्माला*। मो तो यो है *चंपकमाला*।
कर्नो स दु है *सुपमा* लसिता। तिन्ना ननगो *भ्रमरविलसिता*॥ १२६॥

---

[१२३] दुति–द्दो (लीथो, नवल० २, वेंक०)। हुवेउ०–हुस्यो तो(वही)।
[१२६] भनो–गनो (सर०)। गनो–भनो (वही)।
[१२६] मो तो०–मोती पोहे (नवल० २, वेंक०)। है–दे (सर०)।

तिन्ना नोयो समुभिय *मत्ता*। *कुसुमविचित्रा* नयनय जत्ता।
गोसभसोगो हरि *अनुकूले*। दुज भभ *तामरसो* नगतूले ॥१३०॥
निजभय *नयमालिनि* निज़ु मंडी। ननसस गहि जिय जानिय *चंडी*।
चक भ दुजदुज सगनहि *शुलिका*। ननगननग है *पहरनकलिका* ॥१३१॥
जलोद्धतगती जस जस पगनो। *मनिगुन* दुज पिय दुज पिय सगनो।
रोन भाग गहि *स्वागत* कौं छ्वै। *चंदवर्त्म* रन भास प्रगट है ॥१३२॥
निज जरि पावत *मालति* सदा। नभजरीहि पठवै *प्रियंवदा*।
रेनु रेल गहिहै *रथुद्धतो*। नभसयाहि *द्रुतपाउ* सुद्ध तो ॥१३३॥
पंकअवलि भनि जो जलही सुनि। पट दस लघुहि *अचलधृति* मन गुनि१३४

२—विद्युन्माला छंद SSSSSSSS

दूजे कोप्यो वासौं भारी। नीरे नाहीं सृंगीधारी।
प्यारी क्यौं जीवैगी बाला। चौहाँ नच्चै *विद्युन्माला* ॥ १३५ ॥

३—चंपकमाला छंद SSSSS।।SS

देख्यो वाको आननचंदा। लूट्यो प्यारे आनँदकंदा।
आई जी की मोहनि बाला। कीजै ही की *चंपकमाला* ॥ १३६ ॥

४—सुषमा, यथा SS।।SSS।।S

होतो ससि सो मान्यो मन मैं। जान्यो हरिहै तापै छन मैं।
थंती सजनी यातैं सुख की। देखे *सुषमा* प्यारे मुख की ॥ १३७ ॥

५—भ्रमरविलसिता छंद SSSS।।।।।S

धीरे धीरे डगमगु धरती। राती राती द्युति विस्तरती।
आवै आवै त्रिय मृदुहसिता। आगे आगे *भ्रमरविलसिता* ॥ १३८ ॥

६—मत्ता छंद SSSS।।।।SS

आयो आली विषम बसंता। कैसे जीवौं निअर न कंता।
फूले टेसू करि मन रत्ता। चौहाँ गूँजै मधुकर *मत्ता* ॥ १३९ ॥

---

[१३०] समुझिय—समुभिय (नवल० २, वेंक०)।
[१३१] ननस—नस्सा (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[१३२] रोन—रैन (नवल० २, वेंक०)। चंदवर्त्म—चंद्रवरस (लीथो, वेंक०)।
[१३६] कीजै—कीजै (सर०)।

७—कुसुमविचित्रा ||||SS||||SS

चलन कह्यो पै मोहि डर भारी। परम सुगंधा वह सुकुमारी।
अलि तहँ ह्वै है अधिक विहारी। कुसुमविचित्रा वह फुलवारी॥ १४०॥

८—अनुकूल छंद S||SS||||SS

गोपिहु ढूँढो घ्रत फल दूजा। कूबर ही की करहु न पूजा।
जोग सिखावै मधुकर भूलो। कूबर ही सों हरि अनुकूलो॥ १४१॥

९—तामरस छंद ||||S||S||SS

तुअ दृग सों सजनी दृग तेरो। नहि सम ताहि लहै मनु मेरो।
जलचर खंज पराजय साजै। सखि नव तामरसो लखि लाजै॥ ४२॥

१०—नवमालिनी छंद ||||S|S|||SS

पहिरत पाइ जासु सितलाई। सखि तनु होत कंप अधिकाई।
तिय पिय स्वाँग कीन्हि थहराई। यह नवमालिनी सुमनु ल्याई॥१४३॥

११—चंडी यथा ||||||||S||SS

जय जगजननि हिमालयकन्या। जयति जयति जय त्रिभुवनधन्या।
कलुष कुमति मद मत्सर खंडी। जयति जयति जनतारनि चंडी॥१४४॥

१२—चक्र यथा S|||||||||||S

देव चतुरभुज चरनन्ह परिये। याहि बनक मम हिय थिति करिये।
संख 'रु गद त्रिय करनि सभरिकै। चक्र कमल त्रिय कर बिच धरिकै १४५

१३—प्रहरणकलिका छंद ||||||S||||||S

दसरथसुत को सुमिरन करिये। बहु तप जप मैं भटकि न मरिये।
बिरद बिदित है जिन चरनन को। प्रहरनकलि काटन दुरगन को॥१४६॥

१४—जलोद्धतगति |S|||S|S|||S

घनो भगरु राक्षसै करतु है। न राम ढिग ते सही परतु है।
अँगारगन वै उठैं(?)तरनि ते। जलोद्धतगती उठै धरनि ते॥१४७॥

---

[१४०] वह–यह (सर०)। वह–यह (वही)।
[१४२] सजनी–जननी (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[१४३] मालिनी०–मालिनि सुमनु ले आई (लीथो, नवल० २, वेंक०)।

१५—मणिगुण ||||||||||||||S

अभिनव जलधर सम तन लसितं । अरुन कमलदल नयन हुलसितं ।
जयति सरदससिसम धर बदनं । दिनमनिकुलदिनमनि गुनसदनं ॥१४८॥

१६—स्वागता SISIIISIISS

याहि भाँति तुमहूँ जु खिझावै । बाल बात तब क्यों बनि आवै ।
नंदलाल मटक्यो कब ऐसे । स्वाँग तासु करती तुम जैसे ॥१४९॥

१७—चंद्रवर्त्म छंद SISIIISIIIS

ऊभि साँस लिय मैं दुख भरिकै । घेरि लीन्ह तहँ भौंरनि अरिकै ।
और क्यों व बलि होत न तबहीं । चंद्र वर्त्म विच ऊगो जबहीं ॥१५०॥

१८—मालती, यथा IIISIISISIS

सुमन लसै लतिका अनंत मैं । सरघनि को सुख है बसंत मैं ।
मन महँ मोद न भौंर के रती । खिलति न जौ लगि *मालती* लती ॥१५१॥

१९—प्रियंवदा, यथा IIISIIISISIS

नयन रेनु कन जाहि के परैं । भरत पीर नहिं धीर सो धरैं ।
रहति मो दृगन में अरी सदा । तिय सरोजनयनी *प्रियंवदा* ॥ १५२ ॥

२०—रथोद्धता SISIIISISIS

है प्रभुत्व जगमध्य जौ महा । भुक्तजुक्त सुख सात तौ कहा ।
राम पाइ मन नाहि सुद्ध तौ । तुच्छ जानि *पुरुषारथुद्धतौ* ॥ १५३ ॥

२१—द्रुतपाद छंद IIISIIIISISS

जिनहि संग सिगरी निसि जागे । नयन रंग जनु जावक पागे ।
गहरु होत रिस तासु सँभारो । छतहि लाल *द्रुत पाउन* धारो ॥१५४॥

२२—पंकअवलि SIIIIISIISII

मोहन विरह सतावत बालहि । धाइ वचन नहि जानति हालहि ।
बासर निसि असुआ बरसावति । *पंकअवलि* जहँई तहँ दावति ॥१५५॥

२३—अचलधृति छंद ||||||||||||||||

धुलिस सरिस वर दसननि दरसित । परुष बचन मुख कढ़ति कहत हित ।
[illegible] अनुचित । तिय तुम जुगल *अचल धृत* उर नित
॥ १५६ ॥

पद्धरिय-लक्षणं-(दोहा)

सोरह सोरह चहुँ चरन, जगन एक दै अंत।
छंद होत यों *पद्धरिय*, कह्यो नाग भगवंत ॥ १५७ ॥

२४—पद्धरिय छंद, यथा

नभ रयनि सघन घन तम भय बिसाल। पद अटकत कंटक दर्भजाल।
मन सुमिरत भयभंजन गोपाल। *पद्धरिय* प्रेम मदमत्त बाल ॥ १५८ ॥

सत्रह मात्रा प्रस्तार के छंद-(दोहा)

सत्रह मत्ता छंद में, *धारी* त्रिजयो नीक।
बाला तिरग पचीससै, चोरासी दै ठीक ॥१५९॥

१—धारी, यथा ।S।।S।।S।।SS

मयूरपखा सिर में थिरकाए। सुपीत पटा उर में उरमाए।
चलै सुखचंद बिलोकि कुमारी। गए तुलसीबन में गिरि*धारी* ॥१६०॥

२—बाला, यथा S।SS।SS।SS

मोर के पक्ष को मुकट आला। कंठ में सोहती मुक्तमाला।
स्याम घनरूप तन दृग बिसाला। देखि री देखि गोपाल *बाला* ॥१६१॥

अठारह मात्रा के छंद-(दोहा)

प्रगट अठारह मत्त को, *रूपामाली* होइ।
द्युति सु इकतालीस सै, इक्यासी जिय जोइ ॥१६२॥
नौ गुरु *रूपामालिया*, अनियम *माली* बस।
सुजस सग प्रति पाय में, छंद होत *कलहंस* ॥१६३॥

१—रूपामाली, यथा SSSSSSSSS

नेहा की बेली बोयौं जी में। ब्याहो थाल्हो कै राख्यो ही में।
उत्कंठा पानी दै पाली है। प्यारेजू को *रूपा माली* है ॥१६४॥

२—माली छंद

मुरली अधर मुकुट सिर दीन्हे हैं। कटि पट पीत लकुट कर लीन्हे हैं।
को जानै कब आयो सुनि आली। उर तें कढ़त न केहूँ बन*माली* ॥१६५॥

---

[१६४] प्यारेजू-प्यारीजी (नवल०, वेंक०)।

३—कलहंस छंद ॥ऽ।ऽ॥ऽ॥ऽऽ

मत धाम-सोभ-सरसी किन न्हैये। मुख नयन पानि पद पंकज ह्वैये।
कलधौत नूपुरन की छवि दीसी। कल हंस-चेदुअन की अवली सी॥१६६॥

उन्नीस मात्रा के छंद—(दोहा)

उत्तम उनइस मत्त मैं, *रतिलेखादि* विचारि।
सतसठि सै पैंसठि कहत, श्रुतिभेद निरधारि॥१६७॥
सगन इग्यारह लघु करन, *रतिलेखा* तुक चाहि।
गनगनगन दै करन दै, जानि इंदुवदनाहि॥१६८॥

१—रतिलेखा छंद ॥ऽ॥॥॥॥॥ऽऽ

सब देव अरु मुनिन मन तुलनि तोल्यो।
तब 'दास' दृढ़ बचन यह *प्रगट बोल्यो*।
इक ओर महि सकल जप तप विसेषो।
इक ओर सियपतिचरननि *रति लेखो*॥१६९॥

२—इंदुवदना छंद ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽऽ

दोषकर एक सकलंक अति जोई। घाटि अरु बाढ़ि पुनि मास प्रति होई।
भाग अवलोकि इहि इंदु निच आली। *इंदुवदना* कहत मोहि वनमाली १७०

बीस मात्रा के छंद—(दोहा)

होत *हंसगति* आदि दै, छंदनि मत्ता बीस।
दस हजार नौ सै बपर, गनौ भेद छयालीस॥१७१॥
बीसैं कल बिन नियम *हंसगति* सोहै।
मोमासोमो *जलधरमाला* जोहै।
भोरन विप्र साहि *गजबिलसित* तन है।
द्वै दीपहि *दीपकिय* कहत कबिजन है॥१७२॥

---

[१६६] न्हैये-नैये (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[१६७] कहत-कह्यो (सर०)।
[१६८] रतिलेखा-रतिरेखा (नवल० २)।

१—हंसगति, यथा

जिन जंघन कर-रूप लियो बिनकारन। बारन काढ़े दंत फिरत दरबारन।
चरन भएहूँ अरुन बाज नहिं आयउ। तासु *हंस गति* सीखत किन बौरायउ
॥ १७३ ॥

२—गजविलसित, यथा SIISISIIIIIIIS

नागरि कामदेव - नृप - कटक प्रबलु है।
भौंहैं कमान भाल बर तिलक सु सर है।
प्रेम सिपाह अस्व दृग चपल जु अति है।
लंबु नितंबु जानि *गज विलसित* गति है ॥ १७४ ॥

३—जलधरमाला छंद SSSSIIIISSSS

चौहाँ नचै विपुल कलापी ऐ री। पी-पी बोलै पपिहो पापी बैरी।
कैसे राखे बिरहिनि बाला जी कौं। जारै कारी *जलधरमाला* ही कौं ॥१७५॥

४—दीपकी, यथा

यौं होत है जाहिरे तो-हिये स्याम। ज्यौं स्वर्नसीसी भर्‍यो एनमद बाम।
तू स्याम-हिय-बीच यौं जाहिरे होति। ज्यौं नीलमनि मैं लसै *दीप की जोति*
॥ १७६ ॥

लक्षण

बिपिनतिलको ललन गौन रे रंगना।
सवन पिय तरहि गुरु प्रगट चवलहि गना।
छंद *निसिपाल* किय गौनगुन गौन रे।
चंद्र सब लघु बरन रुद्र गुरु जौन रे ॥ १७७ ॥

५—बिपिनतिलक IIIIISIIISISSIS

भुवनपति रामप्रति कै सके जंग ना।
अरिन बनवास लिय संग लै अंगना।

---

[१७४] नितंबु–निजंबु (नवल० २, वेंक०)।
[१७६] लसै–चसै (सर०)।
[१७७] सवन–गवन (नवल०, वेंक०)। गौन–मौन (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१७८] भुवन०–भुवनप्रति (लीथो, नवल०, वेंक०)।

जहँ सु तहँ 'दास' दमकै मनो दामिनी।
बिपिनतिलकै सकल वे भई भामिनी॥ १७८॥

६—धवल, यथा ||||||||||||||||ऽ

सुरसरितजल अमल सुचित मुनिवरनि को।
गिरिस-अँग अहिप-अँग बसन बिधिधरनि को।
रजतगिरि तुहिनगिरि सरदससि नवल हैं।
सब उपर अधिक सियपतिसुजस *धवल* है॥ १७६॥

७—निशिपाल, यथा ऽ|||ऽ|||ऽ|||ऽ|ऽ

लाज कुलसाज गृहकाज बिसराइकै।
पा लगत लाल किहि जाल इत आइकै।
आसु चलि जाहु बलि पासु किन तासु के।
भाल हुअ लाल *निसि पा* लगत जासु के॥ १८०॥

८—चंद्र, यथा ||||||||||ऽ||||||||

कमल पर कदलिजुग ताहि पर गिरिजुगल।
तिनहि पर बिनहि अवलंब सरवर सजल।
निरखि बिधि गिरि पहुरि कंबु भई थकित मति।
उपर जगमगि रह्उ चंद्र इक बिमल अति॥१८१॥

इकीस मात्रा के छंद–(दोहा)

पवंगादि इकईस में, कीजै छंद-बिचार।
सत्रह सहस रु सात सै, इग्यारह प्रस्तार॥१८२॥
चारि चकल इक पंचकल, जानि *पवंगम* बंस।
तीनि बेर पिय रगना, छंद होत *मनहंस* ॥१८३॥

---

[१७६] अहिप०–अहिअअग (लीथो), अहिअग (नवल०, वेंक०)। धरनि–धरनि (नवल०, वेंक०)। रजत–रगत (लीथो); संगत (नवल०, वेंक०)।
[१८०] जाहु–जाहि (लीथो, नवल०, वेंक०)। पासु–तासु (नवल० २, वेंक०)।
[१८१] ताहि–तिनहि (लीथो, नवल०, वेंक०)। सरवर–सरव (नवल०, वेंक०)। थकित–चकित (नवल०, वेंक०)।
[१८२] पवंगादि–यवंगादि (सर०)।
[१८३] रगना–रंगना (सर०), रागना (नवल० २, वेंक०)।

१—पवंगम, यथा

एक कोउ मलयागिरि खोदि बहावतो।
तौ कत दक्षिनपौन तियानि सतावतो।
व्याकुल बिरहिनि बाल झखै भरि नैन कौं।
निंदति बारहि बार पवंगम सैन कौं ॥१८४॥

२—मनहंस, यथा ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

खरजूथ मध्य तुरंग सोभ न पावई।
नहि स्यारमंडल सिंह चौस गवावई।
खलसंग त्यौं जिय संत के दुखदाउ है।
मन हंस के नहिँ काग-संगति चाउ है ॥१८५॥

बाईस मात्रा के छंद (दोहा)

मालतीमालादि है, छंद बाइसै मत्त।
भेद अठाइससहस पर, छ सै सतावन तत्त ॥१८६॥

लक्षण

सर्वे दीहा *मालतीमाला* साधा।
मो कर्नो ठै दुजवर प्रिय म असंबाधा।
दुजवर नंदनंद सज कर्न *बानिनी* छूै।
जानहु *बंसपत्र* भरनो भन लहु गुरु ह्वै ॥१८७॥
[1]*समदबिलासिनी* निज भजै न ससकर हो।
नल रन भाग सांतजुत जानहि *कोकिनकी*।

---

[१८४] तियानि०—तिया निसि तावतो (नवल०, वेंक०)। झखै–कखै (नवल०, वेंक०)। निंदति–निंदहि (सर०)।
[१८५] खर–बर (सर०)। चौस०–द्वौ सग बावई (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१८६] मत्त–मत (सर०)। पर०–छह से समचावन (सर०), पर से सत्तावन (नवल०, वेंक०)।
[१८७] ठै–द्वैं (लीथो, नवल०, वेंक०)। नद०–नदनदँन (वही)। सज–सर (वही); सच (सर०)। मन–मभ (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१८८] नल–बन (सर०)।

मोतोयो सोगो करिकै *मायहि* पूरो।
वेई धर्नो *नृत्यगती मत्तमयूरो* ॥१८८॥

१—मालतीमाला, यथा SSSSSSSSSSSS

कित्ती तेरी भू मैं है ज्यों *कैलासा*।
कैलासा मैं जैसे संभू को वासा।
संभूजू मैं गंगाजू की धारा सी।
गंगाजू मैं *मालत्ती की माला* सी॥१८६॥

२—असंबाधा, यथा SSSSS|||||SSS

रात्यो द्योसो वाम जपत अति वै तोपै।
तू ताही को नाम कहति मति लै मोपै।
पापी पीड़ावंत जपत जन सू राधा।
जाके ध्याए होत अकलुप '*असंबाधा* ॥१६०॥

३—वानिनी, यथा ||||S|S|||S|S|SS

ललित दुकान द्वार देखि सुभ को न आवै।
सुमुखि सुबोल भूलि नहिँ को बिकाइ जावै।
दिन दिन 'दास' होति अतिरूपवानिनी है।
करि वहु भाय सैंति मनु लेति *वानिनी* है ॥१६१॥

४—वंशपत्र, यथा S||S|S|||S||||||S

घूँघुरवारि स्याम अलकैं अतिछबि छलकैं।
चारु मुखारबिंद लुबुध्यो कि भँवर ललकैं।
सुभ्र बुलाक मुक्तद्युति कै छनि तिहुँ पुर की।
'दास' सु वंसपत्र यह कै सो नक्किम सुर की॥ १६२॥

---

[१६०] जपत–(लीथो, नवल०, वेंक०)। सू–सुनु (वही)।
[१६१] नहिँ०–को नहिँ (लीथो, नवल०, वेंक०)। दास०–होति दास (वही)।
[१६२] सो०–तो नक्कम (लीथो, नवल०, वेंक०)।

५—समदविलासिनी, यथा ।।।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ

कुच खुलि जाति ऐंठि अँगिराति भीति धरिकै।
लखत गुपाललाल पटओट ओट करिकै।
परसत भूमि केस उर लाज लेस न कहूँ।
समदविलासिनी बसन तौ सँभार अजहूँ ॥ १६३ ॥

६—कोकिलक, यथा ।।।।ऽ।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

अधरपियूष पान तिय को न करै जब लौं।
मधुर सिंगारउक्ति कबि की न लगै तब लौं।
पियत न आम्रमौरमधु कौं जब लौं तिलको।
तब लगि सब्द होत मधुरौ नहिं *कोकिल* को ॥ १६४ ॥

७—माया, यथा ऽऽऽऽऽ।।ऽऽ।।ऽऽ

काहे कौं कीजै मन एती दुचिताई।
काहू सौं वाकी लिपि मेटी नहिं जाई।
ताही कौं ध्यावै मन बाचा अरु काया।
सोई पावैगो जिन देही निर*माया* ॥ १६५ ॥

८—मत्तमयूर, यथा

देख्यो वाही अंगप्रभा कौं सुनि बाला।
जान्यो ह्वैहै आवति कारी घनमाला।
आयो चाहै आध घरी मैं बनमाली।
नच्चै कूकै *मत्तमयूरो* सुनि आली ॥ १६६ ॥

तेईस मात्रा के छंद–(दोहा)

हीरक *दृढ़पट* आदि दै, तेइस मत्त अनंत।
छयालिस सहस 'रु तीनि सै, अठसठि भेद कहंत ॥ १६७ ॥
न ल म ल भ भ कर्ना हृदै *दृढ़पट* आनहु चित्त।
तीनि टगन यक रगन दै, *हीरक* जानो मित्त ॥ १६८ ॥

---

[१६६] आयो–आवै (सर०)।

[१६८] नल०–रलतलाय फलकम दृढपट गुरुजन निच (लीथो, नवल०, वेंक०)।

१—दृढ़पट, यथा ||||SSS|S||S||SS

पहिरत जामा झीन के चहुँधा लगि झून्यो।
चंदनि बाँधतहूँ दुहूँ हाथनि में घून्यो।
हारि दयो री पेंच में मेरो मन आली।
दृढ़ पटुको कटि कसतहीं मोहन वनमाली ॥ १९९ ॥

२—हीरक छंद S||||S||||S||||S|S

जाहु न परदेस ललन लालच उर मंडिकै।
रत्ननि की खानि सुतिय मंदिर में छंडिकै।
विद्रुम अरु लालनि सम ओठनि अनरेखिये।
हीरक अरु मोतिअ अस दंतनि लखि लेखिये ॥ २०० ॥

चौबीस मात्रा के छंद–(दोहा)

लीलादिक अहिपति कह्यो, छंदमत्त चौबीस।
'दास' पचहत्तरि सहस पर, जानौ भृत्ति पचीस ॥ २०१ ॥

लक्षण

पाँचो पाँचो गो द्विज विच *वासंती* को छै।
मास मत्तन ताटंकै देखो जात *चकित* है।
गो कर्नो पिय मो कर्नो द्वै लो दु ग *लीला*।
विद्याधारी सन गुर अनियम है है *रोला* ॥ २०२ ॥

१—वासंती छंद SSSSS||||SSSSS

देखे माते भौंर करत ये दौरादौरी।
आवेंगे गोपाल सदन कौं जोराजोरी।
बैरी बैठी सोच करति है जी मैं भूले।
लागे चैती मास विमल *वासंती* फूले ॥ २०३ ॥

---

[१९९] के–को (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२००] अरु–औ (लीथो, नवल०, वेंक०)। अस–असम (लीथो, नवल०,), असन (वेंक०)।
[२०२] विच–बिय (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२०३] लागे–लागो (नवल०, वेंक०)।

२—चकिता छंद SIIIISSSSSSIIIIS

पीतबसन की काँखासोती मोहनि मन की।
सोहति सजनी त्यौं पाटीरी खौरनि तन की।
तो तन कब के हेरैं आली नेसुक सकि तैं।
निश्चल अँखिया सो हैं मानो खजन *चकितैं* ॥ २०४ ॥

३—लोला छंद SSSIISSSSSIISS

आएहूँ तरुनाई तीने हौ लरिकाई।
होती क्यौं सखियों मैं आपै आप हँसाई।
लज्जा बैरिनि भानौ ठानौ मजुल बोलैं।
प्यारे प्रीतमजू सौं कीजै काम*कलोलैं* ॥ २०५ ॥

४—विद्याधारी छंद SSSSSSSSSSSS

विद्या होवी वैसी मैं आनदैकारी।
आपत्काले जीकी सिक्षा देनेवारी।
सुक्खे दुक्खे ही तैं नाहीं होती न्यारी।
तातैं हूजै मेरे भाई *विद्याधारी* ॥ २०६ ॥

५—रोला

रविछबि देखत घूघू घुसत जहाँ तहँ बागत।
कोकनि को ताही सौं अधिक हियो अनुरागत।
त्यौं कारे कान्हहि लखि मनु न तिहारो पागत।
हमकौं तौ वाही तैं जगत उज्यारो लागत ॥ २०७ ॥

पचीस मात्रा के छंद—(दोहा)

गगनागादि पचीस कल, भेद होत हैं लाख।
इकइस सहस रु तीनिसै, तिरानबे पुनि भाख ॥ २०८ ॥
सौ कल चारि पचीस को, छंदजाति *गगनग*।
पग पग पाँचै गुरु दिये, अतिसुभ कह्यो भुजग ॥ २०९ ॥

---

[२०७] तैं—सौं (सर०)।
[२०९] पाँचैं—पाँचा (लीथा, नवल०, वेंक०)।

गगनांगना छंद

निरखि सौतिजन हृदयनि रहै गरउ को ढंग ना।
पटंतर हित सतकवि के मन को मिटै फलंगना।
बदन उघारि दुलहिया छनकु बैठि कढ़ि अंगना।
चंद पराजय साजहि लजित करहि *गगनगना* ॥ २१० ॥

छब्बीस मात्रा के छंद–(दोहा)

छब्बिस कल में चंचरी, आदि लाख गनि लेहु।
सहस छानवे चारि सै, अट्ठारह कहि देहु ॥ २११ ॥
तीनि रगना पिथहि दै, रांत चंचरी चारु।
सोरह दस जति अंत गुरु, नाम *विष्नुपद* धारु ॥ २१२ ॥

१—चंचरी छंद ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

फागु फागुनमास बीतत धाम धामनि छंडिकै।
चैत मैं बन बाग बापिनि मैं रहै बपु मंडिकै।
फूल रंग सजै लता द्रुम भौंर बाद्य बजावहीं।
कीर कोकिल सारिका मिलि *चंचरी* कल गावहीं ॥ २१३ ॥

२—विष्णुपद छंद

कैसे कहौं सहससुरपति से सिगरे दृष्टि परैं।
'दास' सेष सत सहसजोग कहवे को कहत डरैं।
कह्यो लिख्यो चाहै अनदेखे तूँ निज ओर बकै।
हैहय सहस हजार *विष्नुपद* महिमा लिखि न सकै ॥ २१४ ॥

सत्ताइस मात्रा के छंद–(दोहा)

हरिपद आदि सताइसै, जानौ छंद अनेक।
तीनि लाख सत्रह सहस, आठ सै दस एक ॥ २१५ ॥

---

[२१०] कढ़ि–करि (नवल० २, वेंक०)।
[२१२] तीनि०–सोलो जो जो मोरगन होत (सर०)।
[२१३] बापिनि–बारि न (सर०)। रहै–रही (वही)। बपु–छबि (वही)। मंडिकै–छंडिकै (वही)।
[२१४] हैहय–है यह (लीथो, नवल०, वेंक०)। हजार–हमार (सर०)।
[२१५] जानौ–जानै (लीथो, नवल०, वेंक०)। एक–टेक (वही)।

हरिपद छंद

बिथा और उपचार और तूँ करै सु कौनैं ज्ञानु।
अजौं न कछू नसान्यो मूरख कह्यो हमारो मानु।
पापविबस गौतम की तिय ज्यौं मति ह्वै रही पषानु।
तासु भगति जौ 'दास' चहै तौ *हरिपद* उर मैं आनु॥ २१६॥

अट्ठाइस मात्रा के छंद-(दोहा)

अट्ठाइस मैं *गीतिका*, आदिक कह्यो फनीस।
पाँच लाख चौदह सहस द्वै से पर उनतीस॥ २१७॥

लक्षण-(दोहा)

चारि सगन-भुज *गीतिका*, भरननजजय *नरिंद*।
अनियम बरन नरिंदगति *दोवै* कह्यो फनिंद॥ २१८॥

१—गीतिका ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

इहि भाँति होहु न बावरी चलि चेत जी महँ ल्यावहू।
वृषभान को यह भौन है कह कान्ह कान्ह बतावहू।
मुसुकाति हौ किहि देखिकै किहि देखि गात गोवावहू।
कर बीन लै अति लीन ह्वै यह *गीतिकाहि* सुनावहू॥ २१९॥

२—नरिंद छंद ऽ।।ऽ।ऽ।।।।।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

सिंह बिलोकि लंक मृग दृग अरु चाल करी मदधारी।
जानहिं आपु जाति निज मन महँ करैं प्रीति अधिकारी।
कोल किरात भिल्ल छबि अदभुत देखहिं होहिं सुखारी।
राम-बिरोध सुखहि बन बिचरहिं सत्रु *नरिंद*कुमारी॥ २२०॥

३—दोवै छंद

तुम बिछुरत गोपिन के अँसुवन ब्रज बहि चले पनारे।
कछु दिन गएँ पनारे तें वे उमड़ि चले ज्यों नारे।

---

[२१६] और तूँ-अब तूँ (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२२०] अरु-बरु (नवल० २, वेंक०)। आपु-आखु (लीथो)। बिचरहिं-बिचरत (सर०)।
[२२१] असुवन-अँसुवा (लीथो, नवल०, वेंक०)। जाइ-जाउ (वही)।

वे नारे नदरूप भए अब कहाँ जाइ कोइ जोवै।
सुनि यह बात अजोग जोग की ह्वै है समुद नदी वै॥ २२१॥

उंतीस मात्रा के छंद–(दोहा)

उनतिस मत्ता भेद मैं, मरहट्टादिक देखि।
आठ लाख बत्तिस सहस, चालिस भेद बिसेखि॥ २२२॥

मरहट्टा छंद

सुनि मालवतिय,बरजन की नाईं निपटहि प्रगट न होइ।
अरु गुज्जरजुवतिपयोधर की बिधि निपट न राखहु गोइ।
करि प्रगट दुरे के बीच राखिये यों अक्षर की चोज।
जेहि बिधि मरहट्टबधू राखति है बिच कंचुकी उरोज॥ २२३॥

तीस मात्रा के छंद–(दोहा)

तीस मत्त मैं सारंगी चतुरपदो चौबोल।
तेरह लख छयालिस सहस दु सै अन्हत्तरि डोल॥ २२४॥
तिथि ग सारँगी चतुरपद दुकल सात चौमत्तु।
तीस मत्त चौबोल है, सोरह चौदह तत्तु॥ २२५॥

१—सारंगी छंद

देखो रे देखो रे कान्हा देखीदेखा धायो जू।
कालिंदी मैं कूद्यो कालीनागै नाथ्यो ल्यायो जू।
नच्चै बाला नच्चै ग्वाला नच्चै कान्हा के संगी।
बज्जै भेरी म्रीदंगी तंबूरा चंगी सारंगी॥ २२६॥

२—चतुष्पद छंद

सँग रहे इंदु के सदा तरैया तिनके जिय अभिलाखै।
भुवजनित कीट बरषारितु को तिहि इंदुबधू सब भाखैं।
यह जानि जगत मैं रूपकरूपी है बासर सुमति बिताबै।
अतिदूर ककाररूप बिनु चीन्हे परम चतुरपद पावै॥ २२७॥

---

[२२३] मालव०–मानदुतिय (नवल०, वेंक०)।
[२२६] म्रीदंगी–म्रदंगी (नवल०, वेंक०)।
[२२७] भुव०–भुवतजनित घटि (नवल०, वेंक०)। भिखारै–बखारै (लीथो, नवल०, वेंक०)। पावै–भावै (नवल० २, वेंक०)।

३—चौगेल छंद

सुरपतिहित श्रीपति वामन ह्वै बलि भूपति सौं छलहि चर
स्वामिकाजहित सुक्र दानहूँ रोक्यो वरु हगहानि सह्यो।
सुमति होत उपकार लखहि तौ भूठो कहत न संक गहै।
परअपकार होत जानहि तौ कबहुँ न साँचौ बोल कहै॥ २२८॥

इकतीस मात्रा के छंद–(दोहा)

इकतिस मत्ता भेद मैं, छंद सवैया जोहि।
इकइस लख अठहत्तरे, सहस तीनि सै नो हिं॥ २२९॥

यथा

अरब खरब तें लाभ अधिक जहँ बिनु हर हासिल लाद पलान।
सेतिहि लय देवै आराजी औरहि दए न अपनो ज्यान।
ऐसो राम नाम को सौदा तोहि न भावत मूढ़ अयान।
निसिदिन जात मोहबस दौरत करत सवैया जनम सिरान॥ २३०॥

बत्तीस मात्रा के छंद–(दोहा)

रुपसवैया बत्तिसै, कला लाख पैंतीस।
चौबिस सहस 'रु पाँच सै, अठहत्तरि विधि दीस॥ २३१॥

लक्षण प्रतितुरू

आठो कर्ना पाए दीन्हे *मसा* छुदै जानो धीरा।
सातो हारा सुप्रीमो पुनि सुप्रीमो गुरु है *मजीरा*।
करि हारा भोगहि कर्नौ पीमहि मागो संभू को अंसी†
आठो गो नो टानो दंडो गुरजुगसहित परम छवि हर्मी॥ २३२॥
मत्ताक्रीडा चारो कर्नो यकत चतुर्दस गुरु लल धरिये।
सालूरक विय गुरु छब्बिस लघु भलपर प्रगट बहुरि गुरु करिये।

---

[२२८] वरु–वहु (सर०)।

[२२९] इकइस०–एक लाख (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[२३०] बिनु–बिन (लीथो, नवल०, वेंक०)। आराजी–दाराजी (नवल०, वेंक०)।

[२३२] गो नो–मोना (नवल०, वेंक०)।

[२३३] सालूरक–सालूरकर (नवल०, वेंक०)। भातनु०–भोतनु नीतो

जानि कउंचौ गोलयगोलय दुज करि त्रिगुन सगुन भ्रपर त्यौं।
भोतनुपीतो लगनि ललिय पै *तन्विय* की गति सकलक है यौं ॥ २३३ ॥

१—ब्रह्मा छंद SSSSSSSSSSSSSSSS

तेरी ही कित्ती की गैबै में बानी की बुध्यौ छीहै।
तेरी ही रोमाटोना में ब्रह्मंडा कोटी कोटी है।
तूँ ही संसारै बिस्तारै तूँ ही पालै औ ज्यावै जू।
गोविंदा तेरी इच्छा केतो संभू *ब्रह्मा* ठावै जू ॥ २३४ ॥

२—मंजीर छंद SSSSSSS||SSS||SSSS

मोह्यो री आली मेरो मन श्रीबृंदावन सोभा देखें।
देखैं रीझैगी तैहू अति मैं हौं भाखति रेखा रेखें।
ए री कान्हाजू के निर्तन कोऊ चित्त न राखै धीरा।
जोटीजोटाँ नच्चैं ग्वालिनि बज्जै झालरि औ *मंजीरा* ॥ २३५ ॥

३—शंभू छंद ||SSS||SSS||SSSSSSS

तिय अर्धंगा सिर मैं गंगा गल भोगीराजा राजै जू।
निरखै संता निज नाचंता डमरू डौडौडौ बाजै जू।
सँग बेताली कर दै ताली सुरदानी बानी गावै जू।
धनि प्रानी ते जगु जानी जे नित ऐसो *संभू* ध्यावै जू ॥ २३६ ॥

४—हंसी छंद SSSSSSSS||||||||||SS

जाको जी जासौं पाग्यो सो सहजड तदपि सुखद अति होई।
जो नाहीं जी कौं भावै सो अतिसुभ समुझि चहत किमि कोई।
कलयंकी कौं कैसे भावै जदपि मुकुत अति जगतप्रसंसी।
संसारै नीको लागै पै अनकन कबहुँ चुगति नहिं *हंसी* ॥ २३७ ॥

(वही)। लन्विय०—ललियवै (लीथो, नवल०, वेंक०) गति...
कोटी है—'लीथो, नवल०, वेंक०' में नहीं है। ज्यावै
जू-ज्यावै तू (नवल०, वेंक०)।
[२३४] ठावै-ठानै (नवल० २, वेंक०)।
[२३५] तै-तो (लीथो, नवल०, वेंक०)। के-को (नवल०, वेंक०)।
निर्तन-नृत्तन (सर०)। ग्वालिनि-ग्वालरि (वही)।
[२३६] संता-सत्ता (नवल०, वेंक०)। नाचंता-नाचत्ता (वही)।
[२३७] संसारै-ससारौ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

५—मत्ताक्रीडा छंद SSSSSSSS|||||||||||||||S

काहू कौं थोरो दोषी कै सहन कहत प्रभु परम बिपति कौं।
सो तौ जानै संसारै नारद सन भगत सहउ दुख अति कौं।
काहू काहू भूलें भूलें त्रिभुवनपति बकसत सुभगति कौं।
देखो हाथी *मत्ता क्रीडा* जल महँ करत तरेउ न भगति कौं॥ २३८॥

६—मालूर छंद SS||||||||||||||||||||||||||S

सौदामिनि घन जिमि बिलसत हरि
पहिरि पियर पट सखि उहि उर में।
देखत कलुख भयउ दिन उडुगन
हुतभुक परिय हृदय घन दुख में।
त्यौंही इहि रुख कुँवरि जमुनतट
निरखि निरखि बरपत सुख सुख में।
सालू रँग सँग लसति सुतन रुचि
छनरुचि सरि चमकति निसिमुख में॥ २३९॥

७—क्रौंच छंद S||SSS||SS||||||||||||||S

सेरन कैसी पौरुष बातें किमि करि कहहु डगर निच बरनी।
क्यौं सुक सारी लौं पढ़ि जानै जतननि घरि बक अरु बकचरनी।
ज्ञानिय बिया जातु जनाए नहिं जड कबहुँ बुधनि यह बरनी।
तूल *क्रउचो* क्यौं करि हुसै गनि गनि धरत धरत पग धरनी॥ २४०॥

८—तन्वी छंद S||SS|||||SS||S|||||SS

देखि ससकै अमल जगत में लोग बखानत सहित जुन्हाई।
आननसोभा तरुनि प्रगटिकै जीतन सेत बसन सजि आई।

---

[२३८] देखो–देखा (लीथा, नवल०, वेंक०)। तरेउ०–न रहउ (वही)।

[२३९] सालू–साल (लाथा, नवल०, वेंक०)। पहिरि–परिहरि (नवल०, वेंक०)। निरखि निरखि–निरखि (लीथो, नवल०, वेंक०)। निसि–तिसि (नवल०) तिमि (नवल० २, वेंक०)।

[२४०] सेरन कैसी–कैसी (सर०)। कहहु०–कह उडुगन (नवल० २, वेंक०)। अरु–औ (लीथो, नवल०, वेंक०)। बक–घक (नवल०, वेंक०)।

फूल सरन् सों सुगधनि बस कै जाहिर भो जग मनमथ धन्वी।
जीतति ताको चितवनिसर सों धीर प्रबीन निकल करि *तन्वी* ॥ २४१॥

सुंदरी छंद–(दोहा)

ससग बिप्र दु ग सारवति छंद *सुदरी* जान।
– पद पद मत्त बतीस गनि, चौबिस बर्न प्रमान ॥ २४२॥

सुंदरी, यथा ।।ऽ।।ऽऽ।।।।ऽऽऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

कुच की बढ़ती यों छिन छिन की मेरो मन देखत रीझियो।
दरकी अँगिया बारिक पहिरें अरु बारिक को टुटि बंद गयो।
कटि जात परी है खिन खिन खीनी या बिधि जोबन जोर ठयो।
जबहीं तब नीबी कसतहि देखे *सुदरि* को दिन द्वैक भयो॥ २४३॥

(दोहा)

इमि द्वै तें बत्तीस लगि, वृत्ति बानवे लाख।
सत्ताइस हजार पर, चौ सै बासठि भाखु ॥ २४४॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राप्रस्तारके छंदोवर्णन नाम पंचमस्तरंगः ॥ ५ ॥

६

मात्रामुक्तक छंद–(दोहा)

घटे बढ़े कल दुकलहूँ, बहै भेद अभिराम।
तेहि गनि मत्ता छंद के मुक्तक में गुनवा।

---

[२४१] ससवै–ससेकै (नवल०, वेंक०)। जग–जब (लीथो, नवल०, वेंक०)। सहित०–सहि सुठहाई (लीथो, नवल०, वेंक०)। सों–को (नवल २, वेंक०)। जीतति–जीतन (लीथो, नवल०, वेंक०)। बिकल–सकल (नवल० २), सकल (वेंक०)।

[१] भेद–नाम (सर०)।

चित्र तथा वनीनी छंद–(दोहा)

सोरह सत्रह कलनि को, *चित्र वनीनी* होइ।
चारि चौक मैं तीसरो जगन कहै सब कोइ ॥ २ ॥

यथा ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽऽ

लीन्ही जिन मोल भाय चोखैं। दीन्ही तुमकों बिथा अजोखैं।
कीजै अँखियान की कनीनी। ल्याई सुखिचित्र हौं *वनीनी* ॥३॥
नँदलाल गनै न सीत औ घाम। सेवै तुव द्वार आठहू जाम।
झुकती तुम तासु लेतहीं नाम। पवि चाहि कठोर तो हियो बाम ॥४॥

(दोहा)

सत्रह अट्ठारह कलनि, छंद *हीरकी* तंत।
नद भुजनि बिरमत चलै, दुकल त्रिकलहू अंत ॥५॥

यथा ऽ।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ

'दास' कहै बुद्धि थकै धीर की। देखि प्रभा अद्भुत पाटीर की।
बेसरि की केसरिया चीर की। बारनि की ढारनि की *हीर की* ॥६॥

पुनः

दंतन की चारु चमक देखि देखि। बिज्जुछटा मंद प्रभा लेखि लेखि।
मोहित ह्वै 'दास' घरी चारि चारि। को न चलै जीवन धनवारि वारि ७

(दोहा)

अट्ठारह वानइस सकल, छंद *भुजंगी* मानि।
नैनततग है *चंद्रिका*, वाकी गति पहिचानि ॥ ८ ॥

भुजंगी छंद ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

लला लाड़िली की लखी पीठि मैं। तहाँ स्याम बेनी परी दीठि मैं।
मनो काचनी केदलीपत्र है। *भुजंगी* परी सोवती तत्र है ॥ ९ ॥

चंद्रिका छंद ।।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

कुरव कलरवौ हू करै बोलिकै। दुरदगति हरै मंद ही डोलिकै।
दसनदुति लजीली करै दामिनी। हसनि सन जितै *चंद्रिका* भामिनी ॥१०॥

---

[२] जगन-यगन (नवल०, वेंक०)।
[४] भुकती-फूकती (नवल० २, वेंक०)।

फूल सरन् सों सुगधनि घस कै जाहिर भो जग मनमथ धन्वी।
जीतति ताको चितवनिसर सों धीर प्रवीन निकल करि तन्वी॥ २४१॥

सुंदरी छंद–(दोहा)

ससग मिप्र दु ंग सारवति छंद सुंदरी जान।
पद पद मत्त बतीस गनि, चौबिस बर्न प्रमान॥ २४२॥

सुंदरी, यथा ।।ऽ।।ऽऽ।।।।ऽऽऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

कुच की बढ़ती यों छिन छिन की मेरो मन देखत रीझिगयो।
दरकी अँगिया चारिक पहिरें अरु चारिक को टुटि बंद गयो।
कटि जात परी है खिन खिन खीनी या विधि जोबन जोर ठयो।
जबही तब नीबी कसतहि देखे सुदरि को दिन द्वैक भयो॥ २४३॥

(दोहा)

इमि द्वै तें बत्तीस लगि, वृत्ति बानवे लाख।
सत्ताइस हजार पर, चौ सै बासठि भाखु॥ २४४॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राप्रस्तारके छंदोवर्णन नाम पंचमस्तरंगः॥ ५॥

६

मात्रामुक्तक छंद–(दोहा)

घटे बढ़ें कल-दुकलहूँ, बढ़े भेद अभिराम।
तेहि गनि मत्ता छंद के मुक्तक में गुननाम॥ १॥

---

[२४१] ससकै–ससैकै (नवल०, वेंक०)। जगत–जग (लीथो, नवल०, वेंक०)। सहित०–सहि जुठहाई (लीथो, नवल०, वेंक०)। सों–को (नवल २, वेंक०)। जीतति–जीतन (लीथो, नवल०, वेंक०)। निकल–सकल (नवल० २), सकन (वेंक०)।
[१] भेद–नाम (सर०)।

यथा

करै कीबो कुचर्चा लोगु आली। लुगाई का करैगी कै कुचाली।
प्रभा जो कान्हजू कौं ऊतरी है। सु मेरे नैन दू की पूतरी है ॥१७॥

प्रिया छंद-(दोहा)

बाईसै तेईस कल, छंद *प्रिया* पहिचानि।
चलनि चारु संगीत की, बरनत हैं सुखदानि ॥१८॥

यथा

सो छूटत छूटी सिगरी सीतलई है।
यौं अंग सबै वा दिन तें आगि भई है।
राखे रहिहै 'दास' हमैं दूरि हिया सौं।
यौं पंथी संदेसो कहिबी *प्रानप्रिया* सौं ॥१९॥

हरिप्रिया छंद-(दोहा)

बीस इकीसौ बाइसौ, कला *हरिप्रिया* छंद।
तीनि छकल पर देहु गुरु, नंद कि द्वै गुरु बंद ॥२०॥

यथा

हरति जु है दीनन को संकट बहुतै।
बिनवत तिहि चितवनि हित 'दास' दास है।
करनि हरनि पालनि तूँ देवि आपु ही।
संभुप्रिया ब्रह्मप्रिया *हरिप्रिया* तुँ ही ॥२१॥

पुनः

करति जु है दीननि के सकट को हीन।
बिनवत विहिं 'दास' दास दीन।

---

[१७] कीबो–कीबो (लीथो, नवल०); कोवा (नवल २, वेंक०)।
का–क्या (लीथो, नवल० वेंक०) सु–सो (वही)।
[१९] पंथी–पथिक (सर०)।
[२०] द्वै–है (नवल०, वेंक०)।
[२१] बहुतै–बहुत है (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२२] बिनवत–बिन व्रत (लीथो, नवल०)।

नांदीमुखी–(दोहा) ||||||SSSSSSSSS

पंच लहू पर मगन त्रय, *नांदीमुखी* विचित्र।
गति लीन्ही नियमौ तजै, वहै नाम है मित्र ॥ ११ ॥

यथा

जनमहिं प्रभु लियो औध में लूटि माँची।
लूट्यो सब सघनि वस्तु एकौ न बाँची।
दुजनि किय निंदा वाकबादै सुखी कै।
नृपति जब उठे श्राद्ध *नांदीमुखी* कै ॥ १२ ॥

(दोहा)

बोनईस के बीस कल, छंद होत *चितहंस*।
नंद करन द्वै अंत रो, कै है रल अवतंस ॥ १३ ॥

यथा

पद्म बैठक मुक्त भोजन छोड़िकै।
तू सहै दुख भूख को पनु बोड़िकै।
'दास' हास करै घने बकवंस रे।
तोहि ह्याँ वसुवास न *उचित हंस* रे ॥ १४ ॥

पुनः

भौंर नाभी बीच गोते खाइ खाइ। बूड़ि गो री चित्त मेरो हाइ हाइ।
चाहि *गिरि गिरि गाहि तिरि तिरि फेरि फेरि*। 'दास' मेरे *नैन थाके हेरि हेरि* ॥ १५ ॥

सुमेरु छंद–(दोहा)

कल बानईसै बीस को, छंद सुमेरु निबेरि।
लहू मगन लहु मगन यो, कहूँ अंत लहु फेरि ॥ १६ ॥

---

[१२] औध–अवध (नवल०, वेंक०)। वाकबादै–वाकदस्तै (सर०)।
[१४] न उचित–उचित न (लीथो, नवल० वेंक०)।
[१६] मगन यो–भगन यो (नवल० २, वेंक०)। कहूँ०–लहू बचय लिखु फेरि (सर०)।

यथा

कान्ह की त्यौर तेग चोखी है। रीति यामें कहा अनोखी है।
पवि से मो हियें जु लागि उठै। *अवधा* ज्यौं वियोग-आगि उठै ॥२८॥

सायक छंद

सगनागो सगनागो सगना। रगनादीहुँ नहीँ दो सगना।
लहु आद्यंत परे सत्रह लेखि। नाम है *सायक* या छंदहि देखि ॥२९॥

यथा

अँखियाँ काजर की कोरनहीँ। भृकुटी औ तिरछी त्योरनहीँ।
'दास' ये प्रानिन के घायक हैँ। बिसु हैँ खंजर हैँ सायक हैँ ॥३०॥

भूप छंद

सगनागो सगना। रगना आदि भना।
लहु औ अंत भलोइ। भूप सिव सूर कलोइ ॥३१॥

यथा

भावती जाति कितै। नेकु तो ताकि इतै।
तेरो ई घायल हौं। भू पर्‍यो हायल हौं ॥३२॥

मोहनी छंद

सगनागो सगनागो सगनागो सगना।
रगना आदि दियेहु न कछु दो सगना।
बाईसे तेईस कल अंत लहू चौबिस होइ।
मोहनी छंद कहैँ याहि सयाने सब कोइ ॥३३॥

ढूँढेहूँ है न तिती पंकज के कानन मैं।
सुषमा 'दास' जिती मोहन के आनन मैं।
न तिती जानि परै मन्मथ के बानन मैं।
मोहनी-रीति जिती है बँसुरी तानन मैं ॥३४॥

---

[२८] ज्यौं-क्यौं (सर०)। सूर सून (वही)।
[३२] भू पर्‍यो-भूप सो (नवल० २), पूप सो (लीथो, नवल० १, वेंक०)।
[३३] दो-दी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

करनि हरनि पालनि तूँ देवि सर्ब ठौर।
संभुप्रिया ब्रह्मप्रिया *हरिप्रिया* न और ॥२२॥

पुनः

हरति जु है दीननि को संकट बहुतेरो।
विनवत तिहि चितवनि हित 'दास' दास तेरो।
करनि हरनि पालनि तूँ देवि आपु ही है।
संभुप्रिया ब्रह्मप्रिया *हरिप्रिया* तुँ ही है ॥२३॥

दिग्पाल छंद–(दोहा)

होत छंद *दिगपाल* पल, बाईसो तेईस।
चौबीसो पूरो भए, है दूनो *दिगईस* ॥२४॥

यथा

सो पायँ आजु डोलै मही सीत धूप में।
विधि बुद्धि तुच्छ जाकी महिमा अनूप में।
हर जासु रूप राखै हिय बीच सर्वदा हि।
दिगपाल भाल जाकी रज राजती सदा हि ॥२५॥

पुनः

सखि प्रान की सँघाती प्यारी नहीं लगै री।
सुखदानि बानि तेरी अति दूरि को भगै री।
अलि कान्ह प्रान मेरो निज साथ लै गयो है।
मन आपनो निमोही वह मोहिं दै गयो है ॥२६॥

अविधा छंद

सगना रगगना जगनु लगं। रगगन रगान लमकारो दै।
अविधा छंद पाय नाग कहंत। सोरहो सत्रहो अठारह मंत ॥२७॥

---

[२४] भए–भयो (नवल०, वेंक०)।
[२५] हिय–हिये (लीथो, नवल०, वेंक०); हियो (नवल० २)।
[२६] अति०–मुनि दूरि के (सर०)।
[२७] रगगन०–रगना रगनात को र दगै (लीथो, नवल०, वेंक०)।

बसंत के गृह आजु ब्याह बछाह परम पुनीत है।
चकोर कोकिल कीरभामिनि गावती *सुभ गीत* है ॥३९॥

हरिगीत छंद

बनमध्य ज्यों लखि साजसंजुत व्याध बासहि सज्जतो।
पसु पक्षि मृगया जोग निज निज जीव लै लै भज्जतो।
त्यों मोह मद पैसुन्य मत्सर भाजि जात सभीत है।
जब 'दास' के उर भक्तिसंजुत जोसतो *हरिगीत* है ॥४०॥

अतिगीता छंद

चैत चाँदनि मैं उतै मुरली बजाई नंदनंद।
तान सों बनितान कों गलितान किय विधि बंद बंद।
ता समै बृषभानुनंदिनि ह्याँ गई चलि फंद फंद।
मोहि मोहनऊ गिरे अवलोकिकै मुखचंद चंद ॥४१॥

शुद्धगा लक्षण

यगन गुरू करि चौगुनो, छंद *सुद्धगा* होइ।
अंत घटै कल दुकलहू, बहै कहै सब कोइ ॥४२॥

यथा

कहा बैठी कहा बौरी धरी कान्हा कहाँ जैहै।
सु तौ याँही घरी मैं देखि तेरे पास ही पैहै।
सिखायो मानिकै मेरो सितारा लै बजावै तूँ।
सखी वा द्यौस की नाईं केदारा *सुद्ध गावै* तूँ ॥४३॥

लीलावती छंद

द्वै कल दै फिरि तीस कल, *लीलावती* अनेम।
दुगुन पद्धरिय के किये, जानो वहै सप्रेम ॥४४॥

यथा

पीतंबर मुकुट लकुट कुंडल बनमाल बैसोई दरसावै।
मुसुकानि विलोकनि मटक लटक बढ़ि मुकुर छाँह तें छबि पावै।

[४०] जोसतो—ज्यों सतो (लीथो, नवल०, वेंक०)। 'सर०' में चतुर्थ पंक्ति नहीं है।

[४१] सों ०-सोवति (नवल०, वेंक०)।

[४५] लकुट कुंडल—लकुट (लीथो, नवल०, वेंक०)।

अथ गीताप्रकरण—(दोहा)

चौबिस कल गति चचरी, रूपमाल पहिचानि।
लघु दै आदि पचीस कल, *सुगीतिका* उर आनि।
द्वै द्वै आदि छबीस करि, *गीता* कहौं बिसेषि।
गुरु दै अंत सुगीति के, *सुभगीता* अवरेखि।
करि गीता गुरु अंत *हरिगीता* अट्ठाईस।
अंत लहू *अतिगीत* करि, सताइसौ उनतीस ॥३५॥

रूपमाल, यथा

जात है धन बादिहीं गल बाँधिकै बहु तंत्र।
धामहीं किन जपत कामद रामनाम सुमंत्र।
ज्ञान की करि गूदरी दृढ़ तत्त्व तिलक बनाउ।
'दास' परम अनूप सगुन सुरूप *माला* टाउ।३६॥

सुगीतिका छंद

हजार कोटि जु होइ रसना एक एक सुरम्म।
इड़ा अरबिन जौ बसै रसनानि मंडि समम्म।
दरौं रहै ढिग 'दास' तनु धरि बेद परम पुनीत।
कहै कछु अहिराज तब ब्रजराज तुव जसु *गीत* ॥३७॥

गीता छंद

मन बावरे अजहूँ समुझि संसार भ्रम-दरियाउ।
इहि तरन कौं यह छोड़िकै कछु नाहिं और उपाउ।
लै संग भक्ति मलाह करिया रूप सौं लव लाउ।
श्रीरामसीताचरित चरचा सुभ्र *गीता* नाउ ॥३८॥

शुभगीता छंद

बिलोकि दुलहिनि बेलि के तन फूलमाल बिराजई।
रसाल दूलह सीस सुंदर मौर की छबि छाजई।

---

[३६] ठाउ–गाउ (नवल० २, वेंक०)।
[३७] *दिग–दिग* (नवल०, वेंक०)। वेद–देव (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[३८] तरन०–तरनिका (लीथो, नवल०, वेंक०)।

सोरठा

सोवन दीजै धाइ, भीजै नेकु बिभावरी।
अबै गहो जनि पाइ, *सोर* ठानि है मेखला ॥ ६ ॥

दोही–दोहरा

दोहा के तेरहनि मैं, द्वै द्वै कला बढ़ाइ।
कीजै *दोही दोहरा*, एकै एक घटाइ ॥ ७ ॥

दोही

जनि बाँह गहो हौं जानती, लाल तिहारी रीति।
हौ निरमोही नित के करौ दो *ही* दिन की प्रीति ॥ ८ ॥

दोहरा

जातन कनक तन्यो ना, लगत चौहरो लाल।
मुकुतमाल हिय तेहरो, *दोहरो* बेंदा भाल ॥ ९ ॥

उल्लाला

करि बिषमदलनि पंद्रह कला, सम पायनि तेरह रहै।
तुक राखि अठाइस कलनि पर, *उल्लाला* पिंगल कहै ॥१०॥

यथा

कहि काव्य कहा बिन रुचिर मति, मति सु कहा बिनहीं बिरति।
कह बिरतिउ *लाल* गोपाल के चरननि होइ जु प्रीति अति ॥११॥

चुरियाला

दोहा दल के अंत मैं और पंच कल बंद निहारिय।
नागराज पिंगल कहै *चुरियाला* सो छंद बिचारिय ॥१०॥

यथा

मैं पिय मिलन अमिय गुनो बलि बिसु समुझि न तोहि निहोरति।
झटकि झटकि कर लाड़िली *चुरिया* *लाखन* की कत फोरति ॥१३॥

---

[७] एकै-एकौ (लाथो, नवल०, वेंक०)।

[११] कह-यह (सर०)।

[१२] दल-तल (लीथो, नवल०, वेंक०)। निहारिय-निहारिये (वही)। बिचारिय-बिचारिये (वही)।

[१३] निहोरति-न हो रति (नवल०, वेंक०)।

मो विनय मानि चलि वृंदावन बंसी बजाइ गोधन गावै।
तौ *लीलावती* स्याम मैं तो मैं नेकु न उर अंतर आवै ॥४५॥

पुनः

जेहि मिलति न तूँ तेहि रैन साँझही तें रट लावत तोहि तोहि।
अधरात चटत करि हाय हाय परजंक परत पुनि मोहि मोहि।
कर के ढिग ठाढ़े हहा रात यह छीन गात गति जोहि जोहि।
किय केवल तूँ यह लालहाल दिनरैनि बिसासिनि कोहि कोहि ॥४६॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे नानामुक्तछंदोवर्णनं
नाम षष्ठस्तरंगः ॥ ६ ॥

७

जातिछंद-वर्णन-(दोहा)

प्रस्तारनि की रीति सौं, करि कछु भिन्न बिभाग।
जातिछंद बरनन कियो, बहुबिधि पिंगल नाग ॥ १ ॥

दोहा-प्रकरण

तेरह ग्यारह तेरहै, ग्यारह *दोहा* चारु।
दोहा उलटे *सोरठा*, बिदित सकल संसारु ॥ २ ॥

(दोहा)

मन बालक समुझाइये, तुम्हहि बिनै रघुनाथ।
नतरु बोलाए कौन के, आवै चंदो हाथ ॥ ३ ॥

दोहा-दोष

प्रथम तीसरे चरन मैं, जगन जोहिये जासु।
सो दोहा *चंडालिनी* बोलै बिबिध बिनासु ॥ ४ ॥
बारह लघु बाईस लघु, बत्तिस लौं लघु मानि।
चारि बरन दोहा कही, बाकी लघु लौं जानि ॥ ५ ॥

---

[४६] छीन–छिन (लीथो, नवल०, वेंक०)। केवल–केर तूँ (सर०)।

सोरठा

सोवन दीजै धाइ, भीजै नेकु बिभावरी।
अबै गहो जनि पाइ, *सोर* ठानि है मेखला ॥ ६ ॥

दोही-दोहरा

दोहा के तेरहनि मैं, द्वै द्वै कला बढ़ाइ।
कीजै *दोही दोहरा*, एकै एक घटाइ ॥ ७ ॥

दोही

जनि बाँह गहो हौं जानती, लाल तिहारी रीति।
हौ निरमोही नित के करो दो *ही* दिन की प्रीति ॥ ८ ॥

दोहरा

आतन कनक तच्यो ना, लगत चौहरो लाल।
मुकुतमाल हिय तेहरो, दोहरो बेंदा भाल ॥ ९ ॥

उल्लाला

करि बिषमदलनि पंद्रह कला, सम पायनि तेरह रहै।
तुक राखि अठाइस कलनि पर, *उल्लाला* पिंगल कहै ॥१०॥

यथा

कहि काव्य कहा बिन रुचिर मति, मति सु कहा बिनहीं बिरति।
कह बिरतिउ *लाल* गोपाल के चरननि होइ जु प्रीति अति ॥११॥

चुरियाला

दोहा दल के अंत मैं और पंच कल चंद निहारिय।
नागराज पिंगल कहै *चुरियाला* सो छंद बिचारिय ॥१०॥

यथा

मैं पिय मिलन अमिय गुनो बलि निसु समुझि न तोहि निहोरति।
भटकि भटकि कर लाडिली *चुरिया* लाखन की कत फोरति ॥१३॥

---

[७] एकै-एकौ (लाथा, नवल०, वेंक०)।
[११] कह-यह (सर०)।
[१२] दल-तल (लीथा, नवल०, वेंक०)। निहारिय-निहारिये (वही)। बिचारिय-बिचारिये (वही)।
[१३] निहोरति-न हो रति (नवल०, वेंक०)।

ध्रुवा छंद

पहिलहि बारह कल करु बहुरहुँ सत्त।
इहि विधि छंद *ध्रुवा* रचु उनइस मत्त ॥१४॥

यथा

ध्रुवहि छाँडि जो अध्रुव सेवन जाइ।
अध्रुव तासु नसैहै ध्रुवहु नसाइ ॥१५॥

घत्ता छंद–(दोहा)

दस बसु तेरह अर्ध में, समुझिय *घत्ता* छंद।
ग्यारह मुनि तेरह बिरति, जानो *घत्तानंद* ॥१६॥

यथा

मोहनमुख आगे अति अनुरागे मैं जु रही ससिछवि निदरि।
दुख देत सु आली बिनु बनमाली *घत्ता* लहि चूकत न अरि ॥१७॥
सखि सोवत मोहि जानि कछु रिस मानि आइ गयो गति चोर की।
सोयो ढिगहि चुपाइ कहि नहिं जाइ *घत्ता* नंदकिसोर की ॥१८॥

यथा

हरिपद दोवै चौबोला, द्वै ही द्वै तुक जानि।
दोहा-प्रकरन-रीति में, लिख्यो 'दास' उनमानि ॥१९॥

चौपैया-प्रकरण–(दोहा)

चारि चरन में जति जमक, तुक बरननि करि नेम।
जातिछंद बरन्यो अहिप, सोऊ सुनौ सप्रेम ॥२०॥

चौपैया-छंद

दस बसु बारह बिरति तें, *चौपैया* पहिचानि।
चारि चरन चौगुन किये, होत निपट सुखदानि ॥२१॥

---

[१९] चौबोला–चौबोलो (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२०] सोऊ–सोइ (सर०)।

चौपैया, यथा

तल वितल रसातल गगन भुवनतल सृष्टि जिती जग माहीं।
पुर राम सुथल मैं कानन जल मैं वाहि रहित कछु नाहीं।
पिय मिलहि न रामहिं तजि सिय धामहिं नहिं बचाउ कहुँ भागें।
सुरपतिसुत काँचो सब जग नाँचो पाँचो *पैग्रा* लागें ॥२२॥

लक्षण प्रतितुक

दस वसु दस चारे विरति विचारे *पदमावति* तल गुरु दोई।
याही विधि ठानौ *दुर्मिल* जानौ अंत सगन कर्नो होई।
दस वसु करि यों ही चौदह त्यों ही अंत सगन है *दंडकलो*।
दस वसु वसु संगी पुनि रसरंगी होत *त्रिभंगी* छंद भलो ॥२३॥

(दोहा)

आठ आठ चौकल परैं, चारैं-रूप निसंक।
भूलेहु जगन न दीजिये, होत छंद सकलंक ॥२४॥

पद्मावती

ालिनि सी वेनी लखि छविसेनी तजत न आसा मोरैं जू।
सि सो मुख सोभित लखि हौ लोभित लाषत टकी चकोरैं जू।
ाकसत मुख स्वासैं पाइ सुवासैं संग न छोड़त भौंरैं जू।
ाहिर आवति जब *पद्मावति* तब भीर जुरति चहुँ ओरैं जू ॥२५॥

दुर्मिल छंद

इक त्रियव्रतधारी परउपकारी नित गुरुआज्ञा-अनुसारी।
निरसंचय दाता सब रसज्ञाता सदा साधुसंगति प्यारी।
संगर मैं सूरो सब गुनपूरो सरल सुभायँ सत्ति कहै।
निरदंभ भगति घर विधनि आगर चौदह नर जग *दुर्मिल* है ॥२६॥

दंडकला छंद

फल फूलनि ल्यावै हरिहिं सुनावै ए हैं *लायक भोगनि की*।
अरु सब गुन पूरी स्वादनि रूरी हरनि अनेकनि रोगनि की।

---

[२२] कछु-फछु (सर०, लीथो)। [२५] हौ-है (सर०)।
[२६] नित-पित (नवल० २, वेंक०)। सुभाएँ-सुभावं (लीथो, नवल०, वेंक०)।

हँसि लेहि कृपानिधि लखि जोगी विधि निंदहि अपने जोगनि की।
नभ तें सुर चाहैं भागु सराहैं फिरि फिरि दंडक लोगनि की ।।२७।।

त्रिभंगी छंद

समुझिय जग जन में को फल मन में हरिसुमिरन मैं दिन भरिये।
झिगरो बहुतेरो घेरु घनेरो मेरो तेरो परिहरिये।
मोहन बनवारी गिरिवरधारी कुंजविहारी पगु परिये।
गोपिन को संगी प्रभु बहुरंगी लाल *त्रिभंगी* उर धरिये ॥२८॥

जलहरण छंद–(दोहा)

लघु करि दीन्हे बत्तिसौ, *जलहरना* पहिचानि।
तिरभंगी पर आठ पुनि, *मदनहरा* उर आनि ॥२९॥

यथा, जलहरण छंद

सुदि लयउ मिथुन रबि उमड़ि घुमड़ि
फबि *गगन सघन घन झपकि झपकि।*
करि चलति निकट तन छनरुचि छन
छन रुग अरु झर सम लपकि लपकि।
कछु कहि न सकति तिय बिरह
अनल हिय उठत खिनहिँ खिन तपकि तपकि
अति सकुचित सखियन अध करि
अँखियन लगिय *जल हरन* टपकि टपकि ॥३०॥

मदनहरा छंद

सखि लखि जदुराई छबि अधिकाई भाग
भलाई जानि परै फल सुकृत फरै।
अति कांति सदन मुख होतहि सन्मुख
'दास' हिये सुख भूरि भरै दुख दूरि करै।
छवि मोरपखन की पीत बसन की चारु
भुजन की चित्त अरै सुधि बुधि बिसरै।
नव नील कलेवर सजल भुवनधर
धर इंदीवर छवि निदरै मद *मदन हरै* ॥३१॥

---

[२८] गोपिन को–गोपिन के (सर०)।
[३०] अध–तर (सर०)।

लक्षण—(दोहा)

एकै तुक सोरह कलनि, *पायकुलक* गुरु अंत।
चहुँ तुक भागन जमक सो, *अलिला* छंद कहंत ॥ ३२ ॥

पायकुलक

दृग आगैं सोवतहु निहारौं। हिय तें क्यौं हरिरूप निकारौं।
ह्वाँ निज तन सम रतन बिचारौं। केहि *उपाय कुलकानि* सँभारौं ॥३३॥

अलिला छंद

भ्रुव मटकावति नैन नचावति। सिंजित सिसिकिन सोर मचावति।
सुरत समै बहुरंग रचावति। *अलि लालन* हित मोद सचावति ॥३४॥

सिंहविलोकित छंद—(दोहा)

चारि सगन कै द्विज चरन, *सिंहविलोकित* एहु।
चरन अंत अरु आदि के, मुक्तपदग्रस देहु ॥ ३५ ॥

यथा

मुनि-आश्रम-सोभ धरयो तिर्न्हहीं। अहि कच सँग वेसरि मोर जहीं।
जहँ 'दास' अहितमति सकल कटी। कटि *सिंह विलोकित* गति करटी ॥३६॥

लक्षण—(दोहा)

रोला में लघु रुद्र पर, *काव्य* कहावै छंद।
ता आगे उल्लाल दै, जानहु छप्पै बंद ॥ ३७ ॥

काव्य छंद

जनमु कहा बिन जुवति जुवति सु कहा बिन जोबन।
कह जोवन बिन धनहि कहा धन बिन अरोग तन।
तन सु कहा बिन गुनहि कहा गुन ज्ञानहीन छन।
ज्ञान कि बिद्याहीन कहा बिद्या सु *काव्य* बिन ॥ ३८ ॥

---

[३२] सो—सोइ (सर०)।
[३३] सोवतहु—सोवतहि (सर०)। सम—सम (नवल २, वेंक०)।
[३६] जहिँ—जेहि (सर०); जहँ (लीथो, नवल०, वेंक०)। कटि—कर (वही)।

छप्पै छंद

भाल नैन मुख अधर चिबुक तिय तुव बिलोकि अति।
निर्मल चपल प्रसन्न रत्त सुभ वृत्त थकी मति।
उपमा कहँ ससि खंज कंज बिबिय गुलाब धर।
खंड थान थित प्रात पक्व प्रफुलित सुसोभधर।
सारद किसोर सुभगंध मृदु नवल 'दास' आवत न चित।
जु कलंकरहित जुग सर लहित डारगहित षट्पद-सहित। ३९।

लक्षण

सिंहबिलोकन रीति दै, दोहा पर रोलाहि।
कुंडलिया उद्धत धरन त्रिजति *अमृतधुनि* चाहि ॥ ४० ॥

कुंडलिया

साँई सब संसार को संतत फिरत असंग।
काम जारि कीन्हो भसम मृगनैनी अरधंग।
मृगनैनी अरधंग 'दास' आसन मृगछाला।
सुनिये दीनदयाल गरे नरसिर की माला।
सुनिये दीनदयाल करौ अजगुत सब ठाँई।
करन गहे *कुंडलिय* बिदित भयहरन गोसाँई ॥ ४१ ॥

अमृतध्वनि छंद

धुनि धुनि सिर खल त्रिय गिरहि सुनत राम धनु सब्द।
लगिगय सर झरि गगन महि जथा भाद्रपद अब्द।
अब्द निनद करि क्रुद्ध कुटिल अरि जुभिक्ष मरत लरि।
मुंड परत गिरि रंड लरत फिरि खग्ग पकरि करि।
रिक्ष प्रबल भट उद्धत मर्कट मर्दत तिहि पुनि।
निर्तत सुर मुनि मित्त कहत जय कृत्ति *अमृतधुनि* ॥ ४२ ॥

(दोहा)

पायाकुलक त्रिभंगियौ, होत सुकपदग्रस्त।
छंद कहत *हुल्लास* है, करि तुक आठ समस्त ॥ ४३ ॥

---

[३९] बिबिय०–बिबिधनु लाब (सर०)।
[४२] गगन–सकल (सर०)। जुभिक्ष–युक्ति (नवल २, वेंक०)। मित्त–मित्र (वही)।

हुलास छंद

कान्ह जनमदिन सुर नर फूले।
नभधर निसिबासर समतूले।
महि तें महरि अबीर उड़ावें।
दिवि तें देवि सुमन बरसावें।
सुमननि बरसावें हरष बढ़ावें तजि तजि धावें आनन कौं।
सजि तिय नरभेषनि सहित असेखनि करहिं असेषनि गानन कौं।
तिनि लोगनि की गति दाननि की अति निरखि सचीपति भूलि रहै।
भजसोभ प्रकासहि नंद बिलासहि 'दास' हुलासहि कौन कहै ॥४४॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राजातिछंदोवर्णनं
नाम सप्तमस्तरंगः ॥ ७ ॥

८

(दोहा)

जाति छंद प्राकृतनि के, निपट अटपटे ढंग।
'दास' कहै गाथादि दै, तिनको भिन्न तरंग ॥ १ ॥
बिषमनि बारह कल समनि, पंद्रह ठारह बीस।
सम पद तीजो गन जगन, *गाथा* प्रकरन ईस ॥ २ ॥

लच्छन

सम पद *गाहू* पंद्रह पंद्रह अट्ठारह ठारह *उग्गाहा*।
अट्ठारह पंद्रह *गाहा* कहि पंद्रह अट्ठारह *बिग्गाहा*।
बीसै बीस सघ कल बीसै अट्ठारह सम पद *सिंघिनी*।
सबके रबि कल बिषम दलनि सम अट्ठारह बीसै *गाहिनी*॥३॥

गाहू छंद

सिव सुर मुनि चतुरानन, जाको लहै नाही थाहू।
पारवार कोउ जान न, हरिनामसमुद्र *अवगाहू* ॥ ४ ॥

उग्गाहा

सिव सुर मुनि चतुरानन, जाको कबहूँ नहीं लहै थाहा।
पारवार कोउ जान न, हरीनामै समुद्र *अवगाहा* ॥ ५ ॥

गाहा विग्गाहा अर्थ मैं जाति

बारह लहुआ *विप्री*, बाईसा· *छत्रिनी* गाहो।
बत्तीसा सो *बैसी*, बाकी लहु है *सुद्रिनी* बिगाहो ॥ ६ ॥

खंधा छंद—जगनफल

एक जगन *कुलवंती*, दोइ जगन्न *गिहिनी* सु है सुनि खंधो।
जगनविहीना *रंडा बेस्या* गायो बहु जगन्न को *खंधो* ॥ ७ ॥

गाहिनी तथा सिंहिनी

सुनि सुंदरि मृगनैनी, तूँ प्रभासमुद्र *अवगाहिनी* राजै।
हंसगमनि पिकबैनी, तो लंक बिलोकि *सिंहिनी* लाजै ॥ ८ ॥

उलटि पढ़े गाहिनी

चपला गाथा

चपला गाथा जानो, यह दोइ जगंनु है समे पाया।
पिंगल नाग बखानो, गुरु दोइ तुकंत मैं टाया ॥ ९ ॥

(दोहा)

ताहि *जघनचपला* कहैं, दल दूसरे ज दोइ।
प्रथम दलहि मैं जगनु द्वै, *मुखचपला* है सोइ ॥ १० ॥

---

[४] लहै नाही–नाही लहै (सर०), लहै नही (लीथो, नवल १, वेंक०), लहै नहि (नवल २)।

[५] सुर०–मुनि सिव (लीथो); मुनि सुर (नवल०, वेंक०)। हरी०–हरिनामै समुद्र (सर०), हरिनाम समुद्र (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[७] बेस्या०–ब्यास्या गाहो (सर०)।

विपुला गाथा

प्रथम पाय कल तेरहै, सत्रहै मत्त हैं निये नाथा।
तिसरे पय ग्यारहै, चौथे सोरह *विपुला गाथा* ॥ ११ ॥

रसिक छंद—(दोहा)

ग्यारह ग्यारह कलनि को, पटपद *रसिक* बखानि।
सब लघु पहिलो भेद है, गुर दै बहु निधि ठानि ॥ १२ ॥

यथा

हसत परसत दधि मुदित। झुकत भजत मुरत रुदित।
त्रसित तियनि मिलि रहत। रिसजुत घिरतिहि गहत।
अगनित छबि सुखरसिक। सिसु तन नवरस *रसिक* ॥ १३ ॥

संजा छंद—(दोहा)

सात पंच लघु जगन गो, मत्ता चरतालीस।
यौंही करि दल दूसरो, *संजा* रच्यो फनीस ॥ १४ ॥

यथा (||||||||||||||||||||||||||||||||||||ISIS)

सुमुखि तुअ नयन लखि दह गहेउ भखनि भखि
गरल मिस्रि भँवर निसि गिलत नितहि कंज है।
निमि तजेउ सुरतियनि मृग फिरत घनहि बन
तुअ हरुअ मदन सर थिर न रहत *संज* है ॥ १५ ॥

लक्षण—(दोहा)

संजा के दल अंत पर, द्वै गुरु दै सुखकंद
आग गाहा अर्ध करि, जानहि *माला* छंद ॥ १६ ॥

माला छंद

लगत निरखत ललित सकल तन श्रमकलित
गजअधिप अँगवलित सुरतिसमय सोहती बाला।
मरकत-तरु जनु लवढी फलि कनकलता मुकुत*माला* ॥ १७ ॥

[६-११] सर० में नहीं है।
[१५] निमि०—निसि निमित्त ज्यौं (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१६] अंत—अर्ध (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१७] समय—सम (लीथो, नवल०, वेंक०)।

शिष्या छंद–(दोहा)

पहिले दल में चौबिसै, लहु पर जगनहि देहु।
पुनि बत्तिस पर जगनु दै, *सिष्या* गति सिरिज लेहु॥ १८॥

यथा

सुभरदनि बिधुबदनि गुनसदनि जगहदनि नहिं तोहि सरिष्यु।
कुँअरि मम बिनय श्रवन सुनि समुझि पुनि मनहिं गुनि न
प्रिय प्रति रिस कुमति सिष्यु॥ १९॥

चूड़ामणि छंद–(दोहा)

दोहा गाहा कौं करो, मुक्तपदग्रस बंद।
नागराज पिंगल कह्यो, सो *चूड़ामनि* छंद॥ २०॥

यथा

दिनहीं में दिनकर दिपै निसिहीं मैं ससिजोति।
जगदंबा-द्युति दिवस निसि जगमग जगमग होति।
जगमग जगमग होती होरी के ज्यौं गरेरि चिनगारैं।
चक्रवर्ति *चूड़ामनि* जाके पग भूतल हजारैं॥ २१॥

अथ रड्डा छंद

प्रथम तीय पंचम चरन, पहिले जानि अभेद।
दूजो चौथो फेरि गुनि, जानहि *रड्डा* भेद॥ २२॥

यथा

तेरह ग्यारह *करभी* बरनि।
नंद भुवन हर ढरनि। चौनइस रुद्र *मोहनी* अरनि।
चारुसेनि तिथि हरनि। तिथि रवि मत्ता *भद्रा* धरनि।
तिथि रवि तिथि हर तिथि पयनि, *राजसेनि* रड्डाहि।
तालंकिनि तिथि कल अधिक, दोहा सब तल चाहि॥ २३॥

---

[१६] सम-सम (नवल २, वेंक०)।
[२१] होरी०–होरी ज्यौं गोरी (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२३] मोहनी–नोहनी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

तालंकिनि रङ्गा, यथा

धालापन धीत्यो बहु खेलनि ।
जुवा गई तियकेलनि । रह्यो भूलि पुनि सुतनिन रेलनि ।
जिय गल डारि जेलनि । अजहुँ समुझि तजि मूरख पेलनि ।
काल पहूँच्यो सीस पर नाहिन कोऊ अङ्ग ।
तजि सब माया मोह मद रामचरन भजु रङ्ग ॥ २४ ॥

(दोहा)

पाँच चरन रचना उपर, दीजै दोहा अंत ।
सात भेद अहिपति कह्यो, नव पद रङ्गा तंत ॥ २५ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृत छंदार्णव भाषाजातिछंदोवर्णनं
नाम अष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

९

मात्रादंडकवर्णनं-(दोहा)

छबिस सौं बढ़ि बर्न जो, दंडक बर्नै बिसेषि ।
बत्तिस तें बढ़ि मत्त जो, मत्तादंडक लेखि ॥ १ ॥

झूलना छंद-(दोहा)

दस दस दस मुनि जति चरन, छंद झूलना सत्त ।
दुकल सिरहु रबै सैंतिसो, चोनतालीसौ मत्त ॥ २ ॥

---

[२४] पेलनि-हेलनि (सर०) । डारि०-डारी तेरे जेलनि (नवल०, वेंक०) ।

[१] बढ़ि-चढ़ि (सर०) ।

[२] दुकल०-दुकबलि रहु रवौ (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

यथा

पानि पीवै नहीं पान छीवै नहीं घास अरु बसन रासै न नेरो।
प्रान के ऐन मैं नैन मैं बैन मैं है रह्यो रूप गुन नाम तेरो।
बिरहबस ऐसे ह्वो है वहो कै मही राखिहै कै नहीं प्रान मेरो।
तोहि तकि याहि संदेह के झूलना झूलतो चित्त गोपाल केरो ॥ ३ ॥

दीपमाला–(दोहा)

दीपक को चौगुन किये, *दीपमाल* सुखदानि।
चालिस कल सिर है घटै, अंत बढ़े *बिजया* नि ॥ ४ ॥

दीपमाला, यथा

लहिकै सुहूजामिनी मत्तगजगामिनी चली वन मिलन कौं नंदलालाहि।
कै सुघर मनमथ्थ रचि स्वर्न की बेलि लै चल्यो गहि सहित सिंगारथालाहि।
सँग सखी परवीन अति प्रेम सौं लीन मनि आभरन जोतिछवि होति बालाहि।
कै 'दास' के ईस ढिग जाति लीन्हे चली भामिनी भाय सौं *दीपमालाहि*॥५

बिजया

सिवकमलबंस सी सीतकर-अंस सी
बिमल त्रिपिहंस सी हीरवरहार सी।
सत्य गुन सत्व सी संतरस तत्व
सी ज्ञान गौरत्व सी सिद्धि बिस्तार सी।
कुंद सी कास सी भारतीबास सी
सुरतरुनि-हास सी सुधारससार सी।
गंगजलधार सी रजत के तार सी
कीर्ति तव *बिजय* की संभु आगार सी ॥ ६ ॥

---

[३] घास–बास (लीथो, नवल.० वेंक०)। नैन मैं–नैन नेहै (नवल २, वेंक०)। वहो-वैहो (नवल०, वेंक०)।

[५] लहि०–लहिकै सुइ जामिनी (सर०); लहिकै कुहू जामिनी (नवल २, वेंक०)।

[६] सत्य–सत्त्व (लीथो)। सत्व–सत्य (सर०, लीथो, नवल०, वेंक०)। तत्व–वंस (लीथो, नवल०, वेंक०)। हास–हार (वही)। गंग०–कित्ति रघुबीर की हरनि भवभीर की त्रिजैगिर है कढ़ी सरसरित धार सी (सर०)।

(दोहा)

तीनि तीनि बारह निरति, दस जति दै गुरु टानि।
छंद छियालिस मत्त को, चंचरीक पहिचानि ॥ ७ ॥

चंचरीक छंद

ताको नहिं आदि अंत जननि जनक देव कंत
रूप रंग रेखरहित व्यापक जग जोई।
मच्छ कच्छ कोल रूप बामन नरहरि अनूप
परसुराम राम कृष्न बुद्ध कलिक सोई।
मधुरिपु माधौ मुरारि करुनामय कैटभारि
- रामादिक नाम जासु जाहिर बहुतेरो।
कोमल सुभ धाम मंजु सुखमा सुखसील गंज
ताको पदकंज चित्तचंचरीक मेरो ॥ ८ ॥

इति श्रीभिखारीदास कायस्थकृते छंदार्णवे मात्राछंदवृत्तिमुक्तकजाति-
दंडकवर्णन नाम नवमस्तरंगः ॥ ९ ॥

१०

वर्णवृत्ति में वर्णप्रस्तार-भेद [सवैया मात्रिक]

एक बर्न को उक्ता प्रकरन तासु भेद द्वै कीजै पाठ।
द्वै *अत्युक्ता* भेद चारि हैं *मध्या* तीनि भेद हैं आठ।
चारि प्रतिष्ठा सोरह बिधि पाँचै सुप्रतिष्ठा भेद बतीस।
षट *गायत्री* चौसठि सातै *उष्निक* सौ पर अट्ठाईस ॥ १ ॥
आठै बर्न अनुष्टुप द्वै सै छप्पन भेद कहत फनिराउ।
नौ अक्षर को *बृहती* प्रकरन भेद पाँच सौ बारह ठाउ।
दसैं बर्न को *पंगति* प्रकरन भेद सहस ऊपर चौबीस।
ग्यारह को *त्रिष्टुप* प्रकरन गनि द्वै हजार अरु अड़तालीस ॥ २ ॥

बारह को *जगती* प्रकरन तेहि भेद हजार चारि छानवे।
तेरह अक्षर को *अतिजगती* इक्यासी सत पर बानवे।
चौदह को *सक्करी* सोरहै सहस तीनि से चौरासीय।
पंद्रह *अतिसक्करी* सहस बत्तीस सात से अटसठि कीय ॥ ३ ॥
सोरह *अष्टि* सहस पैं सठिसत पाँच छतीस अधिक लै धरी।
सत्रह को *अत्यष्टि* लाख पर यकतिस सहस बहत्तरि करी।
अट्टारह *धृति* छब्बिस ऐतु इकीस सै उपर बव्वालीस।
बावन ऐतु बयालिस सै अट्टासी बिधि *अतिधृति* उनईस ॥ ४ ॥
बीस बरन को *कृति* प्रकरन है तासु भेद गनि लै दस लाखु।
अटतालीस सहस्र पाँच सै और छिहत्तरि ऊपर राखु।
यकइस बरन *प्रकृति* प्रकरन है बीस लाख पहिले सुनि मित्त।
सत्तानवे सहस्र एक सै बावन ऊपर दीजै चित्त ॥ ५ ॥
छंद होइ बाईस बरन को *अतिकृति* प्रकरन जानि अखेद।
यकतालीस लाख चौरानवे सहस तीनि सै चारै भेद।
छंद कहावै *विकृति* प्रकरन तेइस बर्न होहिं जेहि माह।
लाख तिरासी सहस अटासी छा सै आठ गनै अहिनाह ॥ ६ ॥
संकृति नाम बरन चौबिस को तासु भेद हैं एक करोरि।
सतसठि लाख हजार सतहत्तरि दुइ सै उपर सोरह जोरि।
अतिकृति प्रकरन बरन पचीसै तीनि करोरि लाख पैंतीस।
चौवन सहस चारि सै बत्तिस भेद बिचारि कहत फनिईस ॥ ७ ॥
उत्कृति होत बरन छब्बिस को भेद छ कोटि यकहत्तरि लक्ष।
आठ हजार आठ सै चौसठि क्रम तें दुगुन बढ़ै परितक्ष।
तेरह कोरि बयालिस लक्षो सत्रह सहस सात सै होइ।
छब्बिस अधिक जोरि सब भेदन ठीक दियो चाहै जो कोइ ॥ ८ ॥

(दोहा)

सबके कहत उदाहरन, बाढ़ै ग्रंथ अपार।
कहूँ कहूँ तातें कहत, बरनछंद बिस्तार ॥ ९ ॥

लक्षण-(दोहा)

एक गुरू *श्री* छद है, *कामा* द्वै गुरु चंद।
ध्वजा एक *महि* नंद यक *सार* सु प्रिय *मधु* छंद ॥१०॥

---

[१०] कामा-काभा (लीथो, नवल १)।

तीनि चरन प्रस्तार जो, म य र स त ज भ न पाठ।
आठौ गन तें 'दास' भनि, छंद होत हैं आठ ॥११॥
ताली ससी प्रिया रमनि, अरु *पंचाल नरिंद।*
आठ सहित मंदर कमल, म य र स त ज भ न छंद ॥१२॥

चारि वर्ण के छंद–(सोरठा)

तिर्ना क्रीड़ा नंद, रामा धरा नगानिका।
कला तरनिजा छंद, गनि *गोपाल मुद्रा*हि पुनि ॥१३॥
धारी वीरो कृष्न, बुद्धी निसि हरि सोरहो।
भेद कहत कवि जिष्न, चारि चरन प्रस्तार के ॥१४॥

(दोहा)

मतपथारहु में परें उदाहरन ये आइ।
तिर्ना क्रीड़ा नंद अरु, धरा गोपाल सवाइ ॥१५॥

तिर्ना छंद SSSS

धर्मज्ञाता। निर्भैदाता। तृष्नाहिन्नो। जीवै *तिन्नो* ॥१६॥

क्रीड़ा छंद ISSS

हमारी सो। हरै पीड़ा। कलिंदी जो। करै *क्रीड़ा* ॥१७॥

नंद छंद SISS

यों न कीजै। जान दीजै। हौ कन्हाई। नंद आई ॥१८॥

धरा छंद SSIS

सो धन्य है। औ गन्य है। सीतावरै। जो ही धरै ॥१९॥

गोपाल छंद SSSI

ए जंजाल। मेटो हाल। ह्वै दायाल। श्री *गोपाल* ॥२०॥

(दोहा)

इक इक गन बाहुल्य तें, छंद होत बहु भाँति।
'दास' दिखावै भिन्न करि, तेहि तरंग की पाँति ॥ २१ ॥

---

[२०] 'लीथो, नवल०, वेंक' में नहीं है।
[२१] इक इक–इकइक (लीथो, नवल०, वेंक०)। करि–ते (सर०)।

लक्षण [चौपाई]

या र स त ज भगननि दूनो भरु । छहो छंद के नाम समुझि धरु ।
संखनारि जोहा तिलका करु । मंथानो मालती, दुमंदरु ॥२२॥

शंखनारी छंद ।ऽऽ।ऽऽ

लखे सुभ्र ग्रीवा । महासोभसीवा । परेवा कहा री । कहा *संखनारी* ॥२३॥

जोहा छंद ऽ।ऽऽ।ऽ

रूप को गर्ब छै । भूलनी सर्ब वै ।
सुख्ख तौ साथ मैं । लाल *जो हाथ मैं* ॥ २४ ॥

तिलका छंद ॥ऽ॥ऽ

अधिको सुख हो । छिय क्यों ससि सो ।
सजिकै सखि यौं । *तिल काजर सौं* ॥ २५ ॥

मंथान छंद ऽऽ।ऽऽ।

गोबिंद को ध्यानु । सारंस तूँ जानु । निद्यामही मानु । है ज्ञान *मंथानु*॥२६॥

मालती छंद ।ऽ॥ऽ।

लखौ धलि बाल । महा छबिजाल । लसै उर लाल, सु*मालति माल* ॥२७॥

दुमंदर छंद ऽ॥ऽ॥

बाल-पयोधर । मो हिय सो हर । मानस-अंदर । मानु दु *मंदर* ॥ २८ ॥

लक्षण-(दोहा)

तीनि नंद ग *समानिका चामर* सात अनूप ।
पाँच नंद गो *सेनिका* धुज ल *सेनिका* रूप ॥ २९ ॥

समानिका छंद ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

देवि द्वार जाहि तूँ । बोलि पाहि पाहि तूँ ।
राखिहै कृपानि कै । खास 'दास' *मानिकै* ॥ ३० ॥

---

[२२] करु–करि (लीथो, नवल०, वेंक०) । दुमंदरु–दुमंदरि (लीथो, नवल१, वेंक०) ।
[२४] सुख्ख–सुख्य (नवल १, वेंक०); सुख्य (नवल २) । तौ–नौ (लीथो, नवल०, वेंक) । जो–जा (सर०) ।
[२७] 'सर०' में नहीं है ।

चामर छंद ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

बाल के सुदेस केस कालिंदी-प्रभा दली।
पन्नगीकुमार की सवार की कहा चली।
या बिथा फिरै निकुंज कुंज पुंज भामरो।
कामधेनु पाय रो रहै अतेव *चामरो* ॥ ३१ ॥

रूपसेनिका छंद ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।

चली प्रसून लेन वृंदजाल। सुमंजु गीत गावती रसाल।
बिलोकिये प्रभा अनूप लाल। बनी सु *रूपसेनिका* बिसाल ॥ ३२ ॥

लक्षण—(दोहा)

चारि *मल्लिका चंचला* आठ *गंड* दस *नंद*।
प्रमानिका धुज चारि को आठ *नराच* सुछंद ॥ ३३ ॥

मल्लिका छंद

चित्त चोरि लेत पौन। मंद मंद ठानि गौन।
मोहनी विचित्र पास। *मल्लिका* प्रसून बास ॥ ३४ ॥

चंचला छंद

स्याम स्याम मेघओघ व्योम मैं अलील सैन।
ल्याइयो प्रसूनबान काल की अपार सैन।
होति आजु कालिह मैं वियोगिनीन प्रानहानि।
चंचला नचै न मीचु नाचती चहूँ दिसानि ॥ ३५ ॥

गंड तथा वृत्त छंद

राम रोप जानि हार लाभ मानि संभु जो नचै उताल।
पाइकै मृदंग सोर आवई कुमार को मयूर हाल।
होइ तौ कुतूहलै बिलोकि सुंड कौं चलै डराइ ब्याल।
यौं कि विघ्नरै गनेस गुंजि *गंड* तें उड़ैं मिलिंदजाल ॥ ३६ ॥

---

[३१] अतेव–अतेय (नवल०, वेंक०)।
[३२] सु रूप–मनोज (नवल २)।
[३३] गंड–गंद (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[३६] वृत्त–चित्र (लीथो, नवल०, वेंक०); त्रित्र (सर०)।

प्रमाणिका, यथा

न है समै घटान की । सलाह मान ठान की ।
जताइ जाइ दामिनी । मुछिप्र *मानि कामिनी* ॥ ३७ ॥

नराच छंद

मृगाक्षि एक द्वार तें सुभाव हीं चितै गई ।
चह्यो न जाइ मो हियैं अघाइ घाइ कै गई ।
पर्‍यो प्रतीति आजु मोहि 'दास' बैन साँचु है ।
खरो *नराच* तें *तियाकटाक्ष* को नराचु है ॥ ३८ ॥

लच्छन [मुक्तादाम]

भुजगप्रयात लछीधर नाम । स *तोटक सारँग मोतियदाम* ।
स *मोदक* 'दास' छ भेद विचारि । य रो स त जो भ न चौगुन धारि॥३६॥

भुजंगप्रयात ।SS।SS।SS।SS

छुटे बार देखे हुटे मोर पाखैं । बिना डीठि की है गई वृंद-आखैं ।
जिते सर्व सिंगार बेनी-प्रभा सों । *भुजंगो प्रयातो* त्रपा पाइ जासों ॥४०॥

लच्छमीधर, यथा S।SS।SS।SS।S

संख चक्रो गदा पद्म जा हाथ मैं । पक्षिराजा चढ़्यो वैसनो साथ मैं ।
'दास' सो देव ध्यावै सदा जीय मैं । जो रहै चारु *लच्छमी धरे हीय मैं* ॥४१॥

तोटक छंद ।।S।।S।।S।।S

घरहाइनि घैर धगारन दे । हरिरूप-सुधा उर धारन दे ।
तलफै अँखिया निकि टारन दे । अब *तो टक* लाइ निहारन दे ॥४२।

सारंग छंद SS।SS।SS।SS।

कीजै कुहू जानि क्यों रास को भंग । बेगै चलौ स्याम पै साजि *या* ढंग ।
कस्तूरि ही लेप कै लेहि सर्वंग । प्यारी सजै आजु सारी *निसा रंग* ॥४३॥

---

[४०] छुटे-धरे (लीथो, नवल०, वेंक०) । वृंद-सर्व (सर०) । जिते-जित्यौ (वही) ।
[४१] बैसनो-वैष्णवो (नवल २, वेंक०) ।
[४२] घैर-गैर (नवल १, वेंक) ।
[४३] या-यौ (सर०) । रास-यास (लीथो, नवल १); शशि (नवल २, वेंक०) ।

मोतीदाम छंद ।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।

तमाल के ऊपर है बकपाँति । कि नीलसिला पर संत-जमाति ।
नछत्रनि अंक लिये घनस्याम । कि स्याम हिये पर *मोतियदाम* ॥४४॥

मोदक छंद ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।

नारि सरोजवतीनि कुँ रोजनि । कान्ह उचाट भरे जिउ रोजनि ।
लीये है कूबरि को चरनोदक । कूबर जासु बसीकर *मोदक* ॥४५॥

लच्छन (दोहा)

अंत भुजंगप्रयात के लघु इक दीन्हे *चंद* ।
तीनि भगन द्वै गुरु दिये *बंधु* दोधको छंद ॥ ४६ ॥
मोदक सिर कै बंधु सिर द्वै लघु *तारक* बंद ।
पंच सगन *भ्रमरावली* छ यगन *क्रीड़ा* छंद ॥ ४७ ॥
पंच भगन गुरु एक को छंद कहावै *नील* ।
तीनि सगन सिर करन दै है *मोटनक* सुसील ॥ ४८ ॥

कंद छंद ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।

चहूँ ओर फैलाइहै चंद्रिका चंद ।
खुलैगी सुगंधै फुलैगी लता-वृंद ।
जगत्प्रान त्यौं डोलिहैं मंद ही मंद ।
कबै चैतु ऐहै चिदानंद को *कंद* ॥ ४९ ॥

बंधु छंद ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

आरत तैं अति आरत है जू । आरतिवंत पुकारत है जू ।
'दास'हु को दुख दूरि बहायो । तौ प्रभु आरत*बंधु* कहायो ॥५०॥

तारक छंद ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

परजंक मयंकमुखी चलि ऐहै । सविलास बिलोकि हिये लगि जैहै ।
बिरहागि भरे हियरे सियरैहै । कर*तार* कबै वह बासर ऐहै ॥ ५१ ॥

---

[४५] भरे–भए (सर०) ।
[४८] गुरु०–सिर करन दै (सर०) ।
[४९] त्यौं–तौ (सर०) । चैतु–चेतु (नवल २, वेंक०) ।
[५१] भरे०–भरो हियरो (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।

तजिकै दुरगंज हजारक जारक । फत सोवत भूमि भटारकटारक ।
भजि ले प्रहलाद-उधारक धारक । जग को निस्तारक तारकतारक ॥५२॥

भ्रमरावली छंद ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

बलि धीस बिसे उहि आजुहि ल्यावत हौं।
तुम्हरे हिय की सब ताप बुझावत हौं।
इन कीर चकोरनि दूरि करौ धन तें।
भ्रमरावलि बेगि बिडारहु कुंजन तें ॥ ५३ ॥

क्रीड़ा छंद ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

दुहूँ ओर बैठी सभा सुभ्र सोहै सु मानो किनारा।
रही दूरि लौं फैलि है चाँदनी चारु ज्यौं गंगधारा।
सजे चूनरी नील नच्चंति चंद्राननी बारदारा।
करै चंद्र क्रीड़ा मनो संग लै सर्वरी सर्व तारा ॥ ५४ ॥

नील छंद ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

मोहन-आनन की मुसुकानि अनूप सुधा।
होत बिलोकि हजार मनोभव-रूप सुधा।
पीत पटा पर 'दास' नेछावरि बीजुछटा।
नील कलेवर ऊपर कोटिक नील घटा ॥ ५५ ॥

मोटनक छंद ऽऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

मोहै मनु बेनु बजाइ अली । मूसै उर-अंतर भाँति भली ।
कीजै किन ब्यौंत अगोटन को । है चोर यही मन-मोटन को ॥५६॥

(दोहा)

भुजँगप्रयातहि आदि दै, सब चौगुनो बनाउ।
होत परम सुखदानि है, भाखो भोगीराउ ॥ ५७ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे गणबाहुल्यके छंदोवर्णनं नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

---

[५३] बलि–चलि (नवल०, वेंक०)।
[५५] पटा–परा (लीथो, नवल०, वेंक०)।

११

वर्णसवैया-प्रकरण (दोहा)

इकइस ते छब्बीस लगि, बरनसवैया साजु।
इक इक गन बाहुल्य करि, बरन्यो पन्नगराजु ॥ १ ॥

लक्षण [किरीट]

सात भ है मदिरा गुरु अंतहु दै लघु और चकोर कह्यौ गुनि।
ताहु गुरू करि मत्तगयद लहू मदिरा सिर मानिनि ये सुनि।
आठ करौ य भुजग र लक्षिय सो दुमिला सहि आभर है पुनि।
जाहि सु मोतियदाम बनावहु भागन आठ किरीट रचौ चुनि ॥ २ ॥

मदिरा छंद

दीन अधीन ह्वै पाँय परी हौँ अरी उपकार को धावहि।
मेरी दसा लखि होहि प्रसन्न दया उर-अंतर ल्यावहि।
नैनन की हिय की बिरहागिनि एकहि बार बुझावहि।
श्रीमनमोहन-रूपसुधा मदिरा मद मोहि छकावहि ॥ ३ ॥

तूँ जुक पड़े दूसरो मदिरा।

चकोर छंद

सोहत है तुलसीबन मैं रमि रास मनोहर नंदकिसोर।
चारिहूँ पास हैं गोपबधू भनि 'दास' हिये मैं हुलास न थोर।
कौल उरोजवतीन को आनन मोहननैन भ्रमै जिमि भौंर।
मोहन-आनन-चंद लखैं बनितान के लोचन चारु चकोर ॥ ४ ॥

---

[३] दसा–दया (लीथो, नवल०, वेंक०)। नैनन की–नैनन के (नवल२, वेंक०)।

[४] भनि–मनि (नवल०, वेंक०)। के–को (सर०)।

मत्तगयंद छंद

सुंदरि सुभ्र सुवेषि सुकेसि सुश्रोनि सुठौनि सुदंति सुसैनी।
तुंगतनी मृदुअंग कृसोदरि चंद्रमुखी मृगसावकनैनी।
सोन को बास रु 'दास' मिलै गुनगौरि प्रिया नवला सुरदैनी।
पीन नितंबवती करभोरुह मत्तगयंदगती पिकबैनी ॥ ५ ॥

मानिनी छंद

प्रफुल्लित 'दास' बसंत कि फौज सिलीमुख भीर देखावति है।
जमाति प्रभंजन की गहि पत्रनि मानविभंजनि धावति है।
नए दल देखि हथ्यारन डारि मटै तियसंगति भावति है।
चढ़ाइ कै भौंह कमाननि मानिनि काहे तुं बैर बढ़ावति है ॥ ६ ॥

भुजंग छंद [८ यगण]

तुम्हें देखिबे की महाचाह बाढ़ी मिलापै बिचारै सराहै रमरै जू।
रहै बैठि न्यारी घटा देखि कारी बिहारी बिहारी बिहारी ररै जू।
भई काल बौरी सि दौरी फिरै आजु बाढ़ी दसा ईस का धौं करै जू।
विथा मैं गसी सी भुजंगै डसी सी छरी सी मरी सी घरी सी भरै जू ॥ ७ ॥

लक्षी छंद [८ रगण]

बादि ही आइकै बीर मो ऐन मैं बैन के घाव कीबो करै बावरी।
आपनो तत्तु हौं एक ही बा कह्यो कौन कीबो करै घात-फैलाव री।
'दास' हौं कान्ह-दासी बिना मोल की छाँडि दीन्ह्यो सबै बंस बंसावरी।
ज्ञानसिक्षानि तासों जु दी रक्षिये लक्षिये जाहि प्रत्यक्ष ही बावरी ॥ ८ ॥

---

[५] सोन–सौने (लीथो, नवल०, वेंक०)। गौरि–गौगि (सर०)।
करभोरुह–करभोरुग्र (वही)।

[६] तुं–का (सर०)।

[७] रमरै–ररै (सर०)। काल–कालिह (वही)। बाढ़ी–औरो (सर०); बैठी (नवल०, वेंक०)। दसा–विथा (सर०)।
मरी–भरी (नवल० वेंक०)।

[८] बावरी–पावरी (नवल०, वेंक०)। आपनो–आपनी (लीथो,

दुमिला छंद [८ सगण]

सुनि तोपहँ जाचन आई हौँ मैं उपकार कै मोहि जिआवहि तूँ ।
ताहि तात कि सौँ निज भ्रात कि सौँ यह घात न काहू जनावहि तूँ ।
तुव चेरी ह्वै हौँ होउँगी 'दास' सदा ठकुराइनि मेरी कहावहि तूँ ।
करि फंद कछू मोहिँ या रजनी सजनी व्रजचंदु *मिला*वहि तूँ ॥९॥

आभार छंद [८ तगण]

ये गेह के लोग धौं कातिकी न्हान कौं ठानिहैं कान्हि ऍकंक ही गौन ।
संवाद कै वादि ही बावरी होइ को आजु आली रहौ ठानेंही मौन ।
हौँ जानती हौँ न धौं सीख कौने दई नंद को लाल गोपाल धौं कौन ।
आभार ह्यौ द्वार को ताहि कौं सौं पिकै मोहिँ औ तोहिँ ह्याँ राखते भौन १०

मुक्तहरा छंद [८ जगण]

पठावत धेनु दुहावन मोहि न जाउँ तो देवि करौ तुम तेहु ।
छुटाइ भज्यो बछुरा यह वैरि मल्ल करि हौँ गहि ल्याई हौँ गेहु ।
गई थकि दौरत दौरत 'दास' खरोट लगैँ भइ बिह्वल देहु ।
चुरी गइ चूरि भरी भइ धूरि परो टुटि *मुक्तहरा* यह लेहु ॥११॥

किरीट छंद [८ भगण]

पाँयनि पीरिय पाँवरिया कटि केसरिया दुपटा छबि छाजित ।
गुंज मिले गजमोतिय-हार मैं रात सितासित भाँति है भ्राजित ।
अंग अपार प्रभा अवलोकत होत हजार मनोभव लाजित ।
बाल जसोमति लाल यई जिनके सिर मोर*किरीट* बिराजित ॥१२॥

---

[१०] ऍकंक-एकक ही (लीथो, नवल १, वेंक०), एकेक (नवल २)। ठानेंही-साधेंही (सर०)। हौँ न-नाहिँ (वही)। ह्यौ-ह्याँ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[११] देवि-देखि (नवल २, वेंक०)। तेहु-टेहु (वही)। भज्यो-गयौ (सर०)।

[१२] रात-रीति (लीथो, नवल०, वेंक०)। भाँति-भाति (सर०)। भ्राजित-भाजित (लीथो), भाजिन (नवल १)।

लक्षण (दोहा)

आठ सगन गुरु *माधवी*, सुप्रिय *मालती* चाहि ।
सप्त ज यो *मंजरि* कहै, सप्त भरो *अलसाहि* ॥१३॥

माधवी, यथा [८ सगण, ऽ।ऽ]

बिन पंडित ग्रंथ-प्रकास नहीं बिन ग्रंथ न पावत पंडित भा है ।
जग चंद बिना न बिराजति जामिनि जामिनिहू बिन चंद प्रभा है ।
सुसभाहि के देखे तें साधुता होति औ साधुहि तें सुभ होति सभा है ।
छवि पावत है मधु माधवि तें मधु कों अति *माधविहूँ* सों प्रभा है ॥१४॥

मालती, यथा [८ सगण, ॥]

महिमा गुनवंत की 'दास' बढ़ै
धकसै जब रीझिकै दान जवाहिर ।
गुनवंतहु तें पुनि दानिहु को
जस फैलन जात दिगंत के बाहिर ।
जिमि मालती सों अति नेह निबाहे तें
भौंर भयो रसिकाई में जाहिर ।
अरु भौंरहु को अति आदर कीन्हे
सुबास में *मालतियौ* भइ माहिर ॥१५॥

मंजरी, यथा [८ ज, य]

बसंत से आज बने ब्रजराज सपल्लव लाल छरी पर हाथे ।
सुकुंडल के मुकुता बिच हैं मकरंद के बुंदनि की छबि नाथे ।
मिलिंद घने कच घुघरवारे प्रसून घने पहुँचीन में गाथे ।
गरे जिमि किंसुक गुंज की माल रसाल की मंजुल *मंजरि* माथे ॥१६॥

---

[१३] सप्त-सप्त (लीथो, नवल०, वेंक०) । ज यो-न यों (वही) ।

[१४] पंडित भा-खंडित भा (वही) । सों-सु (सर०) ।

[१५] मालती सों-मालती तें (सर०) । नेहनिबाहे-× (सर०) ।
तें-ने (वही) ।

[१६] बने-बनो (सर०) । छ०-कि बूँद न (नवल २, वेंक०) ।

अरसात छंद [८ भ, र]

सात घरीहु नहीँ बिलगात लजात औ घात गुने मुसुकात हैँ।
तेरी सौँ खात हौँ लोचन रात है सारस-पातहू तेँ सरसात हैँ।
राधिका माधौ उठे परभात हैँ नैन अघात हैँ पेखि प्रभा तहैँ।
लागि गरे अँगिरात जँभात भरे रस गात खरे *अरसात* हैँ ॥१७॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे सवैयाप्रकरणवर्णनं नाम
एकादशस्तरंगः ॥११॥

१२

संस्कृतयोग्य पद्यवर्णनं (दोहा)

कहौं संसकृतजोग्य लखि, पद्यरीति सुखकंद।
गन-लक्षन गन-नाम मैं, छंद-लक्षनै छंद ॥ १ ॥

रुक्मवती छंद SIISSSIISSS

रग्गनो, कर्नो सगनो गो। जानिये, सो *रुक्मवती* हो।
पाय मैं, नौ अक्षर सोहै। तीनि औ, छा मैं जति जोहै ॥ २ ॥

यथा

लक्ष्मी, का पै न रई है। राखतै, सो जात भई है।
सो रही, ना एक रती जू। लंक ही, जो *रुक्मवती* जू ॥ ३ ॥

शालिनी छंद SSSSSISSISS

कर्नो कर्नो, रग्गनो रग्गनो गो। जानो याको, छंद है *सालिनी* हो।
पाये पाये, बर्न एकादसो है। चारै सातै, बीच बिश्राम सोहै ॥ ४ ॥

यथा

बाला बेनी, अद्भुतै ब्यालिनी है। माधौ नीके, गर्व की घालिनी है।
पी के जी मैं, प्रेम की पालिनी है। सौतै के ही, सर्वदा *सालिनी* है ॥५॥

वातोर्मी छंद SSSS|||SS|SS

गो गो कर्नो सगनो, गो यगंनो । *वातोर्मी* है यहई, छंद धर्नो ।
सातें चौथें जति है, चारु जामें । पाये वर्नो दस औ, एक तामें ॥ ६ ॥

यथा

कैसे याको कहिये, नेकु नाहीं । नीवी बाँधी रहती, याहि माहीं ।
तातें ऐसो बरनै, बुद्धि मेरी । *वातोर्मी* है सजनी, लंक तेरी ॥ ७ ॥

इंद्रवज्रा-उपेंद्रवज्रा छंद

तकार कर्नो सगनो यगंनो । है इंद्रवज्रा दस एक वंनो ।
उपेंद्रवज्रा जगनादि सोई । दुहूँ मिले पै उपजाति होई ॥ ८ ॥

इंद्रवज्रा, यथा SS|SS|||S|SS

एरी बड़ो जो गिरि तैं कहायो । सो चित्त पी को इनसौं गिरायो ।
सो है अयानो मृदु जो कहै री । है *इंद्रवज्रा* मुसुकानि तेरी ॥ ९ ॥

वार्त्तिक

उपेंद्रवज्रा आदि को लघु पढ़े होत है ॥ १० ॥
उपजाति कोई तुक आदि लघु पढ़ें ॥ ११ ॥

उपस्थित छंद SS||S||S|SS

कर्नो सगनो पिय गो यगंनो । *सोपस्थित* है दस एक वंनो ।
जगंनु सगनो तकारु कर्नो । *पयस्थित* कहै मन है प्रसन्नो ॥ १२ ॥

यथा

प्यारे प्रति मान कहा करौं मैं । जो आपन आपनई न रोमैं ।
आली दृढ़ई बहुतै कियेहूँ । *सोपस्थिति* ही सु रहै न केहूँ ॥१३॥

पर्यास्थित छंद |S|||SSS|SS

दुखो 'रु सुख को है दानि सोई । वहै हरत है दूजो न कोई ।
न 'दास' जी मैं दूजे निरासी । जु पै सुथित है बैकुंठबासी ॥१४॥

---

[६] गो गो–गो गौ (नवल०, वेंक०) । गो यगंनो–जगंनो (लीथो, नवल०, वेंक) ।

[१२] सोपस्थित–सोपस्थितो (सर्वत्र) ।

[१३] आपन–आपनो (ली.थो, नवल०, वेंक०) ।

साली छंद ऽ।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

नंद कर्नो, नंद गो रागनो गो। नाम याको, छंद *साली* कह्यो हो।
चारि सातैं, 'दास' बिश्राम ठानौ। अच्छरा ये, ग्यारह जोरि आनौ ॥१५॥

यथा

कान्ह की जौं, त्योर तीछी सहौंगी। मोहि तोहीँ, धन्य आली कहौंगी।
सूर को सो, जोर जानै जिये मैं। होइ जाके, सेल *साली* हिये मैं ॥१६॥

सुंदरी छंद ।।।ऽ।।ऽ।।ऽ।ऽ

नगन भागनु भागनु रग्गना। चरन चारिहु *सुंदरि* सोभना।
द्रुतविलंबित याहि कोऊ कहै। बरन बारह 'दास' अचूक है ॥१७॥

यथा

अनमनी सजनी सब संग की। सुधि न तोहि रही कछु अंग की।
दुचित मोहनलाल सुछंद री। कुढँग मानहि भानहि *सुंदरी* ॥ १८ ॥

प्रमिताक्षरा छंद ।।ऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ

प्रिय नंद नद सगनो सगनो। *प्रमिताक्षरा* हि पगनो पगनो।
जति बीच बीच भनि ले भनि ले। दस दोइ बर्न गनि ले गनि ले १९

यथा

अँगिया सगाढ़ बलदे जिय की। अरु नील अंचलहु सौं मढ़ि ली।
तिन बीच व्यक्त मलकैं कुच यों। कवितानिबद्ध *प्रमिताक्षर* ज्यों ॥२०॥

वंशस्थविल छंद ।ऽ।ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

जगनु कर्नो सगनो लगो लगो। सुछंद *वंसस्थविलो* पगो पगो।
गो आदि को बर्न सु *इंद्रवंसु* है। मिलैं दुधा पै *उपजाति* अंसु है ॥२१॥

यथा

सक्यो तपस्वी महि मैं न होइ जू। न तौ हमारो बलु लेइ सोइ जू।
नहीन *वंसस्थ विलोकि* सोहनी। कृतेंद्रवंसोपरि बिस्वमोहनी ॥ २२ ॥

---

[१६] तोहीँ—त्यौंही (लीथो, नवल०, वेंक०)। को सो—कैसे (वही)।
[१८] दुचित—दुखित (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२०] बलदे—उलद (सर०)।

इंद्रवंशा, यथा SS|SS||S|S|S

जान्यो तपस्वी महि मैं न होइ जू । ना सौं हमारो थलु लेइ सोइ जू ।
नारीन बंसस्थ बिलोकि सोहनी । की इंद्रवंसोपरि बिस्वमोहिनी ॥२३॥

विश्वादेवी छंद

गो गो मो रूपो, गो यगानो यगानो । *विस्वादेवी* के, पाय मैं चित्त आनो ।
सोहै आमर्नां, बारहो बर्न जाके । बर्नो है पाँचै, सात बिश्राम ताके ॥२४॥

यथा

सेवैं गौरी के पाय मैं की ललाई । जोगी को होती जोगरागाधिकाई ।
राजस्वै पावैं सूर जे होत सेवी । सोहागै लेतो सेइकै *बिस्वदेवी* ॥२५॥

प्रभा छंद ||||||S|SS|S

दुजबर पिय रागिनी रागिनी । करत बिमल चारु मंदाकिनी ।
बहुत कहत हैं एही है *प्रभा* । दु दस बरन औरं घा है अभा ॥ २६ ॥

यथा

सिव-सिर पर सौं ढरी गंग री । तियकुच-सिव पै त्रिबेनी ढरी ।
सुरसति जमुना मनी-भामिनी । मुकुतगन-*प्रभा* सु मंदाकिनी ॥२७॥

मणिमाला छंद SS||SSSS||SS

कर्नो पिय कर्नो, कर्नो पिय कर्नो । आधे बिसरामो, है बारह बर्नो ।
चीसे जहँ मत्ता, सोहै अति आला । भोगीपति भाखो, याको *मनिमाला*॥२८

यथा

चंद्रावलि गौरी, लै पूजन जाती । कीजै कि न प्यारे, सीरी अब छाती ।
राधा वह आवै, एहो नँदलाला । जाके हिय सोहै, नीकी *मनिमाला* ॥२९॥

---

[२४] यगानो०—यगाने यगाने (लीथो, नवल०, वेंक०) । आनो-आने (वही) । आमर्नां-आभैं (वही) । पाँचे-पाँचो (वही) ।
[२५] राजस्वै—राजस्वो (लीथो, नवल०, वेंक०) ।
[२७] मुकुत०—मुकुटगन (नवल १); मुकुटगन (नवल २, वेंक०)
[२८] भाखो—भाखै (सर०) ।

पुट छंद ।।।।।।ऽऽऽ।ऽऽ

पिय दुजवर कर्नो, नंद कर्नो। जति बसु अरु चारै बीच बर्नो।
दस अरु बिय यामैं बर्न राख्यो। अहिपति पुट नामै छंद भाख्यो ॥३०॥

यथा

नहिँ ब्रजपति बातैं, तू सुनावै। सखि मरत समय मैं, मोहिँ ज्यावै।
अमिय स्रवत आली, आस्य तेरो। श्रवनपुटन पीवै, प्रान मेरो ॥३१॥

ललिता छंद ऽऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ

तो भ्रम नैल, पिय नंद नंद गो। विश्राम लेत, पग पंच सत्त को।
हे मुग्ध द्वै 'रु, दस बर्न देहि री। सानंद जानि, *ललिता*हि लेहि री ॥३२॥

यथा

बंसी चोराइ, सु चकंत मैं गई। कान्है बताइ, इन कान मैं दई।
जैसी विचित्र, वृषभानलाड़िली। तैसी प्रवीन, *ललिता* सखी मिली ॥३३॥

हरिमुख छंद ।।।।ऽ।।ऽ।ऽ।ऽऽ

दुजवर नंद, जगंनु नंद कर्नो। *हरिमुख* छंद, भुजंगराज बर्नो।
दस अरु तीनि, बरंनु चारु सोहै। पट अरु सात, बिराम चित्त मोहै ॥३४॥

यथा

बँधहिँ न जे मृदुहास-पास माहीँ।
बिँधत हिये दृगबान जासु नाहीँ।
धनि धनि ते प्रमदा सदा कहावैँ।
हरिमुख हेरि जु फेरि चेतु ल्यावैँ ॥३५॥

प्रहर्षिणी ऽऽऽ।।।।ऽ।ऽ।ऽऽ

मै जानो, दुजवर रगनो य है जू।
याही कौं, *प्रहरपिनी* सबै कहै जू।
तीनै औ', बिरति बिचारि पाँच पाँचौ।
तीनै औ', दस अजपानि ठीक जाँचौ ॥३६॥

---

[३०] बीच–बीस (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[३२] द्वै–दौ (लीथो, नवल०, वेंक०)। लेहि–ताहि (नवल २)।
[३५] हास–रास (सर०)।
[३६] पाँचौ–पाँचे (सर०)। जाँचौ–राचै (वही)।

यथा

पायो तूँ, रिस करि कौन सुखरा राधे।
धोरी वैरिनि कौन वैर साधे।
तेरी तौ अँखियउ अश्रुवर्षिनी है।
सौतिन् की जनिउ महाप्रहर्षिनी है ॥३७॥

तनुरुचिरा छंद ।ऽ।ऽ।।।।ऽ।ऽ।ऽ

लगे लगे दुजवर गे लगे लगो। भले अली तनु रुचिरो फबै लगो।
त्रयोदसै चरननि सों प्रभा घनी। विराम है लखि नव चारि को घनी ३८

यथा

अनेक धा मनमथ वारि डारिये। किती प्रभा मरकत में विचारिये।
कहाँ चलै जलधर जोतिमंद की। सकै जु ह्वै तनुरुचि रामचंद्र की ॥३९॥

क्षमा छंद ।।।।।।ऽऽ।ऽ।ऽऽ

नगन नगन कर्नो, जगंनु गो गो। बिरति चरन आठै, सरै कहो हो।
त्रिदसचरन नीके, करौ जमा जू। भुजगनृपति याकौं कहो क्षमा जू ॥४०॥

यथा

निज वस वर नारी, सवै जु पालै।
भुवि तरुन धनी ह्वै, भजै गोपालै।
तब धनि धनि जी में कह्यो परै जू।
जब समरथ ह्वैकै, क्षमा करै जू ॥४१॥

मंजुभाषिणी ।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।

सगनो जगंनु, सगनो जगंनु है। ग समेति तीनि, दसई धरंनु है।
षट सप्त बीच, जति रीति राखिनी। मृदु छंद होत, है मंजुभाषिनी ॥४२॥

यथा

वह रैनिराज,-बदनी निहारिहौ।
तब 'दास' जन्म-सुफली विचारिहौ।

---

[३७] बैरिनि-वैरी (लीथो,नवल०, वेंक०)। अँखियउ-अँखियन (वही)।
[३८] फबै-है (नवल २)। तनु-×(सर०)।
[४०] कहो-कहै (लीथो, नवल०, वेंक०)

अँखियाँ बिसाल, छबि कंजनासिनी।
बतियाँ रसाल, मृदु *मंजुभाषिनी* ॥४३॥

मंदभाषिणी ।ऽ।ऽऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ

धुजा धुजा नंद, सगनो लगे लगे। त्रयोदसै धर्न धरिये पगे पगे।
छ सात के बीच, बिसराम रासिनी। फनी कह्यो छंद सुइ *मंदभाषिनी*॥४४॥

यथा

सुनो करै कान्ह, घर बीनधाद कौं।
कियो करै बाँसुरिहु के निनाद कौं।
बिना सुने बैन तुअ कंदनाखिनी।
भली लगै कोकिलउ *मंदभाषिनी* ॥४५॥

प्रभावती ऽऽ।ऽ।।।।ऽ।ऽ।ऽ

तकार गो दुजबर नंद, रागनो। तीनै दसै, चरननि अच्छरा भनो।
चारै छ है, तिय बिसराम भावती। याकौं कह्यो, अहिपति है *प्रभावती*॥४६॥

यथा

कै गो रसी, बसन 'रु देह सर्व कौं।
कीबो करै, दिन दिन न्वारि गर्व कौं।
जो पै न तो, तजि उन चित्त भावती।
केती लसी, ससिबदनी *प्रभावती* ॥ ४७ ॥

वसंततिलक ऽऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ।ऽऽ

कर्नौ जगंतु सगनो, सगनो यगंनो।
सोहै *वसततिलका*, दस चारि बंनो।
आठै छ है बरन मैं, जति चारु राख्यो।
भाख्यो भुजंगपति को, यह 'दास' भाख्यो ॥ ४८ ॥

---

[४४] बिसराम–विराम (सर्वत्र)। सुइ–सु (वही)।
[४५] बर–पर (सर०)। कियो०–हिए धरे बासुरिहु को (वही)।
नाखिनी–राखिनी (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[४७] 'रु–अरु (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[४८] यगनो–पगनो (लीथो, नवल०, वेंक०), प्रगनो (सर०)।

यथा

होने लागी, गति ललित औ', बातैं ललित हैं।
हावो भावो, ललित मिसिरी, मानो कलित हैं।
कानो लागी, ललित अति ही, दोउ दृग री।
दीनो आली, *मदन ललिता*, तो अंग सिगरी ॥ ६१ ॥

प्रवरललिता छंद ।SSSSS|||||SS|SS

यगंनो मो आनो, नगन सगनो, गो यगंनो।
दसै छा ही जाके, चरन प्रति मैं, होइ बंनो।
छहै छाओ चारो, चरन महिं या है, बिरामी।
फनिंदै भाख्यो है, *प्रवरललिता*, छंद नामी ॥ ६२ ॥

यथा

तिहारे औ वासौं, मिलन हित है, चित्त साधा।
कह्यो मेरो मानो, चलहु उत ही, बेगि राधा।
जहाँ गाढ़ी कुंजैं, तरनितनया, तीर राजैं।
गई ह्याँ हो देख्यो, *प्रवरललिता*, न्हान काजैं ॥ ६३ ॥

गरुड़रुत छंद ||||S|S|||S|SS|S

दुजबर रागनो, नगन रागनो रागनो।
गरड़रुतैं मनो, चरन सोरहै पागनो।
निरखि बिचारिकै, हृदय सात नौ ठानिये।
भुजगमहीप को, हुकुम 'दास' जौ मानिये ॥ ६४ ॥

यथा

वृक तकि छाग ज्यौं, भजत वृद्ध औ' बालको।
मृगपति देखि ज्यौं, भजत मुंड मुंडाल को।
हरहर के कहे, भजत पाप को व्यूह यौं।
गरड़रुतैं सुने, भजत व्याल को जूह ज्यौं ॥ ६५ ॥

---

[६२] छाओ–छाहीं (सर०)।
[६५] हरहर–हरिहर (सर०)।

पृथ्वी छंद ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽऽ।ऽ

जगंनु सगना धुजा, नगन रगना दोइ जू।
बिराम वसु बर्न मैं, बहुरि नौ हि मैं होइ जू।
बरंन प्रति 'दास'जू, बरन सत्रहै ठीक हैं।
अहीस रगनाथ सौं, प्रगट छंद *पृथ्वी* कहैं ॥ ६६ ॥

यथा

समर्थ जन कैसेहूँ, करत मंद जो काज है।
भिसेरिा तहि पालते, गहत छोडते लाज है।
लिये अजहुँ संभुजू, रहत कालकूटै गरें।
अजौं उरगनाथजू, रहत सीस *पृथ्वी* धरे ॥ ६७ ॥

मालाधर छंद ।।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽऽ।ऽ

नगन सगना धुजा, नगन रगना अंत रो। ~
भुजगपति भाखियो, प्रगट छंद *मालाधरो*।
बिरति वसु नौ कहै, सुकबिराज के गोत जू।
चरन गनि लीजिये, बरन सत्रहै होत जू ॥ ६८ ॥

यथा

जुवति गिरिराज की, लसन कौं गई दूलहै।
विकल हरिकै भजी, निरखि संभु को सूल है।
उरग तनभूपनो, बदन आक पनै भरे।
बसन गजखाल को, मनुज-मुंड*माला* धरे ॥ ६९ ॥

शिखरिणी छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽ।।।ऽ

यगंनो मो आनो, नगन सगनो, नंद सगनो।
कहै भोगीराजा, बरन दस औ, सत्त पगनो।
छ बिश्रामो पायँ, बहुरि छह औ, पंचकरिनी।
गनौ चार्यौ पायँ, सब कहहु जू, है *सिखरिनी* ॥ ७० ॥

---

[६६] प्रकट–प्रकटि (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[६९] खाल–पाल (नवल०, वेंक०)।

यथा

कारी पलास वरु डार सबै भई है।
लाली तहाँ कछुक किंसुक की ठई है।
फैला जग्यो मदनपावक को विचारौ।
आयो *वसंत तिल* कानन तो निहारौ॥ ४६॥

अपराजिता छंद ।।।।।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

नगन नगन नंद नंद घुजा धुजा। विरति सजति चारु चारु दुजा दुजा।
चतुरदसहि धर्न सौं पगआजिता। भुजँगभनित छंद है *अपराजिता*॥५०॥

यथा

विनय सुनहि चंडमुंडविनासिनी। जनदुखहरि कोटि चंदप्रकासिनी।
सरन सरन है सदा सुख साजिता। द्रवहि द्रवहि 'दास' कों *अपराजिता* ५१

मालिनी छंद ।।।।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

नगन नगन कर्नो, गो यगंनो यगंनो।
विरति रचिय आठै, और सातै धरंनो।
सुमन गुननि लैकै, हारही डालिनी है।
सरस सुरस वेली, पालिनी *मालिनी* है॥ ५२॥

यथा

रहति हर-प्रभा तें स्वर्न की कांति फैली।
विहँसति निज आभा फेरि पावै चँवेली।
सहजहि गुहि माला घाल के कंठ मेली।
अदभुत छवि छाकी *मालिनी* स्यौं सहेली॥ ५३॥

चंद्रलेखा छंद ऽऽऽऽ।ऽऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

चारचो हारा धुजो कर्नो रगनो रगनो है।
गो संजुक्तो दसै पाँचै अच्छरा पगनो है।
चारै चारै मिलै सातै तीनि विश्राम देखो।
भोगी भाषै, कहै दासौ छंद है *चंद्रलेखो*॥ ५४॥

---

[५२] सुमन–सुगन (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[५४] दासो–दसो (लीथो); दशो (नवल०, वेंक०)।

यथा

राधा भूले न जानौ यो है लवन्या न मेरी।
जेहा तेहा तिहारी सी तौ प्रभा है घनेरी।
भौंहैं ऐसी कमानैं है नैन सो कंज देखो।
नासा ऐसो सुआतुंडै आस्य सो चंद्र लेखो॥ ५५॥

प्रभद्रक छंद ||||S|S|||S|S|S

दुजधर गैल गैल, पिय नंद नंद है। गुरजुत आठ सात, बिश्राम चंद है।
पँदरह बर्न पाय, करतो अनंद है। कहत *प्रभद्रकाख्य*, अहिराज छंद है॥५६

यथा

रिस करि लै सहाइ करि दाप दाँ कई। तबहुँ न कालदंड प्रति धार धाँकई।
जिनहिं सुभाइ भाइ प्रियरामभद्र को। दुखहरता दयालकरता *प्रभद्र* को ५७

चित्रा छंद SSSSSSSSS|SS|SS

जा मैं दीजै आठो हारा, गो यकारो यकारो।
आठै सातै दै बिश्रामै, छंद *चित्रा* बिचारो।
आठौ दीहा माहीं जीहा, श्रासु ही दौरि जावै।
भोगी भाखै त्यौं ही, याके पाठ की रीति पावै॥ ५८॥

यथा

फूले फूले फूलेवारी, सेज मैं जो बिहारैं।
सीते धूपे डाभे काँटे, मैं सु क्यों पाउ धारैं।
सोचै भाखै रोवै भंजै कोसिला औ' सुमित्रा।
कैसे सैहै दुख्खै सीता, कोमलांगी बिचित्रा॥ ५६॥

मदनललिता छंद SSSS|||||SSS|||S

चार्‍यो हारा, नगन सगनो, करना नगनु है।
अंते दीहा, दस 'रु रसई, बर्ना पगनु है।
चारै मैं अरु छह 'रु छह मैं बिश्राम लहिये।
भोगी भाखै *मदनललिता* यो छंद कहिये॥ ६०॥

---

[५५] ऐसी–ऐसे (सर०)। सो–से (वही)।
[५७] जिनहिँ–जिमहि (लीथो, नवल १); जिमिहिँ (नवल २, वेंक०)।
[५८] त्यौं ही०– याको पाठ चित्रा कहावै (सर०)।
[६०] मदन–प्रवर (सर०)।

यथा

मृगेंद्रै जीत्यो है, कटिहि अरु नैनानि हरिनी।
सुबेनी ही ब्याले, रुचिर गति ही, मत्त करिनी।
मिलौ माधौजू सों, सुचित सजनी ह्वै निडरिनी।
हराएई तेरे, बसत सिगरे, या *सिखरिनी* ॥ ७१ ॥

मंदाक्रांता छंद SSSS||||||SS|SS|SS

चार्यौ हारा, नगन सगनो, रग्गना रग्गनं गा।
मंदाक्राता, भुजगभनिता, सत्रहै बने संगा।
कीजै चौथे, बिरति छठए फेरिकै सातयौं मैं।
श्राकर्नौ है, सतकबिन्ह सों, 'दास' जू घात यौं मैं ॥ ७२ ॥

यथा

को माघोनी, नलवरनि को, औ' कहा कामनारी।
केती रंभा, बिमल छबि है, का तिलोत्तमा बिचारी।
राधाजू के, सरिस कहिये, कौन सी जोपिता कौं।
मंदाक्रांता, करत जिन है, उर्बसी मेनका कौं ॥ ७३ ॥

हरिणी छंद |||||SSSSS|S||S|S

नगन सगनो कर्नो, तकार भागनु रा धरो।
बिरति बसु मैं नौ मैं, संभारिकै करिवो करो।
चरन दस औ सातै, है पाय मैं चित दै सुनो।
फनिमनि रजा भाख्यो, या छंद कौं *हरिनी* गुनो ॥ ७४ ॥

यथा

लजित करता जे हैं, अंभोज खंजन मीन के।
बसत नित जे ही में, गोपाललाल प्रधीन के।
फिरत बन में वै तौ, पाले परे पसु हीन के।
त्रियदगन से कैसे, नैना कहौ *हरनीन* के ॥ ७५ ॥

---

[७१] कटिहि—गतिहि (लीथो, नवल १, वेंक०)।
[७३] कौन०—क्यो न री (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[७४] फनि०—फनिराज (लीथो, नवल १, वेंक०), फनिपति (नवल २)। भाख्यो—मन्त्रो (वही)। कौं०—को गुनी (वही)।
[७५] नित—निज (नवल २, वेंक०)।

द्रोहारिणी छंद SSSSS।।।।।SSS।SS।S

चार्यौ हारा नगन सगनो, तकार कर्ना लगे।
भागीराजा भनित दस औ, है सात वर्ना पगे।
विश्रामो कै दिसि मुनिन्ह को, आनंद बोद्धारिनी।
'दासो' भाखै सुनहु फनि, यो है छंद *द्रोहारिनी* ॥ ७६ ॥

यथा

मेधा देनी सुचित करनी, आनंद विस्तारिनी।
प्रायश्चित्तो बहु जनम को, दंडार्ध मैं टारिनी।
दोषै खंडी दुरित हरनी, संताप संहारिनी।
राधा माधौ-चरित-चरचा, संदोह *द्रोहारिनी* ॥ ७७ ॥

भाराक्रांता छंद SSSS।।।।।S।S।।S।S

चार्यौ हारा नगन सगनो, जगंनु जगंनु गो।
भोगी भाखै विरति दस औ, ति चारि पगंनु जो।
चार्यौ पाये गनि गनि धरियै, बर्न सु सत्रहै।
भाराक्रांता कहत जग मैं, जु जत्र सु तत्र है ॥ ७८ ॥

यथा

नीकी लागै सरस कविता, अलंकृतसूनियौ।
क्रीड़ा मैं ज्यौं सुखद वनिता, सुवस्त्रविहूनियौ।
नाहीं भावै अरस कबहूँ, सुधीनि एकौ घरी।
भाराक्रांता अभरननि ज्यौं, विभूषित पूतरी ॥ ७९ ॥

कुसुमितलतावल्लिता छंद SSSSS।।।।।SS।SS।SS

कै पाँचौ हारा, नगन सगनो, रगना गो य दीजै।
विश्रामो पाँचै, बहुरि छह मैं, सात मैं फेरि कीजै।
पाये पाये मैं, समुझि धरियै, बर्न अट्ठारहै जू।
भोगींद्रै भाख्यो, *कुसुमितलतावल्लिता* छंद है जू ॥ ८० ॥

---

[७६] कवि–सुकवि (सर्वत्र)।

[७७] मेधा०–मेधादेवी (लीथो), मेधादेनी (नवल०, वेंक०)।
आनद–आनदै (लीथो, नवल०, वेंक०) को–के (सर०)।
टारिनी–चारिनी (वही)। खडी–खडित (वही)।

यथा

बंधूको बिंबो, कमल तिल जू, पाटला औ' चँवेली।
चंपा कस्मीरो, धरिहि बिच ह्याँ, फूलिहैं एक बेली।
दीजै आए कौं, सुख दृगन को, कुंज के हो बिहारी।
बैठो ह्याँ देखो, *कुसुमितलताबल्लिता* फूलवारी ॥ ८१ ॥

नंदन छंद ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽऽ।ऽ

दुजबर रगनो, नगन रगनो, धुजा रागनो।
जति मुनि मैं भनो, छहहु मैं ठनो, 'रु पाँचै तनो।
अहिपति यौं कहै, बरन पा लहै, सु अट्ठारहै।
सब दुखकंदनै, सुकवि नंदनै, रच्यो जौं चहै ॥ ८२ ॥

यथा

मनु मुनि मो कह्यो, चहत जो दह्यो, पिया के गनै।
तजि सब आसरै, जगत को करै, एही तूँ घनै।
भवभ्रम कौं हनै, भगति सौं सनै, तनै औ' मनै।
जसुमतिनंदनै, गरुड़स्यंदनै, करहि वंदनै ॥ ८३ ॥

नाराच छंद ।।।।।।ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

नगन नगन रगनो, आगेहू तीनि दै रगनो।
बिरति नवहि मैं करो, बर्न अट्ठारहै पगनो।
भनित भुजँगराज को 'दास' भाषै सु तौ साँच है।
मदनबिसिख पाँच है, छट्ठमो छंद *नाराच* है ॥ ८४ ॥

यथा

परम सुभट हो गन्यो, मावती तोहि सो हारियो।
निपट बिबस ह्वै गयो, हाल बंदी दयो डारियो।
कबहुँ डरत नाहिं जे, तेग सौं चाप सौं चोट सौं।
करत बिकल ताहि तूँ, नैन-नाराच की चोट सौं ॥ ८५ ॥

---

[८१] बंधूको-बंधूवो (सर०, लीथो, नवल १, वेंक०)।
[८५] है-से (सर०), हू (अन्यत्र)।

चित्रलेखा छंद SSSS|||||SS|SS|SS

चारयौ हारै, नगन नगन गो, गो यगंना य धारो।
बिश्रामो है, चतुर बरन औ' सात सातै निचारो।
पायै माहीं, गनि गनि धरिये, बर्न अट्ठारहै जू।
जो मैं आनौ, भुजगनृपति यों, *चित्रलेखा* कहै जू॥ ८६॥

यथा

इच्छाचारी, सघन सदन की, जोवनाढ्या अरोगा।
भर्ताहीना, परमछबिवती, धूर्तनारी-सँजोगा।
भोगी दाता, तरुन जनन के, पास मैं बास देखो।
ता नारी सौं, स्वकुल धरम को, राखिबो *चित्र लेखो*॥ ८७॥

सार्धललिता छंद SSS||S|S|||SSS|||S

मो आनो सगनो जगनु सगनो, तकार सगनो।
बिश्रामो गनि बारहै बरन को, दै फेरि छ गनो।
है अट्ठारहै बरन 'दास' लखिये, चौ पाय ललिता।
याको नाम धर्यो भुजगपति ही, है *सार्धललिता*॥ ८८॥

यथा

सालस्या नयना उठी पलँग तैं, पा लागि रवि सौं।
ही मैं तैं न चली चली सदन कौं, ऍंडाइ छवि सौं।
सोहती सिगरे सु भाँति बिगरे, सिंगारललिता।
वक्त्राभोजप्रफुल्ल *सार्धललिता*, वेनीबिगलिता॥ ८६॥

सुधाबुंद छंद |SSSSS|||||SSS|||S

लगो चारो हारा, नगन सगनो, तकार सगनो।
छ बिश्रामै ठानो, छ पुनि गनिकै, नौ फेरि छ गनो।
दसै आठै बर्नो, सुकबिजन कौं, दातार सिधि को।
सुधाबुंदो छंदै, भुजग बर्नो है, याहि बिधि को॥ ६०॥

---

[८७] स्वकुल–सकुल (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[८६] सोहती–सोहते (लीथो, नवल०, वेंक०)।

यथा

चलैं धीरे धीरे, गति हरति है, माते द्विरद की।
उनींदे नैना सों, हरति अरुनता कोकनद की।
किनारी मुक्ता सों, छवि बदन की, या भाँति छलकै।
सुधाबुंदे मानो, उफिनि ससि के, चौ फेर मलकै ॥ ८१ ॥

शार्दूलविक्रीड़ित छंद ऽऽऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ

मो आनो सगनो जगंनु सगनो, कर्नो यगंनो धुजो।
हेरो बारह सात मैं चहत हौ, विश्राम को सोधु जो।
देखे जासु रसाल चाल पद की, पक्षी रहै मीड़ितै।
वर्नो है उनईस ईस सुनिये, सार्दूलविक्रीड़ितै ॥ ८२ ॥

यथा

राजै कुंडल लोल कान ससि की, सोहै ललाटी कला।
आछे अंगनि पीतबास बिलसै, त्यौं आँगुली मैं छला।
तीखे अस्त्र अनेक हाथ गिरिजा, लीन्है महा ईड़ितै।
आवै भाँति भली चढ़ावति चली, सार्दूल विक्रीड़ितै ॥ ८३ ॥

फुल्लदाम छंद ऽऽऽऽऽ।।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

है पाँचो हारा, नगन नगन गो, रगना गो य जामैं।
पाये मैं वर्ना, दस अरु नव सो, जानिये फुल्लदामैं।
विश्रामो पाँचो, पुनि मुनि महियाँ, सात मैं फेरि दीजै।
फैलायो याकों, भुजगनृपति ही, 'दास'जू जानि लीजै ॥ ८४ ॥

यथा

महा संभू स्यौं, सुर मुनि सिगरे. ध्यावते जासु नामैं।
जाके जोरे को, सुनिय न कतहूँ, बीर दूजो धरा मैं।
ताही कौं गोपी, म्रिसस करति है, नैन आरक्ता मैं।
टेढ़ी कै भौं हैं, प्रिय कर गहिकै, मारती फुल्लदामैं ॥ ८५ ॥

मेघविस्फूर्जित छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

यगंनो मो आनो, नगन सगनो, रगनो रगनो गो।
जहाँ पाये पाये, बरन सिगरो, बोनईसै गनो हो।
छ विश्रामो लैकै, बहुरि छह श्यौं', सात सौं पूजितो है।
यही छंदो भाष्यो, भुजगपति को, मेघविस्फूर्जितो है ॥ ८६ ॥

यथा

थक्यो है घासंती, पवन यहि औ', कोकिला कूकि हारी।
निसानाथो हार्‌यो, हनैन हितु कै, चंद्रिका तीक्ष्न भारी।
न आवैगो प्यारो, करति सखि तूँ, यादि संदेह यौरी।
हिँगो नीकेहीं, कठिन हियरा, *मेघविस्फूर्जितौ* री॥ ९७॥

छाया छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ

यगंना मो आनो, नगन सगनो, फर्नो लगै गो लगै।
बिरामै दे छा मैं, बहुरि छह औ', सातै सु नीको लगै।
गनौ यामें वर्नां, दस 'रु नवई, पाये पाये वंदु है।
फनीराजा बानी, चितु धरहि तौ, *छाया* यही छंदु है॥ ९८॥

यथा

लियो हाथे बंसी, बसन पहिर्‌यो, गोपाल को आपु ही।
न जाने क्यों पायो, धरन वहई, कैसी सज्यो जापु ही।
हँसै बोलै मानो, करति अबहीं, क्रीड़ाहि बिस्तार सी।
यकांता मैं कांता, लखति निज यौं, *छाया* लिये आरसी॥ ९९॥

सुरसा छंद ऽऽऽऽ।ऽऽ।।।।।।ऽऽ।।।ऽ

धार्‌यो हारा यगंना, नगन नगन गो नंद सगनो।
सातै बिश्राम कैकै, पुनि करि मुनि औ', पंच पगनो।
ठानीजै 'दास' आछो, दस नव बरनो, एक चरनो।
भाखै श्रीनागराजा, इहि बिधि *सुरसा*, छंद तरनो॥ १००॥

यथा

जानै 'दासै' अकेलै, पवनतनय के, नामफल कौं।
नौं दे जाके भरोसे, कलिकुलमल कौं, दुखदल कौं।
फालै जानै पयोधै, किह्नि कि जिहि कौं, गाइ खुर सा।
जानै बुध्यौ बड़ाई, बिनय लघुतई, एक *सुरसा*॥ १०१॥

---

[१००] सातै–सातौ (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१०१] 'सर०' में नहीं है। जानै–यानै (नवल०, वेंक०)। कुलमल–कमल (लीथो, नवल०, वेंक०)।

सुधा छंद ।SSSSS।।।।।।SS।SS।SS

यगानो मो आनो, नगन नगन गो, गो यगाना यगानो।
छ विश्रामै ठानो, मुनि पुनि करिकै, सातई फेरि तानो।
गनो पाये पाये, गुर लघु मिलिकै, वर्न हैं 'दास' बीसैं।
सुधा याको नामै, मधुर समुझिकै, आपु राख्यो अहीसै ॥ १०२॥

यथा

बसै संभू माथे बिमल ससिकला बेलि ह्याँ तैं कढ़ी है।
मरेहू प्रानी कौं अमर करति है साँचु यातैं बढ़ी है।
कहै याकौं पानी, गुनगन तनको, 'दास' जान्यो न जाको।
स्रवै सीरो सोतो, सुरसरि महिआँ, स्वच्छ साँचो सुधा को ॥१०३॥

सर्ववदना छंद SSSS।SS।।।।।।SSS।।।S

कर्नो कर्नो यगंनो, दुजवर सगनो तकार सगनो।
ठानो विश्राम सातै, पुनि मुनि रस है, बिश्राम पगनो।
वर्ना बीसै सँवारो, चरन चरन मैं, आनंदसदनै।
भोगीराजा बखान्यो सकल बदन सोहै सर्ववदनै ॥ १०४॥

यथा

पूजा कीजै जसोदा, हरि हलधर की, मोसौं सुनति हौ।
बाँधी मारी वृथा ही, इनकौं अपनो, जायो गुनति हौ।
पालै मारै उपावै, सकल जगत ये हैं दैतकदनै।
थाके जाके बखानै, करत सुरसती, स्यौं सर्ववदनै ॥१०५॥

स्रग्धरा छंद SSSS।SS।।।।।।SS।SS।SS

धारयो हारा यगंना, दुजवर सगनो, रगना द्वै बिराजै।
दीजै ता अंत हारो, मुनि मुनि मुनि मैं, तीनि बिश्राम साजै।
दीन्हे वर्ना इकीसै, चरन चरन मैं, भ्रांति को बृंद भाजै।
भाष्यो भोगीसजू को, सकल छनि भरयो स्रग्धरा छंद छाजै ॥१०६॥

---

[१०२] 'सर०' में नहीं है।
[१०३] बेलि-पेलि (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१०४] सोहै-सी है (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१०५] उपावै-उपरतै (लीथो, नवल०, वेंक०)। ये हैं-येहैं है(वही)।
[१०६] भरयो-भयो (लीथो, नवल०, वेंक०)।

यथा

मूसो सिंहो मयूरो, डमरु वृषभ औ', ब्याल हैं संग माहीं।
ताके हैं एक एकै, असन करन कौं, पावते घात नाहीं।
जागे ही मैं विचारो, कुसल रहति है, संभुजू के घरे मैं।
माथे पीयूषधारी, सुभटसिरनि को, स्रग्धरे हैं गरे मैं ॥१०७॥

सरसी छंद ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

नगन जगंनु भंद सगनो, सगनो सगनो लगे लगे।
विरति विवेक एकदस मैं, दस मैं करिये पगे पगे।
चरन इकीस 'दास' दर सी, दरसी दरसी लसी लसी।
तिरति सुबुद्धि छंद सरसी, सरसी सर सी रसी रसी ॥१०८॥

यथा

भँवर सुनाभि कोक कुच है, त्रिवली बिमली तरंग है।
द्विभुजमृनाल जानि कर कौं, कमलै कहिये सुरंग है।
लहत कपोल कंबु-सरि कौं, अँखियाँ झखियाँ अनूप है।
चिकुर सेंवार रूप जल जू, वनिता सरसीसरूप है ॥१०९॥

भद्रक छंद ऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽ ऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽ

गो सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो।
चारिनि है, विराम छ गनो, बहोरि छ गनो, बहोरि छ गनो।
बाइस ही, विचारि मन मैं, चहूँ चरन मैं, धर्यो बरन मैं।
भद्रक है, रसाकरन मैं, गुनागरन मैं, सुन्यो करन मैं ॥११०॥

यथा

कीजिय जू, गोपाल-अरचा, गोपाल-चरचा, सदाहि सुनिये।
मेटन को, महा कलुष को, दरिद्र दुख को, न और गुनिये।
जाहिर है, सुरासुरनि मैं, लहू गुरनि मैं, चराचरनि मैं।
भद्र कहै, यही अरनि मैं, यही दरनि मैं, यही परनि मैं ॥१११॥

---

[१०७] ही मे०–है मै बिचारयो (लीथो, नवल०, वेंक०)। सुभट–सुभ (वही)। स्रग्धरे–स्रग्धरा (सर०)।

[१०८] लसी०–रसी रसी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१११] दरनि–स्रनि (नवल २, वेंक०)।

अद्रितनया छंद ||||SISIIISISIIISISIIIS

पिय सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो।
जति सर दै, बहोरि छ गनो, बहोरि छ गनो, बहोरि छ गनो।
गनि गनिकै, त्रिबीस मत्त मैं, चहूँ चरन मैं, धर्‍यो धरन मैं।
गुनि गुनिकै, जु *अद्रितनया*, सुअक्षरन मैं, कह्यो सरन मैं ॥११२॥

यथा

घट घट मैं, तुँही लसति है, तुँही बसति है, सरूप मति के।
तुअ महिमा, अरी रहति है, सदा हृदय मैं, त्रिलोकपति के।
निज जन कौं, बिना भजनहू, कलेस हननी, बिथा निहननी।
जय जय श्रीहि*माद्रितनया* महेसघरनी गनेसजननी ॥११३॥

भुजंगविजृंभित छंद SSSSSSSSIIIIIIIIIISISIISIS

चारो हारा चारो हारा, दुजबर दुजबर सगनो, जगंनु जगंनु गो।
आठै मैं लेतो बिश्रामै, पुनि बिरमत इक्दस मैं, करो पुनि सात हो।
पाये मैं छबीसैं बर्ना, बरनित भुजगनृपति को, सुखाकर है क्तिो।
याके नामै जानो चाहो,चित धरि सुनहु बचन तौ, *भुजगविजृंभितो*॥११४॥

यथा

साधू मैं साधत्वै पैयै, बहु बिधि बिनय करत हूँ, निरादर कीन्हेहूँ।
जैसे धेनू दुग्धै देती, कटु तिन अमित चरतहूँ, गुड़ादिक दीनहूँ।
मंदे सौं मंदी ये होती, जब तब जगत बिदित है, उपाय करो किंतो।
जैसे मिस्त्री छीरै प्याए, बिषमय स्वसन बहत है, *भुजंगविजृंभितो* ॥११५॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे वर्णवृत्तरनोकरीनिर्णनं नाम
द्वादशमस्तरंगः ॥१२॥

---

[११४] चित०–चित दे सुनो (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[११५] सौं–तें (सर०)।

१२

अर्धसम वृत्ति (दोहा)

पहिलो तीजो सम चरन, दूजो चौथ समान।
करो अर्धसम छंद में, इहि बिधि वृत्ति सुजान ॥ १ ॥

पुहपतिअग्र छंद

दुजवर रागनो यगंनो, दुजवर नंद जगंनु गो यगंनो।
पुहपतिअग्र छंद बर्नो, बिषम दसै त्रिदसै समेति बर्नो ॥२॥

यथा

फिरि फिरि भ्रमिकै कहै नवेली, बिधि यह कौन प्रकार की चँबेली।
रँग धरति कनैर-पाँखुरी के, छुवति जि पुप्प ति अग्ग आँगुरी के ॥३॥

उपचित्रक छंद

सगना सगना सगना लगो, भागनु भागनु भागनु कर्नो।
अधरा चहु पायनि ग्यारहै, छंद यही उपचित्रक बर्नो ॥ ४ ॥

यथा

न उठै कर जासु सलाम सें, बात कहैं मिल उत्तर नाहीं।
न करो दुख मानव जानिकै, मित्र सु है उपचित्रक माहीं ॥ ५ ॥

वेगवती छंद

सगनो सगनो ल यगंनो, भागनु भागनु भागनु कर्नो।
बिषमे दस बर्न प्रपंनो, वेगवती सम ग्यारह बर्नो ॥६॥

यथा

अटि गो अधरा-रँगु क्यों है, बाढ़ि गई बकवाद घरी है।
सिगरो तन स्वेद सनो है, तो डर आवत वेगवती है ॥७॥

---

[२] रागनो–रागनो भुजा (सर०)। दसै–द्वादसौ (वही)। समेति–समेनि (वही)।

[५] सों–से (सर०)।

[६] ग्यारह–बारह (सर०)।

हरिणलुप्त छंद

विषमे अखरा इक हीन है, समनि सुंदरि पायनि लीन है।
भनि पन्नगराज प्रवीन है, *हरिनलुप्त* सुछंद नवीन है ॥ ८ ॥

यथा

बृज की बनिता लखि पाइहै, इकहि की इकईस लगाइहै।
मग-रोकनि की सजि बानि कौं, *हरि न लुप्त* करो कुलकानि कौं ॥९॥

अपरचक्र छंद

दुजबर सगना जगंनु गो, दुजबर गो सगना जगंनु गो।
सिव रवि अखरानि राखियो, सु *अपरचक्र* भुजंग भाखियो ॥ १० ॥

यथा

बृजपति इक चक्र कौं धन्यो, त्रिभुवन कौं निज हाथ मैं कन्यो।
तुअ बस सुभ यौं बिसेषिकै, तिय *बिय चक्र*नितंब देखिकै ॥११॥

सुंदर छंद

सगना सगना जगंनु गो, सगना भागनु रगना लगो।
विषमे अखरा दसै धरो, समपद ग्यारह छंद *सुंदरो* ॥ १२ ॥

यथा

पढ़िकै दिढ़ मोहनमंत्र कौं, सजनी सोधि सिंगारतंत्र कौं।
रचना विधना-अनंग की, सुषमा *सुंदर* स्याम अंग की ॥ १३ ॥

द्रुतमध्यक छंद

भागनु तीनि गुरू बिय दीजै, पुनि दुज भागनु गो ल य कीजै।
ग्यारह बारह आखर पाएँ, कहि *द्रुतमध्यक* छंद सुभाएँ ॥ १४ ॥

यथा

कौतुक आजु कियो बनमाली, जलनिध कूदि पन्यो सुनि आली।
नाथि फनिंदहि सोधि फनिंदी, प्रगट भयो *द्रुत मध्य* कलिंदी ॥ १५ ॥

---

[८] समनि-सुनि सु (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१२] ग्यारह-बारह (सर०)।

दुमिलामुख-मदिरामुख (दोहा)

सम मदिरा दुमिला विषम, दुमिलामुख पहिचानि।
उलटि सु मदिरामुख कहै, इहि विधि औरौ जानि ॥ १६ ॥
होहि विषम चारौ चरन, बिश्रम छुत्ति है सोइ।
वेदनि बीच प्रमान नहिं, भाषा बरनै कोइ ॥ १७ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थ कृते छंदार्णवे अर्धसमविषमछंदोवर्णनं नाम त्रयोदशमस्तरंगः ॥ १३

१४

मुक्तकछंदवर्णनं (दोहा)

अक्षर की गनती जहाँ, कहुँ कहुँ गुर लहु नेम।
बरन-छंद में ताहि कवि, मुक्तक कहैं सप्रेम ॥ १ ॥

स्लोक तथा अनुष्टुप् छंद

चारि आगे धुजा एकै दूसरे है धुजा थपो।
आठ आठ चहूँ पाये स्लोक नाम अनुष्टुपो ॥ २ ॥

यथा

जन दीन सुखी कर्ता, हरता भयभीर को।
लोक तीनिहुं में फैल्यो, स्लोक श्रीरघुबीर को ॥ ३ ॥

---

[१६] दुमिलामुख–दुमिलाद्रुख (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१] जहाँ–यहा (नवल०, वेंक०)
[२] 'भर० में' नहीं है।
[३] सुखी–दुखी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

गंधा छंद (दोहा)

प्रथम चरन सत्रह बरन, दुतिय अठारह आनु।
यों ही तीजउ चौथऊ *गंधा* छंद बखानु॥ ४॥

यथा

सुंदरि क्यों पहिरति नग भूषन असावली।
तन की द्युति तेरी सहज ही मसाल-प्रभावली।
चोवा चंदन चंद्रकइ चाहै कहा लड़ावली।
तेरे गात कहत कोसक लौं फैलै सु *गंधावली*॥ ५॥

घनाक्षरी छंद (दोहा)

वसु वसु वसु मुनि अंत बरन, *घनाक्षरी* यकतीस।
चौ वसु *रूपघनाक्षरी*, बत्तिस गन्यो फनीस॥ ६॥

यथा

जबहीं तें 'दास' मेरी, नजरि परी है वह,
तबही तें देखिबे की भूख सरसति है।
होन लाग्यो बाहिर कलेस को कलाप उर-,
अंतर की ताप छिनहीं छिन नसति है।
चलदलपात से उदर पर राजी रोम-,
राजी की बनक मेरे मन मैं बसति है।
सिंगार मैं स्याही सौं लिखी है नीकी भाँति,
काहू मानो जंत्रपाँति *घनअक्षरी* लसति है॥ ७॥

रूपघनाक्षरी छंद

दरसि परसि वह, ताप कौं हरति वह,
प्रमदा प्रवीननि कौं, मोहित करत प्रान।
वह बरसावै हिय, प्रेमरस बूँदनि को,
वह मनु बेमग्रे बेधे, चूकत न जग जान।

---

[५] सुंदरि–सुंदरि तू (लीथो, नवल०; वेंक०)। तन की द्युति–तन द्युति (वही)। ०कइ–कै (सर्वत्र)।

[७] पात–पान (सर०)।

[८] वह प्रमदा–यह प्रमदा (सर०)। चारि–चारु (लीथो, नवल०, वेंक०)। उपमान–गुनमान (सर०)।

चारु चारि विधि को बिलोकि गुन चारिहू मैं,
तन 'दास' प्यारे मैं बिचार्‌यो चार्‌यो उपमान।
बदन सुधाधर अधर तिय मेरी आली,
स्वच्छ तन रूप धेन अङ्ग री प्रबल बान॥ ८॥

वर्णफुल्लना छंद (दोहा)

कहुँ सगन कहुँ जगन है, चौबिस बरन प्रमान।
गुरु द्वै राखि तुकंत मैं, *बरनफुल्लना ठान*॥ ९॥

यथा

पानि पीवै नहीं पान छीवै नहीं बास अरु बसन राखै न नेरो।
भर्‌यो प्रान के ऐन मैं नैन मैं बैन मैं है गुन रूप 'रु नाम तेरो।
बिरहावस ऐस ही है वही कै मही राखिहै कै नहीं प्रान मेरो।
नित 'दास' जू याहि सदेह कै फुल्लना भूलतो चित्त गोपाल केरो॥१०॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मुक्तकछंदवर्णन नाम
चतुर्दशस्तरंगः॥ १४॥

१५

दंडकभेद (दोहा)

द्वै न सात यगना *प्रचित दंडक* चरननि देखि।
चरन चरन नव सगन मय, *कुसुमस्तवक* बिसेषि॥ १॥

प्रचित दंडक ||||||ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ

जय जय सुखदानी अविद्यानिदानी सुविद्यानिधानी ररै बेदबानी।
सरन तु सरन बानी महेंद्री मृडानी दयासील सानी तिहूँ लोकरानी।

---

[१०] पानि–भरी पानि (लीथो, नवल०, वेंक०)। गुन–न गुन (वही)। 'रु–अरु (वही)। बिरहा–बिरह (वही)।

[१] प्रचित–रचित (लीथो, नवल०, वेंक)।

[२] जय जय–जयति जय (सर्वत्र)। सरन तु सरन–सनत असर (सर०), सरन तुव सरन (लीथो, नवल०, वेंक)। जग–जगत (वही)।

घनि जग तेहि थरानी वहै भाग्यवानी वही संत जानी वही धीर ज्ञानी
प्रचित कहत जु प्रानी नमस्ते भवानी नमस्ते भवानी नमस्ते भवानी ॥२॥

कुसुमस्तवक दंडक

सरि सोभित श्रीनँदलाल भए निकसे वन तें बनितागन संग जवै।
हरि साथ उरोजवतीनि के हाथनि याहि प्रभाहि धरे गुलदस्त फवै।
हरिजू के दुराइबे को बहु तीर तलास करो अनुमानिकै 'दास' अवै।
चित चायते लै लै मिली है मनो कुसुमस्तवकै कुसुमेपु की सैन सवै॥३॥

अनंगशेखर दंडक (दोहा)

चारि दसै कै पंद्रहै, कै सोरह धुज पाइ।
लखि अनंगसेखर कहो, दंडक भोगीराइ ॥ ४॥

यथा

बिलोकि राजभौन के बनाउ कों बिधातऊ भ्रमैं
न 'दास', चित्त धीर कैसहूँ धरे रहैं।
तहाँ घरी-घरी गोपालवृंद वृंद सुंदरीन
जाइ जाइ संग लै तमाल से अरे रहैं।
परे बिचित्र छाँह वै जहाँ छजे जराउ से समूह
आरसीन के दिवाल में जरे रहैं।
प्रभा निहारि कान्ह की छके सकै न छाँडि
संग सेन स्यों चहूँ दिसा *अनंग* से सरे रहैं ॥ ५॥

अशोकपुष्पमंजरी छंद (दोहा)

यामैं पंद्रह नंद हैं, अंत गुरू सों काम।
ता दंडकहि *असोक* जुत, *पुष्पमंजरी* नाम ॥ ६॥

---

[३] चाय-भाय (नवल०, वेंक०)। तें-सो (सर०)। कुसुमेपु-कुसुमेपु (सर०); कुसुमेप (लीथो); कुसुमपल (नवल १); कै कुसुमस्त (वेंक०); कै कुसुम मयूल (नवल २)।
[५] छजे-घने (सर०)।
[६] नंद-वर्न (लीथो, नवल०, वेंक०)।

यथा

ऊभि ऊभि साँस लेत द्यौस जौं टरयो
कहूँ टरै न कालराति सी कराल आइ सर्वरी।
'दास' ईस घोस तप्त तेल सी लगै
सरीर सर्प स्वास सी लगै बयारि यौं घरी घरी।
रावरे बियोग राम सुक्खदानि वस्तु
सर्व दुक्खदानि सीय कौं एकंक ही दई करी।
भानु सो हिमांसु सो कृसानु भो सरोजपुंज
सोक भूरि कौं भरै *असोकपुप्फमंजरी* ॥७॥

त्रिभंगी दंडक (दोहा) ||||||||||||||||||||ऽ||ऽऽ||ऽऽऽ||ऽऽ

पंच बिप्र भगनु दुगुरु, स गो नंद यो ठाउ।
चरन चरन चौंतिस चरन बरन *त्रिभंगी* गाउ ॥ ८ ॥

यथा

सजल जलद जनु लसत बिमल तनु
श्रमकन त्यौं झलकौंहैं उमगौंहैं बुंद मनो हैं।
श्रवजुग मटकनि फिरि फिरि लटकनि
अनिमिष नयननि जोंहैं हरषौंहैं है मन मोंहैं।
पगि पगि पुनि पुनि खिन खिन सुनि सुनि
मृदु मृदु ताल मृदंगी मुहचंगी झाँझ उपंगी।
बरहि-बरह धरि अमित कलनि करि
नचत अहीरन संगी बहुरंगी लाल *त्रिभंगी* ॥ ९ ॥

मत्तमातंगलीलाकर दंडक (दोहा)

पाय करो नौ रगन तें चौदह लौं चित चाहि।
नाम *मत्तमातंग* को, *लीलाकर* कहि ताहि ॥ १० ॥

---

[७] एकक्ष–एकक्कु (लीथो), एकुंक्कु (नवल०, वेंक०)।
[८] गो–दो (लीथो, नवल०, वेंक०)। यो–गो (वही)।
[९] उमगौंहैं–उमगौ है (लीथो, नवल, वेंक०)।

यथा

पाइ विद्यानि को वृंद जू भारती ल्याइ सानंद जू
मानुषी कृत्ति सो वंद जू छंद लीला करै तौ कहा।
ह्वै महीपाल को मौर आखेट मैं साँझहूँ भोर लौं
लीन कक्षीन की दौर पक्षी लजीला करै तौ कहा।
सुभ्र सोभा सबै अंग मैं सुंदरी सर्वदा संग मैं लीन ह्वै
राग औ' रंग मैं नृत्य कीला करै तौ कहा।
जौ नहीं ठानिकै तत्त भौ रामलीलाहि सो रत्त तौ
बाहिरे सै करै *मत्तमातंगलीला* करै तौ कहा॥ ११॥

दंडक-भेद (कुंडलिया)

दोइ नगन करि सातई रगन देहु प्रति पाइ।
चडव्रिष्टिप्रपात यौं दंडक रचो बनाइ।
दंडक रचो बनाइ, आठ रगन को *अर्नै*।
नौ *अर्नो* दस *व्याल* रुद्र *जीमूतहि* बर्नै।
लीलाकर बारह *उदाम* तेरहै कहो इन।
'दास' चतुर्दस संख सगनि सिर चाहिय दोइ न॥ १२॥

(दोहा)

एकै कवित बनाइकै गन गन पर तुक ल्याइ।
'दास' कहै यौं आठऊ उदाहरन दरसाइ॥ १३॥

यथा

सरन सरन ही सदा ताहि कीनो कृपासिंधु गोपाल
गोविंद दामोदरो विष्नुजू माधवो स्यामजू
औ' स्वभू सुक्खदा सर्नु है 'दास' को।
सदय हृदय ह्वै हमैं पालिहै आपनो जानिकै
सोइ विस्वेस विस्वंभरो विष्नुजू
राघवो रामजू औ' प्रभू दुक्खहा हर्नु है त्रास को।

---

[११] साँझहूँ–साँझ ह्वै (नवल०, वेंक०)। कक्षीन–करछीन (सीधो, नवल०, वेंक०)।
[१२] च्रिष्टिप्रपात–वृष्टिप्रयात (रावंश)।

सुजस बिदित जासु संसार के बीच मैं सर्नदा ईस है
देव देवेस को धर्म है पालिबो ज्याइबो
मारिबो जो गनो है चहूँ बेद मैं।
भजन करिय चित्त मैं ताहि को नित्य ही दानि है
सिध्धि को लोकलोकेस को कर्म है
पालिबो ज्याइबो तारिबो सो भनो क्यौं लहौं भेद मैं ॥ १४ ॥

(दोहा)

छंदनि दोहरो चौहरो, करि निज बुद्धि बिबेक ।
मनरोचक तुक आनिकै, दंडक रचौ अनेक ॥ १५ ॥
रागन के बस कीजिये, ताहि प्रबंध बखानि ।
छंद लिये सो पद्य है, गद्य छंद बिन जानि ॥ १६ ॥
ग्यारह तें छब्बीस लगि, बरन दुपद तुक एक ।
सो सिर दै बहु छंददल, परे प्रबंध बिबेक ॥ १७ ॥
भेद छंद दंडकनि को, दोउ पारावार ।
बरनन - पंथ बताइ ये, दीन्हो मति-अनुसार ॥ १८ ॥
सत्रह सै निन्यानबे, मधु बदि नवै कबिंदु ।
'दास' कियो छंदारनव, सुमिरि साँवरो इंदु ॥ १९ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे दंडकभेदवर्णन नाम
पंचदशमस्तरंगः ॥ १५ ॥

---

[१४] लहौं–लहू (सर०) ।
[१६] साँवरो–साँवरे (सर०) ।

परिशिष्ट

१—प्रतीकानुक्रम

रससाराश

[संख्याएँ छंदों की हैं]

शृंगारनिर्णय

छंदार्णव

[पहली संख्या तरंग की और दूसरी छंद की है]

२—अभिधान

रससारांश

[संख्याएँ छंदों की हैं]

अंक=गोद । ५४, १२१
अंग=आधार, आलंबनत्व । १४
अंगन=शरीर के अवयव; आँगन (फुलवारी) । २४५
अँगिरात=अँगड़ाते हैं । २८६
अँचवन=आचमन, पीना । ३०६
अंतरभाव=(भावांतर) भिन्नता । १००
अंतरवर्तिनि=अंतरंगिणी । २२६
अँदेस=अंदेशा, शंका । ३६४
अकस=ईर्ष्या । ४०१
अकाय=व्यर्थ । १४६
अगमनै=पहले ही, पूर्व ही । १४४
अगमौ=(अगम=जहाँ तक जाया न जा सके, जिसको पाया न जा सके) अगम भी । ४
अगोरे=चौकीदारी करते हुए; अ + गोरे । १६३
अचल=पर्वत । २६
अचल-मवास=(आत्मरक्षा के लिए) पर्वतीय शरणस्थल, रक्षा का दृढ़ स्थान । २८
अछकेन्द=जो छके (नशे में) नहीं हैं, अमत्त । ८८
अजौं=आज भी । ४०१
अटनि=अटारी । १४६, ३६२
अटनि=घूमना, परित्याग । १४६
अटा=छत । १४३
अतन=अनंग, कामदेव । १६, २६
अदलखाने=न्यायालय । ५१६
अधर=बिंबाफल का उपमेय । ६६
अधरन=अधरों का । ३८७
अधसँसे=(अर्धश्वास) सँसेट में । ३८७
अधिकारी=अधिकता, विशेषता । १६
अनख=रोष, क्रोध । ४७टि, ५५३
अनख-भरी=क्रोध से भरी । ३२६
अनखुले=बिना कुछ कहे सुने, हेतु का पता बिना दिए ही । २०३
अनखौंहीं=बुरा माननेवाली । २२७
अनिमिष=अपलक, निर्निमेष । ३२४
अनुदिन=प्रतिदिन । ५१७
अनुभव=अनुभाव । ४६८
अनुरागियन=अनुरागियों को । ३८६
अपनाइत=(अपनायत) अपनापा । १०५
अपर=अन्य । १६
अपसमार=अपस्मार । ४८४
अपूरब=अपूर्व, उत्तम; अ + पूरब । २१३
अबार=देर, विलंब । ११३, ४५५

आतमक=ज्वाला, परक । १
आर्धा=अर्ध । १११
आर्धान=वश में । १११
आन=अन्य, और । १३१
आन=शपथ । १३१
आनन=मुखमंडल । २५८
आनी=ले आई । ७७
आनी कान=सुनी । ७७
आमिषभोगी=मासभक्षी । ५४१
आरतबंधु=दीनबंधु । ५०६
आरस=आलस्य आ+रस=रसपूर्ण । २८६
आरसी=(आदर्श) दर्पण । १६६
आली=सखी, आला का स्त्रीलिंग (चमत्कारार्थ) । ४७ टि
आली=हे सखी । १०६
आले=उत्तम, अत्यधिक । ८९ टि
आवनहार=आनेवाला । १४२
आषाढ़ी=आषाढ़ मास की पूर्णिमा की । २७४
आस=आशा से । १६८
आसमुद्र=समुद्र तक के । १०८
आसव=मद, शराब । ४२६
आसा=आशा । ४६६
आसा=(सोने चाँदी का) डंडा । ४६६
आहि=है । ७२
इंदिरा=लक्ष्मी, छटा । २७७
इंदुवधुन=इंद्रवधूटियों । ३८४
इतैइ=यहीं । ३८४
ईंगुरकैसा=ईंगुर के समान लाल, अत्यंत लाल । ३००

ईठि=यत्नपूर्वक, भली भाँति । ३१
ईठि=(इष्ट) सखी (नायिका) । ३०७
उकसौंहैं=उभरने को उन्मुख, उठने को तत्पर । २१६
उघरि ऐहै=प्रकट हो जायगा । १३६
उघार=खुला हुआ, निरावरण । ३०
उछाह=(उत्साह) उत्सव । ६०
उछाह=(उत्साह) उमंग, हर्ष । ६०
उतपल=उत्पल, कमल । ४०६
उत्का=उत्कंठिता । ११८
उतपन्न है=उत्पन्न होता है । १०
उदारिज=औदार्य । ८३०
उदारिज्ज=औदार्य । ३३७
उदोत=प्रकट, जाहिरा । २७२
उद्धत=प्रचंड । ४६६
उनमानि=अनुमान करके । ६१
उनींदे=निद्रा को उन्मुख, निंदासे । ५०१
उनै०=झुक (आया), छा (गया) । २६०
उपायनि=उपायों, प्रयत्नों । २४६
उभर्यो=उमड़ आया, उठ आया । (स्तन के लिए) । ३१
उर=छाती । ३०
उरज=कुच । २६, ३०
उरगिनी=साँपिन । ५३८
उरजातन=कुच । २४५
उरबसी=उर्वशी, एक अप्सरा । १७
उरहने=उपालंभ, उलाहने । ५०
उलाक=हरकारा, ऊँचा (वस्तुगति में) । २८

ऊम=(ऊष्मा) गरमी । ६६
ऊम-रस=ईख का रस । ६६
ऊमि=व्याकुल होकर । ४७४
ऐगुन=अवगुण, दोष । ५२
ऐन=ठीक, पूर्ण । १६६
ऐनिनैनि=मृगनयनी । ६२
ऐनी=ठीक । ६२
ओट=आड़ में । ५३
ओनात=ध्यान से सुनने का प्रयास करता है । १६५
ओर=अन्त । १०६
ओर=आर, तरफ । १०६
ओरई=और ही, दूसरा ही । २६५
कचनलतिका=सुनहला लता, नायिका का शरीर । २१६
कड़=कुम्हलाना । ३०७
कदन=समूह । २२८
कज्जलसंयुत=कालिमायुक्त, काला । ४६६
कत=क्यों । ३७६
कदन=नाशक । २
कनक दुति=सोने की सी दीप्ति । १८
कनक प्रभा=सोने की चमक (शरीर में मिल जाती है)। १८
कन्या=कन्याराशि, बेटा, कुमारा । २५६ टि
कपूरमनि=कर्पूरमणि (शरीर की कांति के नाते) । ३१८
कबीस=कवीश, श्रेष्ठ कवि (पंडित) । १००
कमनैत=धनुर्धर । ४१०
कमला=लक्ष्मी । १७
कर=हाथ, महसूल । ५६
करक=कर्कराशि, कड़क (कसक)। २५५ टि
करकस=(कर्कश) कठोर, कड़ा । ३६ टि
करन=कर्ण (कान), राजा कर्ण । १६
करार=चैन । २१०
करि=करके, से । १२०
करिकुंभ=हाथी का मस्तक । २५६
करियै=कीजिए । २७ ,
करुना=दया, करना, सुदर्शन पुष्प । २२४
करेज=कलेजा, हृदय । ४११
कलही=कलहान्तरिता । १७८
कलाद=सोनार । ४०८
कलानिधि=कलावत । २१८
कलाम=कथन, वादा । ३६
कलाम करना=वादा करना । ३६
कलिंदजा=यमुना । १३६
कसीस=कशिश, खिंचाव । २६५
कहर=(कहर) आफत, विपत्ति । २६५
कहर कियो=बला पैदा की, आफत ढाई । २५५
कहा=क्या (हुआ) । २७
कहैं=कहा जाता है, कहते हैं । ३६१
कहै=कही जाती है । २५६ टि
कह्यो=(कहियो) कहो, बताओ । १५१
कांचगिरि=स्तनों का उपमान ऊँचा पहाड़ चंद्रगिरि जो नेपाल में है । ६५
काठी=ईंधन । ८०८

कान=कान्ह, कृष्ण । ५२४
कानन=वन, (प्रकारांतर से) कानों । ५२४
कानन=कानों । ५४५
कानि=मर्यादा । ३४६
कान्हर=कृष्ण । ७२
कामद=मनोरथ पूरा करनेवाला । ४१३
कामदहनि=कामजन्य दाह । १०२
किंकिनिया=करधनी । १३४
किंसुक=टेसू, पलाश का पुष्प । १२३
कित करि=क्योंकर । ३०
किये निलजई=
निर्लज्जतापूर्वक, दृढतापूर्वक । ३७
किरवान=कृपाण । ३६६
किसान=कृषक । ६६
किहि=किसने । ३४५
कुंभ=कुंभराशि घड़ा (कुच-कुंभ) । २५६ टि
कुंभकरन=कुंभकर्ण । ५१४
कुचद्वय-सकर सिर=महादेवरूपी कुच-द्वय के शिर पर हाथ रखकर (वचन दीजिए) । २७१
कुचरचा=बदनामी । ८१
कुबेना=बंसी, मछली पकड़ने की अँकुसी कु+बेनी । १६४, २६७
कुरंग=बुरे रंगवाले मृग (चमत्कारार्थ) ४७ टि
कुलजा=कुलीना । ३४६
कुलिसा=वज्र का भी । ११७
कृसानु=अग्नि (शंकर के तृतीय नेत्र का अग्नि) । ४०१
केतकी=पुष्प कितनी । २२४
केतकीउ=केतकी भी, केवड़ा भी । ५२
केती=कितनी । ५१७
केदार=क्यारी । ११३
केरो=का । ४७८
केसरि=केसर, कुंकुम । ११३
को=कौन । ७८
कोक=(कामशास्त्र के निर्माता) यहाँ कोकशास्त्र । १५७
कोयन=कोये, आँख के डेले । ५४
कोर=किनारा, छोर । ३३
कोहै=(कोह=क्रोध) क्रोध को । ४८
क्रुध्धित=क्रोधित । ४६६
छिप्र=शीघ्र । ४६४
खंजन=खंजन नेत्र । २१६
खंडित=खंडिता (नायिका) । ११८
खगार=खगार, अप्रसन्नता, खट्टापन । १७२
खत=खत, नक्षत्र लेख (लेन देन के अनुबंध का) । ५६
खत=क्षत, घाव । २२६
खरारि=खर+अरि रामचंद्र । ४६३
खरा=खाली, अत्यंत । ८३, ६६, १४३
खरोंटें=खरोंच, काँटों से अंग का छिलना । ८०
खायन=(खात) गड्ढे । ४७४
खिझैनो=खिझाना, चिढाना । २१७
खिसा=विषाद, दुःख प्रकट करना । २३०
खीन=क्षीण । १५६
खेह=धूल । १५०
खोरन=(खोह) कंदराएँ । ४७४
खौर=(मस्तक पर चंदन की) आड़ी रेखाएँ । १५६

गौरि=(चदन का) आड़ा तिलक। ३२
गँठिजोरा=गँठबंधन। ४५४
गत न=गई नहीं, बीती नहीं। ४३
गथ=पूँजी, माल। २४६
गने मैं=गिनने में, विचार करने में। ४२४
गयद=गजेंद्र। ६५
ग्वारि=ग्वालि (गोपिका), नायिका। ३२४
गहिली=(मर्म की बात को) पकड़नेवाली। ३६०
गहे=(आप से) लगे (आपने देर की। १४५
गाँउ=गाँव। १२०
गाँठि=मनमुटाव, ग्रंथि। २०६
गाड़=गड्ढा। ४७१
गात=अंग। १२५
गारि=(गाली) अप्रतिष्ठा। ५४६
गिरद=(गिर्द) आसपास, चारों ओर। ५२८
गिलमनहूँ=मोटे मुलायम गद्दों पर भी। ३००
गुआ=(गुवाक) चिकनी सुपारी, सुपारी का खड। ३५६
गुन=गुण, रस्सी। ५२०
गुनही=(गुनाही) अपराधी। ५२०
गुनाह=अपराध। १५२
गुनौती=गुणशालिनी। ४२४
गुर=भारी। ६३
गुरजन=बड़े-बूढ़े लोग। ३४
गुरजन सग=गुरुजनों (बड़े-बूढ़ों) का साथ। ६०
गुलिक=गुरिया (मोती)। २२५
गुवालरियाँ=गोपिकाएँ। १५६
गूँथ्यो=गुंफित किया, गुहा। २२५
गूजरी=गोपी। २१२
गेह=घर। १०७
गेह कियो=घर कर लिया। ५०६
गैयर=(गजवर) श्रेष्ठ हाथी। ४८०
गोइ=छिपाकर। ५०१
गोए=छिपे हुए, अव्यक्त। ५४
गोबरहारी=गोबरकढ़िनी, गोबर पाथने या काटने का कार्य (चाकरी, पेशा) करनेवाली। ४७९
गोयो=छिपाया। १४६
गोरस=दूध, इंद्रियसुख। २२०
गोरी=पार्वती। ४५८
गोहन=साथ-साथ। ५२१
गोहैं=घातें। ४८
ग्वारि=ग्वालिनि। २६६
ग्वैंडेहि=(ग्वैंडा=गाँव के आस पास की भूमि) ग्वैंडे में। १४१
घटि=घटकर, न्यून (होकर)। ५०, ४०१
घनसार=कपूर। ४२७
घने=अनेक, बहुत। १०७
घनेरी=अनेक, बहुत। १७
घरनि=स्त्री। ४६१
घरी साधि=घड़ी साधकर, अनुकूल मुहूर्त साधकर। १४१
घाइ=घाव। २५५
घायन=घावों, चोटों। ४७४
घिनमै=घृणामय। ४७०

घुमड़=घिराव, आच्छादन । ३
घैरु=अपयश । ३४२
घटा=उम, प्रसर । ३
चंद्रभागा=राधा की सखी । २५७
चपक=चंपा । १२५
चम्पकलता=राधा की सहेली । २५७
चकी=चकपकाई । २०७
चकै=चकपकाती है । ३८
चख=चक्षु, नेत्र । ६७
चख मगन=नेत्ररूपी मछली । २६७
चतुर=पंडित, प्रवीण । १७७
चतुर=चार । १७७
चरचि चरचि=बारबार बात करके । ६७
चरचनि=(चरचा=बदनामी) । ६७
चर भाउ=सचारी भाव । ४१
चवाइ=बदनामी करनेवाला । १२०
चाँचरि=वस्त्र विशेष । २८०
चँदना=चंद्रिका गुलचँदनी । २२४
चाइ=(चाव) चाह । ८२
चाइ=इच्छा । २४४
चाइ=राग के लिए टेक । ४०१
चाय=(चाव) उमंग । ६६
चाय=(चाव) लालसा । ६६
चाह=प्रेम का उत्कंठा । २८
चाहि=बनकर, अधिक । ७२
चिकुरन=केशों में । १६६
चिकुरारा=(चिकुर+अवला) केशों का समूह । ५८२
चित्ररेखा=एक अप्सरा । ७०
चित्रासमा=चित्र सम । १५७
चीन्हि=पहचानकर । ५६
चूक=भूल, व्यर्थ । ७६
चूरि=चूर-चूर (हो जाती), टूट (जाती) । ३४१
चूरे=कड़े (कङ्कण) । ५८२
चेत=होश, चेतना । ५२२
चेपटै=चेष्टा ही । २६२
चारसी=तीर्गी । ४०१
चाव=उमग । २७६
चौसर=चौपड़ । ३७०
छकवति=छकाती है, मदमत्त करती है । ५७६
छकाइ देति=मदमत्त कर देती है (सुरा) । ८८
छकी=मदमाती । २०७, २२२
छकौहैं=छकने की ओर उन्मुख । ४८
छतिलाभ=हानिलाभ । ६६
छनदा=रात्रि । ४११
छपैहुँ=छिपने पर भी । ५३३
छबिछाँह=शोभा की छाया, कान्ति बिंब । ३३३
छवा=एड़ा । २६
छहरि=फैलकर । ४२१
छाँह=प्रतिबिंब । ३३३
छाम=(क्षाम) क्षीण । २३४, ४०७
छामोदरी=कृशोदरी । २३८
छितिराउ=क्षितिराज, भूपति । १०८
छिपैबो=छिपाना । ४८५
छूँछि=खाली, केवल । ४१८
छूँ न=छुएँ मत, स्पर्श न करें । ४३
छौनि=पृथ्वी । ५३३
छानिप-छौना=राजकुमार । ५३३
छ्वैहैं=छूएँगी, चोरी करने जाएँगी ।८

जक=भौंचक्कापन। ३१७
जकी=चकपकाई। ११४, २०७
जगभूखन=जग के भूखन (कृष्ण)। ३८४
जज्जर=(जर्जर) दुर्बल, दुबले-पतले। ४६६
जदुराइ=यदुराज, कृष्ण। ५३
जन=प्रिय जन (संत)। ४४
जनि=मत। २०
जने=उत्पन्न किए, पाए (पुत्र)। १०७
जरतारिहूँ=जरी के कामवाली साड़ी भी। २४
जलजान=जहाज। २६५
जसिन=यशियों, यशस्वियों। ५१५
जहीं=जहाँ ही। ३४१
जाइबोऊ=उत्पन्न करना भी। ४७७
जाए=उत्पन्न किए हुए। ५४६
जातनहि=(यातना) पीड़ा को। ५३६
जातरूप=सोना। २४६
जानमनि=ज्ञानिमणि, विद्वान्। ३१६, ५७३
जानुपानि की चालि=बकैयाँ चाल। ४६७
जापक=जप करनेवाले। १८५
जाम=याम, प्रहर। १२६
जामते=जमते हुए, जिसका विचार करने से (जा मते)। २२४
जामिनि=यामिनी, रात्रि। १२६
जार=यार, उपपति। ६१
जिय-भावतो=प्राण को भानेवाला, मारक। ८६
जीहा=जिह्वा। ३७५
जुदे=अलग। ४३१
जुध=युद्ध (में)। ४६६
जुरसाल=जु रसाल (रसिक); ज्वर की वेदना। २२१
जूह=यूथ, समूह। १५६
जेर=जेर, पराजित। २६१
जोग=प्रकार। १६३
जोतिहारी=छूटा पराजित; जो तिहारी। २२४
जोन्हजुत=चंद्रिकायुक्त। २०
जोर=आधिक्य। १८८
जोरन=(जोर=बल)। ६५
जोरावर=प्रबल। ५०६
ज्याइ=जिलाकर (सुधा)। ८८
ज्याइबो=जिलाना। ३८७
ज्याइबोऊ=जिलाना भी। ४७७
ज्यान=जियान, हानि। ३७६
झँगा=ढीला कुरता। ५८२
झँझरी=जाली। १६५
झँवावती=झँवे (झँवा=जली हुई काली ईंट) से पैर की मैल रगड़वाकर दूर कराती है। ११६
झख=मछली। १६४
झझकारती=झिटक देती है। २२७
झपि=झपकी का संकेत देने के लिए ढककर। १२६
झरि=झड़। ३६०
झाँवत=झाँवे से रगड़कर मैल छुड़ाता है। १६८
झाँवरी=झाँवे के रंग की। ३६१

तुला=तुलाराशि, तराजू। २५६ टि
तूरन=तूर्ण, शीघ्र; तोड़ा नाम का गहना। २०५
तूलभरे=भूआ अथवा रूई से भरे (पूर्ण)। ५४१
तृन=तिनका। ११६
तेरियै=तेरे ही। ५०६
तेह=अहंकार। ३४३
तौऽन=तो अन्न। ३३६
त्यौर=तेवर, दृष्टि। ७, ३४३
थँमि रहे=रुक गए। ८५
थकी=श्रांत। ३०७
थाई=स्थायी (भाव)। १२
दंत=अनार के दानों के उपमेय। ६६
दई=दी। ३१८, ३६५
दई=हे दैव। १०४, ३६५
दई=(हा) दैव। ५२५
दई=(दी) दिया। ५२५
ददौरे=ददोरे (पड़ गए)। ३५८
दबि=सिकुड़कर। ३०३
दरन=चबाना। ४६८
दरपन=दर्पों से, गर्व से। ३२
दरपन=दर्पण, आरसी। ३२
दरबर=शीघ्र। ४६६
दरम्यान=बीच में। १३८
दरसतहीं=अवलोकन मात्र से। २५६
दरसालबन=प्रत्यक्ष आलंबन, दृष्टरूप में आलंबन। १३
दरी=(बारहदरी) द्वार। १६५
दरी दरी=द्वार द्वार, प्रत्येक द्वार। ३६४
दल=पंखुड़ी। १२१
दलगीर=उसकवाली, लपकवाली। ४६
दस्तूर=रीति, विधि। ४०
दही=दधि, जली। २२०
दाँउ=घात, मौका। ५४१
दाँवरी=(दावाग्नि) विरहाग्नि। ३८०
दान=(हाथी की कनपटी से बहनेवाला) मद। ३
दाना=पंडित, गुरिया। २०६
दानि=दानी। ३४६
दायन=(दाव, दाह) संताप। ४७४
दार=स्त्री। ११३
दारिम=अनार। ३४०
दावन=दामन, दाहों। २४१
दावा=अधिकार। ११६
दावा=दावाग्नि। ११६
दासनि=दासों। ४६६
दिनचंद=दिन का चंद्र (हतप्रभ)। १२४
दिसि=(दिशा) ओर, पार्श्व। ५८२
दीपति=दीप्ति। १६
दीबो=दान (देना)। ३४६
दुट्टूक=दो टूक, दो टुकड़ेवाला। ३८
दुपहरिया=दोपहर, गुलदुपहरिया। २२४
दुरजन=शत्रु ६३
दुराए=छिपाए। ८२
दुरावै=छिपाती है। ५०
दुरी=छिपी। ८२
दुरे=छिपे। १०९
दुहाई=घोषणा। २८
दुहाई फिरना=किसी शासक के शासन की घोषणा होना। २८
दूखियै=दोष दूँ। ६६

निदरि=निरादर करके, उपेक्षा करके। ३७
निदरैं=अपमानित करती हैं। ५८१
निधरक=बेरोकटोक। १२१
निपात=पतन, अप्रतिष्ठा, पत्तों से रहित होना। ५४२
निबसे=निवास किया। ५५५
निरंग=विवर्ण। ११४
निरगुन=बिना डोरे की, गुणहीन (चमत्कार के लिए)। ४७ टि
निरगुन माल=वह दाग जो आलिंगन से माला के दानों का छाती में उभर आता है। ४७ टि
निरदई=निर्दय। ३२१
निरमई=निर्मित की। ३२१
निलजई=निर्लज्जता (लज्जा निर्लज्ज होकर रहती है)। ३७
निसनि=(निशा) रातों में। ७१
निसरिहौं=निकालूँगा। ५०६
निसवादिल=स्वादुहीन, अस्वादु। ५४३
निसा=(निशा) रात्रि तृप्ति। १६२
निसासिनि=(नि.श्वास) निर्दय। ४१०
निसिमुख=(निशिमुख, निशामुख) सध्या, साँझ। १९८
निसि-रंग=रात्रि का वर्ण (साँवला)। २४
निहार=नीहार, कोहरा। १३७
निहोरौं=प्रार्थना करती हूँ। ८३
नींदि=निंदा करके। ४१७
नीरहि=पानी में। ३५६
नीरैं=(नियरे) निकट। ३५६
नीलकंज=इंदीवर, नील कमल। ५०८
नेकौ=थोड़ा भी। ४०६
नेरो=(निकट) समीप। ५०६
नेजाली=(निराली—निराल=कवच) सनद्ध भट। २८
नेह=प्रेम, तैल। १३२, १७४, २२२, ३६७
नेहकारनी=स्नेहकारिणी, प्रेमिका। १४८
नेह-नहनि=प्रेम में नधना (लीन होना)। ३१०
नैननि नाच नचायो=आँखें (मुझे) नचाती रहीं। ५२४
न्याइ=न्याय, उचित। ३६८
न्यारी=अनोखी, निराली। १७
न्यारी=पृथक्। १४१
पंच=नर-समूह, लोग। ६७
पखान=पत्थर। ३१२
पखान=पाषाण। ४१५
पगनत=पदनत, पराजित। १०८
पगभूषन=पैर का गहना (मानमोचनार्थ पैरों पर पतित)। ३८४
पगोहैं=पगा हुआ, विलीन। ४८
पत्याइ=विश्वास करे। २५
पद्मिनी=पद्मिनी नायिका, कमलिनी। १२१
पनिच=धनुष की डोरी, प्रत्यंचा। ०६५
पयान=प्रयाण, प्रस्थान। १४५, ५५५
पर उदेस=(परोद्देश) दूसरे को

पेखन=खेल, नाटक । ५४४
पेखि=देखकर । २८६
पेच=यत्न, उपाय । ७५
पेसखेमा=सेना की (खेमा आदि) सामग्री जो सेना पहुँचने के पहले ही पड़ाव पर पहुँच जाती है । २७
पेसो=(पेशा) । ४०८
पैँडो=राह, मार्ग । ५०३
पै=(देखने) पर । ५४
पै=द्वारा, से । ३७७
पैबो=पाना । ३१७
पौंटी=सोई । १२७
पौरि=द्वार, ड्योढ़ी । ३८०
प्रजंक=पर्यंक, पलंग । ७, ३४०
प्रवत्सप्रेयसी=प्रवत्स्यत्प्रेयसी, जिसका पति परदेश जा रहा हो । ११८
प्रवाल=प्रवाल, मूँगा (हाथ की ललाई से) । ३१८
प्रभाकर=सूर्य । १५१
प्रभापट=(यौवन के) सौंदर्य का आवरण । २५
प्रमान=(प्रमाण) रूप, प्रकार । १४८
प्रसग=भेद, रहस्य । १३६
फटिक=स्फटिक । २३५
फिटकत=(मुट्ठी में लेकर) फेंकता है । ३५१
फुरो=सत्य । १६१
फुर्यो=सत्य सिद्ध हुआ । ४७
फूल=पुष्प, चिराग का गुल । १८१
फेरिबो=फेरना । २६४
बंक अवलोकनि=तिरछी चितवन, कटाक्ष । २६५
बंकुर=बंकता, बकता, टेढ़ापन । २७
बंचक=धोखा देनेवाला । १२७
बंदन=सिंदूर । १२
बंदनजुत=सिंदूरयुक्त । २
बंदनि की=वंदकों की । ४७७
बंधि=तू बाँध । ५४८
बंश=वंश, परिवार, परंपरा, शास्त्र । ५
बंस=कुल, बाँस । २०४
बंसी=मुरली, मछली फँसाने की कटिया । २५०
बकसी=दी हुई, बक (बगुले) के रंग सी । ११५
बकी=बगुले के रंग का, उज्ज्वल । ११४
बक्रतुड=टेढ़े मुखवाले (गणेश का विशेषण) । ३
बगबान=बागबान, माली । ८५
बगारि दीन्ह्यो=फैला दिया । १४०
बगारेँ=फैलाए हुए है । २४४
बजाइ=डंके की चोट । १६५
बजनी=बजनेवाली, ध्वनि करनेवाली । ४३
बजनी=नूपुर, घुँघरू (पायजेब) । ४३
बढ़त=बुझता है (दीपक), विकसित होता है (तन) । ३६७
बतान=बात करना । ३३
बतिआनि=बात, बत्ती । १८३
बतिया=बात, बत्ती । १७४
बधायो=बधावा, नाच-गान, खुशी । २७
बनमाल=पैरों तक लंबी माला । २३६

बारहो लगन=बारहो लग्न (राशि) । २५६ टि
बारि=कुमारी । १२४
बारि=रोककर, बाधा देकर । ५२६
बारि गो=जला गया । २४६
बारिचर=जलचर (मछली) । ५२६
बारी=वाटिका, पुत्री । २२८
बाल=बाला, नायिका । २६
बालपन=शैशव । २६
बासकसज्जा=वासकसज्जा । ११८
बिंब=बिंबफल, ओठ । २१६
बिगलित=गिरा हुआ । ३०
बिघ्नसङ=विघ्नसमूह । २
बित=वित्त, धन । ६८, ४६१
बिथका=स्तब्ध । ३०७
बिथा=व्यथा । २५५
बिद्रुम=मूँगा । २३५
बिधान=विधि, रीति । ५४
बिवान=विन्यास । ४०१
बिधि=ब्रह्मा । १३५
बिनिंद=प्रशंसनीय । १५६
बिभात=प्रभात, सबेरा । ३६
बिभावरी=रात्रि । ३८०
बिभूति=ऐश्वर्य, राख । ४६६
बिमला=सरस्वती । १७
बिमान-बनिता=अप्सरा । २७७
बिरमि=विलम्ब करके । १३०
बिरसैनि=नीरस, रसहीन उदासीन । ५४१
बिरह-कतल-कर्ता=बिरह को कत्ल (समाप्त) करनेवाली तलवार । २६४

बिरी=(पान की) बीरी, बीड़ा । ३५५
बिरुद्धित=विरुद्ध होने का भाव धरे हुए । ४६६
बिलगात=पृथक् होते, अलग रहते हुए । १००
बिलपन=विलाप, रोदन । ४५६
बिषधर=भुजग, सर्प । ४५४
बिसन=(व्यसन) प्रवृत्ति, जगत् के विषयों के प्रति रुचि । ४५५
बिस फूल=विष (पानी, जहर) का फूल । २६८
बिसबासी=विश्वासघाती, विष के साथ बसनेवाला (चंद्रमा) । ४४२
बिसाखा=सखी का नाम, विशाखा नक्षत्र । २७२
बिसारी=भूलने पर, विषैली । २५१
बिसासिनी=विश्वासघातिनी, विष खानेवाली । २४४
बिसूरि=चिंता करके । ५१०
बिसेखि=विशेष रूप से । ११
बिस्रब्धनवोढै=विश्वास करनेवाली नवोढा ही, विस्रब्धनवोढा । २५
बिस्तर=विस्तार । १५५
बिहाल=बेचैन । ४७७
बी=प्रकार का । ५१३
बीति=समाप्त हो गए । २२४
बीभच्छ=बीभत्स । ४७०
बीर=सखी सहेली । ५१२
बीरन=(पान के) बीड़े । १७
बुझति=समझती (नहीं) । २२८
बूझति=पूछती (अर्थात् बुलाती) । २२८

वृजनाथ=कृष्ण । ३१८

वृषभान=राधिका के पिता । १२४

वृषभान कन्या=वृषराशि का सूर्य तथा कन्या राशि, वृषभानु की बेटी । ५५६ टि

वृषभानु=वृष राशि का सूर्य (अति-तापवाला) । १२४

वेँदी=विंदी । ३२

बेँदुली=सिर पर का गहना (सूर्यास्त का संकेत) ८६

वेचा=जानकार अनुभव करनेवाला । ६

वेदन=वेदों को, वेदना । ४१२

वेनी=वेणी, चोटी । १६४

वेनी=चोटी, त्रिवेणी तीर्थ । १६५

वेली=वेलि, लता । ३६४

वेलीवृंद=लता-समूह । १०२

वेस=उत्तम । २६

वैवर्ण्य=वैवर्ण्य । ३५४

वैसिक=वेश्या का प्रेमी नायक । ४६१

बोलाइयत=बुलाते हैं । ३७६

बौरई=पागलपन, उन्मत्तता । ३१७

बौरो=पागल, बावला । ५४२

व्यूह=समूह । १५६

व्यौन=व्यवस्था । २८२

व्यौहार=व्यवहार, लेन-देन का व्यव-साय । ५६

व्रतमान=वर्तमान । ८६

व्रन=व्रण, पीड़ा । २६०

व्रीड़ित=लज्जित । ४६३

व्रजि=मागकर । ३४१

भटू=(वधू) हे सखी । १६२, ५६४

भयो=हुआ (भूतकाल में) । ७६

भरनी=भरेगी । १८०

भाँति=छटा । २०२

भाँवरी दै गयो=चक्कर काट गया । ३८०

भा=छटा । ३१०

भाइ=(भाव) समान । १८

भाइ=भाव, सत्ता । ११५

भाइ=(भाव) भाँति । १६६

भाटसी=भट्ठी । १३१

भाठी=भट्ठी । ४०-

भाति=(भा+अति) अधिक दमक । १२८

भादौं - चौथि - मयंक=भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी के चन्द्र के दर्शन से कलंक *लगता है* । ७१

भाव=भाव सद्भाव (अभाव के विप-रीत), स्थिति, सत्ता । ६१

भारती=वाणी, सरस्वती । १७

भाव=स्थिति, अवस्था । ३६

भावति=भावती, प्रेमिका, नायिका । ३६

भिदि=भेदकर, चीरकर । १४७

भीम प्रभु=भिक्षुस्वामी, योगीश्वर । ४६६

भुव=भूमि । ४०५

भोयो=डूबा, लीन । ५०२

भूरि=अधिक । ३४१

भोराई=भोलापन २२७

भ्रुव=भ्रू, भौंह । ११२

मंजुघोषा=एक अप्सरा । १७

मंडलित=(मंडल-) युक्त । ३
मकर=मकर राशि, मगर के आकार का । २५६ टि
मगरूरि=अभिमानिनी । ११६
मदन=मद का बहुवचन । ४४
मदन=काम । ४४
मधुव्रत=भौंरे, शराब पीनेवाले । ५४
मधु-मास=मद्य और मांस, मधु मास (चैत्र, वसंत) । ४१२
मन धरी न=मन में धारण न की, स्वीकृत न की । ३५
मन लेना=मन वश में करना । ३३
मनि कपूर=कर्पूरमणि, एक रत्न । १८
मनुहारि=मनुहार, खुशामद । १८६, ३२२
मनै=मना (वर्जन) । १०७
मयूखपी=किरणों को पीनेवाला (चकोर का विशेषण) । ३८८
मरकत=पन्ना, यहाँ नीलम । १५६
मरे=मरने पर । ३३६
मलयज=चंदन । २६८
मलिंद=भ्रमर । १५१
मलै=मलय, चंदन । १३२
महर-किसोर=नंद के बेटे, कृष्ण । २५०
महाउर=अलक्तक, जावक लाल रंग । ४८
माखन=मक्खन, माख (बुरा) मत (मानो) । २२०
मागननि=भिक्षुकों को । ४८०
मति रहे=मत्त हो रहे हैं । ४४
मानस=सरोवर, मन । १६४
मारवार=मारवाड़, मरुभूमि (कृष्ण के पास) ४५५
माह=में । २८६
माहि=में । ३६४
मिड़ि कै=मरोड़कर, मींजकर । ४६६
मित्त=मित्र । २४
मिथुन=मिथुन राशि, जोड़ा । २५६ टि
मिथ्यामान=झूठा अथवा बनावटी मान । ३१३
मिस=बहाना । १२६
मिसि=बहाना १४१
मींड़त=मलती है, मसलती है । १०२
मीन=मीन राशि मछली । २५६ टि
मुकुत-माल-हित=मोतियों की माला के लिए (नंदलाल को ला) । ८७
मुक्कित=मुक्के मारते हुए । ४६६
मुख=चंद्र का उपमेय । ६६
मुखागर=(मुँह-) जबानी । २३६
मुद्रित=मुँद गई, दब गई । ५११
मुरारि=(मुर+अरि=कृष्ण) हे कृष्ण । १३२
मूरि=बूटी । १०३
मृगमद=कस्तूरी । ३१४
मृनाल=कमलनाल । ५२
मेखला=मेष राशि, करधनी । २५६ टि
मेनका=एक अप्सरा । १७
मै=मय, युक्त । १५८
मैन=मदन, काम । २७
मैन=मैं न, मदन (काम) । २२१
मो=मेरा । ३०६
मोहनी=जादू । ३६६

मोहनै=(मोहनहि) मोहन को। २५४
मोहि=मोहित कर। १११
मोहि=मुझे। १११
मोहै=मो है (मुझे है), मोहता है। २१८
मौन गहाऊँ=चुप करूँ। ५१०
मौर=मंजरी, बौर। ६६
या=यह। ३०३
यो=यह। ३६७
रंक=दरिद्र। १८०
रंक=(रंकु) सफेद चित्ती वाला मृग। १८०
रँग=वर्ण, आनंद। २ ८
रंग=क्रीड़ा, आनंद। ५२६
रंभा=एक अप्सरा २९
रँगमगी=रत, लीन। २८७
रंगमगे=तल्लीन, लोभी। १८४
रजनिचर=राक्षस, रात को चलने-वाला (चंद्र)। २६८
रजमै=रजोगुणमय। १५८
रजाइ=आज्ञा। ४७८
रति=काम की पत्नी। १७
रतीक=एक रत्ती, परिमाण में बहुत थोड़ी। २५६ टि
रदछद=ओठ। २२७
रदछद=दाँत का क्षत। २२७
रमि=रमकर, रमण कर। ११८
रली=युक्त। १५७
रस=आनंद, हर्ष। ४२
रस=जल, आनंद। ६६, १६४
रसऐन=रसिक। २६६
रस-बाहिर=जल के बाहर, रस से बाह्य ५२६
रसमोए=रससिक्त। ५२४
रसाइ=टपकाकर, दूर कर। १७८
रसाल=आम। ६६
रसाल=आम, रसिक। २२४, ३२२
रसाल=रसमय। २८७, ४०७
रसीली=रसमयी, आनंदमयी। ५१
रसी=रसने लगी, बहाने लगी। ३५६
रस्यो=रसा हुआ, डूबा हुआ। २८६
रहत=अब भी है। ६४
रही=पहले थी। ६४
रासवारन को=भस्म या धूलवालों का। ४५५
राजराज=राजाओं के राजा, कुबेर। ५६
रात=(रक्त) लाल। २८६
राव-राने=छोटे बड़े राजा। ५१६
रितै दीन्हो=समाप्त कर दिया। १६८
रिसि=रोष। ११६, १४१
रिसौंहैं=रोषोन्मुख। १८७
रूखी=उदासीन, चिकनाहट रहित। १३२, २२२
रूखे=रूक्ष, वृक्ष। ५४१
रूप=सौंदर्य, चाँदी। १८४
रूपन=चाँदी। २४६
रूपो=चाँदी। १८
लक्ष=लक्ष्य, उदाहरण। १६२
लक्षि=लक्ष्य, उदाहरण। २४
लखाउ=लक्षित होना। १५५
लखि=देखकर। ६१
लखि लीन्ही=लक्षित कर ली। ६१

सुधाधर=सुधा धारण करनेवाला (चंद्रमा)। २५८
सुपास=सुभीता, आराम। १६१
सुबंस=उत्तम वंश (कुल), अच्छा बाँस। १७३
सुबरन=सोना, सु+वर्ण। १६६
सुबरन=स्वर्ण, सुंदर वर्ण। २५६ टि
सुबरन-बरनि=हे सुवर्ण-वर्णी। ७३
सुबरनबरनी=सुवर्ण-वर्णी। १६६
सुबेनी=सु-सुंदर, +बेनी-वेणी। २६
सुभाइ=स्वाभाविक। ३०२
सुमति=सद्बुद्धि। १५
सुमन=पुष्प। ३५, ५३
सुमन=फूल, सु+मन। २२३
सुमन काँ=फूल तोड़ने के लिए। ८१
सुमनमई=पुष्पमयी, कोमल। ५०७
सुमार=शुमार, गणना ३६७
सुमिरन=स्मरण, सुमिरनी, माला। २०६
सुरंग=लाल, एक प्रकार का घोड़ा (चमत्कारार्थ)। ४७ टि
सुर=स्वर। १७
सुरत=रति क्रीड़ा। ३६
सुरसती=अरुणिमा, सरस्वती नदी। १६५
सुवा=सुग्गा, नायिका। २१६
सुहाग=सौभाग्य सोहाग। २३
सूरो=शूर। ३४६
सूल=त्रिशूल। ४६६
सूल=शूल (पीड़ा)। ४३६
सेंति=बिना दाम के। ४३
सेज=शय्या। १३२
सेखर=(शेखर) माथा। ४०१
सैन=संकेत। ८६
सैन=शयन, सोना। १२१
सैननि=संकेतों। ५८
सैनहू=शयन (शय्या) पर भी। ३७०
सो=वह (कथा)। १२५
सोग=शोक। ५६६
सोचन=चिंताओं से। ४५८
सोभासित=शोभाश्रित। ३६६
सोरन=(शोर) कोलाहलों। १३४
सौं=सौंह, शपथ। २६
सौंहैं=शपथ। ३५
सौंहैं=सम्मुख। १८७
सौतुख=प्रत्यक्ष। १६४
सौगंध=सुगंध। १५७
सौतुख=प्रत्यक्ष। ४२०
सौधरध्र=गवाक्ष। ४०७
सौहैं=सम्मुख, सामने। ३५, ४८
सौहैं=शपथें। ४८
स्याम=श्रीकृष्ण, काले रंगवाला। ३४
स्याम घन=कालेबादल, श्रीकृष्ण। ८५
स्यामा=सोलह वर्ष की तरुणी, हरे रंग की (छड़ी)। १७६
स्वयंभु=ब्रह्मा। ११६
स्वत सभरी=अपने आप घटित। २७१
स्वसन=उसाँस लेना। ४५६
स्वास=पवनगंध का उपमेय। ६६
हठि=हठपूर्वक, बरबस। १३४, ३७६
हतन=हत्या, वध। २६
हरगर=महादेव के गले में की। ४५४

शृंगारनिर्णय

अघानी=तृप्त हुई । २६५
अचकाँ=अचानक । १०६
अछेह=(अछेद्य) लगातार । ५१३
अजिर=आँगन । ३१४
अजू=अजी । ६६
अटाल=ज्वालाहीन, लपटरहित । १७८
अटारिन=अट्टालिकाओं । २३७
अतन=कामदेव । ६७, २६४
अतन को सरीर=भस्म । ६७
अतरौटा=अंतरपट, महीन साड़ी के नीचे पहनने का वस्त्र । २७३
अतूल=अतुलनीय, अनुपम । ५१
अथाइ=चौपाल, बैठक । ६३
अदेह=कामदेव । २३३
अधरा=आधार । २६०
अधरा=निराधार । २६०
अधरात=अर्धरात्रि, आधी रात । १७३
अधिकारी=आधिक्य, बाहुल्य । १६८
अधीन=नम्र, विनीत । २७१
अधसाँसी=अर्धजीविता, अधमरी । ३१६
अनंगकला=केलिलीला, कामकला । १७
अनखाइकै=रुष्ट होकर । १२०
अनखानी=अमर्ष, झुँझलाहट । २१०
अनचाही=अनिच्छित । २६४
अनत=अन्यत्र । ३३, १६६
अनाकानी=आनाकानी । २५७
अनारी=(अनाड़ी) अज्ञान, अजान । ४६
अनारीदाना=अनार के दानों के रूप । ४६
अनी=नोक । २६२
अनुराग-रली=रागोन्मत्त, प्रेम-निभोर । ३८
अनेग=अनेक, बहुत, अधिक । ३१२
अनैसो=अनिष्ट, बुरा । २६६
अनोट=पैर के अँगूठे में पहना जाने-वाला आभूषण । ६६
अन्यास=अनायास, व्यर्थ, नाहक । २६२
अपति=अप्रतिष्ठा, छीछालेदर । ५६
अपसमार=अपस्मार, मृगी रोग । २३८
अबकै=इस बार । १७४
अबलानन=अबलाओं के मुख । ५६
अबहित्या=आकारगुप्ति, भावगोपन । २३८
अबार=विलंब, देर । १६६
अभरन=आभरण, आभूषण । २५०
अमर=देवता (ब्रह्मा) । २२८
अमरष=अमर्ष, क्रोधाभास । २३८
अमात=समाता है । १०६
अमान=बेहद, अत्यधिक । ५४
अमाहिर=अनाड़ी, अकुशल । १३१
अमी=अमृत । २२६
अमोली=अमूल्य । २५५
अयानी=अजान, नादान । २१०
अरन्य=अरण्य, वन, जंगल । ५२
अरुनोदै=अरुणोदय । १७६
अलख=अगोचर, अदृश्य । २२४
अलप=(अल्प) थोड़ा, कम । ३१४

अली-अवली=भ्रमरपंक्ति । ३८
अलीक=मिथ्या (हार का दाग होने से) । १७७
अवदात=सुंदर, निर्मल । १७३
अवराधे=आराधना, उपासना । ३११
अवलोके=देखने पर । २२६
अवास=आवास, घर । १३८
असकति=(अशक्ति) बेबस । ६४
असन=(अशन) खाद्य, भोजन । २१४
असाधिता=असाध्य । २३२
असूया=डाह, द्वेष । २३८
अहिछौने=साँप के बच्चे । १३१
अहिछौना=साँप का बच्चा । ५८
आँगी=अँगिया, कंचुकी, चोली । २४५
आँसी=अंश, हिस्सा । ३१६
आकरषि=खींचकर । ३३
आखर=अक्षर, वर्ण । २२५
आगैं=सामने, तुलना में । ६
आछे=अच्छी तरह । १७०
आड़=तिलक, टीका । १५४
आतमधर्म=आत्मधर्म । २७
आतुर=जल्दी, शीघ्र, अविलंब । १७४
आतुर=घबराया हुआ । २७०
आतुरिया=आधिक्य । १४६
आदरस=(आदर्श) दर्पण । २५५
आधि=मानसिक क्लेश । २३२
आधेक=आधी, अर्ध । ३१२
आन=दूसरे । ८६
आनन=शपथें, अनेक सौगंध । ८६
आनन चाहिबो=मुख देखना । ८६
आपनी दाउ=अपनी बारी । २६६
आपरूप=मूर्तिमान्, साक्षात् । १०६
आभरन=आभरण, गहना । ३१
आभा=शोभा, छटा । ३१
आरसी=(आदर्श) काच, शीशा । ३२
आलै=ताक, ताखा । २८०
आवंती=आगमन । १५६
आवा=आँवा । ३१४
आवागौन=आवागमन, आना जाना । २६०
आसव=मद, नशा । २२३
आसिक=आशिक, प्रेमी । १०
आहट=आने का शब्द, चाल की ध्वनि । २१६
इकक=(एक अंक) निश्चय । १२५
इकंत=एकांत, अकेले । ३०६
इतौत=इत-उत, इधर उधर । २७४
इरखाति=ईर्ष्या करती है । २३६
इरिषा=ईर्ष्या, डाह । २६६
इहि लेखै=इसलिए । २०५
ईठि=(इष्ट) सखी । २३३, ३२४
उकसौं हैं=उत्थानशील । १२६
उचकति=उछलती है । २३७
उचरिबो=उच्चारण करना, कहना । २६८
उछंग=उत्संग, गोद । ११६
उठै मचि=लद उठे, जमा हो जाय । २५३
उठ्यो खचि=खिंच उठा, खिंच गया । २५३
उतंग=(उत्तुंग) ऊँची । ५१
उतलाई=शीघ्रता, उतावलापन । २७३
उदर बिदारते=पेट फाड़ते । २२८

उदास कैं=उदास कर, उजाड़कर। ५२
उदाहर्न=उदाहरण, नमूना। २३६
उदीची=उत्तर दिशा। १६६
उदीपति=उद्दीप्त करनेवाली। २६४
उदारिजो=औदार्य। ६२
उद्वेग=व्याकुलता, बेचैनी। २१३
उनमान=अनुमान। ६६, २८०, २६२, ३२५
उनींदता=(उन्निद्रा), उन्निद्रता। २३२
उनींदति=जागती है,सोती नहीं। २३६
उन्माद=चित्तविभ्रम, विक्षेप, पागलपन। २३८
उपमान-सलासी=उपमान ढूँढने-वाली। ६१
उपरैनी=ओढ़नी, चादर। १६८
उपायन=उपायों को। ६३
उपाए=उपाय कर ली है। १७८
उपाधि=उपद्रव। २३२
उपालंभ=उलाहना। २१६
उपावै=उपाय, बहाना। ११२
उमडि रहे=उमड़ रहा था। २२३
उमहत=उमगित होते हैं। ५८
उमहैं=उमड़ते हैं। २६५
उरज=उरोज, स्तन। २२६
उरजातथली=वक्षःस्थल। १२४
उरजातनि=उरोज, स्तन। १२४
उरझाए=उलझे, लिपटे। ५८
उरमी=ऊर्मि, तरंग, लहर। ५१
उरोजवतीन=उन्नतपयोधरा (नायिका)। १८
उलही=उल्लसित हुई, उमड़ी। १२५
उसास=उच्छ्वास। ६४, २२५, ३२६
उसुआसनि=खुचड़। ६४
उहि=उस। १८१
ऊख=ईख, गन्ना। ४८
ऊढ=विवाहित। ७४
ऊभि=व्याकुल होकर। ११४, २३३
एकरटी=एक पाट की। २७३
एती=इतनी। ३७
एती=ऐ स्त्री (सखी)। ३७
एनी=एण, मृगी, हरिणी। १४३
एजी एजी=ए जी. 'ए जी ए जी' शब्द। १४३
ऐंचत=खींचती है। १४६
ऐबे की=आने की। २००
ऐबो करै=आया करती है। १७३
ओट=आड़, गुप्त स्थान। ६६
ओप=चमक। ३४
ओप=चमक, तेज। १३४
औधि=अवधि, सीमा २००
औनि=अवनि, स्थान। २६०
कंचुकि=चोली। १६३
कटन को=काँटों का। १६६
कदरप=कंदर्प, कामदेव। ५६
कबु=शख। ४३
कच=केश। २६२
कच्छ=(कच्छप) कूर्मावतार। २
कज्जलकलित=काजल से शोभित। ५४
कटाछ=कटाक्ष। १२
कटीले=कंटकित, पुलकित। २३५

•कटनाति=कठोर बनती है । २३६
कढत=निकलते ही । ६३
कथन=कहना । ३०२
कदंबिनि=कादंबिना, काला घटा । २१४
कद=डीलडौल । ३०
कनता=रताइ । १०२
कनौंडी=दबैल । ६३
कपटारे=कपटी, छली । २३१
कपूर धूरि=(कपूर धवल) कपूर सी उजली (ओढनी) । ४७
कबहुक=यदा कदा, कभी कभी । २६३
कर=महसूल । २०
कर=हाथ । २६६
करता=ब्रह्मा, दैव । ८८
करतार=ब्रह्मा । ५३
करन-सँजोगी=कर्णालिनित, राजा कर्ण के सार्थी । २४४
करवीर=कनेर । १६१
करभ=हस्ति शावक । ३४
करभ–मणिबंध से कनिष्ठिका तक हाथ का बाहरी हिस्सा । ३४
करवाल=कृपाण । १
करहाट=कमल का डंठल, मृणाल । ३२५
करामति=करामात । १६०
करिकुंभ=गजमस्तक । २२८
करेर=कड़े, कठोर । १५
कराट=करवट । ६६
करोर तैंतीस=परंपरागत तैंतीस कोटि देवताओं का समुदाय । १८
कल=शांति, चैन । ७१
कलकी=कल्कि अवतार । २
कला=कलावत का तार । ११४
कलपैय=दुःख दीजिए पीड़ित कीजिए । ७१
कलस=घड़ा १३८
कलहंतरिता=कलहांतरिता । १८०
कलाइछिमी = (कलाइ = मणिबंध, गट्टा+छिमी=फली) मणिबंध रूपी फली । ४१
कलाभैं=गाते १५५
कलामैं=वादे । २४२
कलिंदजा=यमुना । १६
कलेवर=शरीर, देह । ६४
कलोल=क्रीड़ा । १२६
कसीस=कर्षण, कशिश, खिंचाव । ५४
कसौटिनि=कसौटियाँ, निकष । २१६
कहकह=आनंदरव (केका) । २६६
कहर-कमान=विपत्ति ढानेवाला धनुष । ५४
कहरत=कराहती है । २३६
कहल ह्वै=अकुलाकर । १६६
कहा=क्या । ७२
कहा=क्यों । २३१
कहीं की कहीं=एक जगह से दूसरी जगह, अन्यत्र । १८३
काँख=कक्ष, बगल, पास । ७३
काँगहि=कंघी, कंकतिका । १५४
काग भरोसो=कौए के बोलने का भरोसा या विश्वास । २०१
कागर=(पत्र), चित्रपट । २६०

कानन न आनती=सुनती नहीं। २०७

कान्ह=श्रीकृष्ण (कृष्णावतार) । २

कान्हर=श्रीकृष्ण । ८८

कामपाल=बलराम, कृष्ण के बड़े भाई । २१३

कारो=काला । ८८

काहाँ=किससे । २२

किंकर=सेवक, दास । १

किंसुक=(किंशुक) पलाश । ५१

कितै=कहाँ । २५८

किन=क्यों न । ७२, १८७

किल=निश्चय, अवश्य । २१४

कीं=(कि) अथवा । ४१

कीनै=किए हुए । २५०

कीजी कहा=करें क्या । १२७

कुँदुरु=बिंबाफल । १०८

कुंभ=भाड, घड़ा । ३६

कुगोल=पृथ्वी, भूमंडल । २

कुच शंभु=कुच रूपी शंभु । २२४

कुठाकुर=बुरा मालिक, उग्र स्वामी । १७६

कुपथिनि=कुमार्गी के पास । २३१

कुमुदबंधुबदनी=(कुमुद+बंधु+बदनी) चंद्रमुखी । २१२

कुरबान= न्योछावर, बलिदान । १३८

कुरि जाइ=राशीभूत हो, ठहर सके, डट सके । ४५

कुलजाता=सद्वंशसंभवा । ६२

कुलनाशी=कुल का नाश करनेवाली । ३१६

कुलसानन=(कुल+सान=शान+न न=वचन) कुल की प्रतिज्ञा । ८६

कूर=निकम्मा, दुर्बुद्धि । ५६

कृत=किया हुआ काम, की हुई बात । २१०

कृसान=कृशानु, अग्नि । २६६

केतनी=कितनी ही । १७८

केस-तम-बंस=केश रूपी अंधकार का समूह, बालों की गाढ़ी श्यामता । १२५

केसरि=केसर, जाफरान । ६७

केसरि-खौरि=केसर का तिलक । १३६

कै=अथवा । १५८

कैबर=तीर का फल, गाँसी । १२

कैना=कई बार । १५५

कैसे धौं=किस प्रकार । २७१

कैसेहुँ=किसी प्रकार, चाहे जैसे । ३०५

काँरी=कोमल, सुकुमार । २१४

कोइ=कोई । २०२

कोक=चक्रवाक । ६०

कोटि=अनी । २६२

कोल=वराह (वराहावतार) । २

कोह=क्रोध । ११०

कौने की=किसी की । ३४

कौल=कमल । १८, ३२५

कौहर=इंद्रायण, इसका फल पकने पर अत्यंत लाल होता है । ३३

क्षपेस=चंद्रमा । १६६

खंडनी=नष्ट करनेवाली, तोड़नेवाली । ४८

खए=बाहुमूल, पखौरा । २७७

खनकैँगी=खनखनाएँगी, घटाँगी। २४७
खरके=खड़कने से। १७३
खरको=गाय बैलों का फूस का बाड़ा। १७३
खराद चढ़ाई=खरादी हुई। ४०
खरे=प्रगाढ़, अतिशय। २०२
खरे=खड़े होकर। २८०
खवाए=खिलाने से, सेवन करने से। २९६
खवासिनी=परिचारिका। ३०
खिनक=थपैक, एक क्षण। ५६
खीझिने की=चिढ़ने की, झुंझलाने की। २१०
खीनी=क्षीण, पतली। ३६
खीस=विनाश। १
खीस खाइबे कोँ=विनाश करने के लिए। १,
खुलित=खिली हुई, सुशोभित। ३१
खुले=फैले, व्याप्त। २४५
खोयो=नष्ट हो गया। १८१
खोरि=खराब करके, बिगाड़कर। २११
गँवारो=गँवार, मन्दबुद्धि। ८८
गँसि जाती=बँध जाती, फँस जाती। २१६
गँसी गाँसी=कपट की गाँठ, पड़ गई। २३३
गई करती=गल जाती हूँ। २३
गइ करि जाहु=भुला दो, भूल जाओ। ३१८
गजमोतीहरा=गजमुक्ता का हार। ४३
गरुआई=बोझ, भार। ३३
गरे पर्यो=गले पड़ा, जबरदस्ती मिला। ७२
गल=गला, कंठ। २८६
गली=मार्ग, रास्ता। २०५
गलीपथगामी=गली के रास्ते से आनेवाला। १७६
गहगह=उमंग से भरा। २९६
गहति है=(धारण) करती है। २२४
गहने=आभूषण। २६३
गाँसनि=गाँठें। २१६
गाइ=गाय। ३१२
गाड़=गड्ढा। १७६
गाढ़े=अच्छे प्रकार से। ३६
गाढ़े=कड़े, कठोर। ३६
गाढ़यो=गाढ़ा, उत्तम। २
गानि गानि=गा गाकर। १६०
गिरिराज=हिमालय की नुकीली चोटी। ३६
गिरीस=शिव। १
गुमज=गुम्बद। ३६
गुआरनि=ग्वालों को। ३२१
गुच्छ=गुच्छा। ३६
गुनहीन हरा=आलिंगनजन्य माला के दानों से उपटा हुआ बिना सूत्र का हार (दाग)। २५
गुरौ=गुरुवार को। ४
गुलीक माले=गोले रत्नों की माला। २७३
गूँदी=गूँथी, गुही। १६४
गूजरी=पैर का एक आभूषण। २५२

गँदुरी=गँडुरी, घड़ा रखने का मूँज आदि का उपकरण । १३८
गोफ=कोमल आरंभिक अंकुर, पत्ते के क्रोड़ से निकलनेवाला कोमल पत्ता । ४२
गोयो=छिपाया । १८१
गोविंद-तन-पानिप=कृष्ण के शरीर का जल (लावण्य) । २८६
गोहन=साथ । २२६
गौनो=जाना । ११५
ग्वालि=ग्वालिन, आभीर-बालाएँ । १४८
घनघोर=मेघ-गर्जन । २६६
घनेरे=बहुत से, अनेक । २६३
घरयाइ=घर की ओर । ३१२
घरी=घड़ी भर में, झट । २०६
घरीक=घड़ी भर में, थोड़ी देर में । २२१
घरी घरी=घड़ी घड़ी, बार बार । ३१७
घरी भरै=घड़ियाँ गिनता है । ६६
घहघह=बादल के गर्जन की अनुकरणात्मक ध्वनि । २६६
घाई=ओर, उन्मुखता । २२७
घातैं=चालें, चोटें । १८३
घाम=घर्म, धूप । २०६
घायक=घातक, नष्ट करनेवाला । १७
घुमरि=घूमकर, घूम फिरकर । २५७
घुरि=घुलकर, पिघलकर । २०६
घृताची=एक अप्सरा । ३०
चँदहारिनि=निंदा करनेवाली । ६३
चंद-उदौत=चंद्रोदय । २७४
चंद-ओप=चंद्र-कांति । ६
चँदोवन कौं=वितानों को । १२
चंद्रक=कपूर । २६६
चंद्रिका=चाँदनी । ४७
चंपलता=चंपे की लता । २२६
चकति=चकित होती है, अचंभित होती है । २३७
चकी=चकित हुई, अचंभित हुई । २७४
चक्र=चक्र नामक अस्त्र । ३५
चकवती=चक्रवर्ती । ३६ .
चख-चारु-चकोरी=आँखरूपी सुंदर चकोरी । २७४
चटकीलता=चटक, दीप्ति, तेज । ३०६
चलदल-पात लौं=पीपल के पत्ते के समान (चंचल) । ६३
चलन=व्यवहार, चालचलन । २२६
चल - निचल=अस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ । १४३
चली मन तें=मन से निकल गई । १६६
चले पिलि=एकबारगी झुक पड़े, सहसा ढल पड़े, यकायक खिंच गए । २२३
चवाइ=अपवाद, निंदा । ८३
चवेली=चमेली । १६१
चवैनो करौ=बदनामी करो । ८३
चहचह=चहचहाने का शब्द । २६६
चहुँघा=चारो ओर । २२३

चाँदनी=सफ़ेद चद्दर । ३२
चाह=चाह, इच्छा । १०२
चातिक=(चातक) पपीहा । ३०२
चाय=चाह । २२३
चाय सों=चाव से, तृष्णा से । १७३
चारु=चारुता, सौंदर्य । १६३
चारो=चारा, ज़ोर, वश । ८८
चाहि=बढ़कर । १६
चाह्यो=देखा । २२१
चिकुरारिन में=अलकों में । १६२
चित चढ़ि आइ=अच्छी लगी, मन को आकर्षित किया । १६५
चित चाहन (पूरे)=उमंगों से भरी । ३०
चितैबो करै=देखा करती है । १७३
चितौत=देखते हुए । २७४
चित्त-रमावन=चित्ताकर्षक । ४८
चिरी-धुनि=चिड़ियों की ध्वनि । २६९
चिलकै=चमकती है । ५७
चीन्हौ=पहचाना । ४६
चीर=वस्त्र । २३५
चुनौटी=उत्पीड़न करनेवाली । ७०
चूरन=चूर्ण, चूरचूर । १६५
चूरि (गई)=चूरचूर हो गई । १०४
चेपटा=(चेष्टा) मुद्रा । १४१
चोखन=तेज़, तीव्र, प्रचंड । ३१५
चोर=चार । ६
चोरति=चुराती है । २३५
च्वै चलती=चू चलती । ७६
छत्रनास=क्षत्रियों का संहार । २
छपनो=छिपना । २३०
छपनो पर्यो=छिपना पड़ा । २३०
छबीले=सुंदर । १३८
छरोर=छिलोर, चमड़ा उछिल जाना । १०५
छलकौंहैं=छलकने पर आए हुए । २३७
छवान=एड़ियाँ । १३८
छवि के जल मैं=सौंदर्य के जल समूह में । २६५
छबिताल-गहारे=सौंदर्यरूपी तालाब के गड्ढे में । ४४
छहरैं=फैलें । १३८
छामता=क्षामता, क्षीणता, दौर्बल्य । ३२५
छामोदरी=क्षामोदरी, कृशोदरी । २७
छार=क्षार, धूल । २२८
छिति=पृथ्वी । २
छिनक=क्षणैक, थोड़ी देर का । २६३
छीछी छिया=निंद्य कर्म, बुरे व्यवहार । २०५
छुही=रँगी । ११०
छोटौंहैं=छुटाई की ओर उन्मुख, छोटे छोटे । १२६
छोर=अंत, समाप्ति-स्थल । १३८
छोरि लेत हौ=छीन लेते हो । १५४
जऊ=यद्यपि । २६५
जई=रट । ६६
जकति=घबराती, डरती । ६४
जकाति=चकपकाती है, अचंभे में आती है । २३६

जकी=विस्मित, चकित । १३०
जगगुरु=जगद्गुरु । १
जगजग=जगमग, जाज्वल्यमान । १६५
जगत-प्रान=वायु, हवा । २६६
जग-नैन=दुनिया की आँख । ७६
जजला=जाज्वल, जलती हुई । १५५
जतन=यत्न, प्रयत्न । १८६
जदक्षा=(यदृक्षा) मनमानी । २१६
जनी=दासी । ६५
जरकसवारी=जरी के काम से सुसज्जित । १३८
जरतारी=जरी के काम से युक्त साड़ी । ३१
जरायन की=रत्न-जटित । २५२
जरी=जली । २२५
जलजा=लक्ष्मी ३२५
जलप=उक्ति, कथन । ३१४
जल्पति=बकती है, बड़बड़ाती है । २३६
जराहिर-ज्योति=रत्नप्रभा, जराहिरात की चमक । १२
जसुन=जश्न, प्रकाश, ज्योति । ३१४
जा=जिस । ५६
जात भई=नष्ट होगई । १८६
जातरूप=सोना । ३१
जातैं=जिससे । १८३
जाम जाम=प्रत्येक प्रहर पर । ६३
जावक=महावर । १७६
जिकिर=जिक्र, चरचा । ३६
जित=जहाँ २०
जियरो=मन, जी । ६७
जिहि=जिसको । ६
जिहि=जिसका । १२
जिहि=जिसने । १४
जीबो=जीना । १५
जीबो न जीबो=जीना जीना नहीं है मरने के समान है । १५
जीय=जी, हृदय । १४
जीवनमृत=मृतवत्, जीती पर मरी के समान । ३२८
जीहा=जिह्वा, जीभ । ३१८
जु=जो, कि, जिससे । ३०५
जुक्ति=युक्ति, उपाय । २१६
जुगल=दो । ६
जुगुति=युक्ति, तरकीब । २४२
जुझारो=युद्धालु, लड़ाका, लड़ाकू । ३०७
जुत=युत, साथ । २१६
जुन्हाई=ज्योत्स्ना, चाँदनी । २७१
जुरै=जुड़े, जुटे । १८४
जुवा=युवती, जवान । २६
जुवा=युवापन, यौवन । १२४ ।
जेठिन के=ज्येष्ठ स्त्रियों के । २६५
जैबो=जाना । २०
जोइकै=देखकर । २०२
जोई=जो ही । १८७
जोति=(ज्योति) प्रभा, कांति । ६१
जोन्ह=चाँदनी, ज्योत्स्ना । ३१४
जोम के तोम=उत्साह का प्राबल्य । ३६
जोयो=देखा । १८१

जोरावरी=जबरदस्ती, बलप्रयोग। १८४
जोरी=जोड़ी, युग्मक। १८४
जोहैं=प्रतीक्षा करती हूँ। ३०
जौन=जो। १६६
ज्यारी=जिलानेवाली, जीवनदायिनी। २०५, २२५
ज्यावति=जिलाती। २२४
ज्यावन-जतन=जिलाने का यत्न, जिलाने का उपाय। २६४
ज्यों=सदृश, समान, तुल्य। २२२
ज्वाल=ज्वाला, गरमी। १२
ज्वैहै=तलाश करेगा, ढूँढेगा। १३१
झखियाँ=(झख) मछलियाँ। २६५, ३०३
झनकैंगी=झनझनाएँगी, बजेंगी। १४७
झपि=झपित कर, ढककर। २२३
झर=झड़ी। २३३
झरि लाई=झड़ी लगा दी। २५७
झलकैं=चमकैं। २४५
झलकौंहै=झलकने पर आए हुए। २३७
झाँझरियाँ=पायल की झुनझुनियाँ। १४७
झीन=पतला, बारीक, महीन। २५३
टरिकै=हटकर। १४३
टरो=टल गया, हट गया। २०१
टहल=सेवा, शुश्रूषा, परिचर्या। १८७, १६६
टेक=ढंग, प्रकार। ६८
टेरति=पुकारती है, चिल्लाती है। ३१२
ठई=ठटी, भरी, युक्त। ६६, १३०
ठकुराइनि=स्वामिनी। ३०
ठहरैबो करै=स्थिर करती है। १७३
ठाली=खाली, बिना काम के। १५८
ठिलि ठिलि=ठेल-ठेलकर, धकेल-कर। २६८
ठौन=ढंग, मुद्रा। १३०
डगर=सजावट। १६७
डहडह=हरा भरा। २६६
डारो=डाल। २१४
डावरी=लड़की, कन्या। ३१७
डीठि=दृष्टि, आँख। २२१
ढलैत=ढाल लेकर चलनेवाला। २४४
ढहै=खुलकर गिर जाती है। १२७
ढारती=झलती, डुलाती। ३०
ढारैं=ढालते हैं, गिराते हैं। १६८
ढाहै=गिराता है। २४४
ढिग=पास। २१, २४४
ढीठ=ढीठे, धृष्ट। ६४, २७१
तंत=(तनु) देखो। १२५
तकत=ताकती है। २११, २३७
तताई=ताप, गरमी। २२६
तनको, तनकौ=तनिक भी, थोड़ा भी। १४७, १७३
तनीन, तनीनि=बंधन, बंद। १४४ २३५
तनु=सूक्ष्म, पतली। ३६
तनु छाँह=शरीर की छाया। ७६

तनुजा=कन्या । ६
तमी=रात । ५७
तरति=पार करती है । २३६
तरासि=तराशकर, खरादकर । ४६
तरैयन=तारागण । ३१५
तरौना=ताटंक, कर्णभूषण । २७७
तर्योनन=ताटंक । १६५
तलप=तल्प, शय्या । ३१४
तलफत=तड़पता है । ६६
ताको=उसका । ६
तापर=तिसपर (भी) । ३५
ति=वे । २०३
तित=वहाँ, उस ओर । २०, ६०
तिन=तृण के । १७३
तिनके=उनके । १७३
तिय नातें=स्त्री होने के कारण । २३२
तिय पाइनि=स्त्री के पैरों पर । २७०
तीछ्न=तीक्ष्ण, चोखा । १२
तुंगतनी=(तुंग+तन=स्तन) तुंगस्तनी, उन्नत पयोधरा । ७६
तुदहि=मर्दकता को । ३०३
तुनीर=(तूणीर) तरकस । ६७
तुमैं=तुम्हें । १८६
तुलसीवन=वृंदावन । १८
तुली=तुल सकी, समान हो सकी । २६
तुव=तुम्हारी । २२४
तूरन=शीघ्र, झट । १६५
तेरी खीभिवे की रस रीझि मन मोहन की=तुझे चिढाने में मोहन को मजा आता है । २१०
तेह=(तेहा) रोष, क्रोध । १६५
तैये=तपाऊँ । ७१
तौ=तव, तेरे । १४
त्रिरेख सचाई=तीन रेखाएँ खींचकर, बल देकर, जोर देकर । ४३
थल थल=स्थल-स्थल, जगह-जगह । २४४
थहरात है=काँपती है, अनवरत प्रकंपित है । १०६
थाईभाव=स्थायीभाव । २४१
थाकी=रुक गई । १२६
थिर थाप=स्थिर कर । ६७
थिराति=स्थिर होती है, शांत होती है । २०६
थोरी घनी=थोड़ी बहुत । २३
दई=दैव, विधाता । २०१
दई दई=दैव ने दी (दिया) । ६६
दगदग=चमाचम । १६५
दगनि=दग्ध होना, जलना । ६०
दरप=दर्प, घमंड । ५६
दरप=चाह, इच्छा । ५६
दरस=छटा । १७६
दरसति है=देखती है । २५
दरी=कंदरा । २८६
दरीची=खिड़की । २१६
दरी दरी=द्वार-द्वार । २७४
दवरि=दौड़कर । २६६
दसा=बत्ती । ४१
दसास्यबंस=दशानन (रावण) का वंश । २
दह=ह्रद, गहरा जल । ५१
दहनीरनि=गहरे पानी में । ५२
दाँव=अवसर, मौका । १६१

दाउ=बारी, अवसर । २६६
दाख=द्राक्षा, अंगूर । ४५
दागिकै=जलकर । ३२४
दाना=बुद्धिमान्, जानकार । ४६
दार=दारिका, रमणी । १५६
दारिमैं=दाड़िम को, अनार को । २२८
दार्यो=दाड़िम, अनार । ६०
दिखसाध=देखने की साध, दिदृक्षा । २२७
दिटाए हौ=दृट रूप में लाए हुए हो । १७८
दिपै=चमकता है । ५०
दिलासो=आश्वासन, ढाढस । ८२
दीठि=दृष्टि, निगाह । २३७
दीन=क्षीण, कम । २६४
दीपति=दीप्ति, तेज । १५६
दीपतिनत=देदीप्यमान, दीप्तिमय । ६८
दीसी=देखी । ३२४
दुखतूल=दुःखतुल्य, दुःखमय । १४४
दुखदरूपी=दुःखद रूप, दुःख देनेवाले के समान । २१३
दुचारी=दुराचरण, कुचाल । ११०
दुचिताई=द्विचित्तता, दुविधा, अनिश्चितता । १७, १८३, २७०
दु-जानु=द्विजानु दो जाँघें । ६
दुनियाई=सारी दुनिया, दुनिया भर । ७३
दुनौने लगी=द्विनमन करनेलगी, झुकने लगी । २३९
पदुरई=दौर्न ल्य,दुबलान । १२३
दुरद-सुंड=(द्विरद=हाथी,सुंड=सूँड़) । ६
दुरायबे को=छिपाने के लिए । २४२
दुरुह=दुरूह, अतर्क्य, अगाध । २६५
दुरेफकुमार=भौंरे का बच्चा । ५७
दुरे दुरे=छिपे छिपे, लुक-छिपकर । ७६
दुहुँघा=दोनों ओर । २६
दुहूँ हाथन बिकाने=एक दूसरे के हाथ बिक गए, एक दूसरे के वश हो गए । २८६
दू=दो । १४८
दूनौ=दोनों । ११२
दूनौ=दूना । ११२
दृगंचल=अपांग, नेत्रांत । २५०
दृगंजन-बनाव=आँखों में लगी कज्जल-रेखा । १६६
दृगमीचनि=आँखमिचौली, आँख-मुँदौअल । २३०, २४२
दृष्टिदरस=आँखों से देखना । २६१
देखतै=देखते ही । १८७
देखादेखी=एक दूसरे को देखना । २१३
देख्यो=आँखों देखा हुआ । २८
देवधुनी=गंगा । ४८
देवसरि-सोती=गंगा की धारा । ७०
दौं=दावँ, मौका, अवसर । १८६
द्योटी=ड्योढ़ी । ६३
द्यौस=(दिवस) दिन । ३१७
द्यौसनिस्यौ=दिनरात । ६८
द्वार=दरवाजे पर । ६५
द्विजराज=चंद्रमा । २२४

द्विजेस=परशुरामावतार । २
धनुषाकृति=धनुष का आकार । ५३
धाइ=दौड़कर । २४६
धृति=धैर्य, धीरज, सब्र । २३८
धृष्टिति=धृष्ट इति । १३
धोरे=पास, निकट, समीप । १४७
धौल=(धवल) ऊँची । १६६
ध्वै=धोकर (भीगकर) । २५
नख घाइ=नखाघात, नखक्षत । २४४
नखच्छत=नखक्षत, नखचिह्न । १७८
नग=आभूषणों में जड़े मणिखंड । २४४
नगजाल=मणि-समूह । ३२
नजरि भार=नजर या निगाह का मार । ३६
नटनागर=नृत्यकला में प्रवीण, नटराज । २३
नत=नहीं तो, अन्यथा । २६८
नयो दिवसोऊ=दिन भी ढल गया है । १०१
नल=(अत्यत रूपवान्) राजा नल । ६
नवलान=युवतियाँ, नवेली स्त्रियाँ । १७
नहरनि=नहरों (में) । ३२
नहीं नहीं कानो=न न करना । २६८
न है सकै द्दातै=दूर नहीं हो सकती । २३२
नाउँ=नाम । १८७
नाक=नासिका, स्वर्ग, देवलोक । ५१
नाख्यो (जात)=लाँघा जाता है । २६०
नागलली=नागकन्या । ३८
नातरु=अन्यथा, नहीं तो । ७५
नाते की=नातेदारी की, रिश्तेदारी की । २५०
नाम ध्वै=नामोच्चारण करके, नाम लेकर । २६०
नारी=नाड़ी । ३२६
नाह=नाथ, पति । १४
नाहक हीं=व्यर्थ ही । १८३
निकलंक=निष्कलंक । ५३
निकाई=सौंदर्य । ३८
निखिलै=सपूर्ण, सब । १६१
निखोटि=निर्दोष, अच्छी । २४२
निचोने=निचोड़ने । १२२
निज=निश्चय । ८४
निजोदर-रेख=(निज+उदर+रेख) अपने पेट पर पड़ी त्रिवलि की रेखा १२७
निति=नित्य, प्रतिदिन । १८४
निदाहै=गरमी ही । ३२४
निधरक=निर्भय, बेधड़क । ७८
निनारे=(न्यारा) विलक्षण । २६४
निपट=घोर, प्रगाढ, अत्यत । १६८
निप्राप्यता=निष्प्राप्यता, दुर्लभता । ११३
निरसै=निवास करे, रहे । ८५
निबेरे=निर्णय किया, तय किया । १२४
निभीची ह्वै=निर्भय, बिना डर के । १६६
निमेष=पलक । ७५

निरदै=निर्दय, कठोर । २६४
निरनय=निर्णय, निश्चय । ३
निरवेद=दुःख, पश्चात्ताप । २३८
निलै=निलय, घर । १४०
निवारे रही=हटाए रहो, दूर किए रहो । २२७
निसा=प्रबोध । २१२
निहचल=निश्चल, दृढ । ८५
निहचै=निश्चय । ७५
निहोरे=के लिए, निमित्त । ३२८
निहोरो=प्रार्थना । २०१
नीठि=कठिनाई से । ४२
नीवी=स्त्रियों के अधोवस्त्र का बंधन, फुफुँदी । १२७
नेक=थोड़ा भी, जरा भी । २०६
नेम=नियम, व्रत, संकल्प । १६१
नेरे=पास, समीप । ७२
नेह=स्नेह तैल । ५१
नेहनिकाय=स्नेह-विस्तार, प्रेम-प्रपंच । ३११
नैया=नाईं, समान, तरह । १४५
नैसुक=थोड़ा । ३६
नैहर गेह=मायके का घर, मातृगृह । १३५
नौल=(नवल) सुंदर । १६६, ३१७
न्यान=निदान, अंत में । २१
न्यारो=दूर, नष्ट । २०६
न्हान थली=स्नान-स्थली । २०
पंच=पाँच । ८१
पंचलरा=पाँच लड़ों का हार । ४३
पंसियाँ=छाती के दाहिने बाएँ छोर । २५२
पखियान=शलभ, पतिंगे । १३६
पखेरुन मैं=पक्षियों में । ३०५
पग-पैंजरियाँ=पैरों की जूतियाँ । १२८
पगनि=रगना । ६०
पगनि=पाँव, चरण । ६०
पगारनि=(प्राकार) रंगशाली के लिए बनी चारों ओर की दीवार । ३२१
पघिलि परै=पिघल पड़ती है । ३२४
पचि पचि=परेशान हो होकर । २२८
पजावा=ईंट पकाने का भट्ठा । २१४
पट=वस्त्र, कपड़ा । २४५
पटतर=बराबरी, समता । ४५
पति=प्रतिष्ठा । २
पतिया=पत्रिका, चिट्ठी । २२५
पतियाइ=विश्वास करके । २०१
पतियात है=विश्वास करता है । २०१
पतियाहिं=विश्वास करती हैं । १४२
पत्यारो=प्रतीति, विश्वास । २०६
पत्रिकादान=चिट्ठी-पत्री पहुँचाना । २१५
पदिक=हीरा । ३२
पदुम=पद्म, कमल । ३३
पदुमराग=पद्मराग मणि । २१
पनिच=(पतंचिका) पनच, प्रत्यंचा । ५४
परजंक=पर्यंक, शय्या । २४५
परतछ=प्रत्यक्ष । २८५ ।

परपंच=प्रपंच, आडंबर । २११
परपिंड - प्रवैसी = परकायप्रवेशकारी, दूसरे के शरीर में प्रवेश करानेवाला । ३११
परबीननि=प्रवीण, जानकार । १३१
परमान=परमाणु, अत्यंत कम । ३६
परसति है=स्पर्श करती है, छूती है । २२५
पराध=अपराध, त्रुटि, गलती । २०४
परिमान=परिमाण, तौल । ३६
परोसो=पड़ोस । ९०१
पलटे=बदलने में । २३५
पलन की पीक=पलकों में नायिका के चुंबन से लगी पान की पीक । १७७
पवरि=ड्योढी, घर । ३१४
पहरह=लड़के ही । २६६
पहिराव=पहनावा । २८०
पँखुरी=पंखुड़ी, दल । ३३
पाँति=पंक्ति । २६०
पाँसुरी=पसली । २३३
पाइ=पाँव, पैर । ८७
पाइ परौं=पैरों पर गिर पड़ूँ । १८७
पाग की चीठी=पगड़ी में रखी हुई चिट्ठी (पहले चिट्ठी-पत्री को सुरक्षा की दृष्टि से पगड़ी में बाँध रखते थे) । १८५
पाटी=केशों की पट्टी । ५७
पाटी=पट्टी, पटिया । ५७
पातकिन=(पातकिन) पापी लोगों को । ५६
पान=पत्ता (तांबूल का) । ३७
पानि=पाणि, हाथ । २१४
पानिच=प्रत्यंचा । ५४
पानिप=शोभा, सौंदर्य । ५६
पानिप-सरोवरी=पानी की तलैया, छोटा तालाब । ५१
पाय=पाँव, पैर, चरण । ९७
पाल=ओहार,ढकनेवाला कपड़ा । ५१
पाला=तुषार । २०६
पावँरी=जूती । ३०५
पास=पार्श्व, तरफ । १८
पास=पाश, फंदा, बंधन । ४०
पासब्रती=पार्श्ववर्तिनी, सहचरी, साथ रहनेवाली । ३२७
पाहरू=पहरा देनेवाला । १५
पिछानिकै=पहचानकर । ६६
पिय पराध=प्रिय का अपराध, प्रिय की चूक । १८२
पिय-पागी=प्रिय के प्रेम में पगी (डूबी) हुई । ८०
पिय-भाव=प्रिय के समान, प्रिय की तरह । २८०
पियूष=अमृत । २६८
पिलि पिलि=ठेल-ठेलकर, त्यागकर । २६८
पीउ=प्रिय । १५३
पुरिया=परिपूरित, सनी हुई । १४६
पुरै=(पुरै न सकै) पूरा, पूर्ण (न कर सके) । ८७
पूतरी=पुत्तलिका, पुतली । ६१
पूनो=पूर्णिमा । २६४

बारी=बाला, स्त्रियाँ । २४९
बालकता=लड़कपन, बचपन । १२४
बालपनो=बाल्यावस्था, लड़कपन । २२९
बालम=(वल्लभ) प्रियतम । १७४
बावन=वामन (वामनावतार) । २
बावरी=पागल, भोली, नादान । २०७
बिना फल-लालच-उमग=बिनाफल लेने के उत्साह में । ५१
बिकली=विकल, व्याकुल । २१४
बिछित्त=विच्छित्ति । २४७
बिछुरन=पार्थक्य, बिछोह, वियोग । २९३
बिजायठ=भुजा पर का एक गहना । ९
बिज्जु=विद्युत्, बिजली । ४७
बितर्क=सदेह, शक । २३८
बितान=चँदोवा । १९
बितानती=फैलाती (करती) है । ३०६
बितौने लगी=विस्तार करने लगी, बिताने लगी । १३२
बिथकी=विर्थारएँ, थकी, हैरान । १३०
बिथानि=व्यथाएँ । २८०
बिथोरि=बिखेरकर । २११
बिद्रुम=प्रवाल, मूँगा । ४५
बिधु=चद्रमा । ४६
बिन कौड़ी को कौतुक=बिना पैसे का खेल । २७०
बिना काज=अकारण, बिना प्रयोजन, नाहक । २२६
बिपरीति=रति बिपरीति । २२१
बिफली=विरत, असफल । ३८
बिमलाई=निर्मलता, स्वच्छता । २७३
बिरद बोलैं=यशगान करता है । २४८
बिरी=पान की गिलौरी, बीड़ा । २१८
बिलपाति=विलाप करती है । २३९
बिलगाइ=अलग करके । ४९
बिललाति=बिलखती है, विलाप करती है । २३९
बिलसै=विलास करती है । ३२
बिस बीसनि=बीसों बिस्वे, सपूर्ण, यथेष्ट । ६५
बिसानी=सिर पर आ पड़ी, पट पड़ी । २३३
बिसासिनि=विश्वासघातिनी । १७८
बिसूरति=सोचती है । १६५
बिसूरति रहै=तू सोचती रहती है । २२०
बिसेषक=माथे पर लगाया जानेवाला तिलक । ५५
बिहाइ कै=छोड़कर । २७१
बिहान=सवेरा । २००
बिहाय=त्यागकर, छोड़कर । ७८
बीच=अंतर, फासला, दूरी । २००
बीनै=बीया ही । १५८
बीर=सखी । १२०
बीस बिसे=सब तरह से, पूर्ण रूप से । ७५
बुद्धिनिधान=बुद्धिमान् । २१०
बृजडावरियाँ=ब्रज की लड़कियाँ । १२८
बृषभान महरानी=वृषभानु की पत्नी । २५७

वृषभानलली=राधा । ५५
बेंदुली=टीका नामक गहना । ४१
बेनी=निवेणी । ५६
बेनो=केशपाश, केशबंधन । ५६
बेर=विलंब, देर । १७१
बेसुधि=बेचैनी, विह्वलता । २०६
बेसुधिकामी=बेहोश होने की कामना करनेवाले । १७३
बेह=बेध, छिद्र, छेद । २३३
बैठक=बैठका, बैठने का स्थान । ५५
बैदई=बैद्यक । १६०
बैवर्न=वैवर्ण्य, विवर्णता । २३६
बैसो=बैठा । १२६
बौध=बुद्ध (बुद्धावतार) । २
बौरई=पागलपन, प्रमाद । ३२०
ब्यंगि=व्यंग्य, उपालंभ । १०७
ब्याज=बहाना । २६०
ब्याली=सॉपिन, नागिन । १२
ब्याह-उछाह=विवाहोत्साह, विवाहोत्सव । ८२
ब्यौंत, ब्यौंत=घात ; यत्न । १३५, २१२
ब्रतमान=वर्तमान । १०३
ब्रती=व्रत करनेवाली । ६४
ब्रनबेप=व्रण के आकार या रूप का, घाव की शक्ल का । १२७
ब्रीड़ा=लज्जा । २३८
ब्वै चलती=बोती चलती । ७६
भँजावत=भुनाते । १४८
भगानी=भाग गई । २४६
भटू=(वधू) सखी । १२७
भनि=कहता है । १८
भविष=भविष्यत् । १०२
भभरिकै=घबराकर । १४३
भयवारी=भयंकर, भयानक । १७७
भरे मैं=(साध की) अवधि तक । २२२
भँवरी परै=ब्याह हो । ८७
भँवरी भरि आई=परिक्रमा कर आई । १६६
भाद=(भाव) प्रकार । १४०
भाई=खराद पर गोल की हुई । ४०
भाग=अंश, हिस्सा, खंड । ५५
भागभरी=भाग्यवती, खुशनसीब । २५२
भागभरोसोइ=प्रियतम ही; भाग्य का विश्वास, भाग्य की आशा । २०१
भान=भानु, सूर्य । २०६
भामिनी=सुंदरी, रमणी । ३१
भारती=सरस्वती । ५३
भाव=स्वभाव, रंगढंग, गुण । ३३
भाव=प्रकार, भेद । १५२
भावती=मनभावती, मनोरमा (नायिका) । ४०
भावती-भौंह=नायिका की भौंह । ५३
भावते=प्रिय, नायक । १८१
भाव-सबल=भाव-शबलता, कई भावों की मिलावट । २५६
भीतर=अंदर । २७१

पूरति=पूर्ण करती है, भरती है। १३८
पेसि=देखकर। १६५
पैट पैठ ही पर्रति हौं=भीतर ही भीतर गल पच रही हूँ। ६४
पै=वैर। ५४
पैठि=प्रवेशकर। १२
पैरत=तैरते हैं। २८६
पोखराज=पुखराज नामक (पीला) रत्न। ३२
पोच=नीच। ८६
पोटि पोटि=फुसला-फुसलाकर बहका बहकाकर। २४२
पौरि=ड्योढ़ी। ७६
प्यौ=प्रिय, पति। १२५
प्रकास=प्रत्यक्ष। १२६, ११२
प्रगलभता=प्रगल्भता, ढिठाई। ७१
प्रजंक=पर्यंक, पलंग। १६१
प्रति=हर एक, प्रत्येक। २३३
प्रतिमासनि=हर महीने। २४८
प्रचंड=प्रचंड, घनघोर। २४४
प्रवास=प्रवास, विदेशस्थिति। २६७
प्रवीनताई=प्रवीणता, निपुणता। २६२
प्रमान=(प्रमाण, फल। २०१
समान=समान। २६
[illegible]मान करैहौं=प्रमाणित कराऊँगी। [illegible]७४
प्रयोग प्रवीनी=कार्य कुशला। ११
प्रलै=प्रलय। २३६
प्रानन-दान=प्राणों का दान। २६०

प्रान चले=प्राण निकले। १६६
प्रीतम=प्रियतम। १७३
प्रेम-असक्त=प्रेमासक्त, प्रेम में अनुरक्त। ८६
प्रेम प्रतीति=प्रेम में विश्वास। ३११
प्रेम प्रमान=प्रेम की मात्रा, स्नेह का वेग। २००
प्रेमरस-धुनि को कवित्त=प्रेम की रस ध्वनि की कविता। १५८
फबिता=शोभा। ५३
फलकैं हैं=विकासोन्मुख। २३७
फल बेल-फली=विल्वफल से फली (कुच)। ३८
फुँदी=फंदा, गाँठ। १६४
फरि=फिर, अनंतर, बाद में। २७६
बंक=टेढ़ी। ५४
बंकुरता=टेढ़ापन। १२०
बंधुजीव=दुपहरिया नामक फूल। ४५
बसतुत=बँध लगी। ५१
बगर=घर। २३३
बगर्यौ=बिखरा, फैल गया। ३१५
बगारिबे=फैलाना, बिखेरना, छींटना। २६८
बगारौ=फैलाई गजाफे की बिसात बिछाई। ६६
बजनी=बजनेवाली चीजें, नूपुर आदि। १६७
बड़ारिन=बड़ी, मुख्य, प्रधान। ६०
बड़ी गौं=बड़ी घात। १८६
बड़ीनि=पद में बड़ी स्त्रियों ने। ६६
बड़ीयै=बड़ी ही। १८८

बढ़ती=वृद्धि, बाढ़ । १६३
बतरात हौ=बातें करते हो । १८४
बतरान लगी=बातें करने लगी । १२६
बदैया=स्थिर करनेवाला । १६३
बदो=कहो, बताओ । १७४
बधिक=वध करनेवाला, मारनेवाला । १६६
बनक=सजावट, वेश, बनावट । १३२
बनाय=बनाय । २५२
बनाव=बधान । १८६
बनि=बनी, छजी । २५२
बयारि=पवन, हवा । २५३
बरजोरें=बलपूर्वक, जबरदस्ती । ३१८
बरबस=हठपूर्वक । ५४
बररातीं=बर्राती है, बड़बड़ाती है । ३१७
बरसगाँठि=सालगिरह । २१२
बराइ=बराकर, बचाकर । ३२८
बराइहौं=अलग करूँगी, दूर रखूँगी । २१३
बरिहै=जलेगा, सतत होगा । २६६
बरी बरी=बली बली, जली जली । ३१७
बरैतें=(बढैता-बढैतिन) ज्येष्ठा स्त्रियाँ, बड़ी बूढ़ी स्त्रियाँ । २६६
बरोरिकै=बलपूर्वक समेटकर । १०६
बव=अक्षर (वि व वि=बवर्ग होने से ओष्ठ्य होने से मुख बंद होता है) । ४५
बलकों हैं=(वचन) बोलने को उन्मुख । २३७
बलया=कंकण, वलय । १६६
बलाइ ल्यौं=बलैया लेती हूँ, बलि जाती हूँ । २१२
बलि=सदा निछावर होती हूँ । ३२१
बसीठी=दौत्य, दूत कर्म । १८५, २०६
बहबह=चमाचम । २६६
बहराइकै=भुलवाकर, भुलावा देकर । २२१
बहराए=बहलाने से, समझाने से । २५७
बहरानी हैं=बाहर हुई है, दूर हुई है । २५७
बहरावै=बहलाती है । २६५
बहुरयो=तदनंतर । १६४
बाइ=वायु । १४०
बाट=मार्ग, रास्ता । २६६
बात चली=चरचा छिड़ी । १६६
बात-बस=बातचीत के सहारे, पवन-प्रेरित । ४७
बादि=व्यर्थ, नाहक ही । ८०
बादिहीं=व्यर्थ ही, नाहक ही । २६३
बानक=बाना, वेश-रचना । ३०६
बानन=बाणों से । ८२
बानी=बोली । ४८
बानी=सरस्वती । ४७, ४८
बानी=बनिया, व्यापारी । ११६
बानो=वेश भूषा, बनावट । ४८
बाम=विपरीत । ६७
बार=बाल, केश । २६
बार=बाल, बालक । ११८
बारनि पै=बालों पर । २८८

भौंर=रत, तल्लीन । १४८
भूषननि=गहनों को, आभूषणों को ही । ३१
भेटन पैहैं=मिल पाऊँगी, भेंट कर सकूँगी । १७८
भेंट कै ऐहौं=भेंट कर आऊँगी, मुलाकात कर लूँगी । १७८
भेदनि=प्रकार (भौंह विशेष के) । ५३
भोगभामिनी=भोगविलास के लिए स्त्री । ६३
भोर ही=सवेरे ही । १८१
भोराई=भोलापन । ११
भोराई=भुलावा दिया, बहकाया । २४२
भोरि=भोली, अज्ञान । २११
भोरे=सवेरे, प्रातःकाल । १४७
भौंर=आवर्त । ६०
भ्रमै=भ्रमण करता है । १८
भ्रुव=भौंह । १२
मंडई=मंडलाकार घेरे हुए, छाए । ५८
मंडन=शृंगार । २१५
मटी=मटित, ठनी, मची, छिड़ी । २४४
मकरिका रचन=मकरिका नामक शृंगाररचना, मछली के आकार का चंदन का चिह्न जो स्त्रियाँ कनपटी पर बनाती थीं । २६२
मखतूल=काला रेशम । २२६
मखाति है=मान करती है, रोष करती है । २३६
मगहि=मार्ग में ही । २२४
मग जोहत=रास्ता देखने में । १७४
मच्छ=(मत्स्य=मछली) मत्स्यावतार । २
मजीठी=मजिष्ठा या मजीठ से बना (लाल रंग) । १८५
मटती=समाती । १६३
मत्त-मत-गजगामिनी=मदमत्त गजगामिनी या सौ मत्त गजों के समान मस्तानी चाल वाली । १६८
मधि=में । २०४
मधुराई=माधुर्य-भरे । ४५
मनकाम=अभिलाष, मनोरथ । १७४
मन के मकान=मनरूपी मकान । ३७
मनभाई=मनभावती, मन में भाई हुई । २६
मनमथ साहि=मन्मथ शाह, कामदेव महाराज । ५१
मनसूबन=मनोरथ । १७१, २०४
मनावन=समझाना-बुझाना । १८६
मनु=मन भर, एक मन या पूरे ४० सेर का । ३६
मनोचहिंनी अबला=साक्षात् रति । ६१
मनोभव=कामदेव । ५७
मयंक=चंद्रमा । ४९
मयंकवदनी=चंद्रमुखी । २४५
मरु करि=कठिनाई से । १०४
मरोरनि=मरोड़ती है, मोड़ती है । २३५
मरोरि=ऐंठ कर । २५५
मर्मरन='मरमर' शब्द करके । २४४

मलिंद=भ्रमर, भौंरा । ४८
मलिनी=मैली, गंदी । २०२
मसि=स्याही, कालिमा । ४४
महताब=(माहताब) चंद्रमा । ४७
महति=बड़ी । २२८
महमह=सुगंध के साथ । २६६
महलसरा=अंतःपुर, रनिवास । ७०
महलै=महल में । १८७
महाउर=यावक । १५७
महातम गात की=अंधकाररूपी शरीर की । १०६
महारुन=(महा+अरुण) खूब लाल । ४१
महै=(महा) अत्यंत । १२
माचि=फैले । १०८
माति=मत्त होकर । २३६
मानप्रभंजन=मानत्याग । २१५
मानसाँति=मानशांति, मानोपशम । १८६
मानिक=पद्मराग, लाल रंग का रत्न । ३२
मारनी=मारण कला । ३२६
मारू=युद्ध-वाद्य, धौंसा, नगाड़ा । २४४
माह=चाँद, चंद्रमा । ३२४
मिचाइ=मूँदकर, बंद करके । २४२
मित्त=(मित्र) नायक । ४४
मिस=बहाना । ७६
मिसिरियो=मिस्री भी । ४५
मीच=मृत्यु, मौत । ८२
मीली=ढँकी, दबी, छिपी । २७३
मुकताइ दीनी=मुक्त कर दी, छोड़ दी । ४६
मुकरै=नट जाता है । २२
मुकुत=मुक्त, दूर । १६३
मुकुत=मोती, हार के मोती । १६३
मुकुराभ=आइने सा चमकीला । १०८
मुकुले=अर्धविकसित, अधखिले । १३०
मुक्ताहल=(मुक्ताफल मोती । ५०
मुखजोग=मुख के योग्य । ४६
मुरचो=जंग, मैल । १०८
मुरार=कमलनाल (तोड़ने में दिखाई पड़नेवाले पतले तार)। ३६
मुरि जाय=मुड़ जाती है, लौट जाती है । ४५
मुहूरत=मुहूर्त, समय, क्षण । ३२७
मूंदा=ढँकी, छिपी । १६४
मृगेस=(मृगेश) शेर । १
मेचकताई=कालिमा, श्यामता । ५७
मेलि=डालकर, पहनकर । २२२
मेह=वर्षा । २३३
मैं=सर्वनाम । ३२४
मैं=में । ३२४
मैन=(मदन) कामदेव । १२
मैनमद=कामविकार । १६०
मैनसर-गाँसी=मदन-शर का फल । १८६
मोदरै=दर्शन । ११
मोह नैन=अटपट, बेसिर पैर का, निरर्थक वचन । ३१६
मोहि रहिए=मोहित हो जाइए । २२६

मौजन=तरगैं, लहरैं । १५
रँगभू=(रंगभूमि) केलिस्थली । १४८
रँगभूमि=रग-स्थल ५५
रँग रातीं=रग मैं रँगी । ७५
रजिकै=प्रसन्न होकर । ६६
रभा=एक अप्सरा । ३४
रभा=कदली । ३४
रगमगे=मुग्ध, लट्टू, अनुरक्त । १६५
रतन=(चौदह) रत्न । २
रतनारी=लाल, रक्त वर्ण । ३०६
रति=कामदेव की स्त्री । ३०
रतिरग=कामक्रीड़ा, केलि । १७
रद=दाँत । २
रद=रद्दी, अनाकर्षक । ६
रमि=रमकर । १८
ररै=रटती है, बार बार कहती है । ११४
रसना=(रशना) करधनी । १६६
रसफैलौ=(रस+फेल) रसरग, काम क्रीड़ा । १४३
रसबात=प्रेम-वार्ता, अनुराग, कथा । १२६
रसभीर=रससमूह । २३५
रसराज=शृगार रस । ३८
रसराव=रसराज, शृगार । २४१
रहरह=रह रहकर, ठहर ठहरकर । २६६
रहस=रहस्, एकात, अकेले, सूने । १७७
राखति अगौटि है=रोक रखती है । २६२
रावरे ही=आपके ही । १७६
रिसौंहैं=रोषोन्मुख । २४६
रीझि=प्रसन्नता, आनद । २१०
रीति=प्रकार, ढग, भाँति, तरह । ८५
रीतो=खाली । ६६
रुख=ओर । २१०
रुचि राची=शोभा छबी । ३०
रुप=चाँदी (रूप के=चाँदी के) । ३१
रूरो=रुचिर, सुदर । १३४
रेत=रेता, बालू । १५४
रोगन=तेल । १३४
रौन=रमण, प्रियतम । १६५
लक=कमर, कटि । ३६
लक बासर=कमररूपी दिन । १२५
लकी=कबूतरी । २५७
लकुट=लगुड़, लाठी, छड़ा । २८६
लखियाँ=देखती हैं । ३०३
लगाइहिनी=लगाऐंगे ही । ८०
लगि=पास, तक, निकट । ६०
लचि जात है=झुक जाती है । २५३
लच्छ=लक्ष्य, उदाहरण । १७०
लपना=कथन, कहना । १३१
लरजरी=लड़खड़ानेवाली, लटपटाने-वाली । १४२
ललकैं=ललचते हैं, तरसते हैं । २४५
ललितै=ललिता का । २८०
लसला=(लीला=लक्ष्मी) ज्योति, छटा । ६१
लहने=प्राप्तव्य, प्राप्य (सपत्ति) । २६३
लहलह=लहलहाती, हरी भरी । २६६
लहे को=प्राप्य, प्रारब्ध । २१०

लाइ़ै=लगाकर । २२१
लाए जाति=लगाए लिए जाती है । १६७
लाज=लज्जा । १६३
लाज=(लाजा) लावे (के समान) । १६३
लाज गढ़ी=लज्जा का छोटा दुर्ग, शर्म का किला । २०७
लालरी=(लालड़ी) लाल नग । ४१
लालस=लालसा, तीव्र इच्छा । ३०२
लाव उपजावन-इलाज=ज्वाला उत्पन्न करनेवाली दवा, जलानेवाला उपचार । १६३
लियोई=ले ही लिया १८७
लिलारु=(ललाट) मस्तक । ५५,१६५
लीन ह्वै=लीन होकर, एकचित्त होकर । १३६
लीन्हे कलियान में=बगल में दावे । १३६
लीली के=(नीली के) श्याम वर्ण के । ४४
लुगाई=स्त्री । ८०
लेंड़ग्रान=गाय के डेढ साल की उम्र तक के छोटे बच्चे । १०१
लेस=लेश, थोड़ी भी (लाज उन्हें छू तक नहीं गई है)। २५
लेहि लै=ले ले । २८६
लोन=लवण, नमक । १८४
लोपि जाति=दब जाता है, लापता हो जाता है । २६३
लोरति=नचाती है, फिराती है। २३५
लोलनैनी=चंचलनयनी । ४६
लौं=तक, भी । ६३
लौट=त्रिबली, उदररेखा । १३८
वापै=उसके पास । १८८
वै=वे । २०
वोउ=वे भी । १४
श्रीनिमि=निमि नामक राजा, प्राचीन सूर्यवंशी राजा निमि । ७५
श्रीफल=बिल्व, बेल । १५६
श्रीभामिनि के=साक्षात् लक्ष्मी के, धन सपन्न । ६३
श्रुतिदरसन=सुनकर देखना, श्रवण-दर्शन । २६१
श्रुतिसेवी=कान तक फैली । २२६
श्रुतौ=सुनना । २८५
श्रोनित भीने=शोणित से भीगे, रक्त-रंजित । ४१
संकेत=संकेतस्थली । ११३
संगम=मिलन । २४३
संघट्टन=मिलाना । २१५
सँजोग, संजोग=संयोग शृंगार । १४२, २४३
सज्ञा=संकेत, इशारा । १२०
संदरसन=दिखाना । २१५
सँदेसिया=संदेशहर, वार्ताहर । २०१
सँदेह=(संदेह) शंका, शक । २२२
संनिधि=पास, समीप । १६७
समत=राय । २७०
सँवार=सुधार । ११२
सँपूरन=(संपूर्ण) प्रगाढ़ । १३७
सकज मृनाल=कमलयुक्त (कमल-) नाल । ४०
सकेलियै=समेटिए, आलिंगन कीजिए । २२२

सकोचि=सकुचित होकर, सिकुड़कर । ५२
सकोचति=सकुचित करती है, सिकोड़ती है । २३५
सगिलानि=(सग्लानि) ग्लानिसहित, अफसोस से । २३६
सगुनौती-कहैयन=शकुन विचारनेवाले, भविष्य बतानेवाले । २०१
सग्नि=सरपर । २५३
सची=(शची) इन्द्राणी । ३०
सटक्यो=भागा (मार्गो) । ४५
सठो=शठ । १३
सतगुरु=सद्गुरु, सदुपदेश । २०७
सति=सत्य । ५६
सद्वार=द्वार के सहित । १४०
सधीर=धैर्यपूर्वक । २३६
सपूरन=सम्पूर्ण, सब । १०४
सबार=सबेर, शीघ्र, जल्द । ११५
सबारे=शीघ्र । ४५
सविता=सूर्य । ५३, ३१५
सविसेप=खासकर । ८
सभाग=भाग्यशाली । १७६
सभागन=सौभाग्यशालितापूर्वक ।१४०
समर=(स्मर) कामदेव । २६६
समरकला=युद्ध विद्या, स्मर विद्या । २४४
समरु=(समर) युद्ध, लड़ाई । २४४
समान=घुसा, व्याप्त । ५४
समुहाती=सम्मुख होती, सामने आती । ७५
समूरो=समूल, संपूर्ण, सब । १३४
सर=शर, तीर । २२६
सरवग=सर्वांग । ८६
सराहतीं=प्रशंसा करतीं । १४
सरि=सादृश्य, समानता । ४३
सरूप=स्वरूप । २०२
सरोजमुखी=(हे) कमलमुखी । ३५
सवाँरो=सँवारा, सजाया । ४६
ससि रेख=शशिरेख, नखक्षत । २७७
सहचरिनी=सखी, सहेली । ३०
सहलै=सरल ही, आसान ही । १८०
सहसह=सहसा । १६६
संकेत=संकेत, अभिसार के लिए नियत स्थान । १७४
सादकै=(सायक) बाण ही । ३५
साज=ठाट, सजावट । २२७
सात्वकी=सात्विक । २३६
साध=प्रबल कामना । १५७
साधारनै=साधारण रूप से । ८
सान=(शान) शोभा । १३८
सामुहैं=सामने । १६
सारद=शरद् ऋतु का । ६८
सारदी=शारदीय, शरद् ऋतु की । ६८
सारो=सारिका, मैना । २५०
सावक=बच्चा । १०८
सिंगार=(शृंगार) रसका रसराज है । ५७
सिंजित=नूपुर या करधनी की ध्वनि । २४४
सिछा=(शिक्षा) सीख । २१६
सिगरा=सब २१२
सिधाई=सिधारी, चली गई । ३२६

सिरताज=श्रेष्ठ । ६६
सिरावौ=शीतल करो, बुझाओ । १५६
सीठा=नि.सार, निस्तत्त्व, फ़ड़रा । १८५
सीरक=शीतल पदार्थ । ६६
सीरी=ठंढी । ३२६
सीरे जतन=शीतल उपचार । ३२४
सीस भरि=सिर के बल । ३४
सु=(सो) वह । १७१
सुआसिनी=(सुवासिनी) सौभाग्यवती । ३०
सुऔसर=सुअवसर, अच्छा मौका । २१७
सुकतुंड=शुक पक्षी की चोंच (नासिका का उपमान ।) । ६
सुकिया=स्वकीया । ६२
सुखऔंत=सुख का अवसर । १२०
सुखजोग=सुख का योग, सुखावसर । ७२
सुघर=चतुर । ८
सुघराई=चातुरी, चालाकी । १६०
सुघरी=सुदरी । ७६
सुचिताई=स्वस्थचित्तता, स्थिरता । २०६
सुजान=निपुण, दक्ष । ३४
सुढार=सुडौल, सुंदर । १२४
सुधर्म=स्वधर्म, नारीधर्म, नायिका धर्म । ७४
सुधि=स्मरण, याद, होश । २३३
सुधिसुधा=स्मृतिरूपी अमृत । २२४
सुबस=सदृश, अच्छे बाँस । २११
सुभडौल=सुडौल । ४६
सुभाइ=स्वाभाविक । ४६
सुमनवृंद=(सु+मन+वृंद) अच्छे मन वाले लोग, पुष्प समूह ; देवगण । ३७
सुमनावलि=फूलों की पंक्तियाँ । २३२
सुमिरन=स्मरण, याद । २६१
सुमृति=स्मृति, स्मरण, याद । ३१०
सुर=देवता, स्वर । २३१
सुरति=स्नेह, अनुराग । २०६
सुरनायक सदनवारी=स्वर्ग की, (सुरनायक=इंद्र + सदन=निवास, सुरनायकसदन=स्वर्ग ।) ३४
सुरभित=सुगंधित । ६
सुरसंग=स्वरयुक्त (दाहिना बायाँ स्वर) । ५१
सुरस=सुदर जल वाला । ६
सुही=लाल । २५२
सूली=रूखी सूखी । २७५
सूझि=समझ । १६६
सूने=एकांत में । ६४
सूमैं=कंजूस को १४८
सेजफली=शय्या में बिछी फूलों की फली । २१४
सेत=(श्वेत) सफेद । ७०
सै करि=सौ प्रकार से, अनेक उपाय करके । ४६
सैन=शयन, बिछौना, शय्या । १६१
सोइ रहौंगी=सो रहूँगी । १६१
सोच सकोच-बिधानन=सोचने, सकोच करने के नियम, सोच समझकर चलने की रीतियाँ । ८६

सोदर=सहोदर । ५०
सोध=शोध, खोज । २७४
सोध=(सौध) अट्टालिका, अँटारी । २७४
सोभन की=शोभाओं की । ५५
सोभासर=(शोभा+सर) शोभा का तडाग । ३७
सोमवती=सोमवार को होनेवाली अमावास्या । ११८
सोहाग=सौभाग्य, सुभगता । ४४
सोहाग-थली=सौभाग्यस्थली । ५५
सोहागभरी=सधवा । २५२
सौं=शपथ, कसम । १५
सौं हैं=सामने । १८८
सौं हैं खाइकै=कसमें खाकर । २२
सौहर=सुघरता । ३३
स्तंभ=प्रगावरोध, जड़ता । २३६
स्तावक-प्रकास=बौद्धधर्म की ज्योति । २
स्याम-सरोरुह-दाम=नीले कमल की माला । ८३
स्वाधीनापतिका=स्वाधीनपतिका । १५१
स्वेदजलकन=पसीने की बूँदें । २४५
हँहाँ करिनो=हाँ करना, स्वीकार करना, मानना । २६८
हट-आराधन=हठ की आराधना, गहरा हठ करना । २०७
हत=हतप्रभ, शोभाहत । ६८
हति=मारकर, वधकर । २
हथौटि=हस्तकौशल । २६२
हदन मैं=सीमाओं में, नियत स्थानों में । ३०
हर=महादेव । २०
हरि दरसन-घात=कृष्ण के दर्शन का अवसर ढूँढना । ६३
हलके करि दीनो=तीक्ष्णताविहीन कर दिया । ५२
हलाहल-सौति=विष की सोती (धारा) । ६६
हली=हलधर, बलराम । ५५
हवाईकृसान=आतिशबाजी की आग । २०६
हवेलहार=हुमेल हार, कंठ का एक आभूषण । २५२
हाँती करि=दूर कर । २११
हाइ भरे=हा हा करती है, हाय हाय करती है । ११४
हाइ भाइ=हाव भाव । ३६
हारन=हारों । ३७
हिंदूपति-रीझि हित=राजा हिंदूपति की प्रसन्नता के लिए । २
हिमकर=चंद्रमा । २२८
हिमभानु=चंद्रमा । ५५
हिमभानु को भाग लसै=चंद्रखंड सुशोभित है । ५५
हियरे=हृदय, वक्षःस्थल । २२२
हियो हियो=मन ही मन । ३१२
हिय्दै=हृदय, चित्त । २६४
हिलि हिलि=लगे रहकर, मग्न हो कर । २६८
हीं=थी । १८३
ही=(हृदय) मन । ४७
ही=थी । २५७

हीय=हृदय । २१२
हुती=थी । २६८
हुत्यो=था । १२६
हुलास=उल्लास । १८
हेत=हेतु, कारण । २७०
हेरति=देखती है । ३१२
हेरि=देखिए, समझिए । १६८
हेरि=देखकर । २७६
होवती=होती । १४
हौंहूँ=मैं ने भी । ५
हौले=धीरे धीरे । ३१७
ह्यॉं=यहाँ (ब्रज में) । २२७

छंदार्णव

अगना=स्त्री । ५-१७८
अंग-वलित=अंग से घिरी । ८-१७
अँगिराति=शरीर तोड़ती है, अँगड़ाई लेती है ५-१६३
अंतरवरन=बीच के अक्षर । १-६
अंबर=वस्त्र । ५-६७
अंभोज=कमल । १२-७५
अँमर=(अम्बर) सुगंधित । २-५
अंसु=(अंशु) किरण । ६-६
अगार=आगार, समूह । ५-६६
अगोटनको=छिपाने का । १०-५६
अघनिका=पापिनी । ५-३२
अचल=पर्वत (स्तन) । ५-१५६
अजगुत=आश्चर्यजनक, अचभे की बात । ७-४१
अजोखें=अपरिमाण, अत्यधिक । ६-२
अजोग=अयोग्य, अनुपयुक्त । ५-२२१
अड़=आड़, रोक । ८-२४
अतर=इन । २-५
अतेव=अतीव । १०-३१
"अद्यापि नोज्झति" इत्यादि=आज भी शिवजी विष का त्याग नहीं कर देते, कछुआ पीठ पर पृथ्वी लिए हुए है, समुद्र असह्य बड़वानल रखे हुए है, सुकृती स्वीकृत का निर्वाह करते ही हैं । २-४
अध=नीचे । २-१८, ७-३०
अधरात=(अर्द्धरात्रि) आधी रात । ६-४६
अधिकारी=अधिक । ५-२२०
अध्रुव=अनिश्चित । ७-१५
अनंग से खरे=कामदेव के समान खड़े (रहते हैं), 'अनंगशेखर' छंदनाम । १५-५
अनकन=अन्न का कण । ५-२३७
अनियम=नियम रहित । ५-१६३, २०२
अनी=सेना । ५-१०८
अनुकूलों=पक्ष में, 'अनुकूल' छंदनाम । ५-१४१
अनुरूपी=विचारा, सोचा । ५-११८
अपजस वा सन=उससे अपयश है, 'सवासन' छंद नाम । ५-५३
अपराजिता=अजेय (दुर्गा), छंदनाम । १२-५१
अप्प=आत्म, अपनी । ३-२

अत तो टक लाइ=अत तो टक टकी लगाकर, 'तोटक' छंदनाम। १०-४२

अनिधा=अनिधान, निधिरहित, छंद-नाम। ६-२८

अब्द=बादल। ७-४२

अब्दनिनद=मेघ के समान गर्जन। ७-४२

अभा=प्रभाहीन। ११-१४

अभिनव=नया। ५-१४८

अमल=स्वच्छ। ५-१२

अमिय=अमृत। ७-१३

अमियमय=अमृतयुक्त। ५-६२

अमृतगती=अमृत के समान गति वाली, अमृत तुल्य, 'अमृतगति' छंदनाम। ५-८७

अमृतधुनि=(अमृतध्वनि) मीठी वाणी से, छंदनाम। ७-४२

अरचा=पूजा। १२-१११

अरधग=अर्द्धांग में, वाम अंग में। ७-४१

अरनि=अड़ना। १२-१११

अरविन्न=(अर्बुद) अरब। ६ ३७

अरसात=(अलसाना) आलस्य का अनुभव करते हैं छंदनाम। ११-१७

अरिकै=अड़कर। ५-१५०

अरिन=शत्रुओं ने। ५-१७८

अरी=अड़ी। ५-१५२

अरुन बरन=(अरुण=लाल, बरन= वर्ण, रंग। ५-४२

अरै=अड़ती है, बसती है। ७-३१

अलङ्कत मुनियौं=अलकार से रहित भी। १२-७६

अलि लालन=हे अलि, नायक, (लालन) 'अलिला' छंदनाम। ७-३४

अली= हे सखी। १०-३५

अलीक=(अ+लीक=अमरोद) बेरोक-टोक। ३-२६

अलेख=(लेख) देवता। ७-४४

अवगाहा=अगाध, अथाह 'उग्गाहा' (बगाहा) छंदनाम। ८-५

अवगाहिनी=थहानेवाली, 'गाहिनी' छंदनाम। ८-८

अवगाहू=(अवगाह) अगाध, अथाह, 'गाहू' छंदनाम। ८-४

अवतंसा=(अवतंस) कान का गहना, श्रेष्ठ। ५-५२

अवरेखि=साचो, समझो। २-२५

अवरेखिए=समझिए। ५-२००

अवली=पंक्ति, कतार। ५-१६६

अविद्यानिदानी=अविद्या का अंत करने-वाली। १५-१

असगाथा=उन गाथाओं से रहित, छंदनाम। ५-१६०

असतीन=जो सती न हों, कुलटाएँ। ५-६१

असन=भोजन। १२-१८०

असावरी=पहली गाढ़ी। १४-५

असित=काली। ५-१०७

असेष=(अशेष) अनगिनत। १-२, ७-४४

अशोकपुष्पमंजरी=अशोक के फूलों की मजरी, छंदनाम । १५-७
अस=इसकी । ३-७
असव=(अश्व) घोड़ा । ५-१७४
अहित मति=अकल्याणकारी बुद्धि । ७-३६
अहिनाह=शेषनाग । १०-६
अहिप=शेषनाग । ५-१७६
अहिभूप=पिंगलाचार्य । ३-६
अहीर=श्रीकृष्ण; छंदनाम । ५-७६
आक-पर्न=मदार के पत्ते । १२-६२
आकर्नी=(आकर्णन) सुन रखा है । १२-७२
आखेट=शिकार । १५-११
आगार=घर । ६-६
आभरन=आभूषण । ६-५
आभर्नी=आभरण । १२-२४
आभार=बोझ, उत्तरदायित्व, छंद-नाम । ११-१०
आम्रमौरमधु=आम की मजरी का मकरंद । ५-१६४
आरक्तता=ललाई । १२-६५
आरत=आर्त, दुखी । १०-५०
आरतबधु=दीनबंधु, 'मधु' छंदनाम । १०-५०
आरतिवंत=दुखिया, विपन्न । १०-५०
आरन्य=अरण्य, वन । ५--३८
आरसी=(आदर्श) दर्पण । १२ ६६
आराजी=खेत, भूमि । ५-२३०
आला=उत्तम, श्रेष्ठ । ५-७८, १६१
आली=आलि, सखी । ५-१६५, १७०, १६६
आसु=(आशु) शीघ्र । ५-१८०
आस्य=मुख । १२-३१
इंदीवर=नीलकमल । ७-३१
इदुवदना=चंद्रमुखी; छंदनाम । ५-१७०
इंद्रवज्रा=इंद्र का वज्र, छंदनाम । १२-८
इंद्रवंसोपरि=इंद्रवंशा (अप्सरा या देवी) से बढ़कर; 'इंद्रवंशा' छंद-नाम । १२-२३
इरा=बुद्धि । ६-३७
इथ=(अत्र) यहाँ पर (इस । २-२
ईड़ित=प्रशसित (अस्त्र) को । १२-६३
उक्ता=कथिता, कही हुई । ५-८५
उघरिया=उघाड़कर, खोलकर, स्पष्ट करके, अथवा उघरिया, उद्धृत करके । ३-२
उचाट=उच्चाटन । १०-४५
उचित हस रे=रे हंस, उपयुक्त (उचित), 'चितहंस' छंदनाम । ६-१४
उज्जला=उज्ज्वल, छंदनाम । ५-१२३
उज्यारो लागत=प्रकाशवान् लगता है, 'रोला' छंदनाम । ५-१०७
उडुगन=तारागण । ४-२३६
उतर=उत्तर । ३-३
उदंड=उद्दंड, प्रचंड, जबरदस्त । १-२
उद=उदासीन । २-२५
उदिष्ट=उद्दिष्ट । ३-८
उदरै=प्रकट करे, बताए । ३-१४
उधारन=उद्धारक । ५-४६

कबहिं=कभी । ५–२७

कमल=कमल का फूल; छंदनाम । ५–१२

कमल=कमल का फूल; छंदनाम । ५–७०

कमल=पद्म (पाँच) । ५–१८१

कमलदल=कमल की पंखुड़ी । ५–१४८

कमला=लक्ष्मी; छंदनाम । ५–७१

कमान=धनुष । ५–१७४

करटी=हाथी । ७–३६

करता (कर्ता)=करनेवाला, देनेवाला; छंद नाम । ५–३४

करतार करै=हे ब्रह्मा, कर, 'तारक' छंदनाम । १०–५१

करन=कर्ण, कान । १–२

करन=दो गुरु (ऽऽ) । ५–१६८

करनो=दो गुरु (ऽऽ) । ५–६५

करभोरुह=हाथी की सूँड़ जैसी जाँघोंवाली । ११–५

करम=भाग्य (से) । ५–१०८

करिनी=हथिनी । १२–७१

करिया=काला । ६–३८

करी=की । ५–१००

करी=हाथी । ५–२२०

करै कौंधों=क्रिया करे । ६–१७

कर्न=दो गुरु (ऽऽ) । ५–५६

कर्नौ=दो गुरु (ऽऽ) । ५–४६

कर्म=भाग्य । ५–१०६

कल=मात्रा । २–८

कलधौत=स्वर्ण, सोना । ५–१६६

कलनि=कलाएँ, क्रीड़ाएँ । १५–६

कलबंकी=गौरैया, चटका पक्षी । ५–२३७

कलरव=मधुर ध्वनि । ६–१०

कलहंस=मधुर वाणीवाले हंस; छंदनाम । ५–१६६

कला=मात्रा । ३–७

कला=क्रीड़ा, छंदनाम । ५–३३

कलापी=मयूर, मोर । ५–१७५

कलिंदी=कालिंदी, यमुना । १०–१७

कलुस=(कलुष) कालिमा (अंधकार) । ५–२३६

कलेवर=शरीर । ७–३१

कलेश=क्लेश, कष्ट, पीड़ा । १–२

कविजिष्न=कविजिष्णु, कविश्रेष्ठ । १०–१४

कहा कलिकाल=क्या कलयुग (करेगा), हाकलिका छंदनाम । ५–११५

कहिबी=कहना । ६–१६

कहुँ छोड़तो मरजाद=कहीं मर्यादा छोड़ देता है, 'तोमर' छंदनाम । ५–६३

काँखासोती=बाएँ कंधे और दाहिनी काँख में से पड़ा दुपट्टा । २–२०४

काञ्चनी=सोने के रंग सा पीला । ६–६

काँचो=कच्ची बुद्धि का, मंदबुद्धि । ७–२२

काता=स्त्री । १२–६६

कार्तिकी=कार्त्तिक की पूर्णिमा । ११–१०

गनिका=(गणिका) विगला वेश्या, 'नगनिका' छंदनाम। ५-१२
गग=गुरु गुरु। ५-१३०
गजविलसित=(उगकी) विलसित (गति) हाथी (है), छंदनाम। ५-१७८
गति=चाल। ५-१२२
गद=गदा। ५-१४५
गन०=गुरु नगण०। ५-१६८
गगनगना=(गगन+अगना) अप्सरा, छंदनाम। ५ २१०
गनाख्यनि=गणों के नामों को। १-८
गनागन=गण और अगण। १-८
गनिनी=गिनें, गिनिए। २-४
गनेस=गजानन। १०-३६
गनैं=गण (समूह) को। १२-८३
गन्य=गणना-योग्य। १०-१६
गरउ=गर्व, अभिमान। ५-२१०
गरल=विप। ५६११२
गरुडरुतं=गरुड़ की ध्वनि का, 'गरुड़रुत' छंदनाम। १२-६५
गररि=घेरकर। ८-२१
गलितान=(गलित) शिथिल, ढीला। ६-४१
गसी=ग्रस्त। ११-७
गहर=देर। ५-१५४
गहि=गुरु ही, ग्रहण कर। ५-१११
गाइ-खुर=गाय के खुर से भूमि में बना गड्ढा। १२-१०१
गाथे=गूँथे। १२-१६
गाहि=थहाकर। ६-१५
गित=गीत। ७-४२
गिरिजुगल=दो पर्वत (स्तन)। ५-१८१
गिरिधारी=श्रीकृष्ण, 'धारी' छंदनाम। ५-१६०
गिलत=निगलता है, खाता है। ८-१५
गीता=गाथा, छंदनाम। ६-३८
गीतिका=गीत, छंदनाम। ५-२१६
गुगा=गूँगा, मूक। ५-६८
गुज्रर-युवति=गुर्जर युवती। ५-२२२
गुनसदन=गुणों के आगार। ५-१४८
गुनागर=गुणागार। १२-११०
गुरुजुत्त=गुरुयुक्त, गुरुवाले। ३-६
गुलदस्त=(गुलदस्ता) फूलों का गुच्छा। १५-२
गुदरी=गुदड़ी। ६-३६
गृह निजन=घरेलू पशु। १-२
गैबें मैं=गाने में। ५-२३४
गोइ=छिपाकर। ५-२२३
गोन=गुरु नगण, (गवन) गमन, जाना। ५-१७७
गोपाल=श्रीकृष्ण, छंदनाम। १०-२०
गोविंद=गाय खोजनेवाला ग्वाला, श्रीकृष्ण। १०-२६
गोनावहु=छिपाती हो। ५-२१६
गोसमखोगो=गुरु सगण भगण

समग्र गुरु, सब शोक चला गया। ५-१३०
गौन=गमन। ११-१०
गौरत्व=उज्ज्वलता (प्रकाश)। ६-६
ग्वारि=ग्वालिन। ५-८६
चग=ढप के आकार का छोटा बाजा। ५-२२६
चडी=दुर्गा, छदनाम। ५-१४४
चचरी=होली में गाया जानेवाला गीत विशेष, छदनाम। ५-२११
चचरीक=भौंरा, छदनाम। ६-८
चचला=बिजली, छदनाम। १०-३५
चदर=रामचन्द्र। ५-१७
चद्र=चद्रमा (मुख), छदनाम। ५-१८१
चद्रक=कपूर। १४-५
चद्रलेखी=चद्रमा समझो, 'चद्रलेखा' छदनाम। १३-५५
चद्रिका=चाँदनी, छदनाम। ६-१०
चपकमाला=चपे की माला, छदनाम। ५-१३६
चपा कस्मीरी=कश्मीरी चपा (शरीर का रग)। १२-८०
चँपेली=चमेली। १२-५३
चँवर्ली=चमेली (हास)। १२-८१
चकल=चार मात्राएँ। ३-१३
चकिते=अचभित 'चकिता' छदनाम। ५-२०४
चकोर=पक्षी विशेष, छदनाम। ११-४
चक्र=चक्र सुदर्शन, छदनाम। ५-१४५
चख= चक्षु) नैन। ५-७०
चतुरपद=चतुर बुद्धिमान का पद (स्थान), 'चतुष्पद' छदनाम। ५-२२७
चलत=चलता हुआ। १-२
चलदल=पीपल। १४-७
चहुँधा=चारो ओर। ५-१६६
चाउ=(चाव) उमग। ५-१८५
चामरो=गाय की पूँछ के बालों का गुच्छा, 'चामर' छदनाम। १०-३१
चाय=चाव। १५-३
चारिक=चार। ५-२४३
चारु=सुदर। ५-११
चाहि=पढकर। ६-४
चाहि=देखकर। ६-१५
चिकनई=चिकनाहट। ५-१२२
चिकुर=बाल। १२-१०६
चित्र पदारथ चारो=चारो पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) चित्रवत् प्रत्यक्ष हैं 'चित्रपदा' छदनाम। ५-८४
चिबुक=ठोडी। ७-२६
चुरिया लाखन=लाख की चूड़ी, 'चुरियाला' छदनाम। ७-१३
चुरी गई चूरि=चूडियाँ चूर चूर हो गई। ११-११
चूडामनि=श्रेष्ठ 'चूडामणि' छदनाम। ८-२१
चेटुअन=बच्चे। ५-१६६

काव्य=कविता, छंदनाम । ७-३८
कामकलोलैं=काम क्रीड़ा, 'लोला' छंदनाम । ५-२०५
कामद=कामना का देनेवाला । ६-३६
कामनारी=रति । १२-७३
कामै=कामना, छंदनाम । ५-१३
कामै=काम (मदन) ही । ५-६६
कारी=काली । ५-१७५
कालकूटै=विष को । १२-६७
कास=एक प्रकार की घास जिसका फूल सफेद होता है । ६-६
किंसुक=पलाश । ११-१६
किते=कितने । ३-६
किती=कितना भी । १२-११५
कित्ती=कीर्ति, यश । ५-१८६, २३४
किनारी=किनारे पर की । १२-६१
किमि=किस प्रकार । ५-५८
किरीट=मुकुट, छंदनाम । ११-१९
किह्निन=किया । १२-२०१
कीला=क्रीडा । १५-११
कुंजर मोतिय-हारवता=गजमुक्ता के हारवाली । ५-११०
कुंडलिय=सर्प, 'कुंडलिया' छंदनाम । ७-४१
कुच=स्तन । ५-६६
कुनद=भद्दी रचना । ३-२६
कुमार=स्कंदकुमार । १०-३६
कुमारललिता=कुमार श्रीकृष्ण, ललिता राधा की सखी, छंदनाम । ५-६५
कुररै=कलरव करती है । ५-७८
कुरव=कुलित ध्वनि । ६-१०
कुलकानि=कुल की मर्यादा । ५-६३
कुलिस=(कुलिश) वज्र, हीरा । ५-१५६
कुसुमविचित्रा=विचित्र विचित्र फूलों से युक्त, छंदनाम । ५-१४०
कुसुमस्तबकै=फूलों का गुच्छा 'कुसुमस्तबक' छंदनाम । १५-३
कुसुमितलतावल्लिता=पुष्पित, लता से युक्त; छंदनाम । १२-८१
कुसुमेषु=पुष्पबाण, कामदेव । १५-३
कुहूजामिनी=अमावास्या की (अँधेरी) रात । ६-५
कूकै=कूकता है, केका ध्वनि करता है । ५-१६६
कूनर=कूनड । ५-१४१
कृत्ति=यश । कीर्ति) । ७-४२
कृतोर्वशीमोपरि=उर्वशी (अप्सरा) से अधिक (विश्वमोहिनी) माना । ११-४२
कृष्नै=कृष्ण को, 'कृष्ण' छंदनाम । ५-३८
कृस=(कृश) क्षीण । ५-५७
कृसोदरि=पतली कमरवाली । ११-५
केदलीपत्र=केले का पत्ता (पीठ) । ६-८
केदारा=केदार राग । ५-११६
केस=(केश) बाल । ५-८२
केहूँ=किसी प्रकार भी । ५-१६५
कै गो रसी=रसमय कर गया । १२-८७
कैटभारि=(कैटभ + अरि) कैटभ दैत्य के शत्रु । ६-८

कैलासा=कैलास पर्वत । ५-१८६
कान=कान । १२-५७
कोक=चकवा पक्षी । ५-२०७
कोकनद=लाल कमल । १२-६१
कोकिल को=कोयल का, 'कोकिलक' छंदनाम । ५-१६४
कोट=परकोटा । १२-८५
कोपस्थिति=कोप की स्थिति 'उपस्थित' छंदनाम । १२-१३
कोल=सूअर । ६-८
कोस=कोश, धन । ५-३६
कोसक=(कोस+एक) कोस भर । १४-५
कोहा=क्रोध । ५-६४
कोहि कोहि=क्रोध कर करके । ६-४६
कौल=कमल । ११-४
कौलपानि=कमलपाणि, विष्णु । १-५
क्रउंचो=क्रौंच पक्षी, 'क्रौंच' छंद नाम । ५-२४०
क्रीडा=खेल, छंदनाम । १०-१७
क्रीडा=खेल, आमोद प्रमोद, छंदनाम । १०-१४
क्रोरि=करोड़ । १०-८
क्षमा=क्षांति, छंदनाम । १२-४१
ख=ख, आकाश । २-२४
खंज=खंजन पक्षी । ५-१४२
खंजन=खंजन पक्षी, छंदनाम । ८-१५
खंड=आधा । ७- ६
खंडी=खंडित करनेवाली । ५-१४४
खगासन=गरुड़ासन, विष्णु । १-१५
खग्गा=खड्ग । ७-४२

खचै=खींचकर, बनाकर । ३-१
खरको=खटका, आशंका । ४-५
खरजूथ=(खरयूथ) गदहों का समूह । ५-१८५
खरियै=विशुद्ध । ३-१७
खरौ=खड़ा । ६-२०
खर्व=कम, थोड़ा । १०-२४
खल=दुष्ट (राक्षस) । ७-४२
खल-गन-घायक=दुष्ट निकंदन । १-१
खौरनि=आड़ा तिलक । ५-२०४
घत्ता=घात, छंदनाम । ७-१८
घनअक्षरी=अनेक अक्षरोंवाली, 'घनाक्षरी' छंदनाम । १४-७
घनो=अत्यधिक । ५-१४७
घरहाइनि=बदनामी करनेवाली, स्त्रियों को । १०-४२
घरी भरे=घड़ी गिनती है, कब से समय बिताती है । ११-७
घाँई=ओर, तरफ । २-५
घाइ=घाव, चोट, मार । १०-३८
घायक=संहारक । ५-४६
घाव=प्रहार । ११-८
घाव (री)=चोट । ११-८
घालिबो=मारना, मिटाना, नष्ट करना । १२-१४
घुंघरवारे=घुँघराले । ११-१६
घूघू=उलूक । ५-२०७
घेरु=(घेर) निंदा । ७-२८
घैर=बदनामी । १०-४२
गज=ढेर, राशि, समूह । ६-८
गंड=गंडस्थल, कनपटी, छंदनाम । १०-३६

चेतु=चित्त, चेतना । ५-६२
चैतीं=चैत्र मास । ५-२०३
चोखँ=तेज । ६-३
चोज=युक्ति । ५-२२३
चोवा=बनाया हुआ सुगंधित द्रव्य । १५-५
चौकल=चार मात्राएँ । ५-४
चौप=उत्साह, उमंग । ५-१२१
चौपाइटि=उमंग (चौंप) भरी (इटि), 'चौपाई' छंदनाम । ५-१२८
चौहँ=चारों ओर । ५-१२५
छुटि=छोड़कर । १-६
छक्कल=छः मात्राएँ ५-४
छनक=एक क्षण । ५-१४०
छनरुचि=बिजली । ५-२३६
छवि=शोभा, छंदनाम । ५-५८
छविसेनी=शोभा की श्रेणी, छविसमूह । ७-२५
छुरी=छली हुई । ११-७
छाग=बकरा । १२-६५
छाजै=शोभित होता है । ५-६७
छाप=शंख, चक्रादि का चिह्न । ५-२५
छाया=प्रतिबिंब, छंदनाम । १२-६०
छुवै=छूए । ६ ३, १४-१०
जग=युद्ध, लड़ाई । ५-१७८
जग्त=जगत्, संसार । ५-१०२
जगप्रान=जगत् के प्राण, पवन । १०-४६
जगहदनि=सारे संसार में । ८-१६
जति=यति, चरणांत का विश्राम । ६-७
जत्ता=जितनी, जो । ५-१३०
जन=दास । २-२५
जनदरदहरी=भक्तों का दुःख हरने-वाली । ५-८६
जन प्रन-रच्छन=दास के व्रत के पालक । १-१
जनिउ=जनी (दासी) भी । १२-३६
जब ही तब=जब देखो तब, अक्सर, बहुधा । ५-२४३
जमक=यमक, 'यमक' छंदनाम । ५-२०
जमाति=(जमात) समूह । १ -६
जराउ=नगजटित । १५-५
जरे=जड़े । १५-१
जलचर=जलजीव (मछली) । ५- ४२
जलधरमाला=बादलों का समूह । ५-१७५
जलहरन=आँसू गिराने (लगीं ; 'जलहरण' छंदनाम । ७-३०
जलोद्धतगती=जल की उद्धत गति, जल की प्रचंड लहरें, छंदनाम । ५-१४७
जस=यश । ५-१२३
जसी=यशस्वी । ५-२०
जसुमतिनंदनै=श्रीकृष्ण को, 'नंदन' छंदनाम । १२-८३
जसु-गीत=यश का गान, 'सुगीतिका' छंदनाम । ६-३७

जाँत=(जात=ज+अंत) जगण जिसके अंत में हो । ५-६५
जालि=मानिक । ८-१
जान=यान, सवारी । ७-४४
जानि=जानो, समझो । ५-१७४
जापु=जप, साधना । १२-३६
जामैं=जिसमें । ५-.६
जायो=जन्माया हुआ, पुत्र । १२-१०५
जारक=जलानेवाला । १०-४२
जारै=जलाती है । ५-१७५
जाल=घात, गौं । ५-१८०
जावक=महावर । ५-१५४
जासु=जिसके । ५-१४३
जाहिर=प्रकट । ३-१३
जाहिरै=प्रकट । ५-१७६
जित तितो=जितना तितना, जितना उतना । ३-१०
जी=(जीव) प्राण । ५-१०६
जीवौ=जीऊँगी । ५-१३६
जुग=(युग) दो । ५-२३२
जुदी रखिये=पृथक् रखिए । ११-८
जुन्हाई=ज्योत्स्ना, चाँदनी । ५-२८१
जूह=यूथ, समूह । १२-६५
जेलनि=झंझट, जंजाल । ८-२४
जेहा तेहा=जहाँ तहाँ । १२-५५
जेहि=जिसको । ५-६८
जे=जितने । ३-७
जैबो=जाना । १-३
जोगरागाधिकाई=योग के अनुराग का आधिक्य । १२-२५
जोटीजाटौ=जोड़ा-जोड़ी होकर । ५-२३५
जोबनाढ्या=(यौवन+आढ्या) यौवन से युक्त । १२-८७
जोराजोरी=जबरदस्ती, बलपूर्वक, विवश होकर (अवश्य) ५-२०३
जोरि=प्रतिद्वंद्वी । १२-६५
जोवै=देखे । ५-२२१
जोषिता=(योषिता) नारी । १२-७३
जोसतो=जोश में आता (उमड़ता है) । ६-४०
जोहै=दिखती है । ५-१७२
जौन=जो । ३-७
जौ लगि=जब तक । ५-१२०
ज्यान=हानि, नुकसान । ५-२३०
झख=(झष) मछली । ८-१५
झखि=विवश होकर । ८-१५
झखियाँ=मछलियाँ । १२-१०६
झखै=झींखती है, दुख करती है । ५- ८४, ६-४३
झारि=झारो, दूर करो । ५-३६
झालरि=झाँझ । ५-२३५
झिगरो=झगड़ा, झंझट । ७-२८
झीन=पतला । ५-१६६
झुल्लना=झूला, 'वर्णझुल्लना' छंद-नाम । १४-१०
झूलना=झूला, छंदनाम । ६-३
टकी=टकटकी । ७-२५
टेसू=(किंशुक) पलाश । ५-१३६
ठनीजै=स्थापित कीजिए, लिखिए, रखिए । ३-१०
ठाईं=स्थान पर । ७-४१
ठाउ=स्थापित करो । ५-१२४

टार्नौजै=रखो। १२-१००
टाग्रा=रखा। ८-६
डगर=रास्ता, मार्ग। ५-२४०
टाभे=दर्भ में कुश-काँस में। १२-५६
टारगहित=टाल में लगा हुआ।
७-२६
डौडौडौ=डमरू की ध्वनि। ५-२२६
टौर=(डौल) मार्ग, उपाय। ३-१६
टरनि=ढलना। १२-१११
ढारनि=कान का गहना। ६-६
टिग=पास। ३-१८
तत=(तत्त्व) रहस्य, भेद। ३-२८,
५-१०२
तटु=(तट्ट) सेना, शिविर। ५-
१७४
त=नगण (।।।)। २-२६
तत्त=तत्त्व। ११-८
तन=यहाँ। ६-८
तन=नगण नगण, शरीर। ५-१७२
तनुरुचि=शरीर की शोभा, 'तनु-
रुचिरा' छंदनाम। १२-३६
तन्वी=कोमलांगी, छंदनाम।५-२४१
तर्कि तर्कि=तर्क वड़कर।
७-३०
तमोर=ताम्बूल, पान। २-५,
तमो लहै=अन्धकार पाता है (सूर्य),
तगण, मगण और लघु होता है
(सूर छंद)। ५-६०
तर=नर, नीचे। ३-८
तरनि=(तरणि) सूर्य। ५-१४७
तरनिजा=(तरनि=सूर्य + जा=
पुत्री) यमुना नदी (श्यामवर्ण),
छंदनाम। ५-२२
तरनौ=पूर्ण होना। १२-१००
तरलनयनि=चंचल नेत्रों वाली,
'तरलनयन' छंदनाम। ५-६८
तरतरि=नीचे पीछे। ५-१२०
तरि जानै=तैरना जानता है, पार
करना जानता है। १-८
तरुनि=(तरुणी) स्त्री। ५-४२
तरैया=तारा, तारिका। ५-२२७
तरौना=तरौना, कान का गहना।
७-६
तलपै=तड़पने को। १०-५२
तल वितल=दम पातालों में से दो
अतल-वितल। ७-२२
तसु=उसके। ३-१२
तातर=उसके नीचे। ३-१०
तानौ=फैलाओ। १२-१०२
तामरसौ=कमल; 'तामरस' छंदनाम।
५-१४२
तारकतारक=ताड़का को, तारनेवाला
'तारक' छंदनाम। १०-५२
तान्वी=पत्नी, छंदनाम। ५-३०
ताहीं=उसी। ५-८८
ति=नि, तीन। ३-२
तिकल=तीन मात्राएँ। ५-८
तिती=उतनी। ६-३४
तितो=जितना ही, उतना ही। ५-
१०१
तिन=तृण। १२-११५
तिन्ना=चार गुरु (ऽऽऽऽ)। ५-१२०

तिलो=तीनों, 'तिनों' छ्दनाम । १०-१६

तिय=(विरहिणी) स्त्री । ५-६

तियानि=स्त्रियों को । ५-१८४

तिरग=तीन रगण (ऽ।ऽ) और गुरु । ५-१५६

तिल=तिल का फूल (नासिका) । १२-८१

तिलक=व्याख्या, टीका । ३-७

तिल काजर=(तिल=काली बिंदी के आकार का गोदना+काजर=काजल), 'तिलका' छ्दनाम । १०-२५

तिलका=तिल मात्र । ५-१६४

तिलात्मा=(तिलोत्तमा) एक अप्सरा । १२-७३

ती=स्त्री, नायिका । ५-६७

तुग=ऊँचे छ्दनाम । ५-६७

तुगतनी=(तुगस्तनी) ऊँचे स्तना वाली, उन्नतपयोधरा । ११-५

तुअ=तव, तुम्हारा । ५-६२

तुच=त्वचगद्ध । २-२२

तुलनि=तुला पर, तराजू पर । ५-१६६

तूल=तुल्य, समान । ५-११५, २४०

तृष्नाहिनो=तृष्णाहीन, तृष्णा से रहित । १०-१६

तृष्नै=तृष्णा को । ५-३८

तेतनीयै=उतना ही । ३-७

तेतो=तितना, उतना । ५-८३

तेहु=नेह, क्रोध । ११-११

ा=तू ने । ५-१००

तो=(तव) तुम्हारे । ५-१७६

तौलो=तौल ला । ५-६८

त्रपा=लज्जा । १०-४०

त्रिजयो=तीन जगण और यगण । ५-१५६

त्रिवली=पेट में पड़नेवाली तीन परतें । १२-१०६

त्रिभगी=तीन स्थानों से टेढे होनेवाले (श्रीकृष्णलाल), छ्दनाम । ७-२८, १५-६

त्रिय=स्त्री, नायिका । ५-१३८

त्रैलोक्य-अवनीप=तीनों लोकों के राजा । ५-७३

थकित=मुग्ध । ५-४८

थपो=रखा । १४-२

थरि देहु=रेला दो, जमा दो । ४-६

थरो=फैलाओ । ३-१

थल अभय=निर्भय स्थान । १-३

थानथित=स्थान पर स्थित (बैठा) । ७-३६

थाल्हो=थाला, वह गड्ढा जिसके भीतर पौधा लगाया जाता है । ५-१६४

थिति=स्थिति । ५-१४५

थिरकाए=नचाते हुए । ५-१६०

थुलिका=स्थूल, मोटा । ५-१३१

दट=चार । ५-२३२

दडकलोग=दडकारण्य के लोग, 'दटकना' छ्दनाम । ७-२७

दडार्ध=आधे दड में, थोड़े समय में । १२-३७

दधि सारवती=दधिसार (नवनीत,

मस्गन) वाली, 'सारवती' छंदनाम । ५–११०
दनुज-दमनकरी=दानवों का दमन करनेवाली, 'दमनक' छंदनाम । ५–८६
दमकै=चमकती है । ५–१७८
दयाल करता=दयालु और कर्ता । १२–५७
दरियाउ=समुद्र । ६–३८
दर्भजाल=कुश का समूह । ५–१५
दल=चरण । ८–३
दल=पत्ता, सेना । ११–६
दह=(ह्रद) गहरे पानी का कुंड । ८–१५
दह दिसि=दसों दिशाओं में, सब ओर । ५–१११
दाँ=बार । १२–५७
दातार=देनेवाला । १२–६०
दान=द्रव्यादि का देना (दानवीर के लिए) । ५–६१
दाननारि=विष्णु । ५–३६
दामिनी=बिजली । ५-१७८, ६-१०
दायाल=दयालु । १०–२०
दास मानिकै=सेवक मानकर, ('दास' छाप भी है) 'समानिका' छंदनाम । १०–३०
दिगईस=(दिगीश) दिशाओं के स्वामी, छंदनाम । ५–६७
दिगपाल=दिशाओं के पालक, छंद-नाम । ६–२५
दिढ=दृढ । १३–१३
दिनमनि=सूर्य । ५–१४८
दिवि=आकाश । ७–८४
दीप=दस मात्रा का एक छंद । ५–१७२
दीप=दीपक, दीया, छंदनाम । ५–७३
दीप की जोति=दीपक की ज्योति, दीये का प्रकाश, दीपकी' छंदनाम । ५–१७१
दीपमाला=दीपों की माला, छंदनाम । ६–५
दीसी=दिखाई पड़ी । ५–१६६
दीह=दीर्घ, बड़ा । ५–५१
दुसक्दनै=दुस को मारनेवाले को । १२–८२
दुसगज=दुस का समूह । १०–५२
दुगति=दो गति (सात मात्राओं का शुभगति छंद) । ५–११४
दुचिताई=व्यग्रता । ५–१६५
दुज=(द्विज) चार लघु (IIII । ५–६२
दुज जामिनी अपवाद=यदि ब्राह्मण को रात्रि में अपवाद (झूठा आरोप) लगे तो । ५–६३
दुमदर=दो (दु) पर्वत (मदर) छंदनाम । १०–२८
दुमत्त=दो मात्राएँ । २ १
दुरदगति=(द्विरदगति) हाथी की चाल । ६–१०
दुरदगमनि=(द्विरदगामिनी) गज-गामिनी । ५–६८
दुर्मिल=दुर्लभ, छंदनाम । ७–२६
दृढपदु=दृढ चरन (पद), 'दृढपद' छंदनाम । ५–१६६

दै=देकर । ५-२०

दैतकदनै=दैत्य के संहारकर्ता । १२-१०५

दोरादोरी=दौड़ादौड़ी । ५-२०३

दोषकर=(दोषाकर) रात्रि करने-वाला, दोषोंका आकर (खानि) । ५-१७०

दोहरो=दुहरा, 'दोहरा' छंदनाम । ७-६

दोही=केवल दो, छंदनाम । ७-८

द्यौस गवावई=दिन गँवाता है, दिन बिताता है, समय काटता है । ५-१८१

द्यौसो=दिन । ५-१६०

द्रुत पाउ=शीघ्र पावँ (रखो), 'द्रुत-पाद' छंदनाम । ५-१५४

द्रुत मध्य कलिंदी=शीघ्र यमुना के बीच, 'द्रुतमध्यक' छंदनाम । १३-१५

द्रोहारिनी=द्रोह को हरनेवाली, 'द्रोहारिणी' छंदनाम । १२-७७

द्विज, द्विजवर=चार लघु (।।।।) । ५-६६, ४६

धन्वी=धनुर्धर । ५-२४१

धर=धरा, पृथ्वी । ७-४४

धरनी=(धरणी) पृथ्वी । ५-१५

धरै=धारण करे, 'धरा' छंदनाम । १०-१६

धर्‌यौ=रखा हुआ । ५-७६

धवल=उज्ज्वल । ५-१२३

धवल=स्वच्छ, उज्ज्वल, छंदनाम । ५-१७६

धा=प्रकार । १२-२६

धाइ=(भागी) धाय । ७-६

धारि=धारो । ५-३६

धारि=(कोश=म्यान वाली) धार अर्थात् तलवार, छंदनाम । ५-३६

धीर=धैर्य । ५-११

धुज, धुजा=लघु-गुरु (।ऽ) । ५-१२०, १२४

धुनिधुनि सिर=सिर पीटपीटकर । ७-४२

धृत=धारण किया हुआ, (अचल) धृत छंदनाम । ५-१५६

धौं=न जाने । ११-१०

ध्रुवहु=निश्चित भी, 'ध्रुवा' छंदनाम । ७-१५

नद=गुरु-लघु (ऽ।) । ५-६६

नद=ननद, छंदनाम । १०-१८

नकिम=नाक । ५-१६२

नगधर=गिरिधारी, श्रीकृष्ण । १-५

नच्चै=नाचती है । ५-१३५

नदरूप=बड़ी नदी के रूप में । ५-२२१

नदो=बड़ी नदी । ५-२२१

नदो वै=वे नद, 'दोवै' छंदनाम । ५-२२१

नभजया=नगण भगण जगण यगण, नभ को विजित करनेवाली (रेणु) । ५-१३२

नभजरीहि=नगण भगण जगण रगण ही, आकाशवेलि (नभजरी) को । ५-१३३

नयनय=नगण-यगण नगण-यगण।
५-१३०
नरसिर=नरमुंड। ७-४१
नराच=बाण, छंदनाम। १०-३८
नराचिका=छोटा बाण, छंदनाम।
५-१००
नराचु=नाराच (बाण)। १०-३८
नरिंद=नरेश, छंदनाम। ५-१६
नरिंदकुमारी=(नरेंद्रकुमारी) राजकुमारी, 'नरिंद' छंदनाम। ५-२२०
नलघरनि=राजा नल की स्त्री दमयंती।
१२-७३
नवमालिनी=नई मालिन, छंदनाम।
५-१४३
नवैं=नवमी। १५-१६
नष्टोद्दिष्टनि=छंदःशास्त्र गत नष्ट और उद्दिष्ट नाम के प्रत्यय। १-३
नसान्यो=बिगड़ा, नष्ट हुआ।
५-२१६
नांदीमुखी श्राद्ध=वह आभ्युदयिक श्राद्ध जो पुत्रजन्मादि मांगलिक अवसरों पर किया जाता है, 'नांदीमुखी' छंदनाम। ६-१२
नाथ=गूँथे हुए। ११-१६
नाराच=बाण, छंदनाम। १२-८५
नारे=बड़े नाले। ५-२२१
नाहक=व्यर्थ। ५-५३
नि=निश्चय। ६-४
निअर=निकट, पास। ५-१३६
निज=निश्चय ही। ५-१८८
निज अरि=नगण जगण जगण रगण, अपनी जड़। ५-१३३
निजभय=नगण जगण भगण यगण, अपडर, अपना भय। ५-१३१
निजु=निश्चय। ५-१३१
निदरैं=निरादर करती हैं। ७-३१
निबेरि=तै करो, समझो। ६-१६
निमि=निमेष, पलक। ८-१५
निरमाया=निर्माण किया, 'माया' छंदनाम। ५-१६५
निरसक=बेखटक, निर्भय। ३-१२
निरसंचय=सारा संचय, सर्वस्व।
७-२६
निसा-रंग=रात्रि में आनंदोत्सव, 'सारंग' छंदनाम। १०-४३
निसि=(निशि) रात छंदनाम।
५-४६
निसि पा लगत-रात का पाँव पड़ने से, 'निशिपाल' छंदनाम। ५-१८०
निसिमुख=गोधूलि, संध्या। ५-२१६
निहननी=संहार करनेवाली।
१२-११३
निहारि=देखो, समझो। ५-५६
नींदै=निंदा करे। १२-१०१
नीके=भले। ५-६७
नीबी=फुफुँदी। ५-२४३
नीरसु=नीरस, रसत्याग। ५-१२५
नीरे=निकट। ५-१३५
नील=नीली, छंदनाम। १०-५५
नूत=नवीन। ९-६
नेरो=निकट। ६-३
नेसुक=थोड़ा। ५-२०४
नेहा=(स्नेह) प्रीति। ५-१६४
नै=नदी। ६-२

नैनि=नेत्र वाली । ५-११
नोयो=नगण यगण । ५-१२०
न्हानधसी=(पानी में) नहाने पैठी । ५-७६
न्हैयें=स्नान करते हो । ५-१६६
पकअवलि=कीचड़ का समूह, छंद-नाम । ५-१५५
पचार=पंचाल, छदनाम । ५-१६
पचाल=(पचाली) एक गीत, छद-नाम । ५-२३
पती=पत्ति । ३-२
पक्रा=पंच मात्राएँ । ५-४
पच्छ=पक्ष । ५-१६१
पच्छिराजा=गरुड़ । १०-४१
पगनो=पगना, लीन होना । ५-१३२
पटओट=वस्त्र का परदा । ५-१६३
पटतर=समता । ५-२१०
पटुता=कौशल, निपुणता । १-३
पढम=प्रथम, पहले । ३-२
पतिया=पत्री, चिट्ठी । ५-८७
पत्र=पत्ता, तीर या पुल । ११-६
पथार=प्रस्तार । १०-१५
पथारनि=(प्रस्तार) प्रस्तार आदि प्रत्यय । १-८
पथारु=प्रस्तार । ४-२
पधरिय=पाँव धरती है, जाती है छंद नाम । ५-१५८
पद्मावति=पद्मिनी, 'पद्मावती' छंदनाम । ७-२५
पद्मो=हाथी । १२-२२
पनारे=(प्रणाली) छोटे नाले । ५-२२१
पनु=(पन) प्रण, प्रतिज्ञा । ६-१४
पन्नगीकुमार=सर्पिणी का बचा । १०-३१
पपिहौ=पपीहा भी । ५-१७५
पबि=वज्र । ६-८
पय=पद, चरण । ८-११
पयनिधि=क्षीरसागर । ५-१२३
पयोधै=पयोधि ही, समुद्र ही । १२-१०१
पर=में । १-५
पर=परायण । १-३
परकार=प्रकार, भेद । ४-१
परजक=(पर्यंक) शय्या । ६-४६
परनि=प्रतिज्ञा, टेक । १६-१११
पर-भूमिहि=दूसरे के स्थान पर । ५-१०९
पराजय=हार । ५-१४२
परिंद=पक्षी । ५-१६
परिट्ठवेहु=परिस्थापय, रखो, लिखो । ३-२
परितच्छ=प्रत्यक्ष । १०-८
परुष=कठोर । ५-१५६
परेवा=कबूतर । १०-२३
पलान लाद=व्यवसाय करता है । ५-२३०
पवगम=वायु के साथ चलनेवाली; छंदनाम । ५-१८४
पहँ=पास । ११-६
पहुँची=कलाई में पहनने का आभूषण । ११-१६
पाँसुरी=पसली । १३-३
पाँवरिया=पैतियाँ । ११-१२

पाइ=पाय, पायँ । ७-६
पाइत्ता=पाता; छंदनाम । ५-१०८
पागत=पगता है, अनुरक्त होता है । ५-२०७
पाग्यो=अनुरक्त । ५-२३७
पाटला=गुलाम (हुड्डी) । १२-८१
पाटीर=चंदन । ६-६
पाटीरी=चंदन की । ५-२०४
पानि=(पाणि) हाथ । ५-१६६
पाय=पाकर अथवा पैर (पड़कर) १०-३१
पाया=पाद, चरण । ८-६
पास=(पाश) रस्सी । ५-११७, १२-३५
पासधरं=पाशधर, पाश या फंदा लिए रहनेवाले । १-१
पासो=पास में । ५-१०८
पाहि=रक्षा करो । ५-१०२
पिका=(पिक) कोयल । ५-११३
पिय=प्रिय । ५-७०
पिय=दो लघु (।।) । ५-१३२
पियारी=प्यारी । ५-६०
पी=प्रिय । १२-६
पीन=स्थूल । ११-५
पीन-पयोधर-भारवती=ऊँचे स्तनों के भार वाली । ५-११०
पीम=प्रिय (दो लघु) मगण । ५-२३२
पीरिय=पीली । ११-१२
पीरो=पीला । ५-८२
पुट=दोना, छंदनाम । १२-३१
पुतरी=पुतली । ५-८५
पुत्ता=पुत्र । ५-५२
पुरुषारुद्धनी=(पुरुषार्थ+उद्धत), 'रथोद्धता' छंदनाम । ५-१५३
पुष्पति अग्ग=जे पुष्प (अंगुली के अग्रभाग से छूते पर) 'पुष्पतिअग्ग' (पुष्पिताग्रा) छंदनाम । १३-२
पूतरी=(पुत्तलिका) पुतली । ६-१७
पूर्वजुअलंक=पूर्वयुगल अंक । ३-८
पूर्वजुगल=पहले की दो संख्याएँ । ३-५
पृथ्वी=भूमि; छंदनाम । १२-६७
पेँच=(पेच) चक्कर, उलझन । ५-१६६
पेलनि=झगड़ा, बखेड़ा । ८-२४
पै सुथित=निश्चय ही अच्छी तरह स्थित,'पयस्थित'छंदनाम । १२-१४
पैसुन्य=(पैशुन्य , दुष्टता । ६-४०
पोखर=(पुष्कर) तालाब । ५-५१
प्रचित=सावधानी से, छंदनाम । १५-२
प्रति=से । ५-१७८
प्रथम=सबसे पहले । १-३
प्रवरललिता=श्रेष्ठ ललिता (राधाजी की सखी), छंदनाम । १२-६३
प्रभजन=वायु, तोड़फोड़ । ११-६
प्रभद्र=अत्यंत शिष्ट,'प्रभद्रक'छंदनाम । १२-५७
प्रभा=आभा, प्रकाश, छंदनाम । १२-२७
प्रभावती=प्रभावाली, छंदनाम । १२-४७

प्रमदा=सुंदर नारी । १२-३५
प्रमिताक्षर=थोड़े अक्षर, छंदनाम । १२-२०
प्रस्तार=छंदशास्त्र का एक प्रत्यय जिससे छंदों के रूप और भेद जाने जाते हैं । १-३
प्रहरन कलि=कलियुग को हरण करने वाला । ५-१४६
प्रहर्षिनी=अत्यंत हर्षित 'प्रहर्षिणी' छंदनाम । १२-३७
प्रानप्रिया=प्राणों को प्यारा(नायिका), छंदनाम । ६-१८
प्रियम्वदा=मृदुभाषिणी, छंदनाम । ५-१५२
प्रिया=प्रेयसी, नायिका छंदनाम । ५-२१
प्रीमा=प्रिय और मगण (।।ऽऽऽ) । ५-२१२
फंद=युक्ति, ढंग, बहाना । १०-६
फनिंद=भारी सर्प (कालिय) । १३-१५
फनिंदी=नागिन । १३-१५
फनिंद्दस=(फणीश) पिंगलाचार्य जो शेष के अवतार थे । ५-६५
फबै=शोभित होता है । १५-३
फलगना=उछाल, छलांग । ५-२१०
फालैं=डग की, फलांग की । १२-१०१
फुल्लदामै=फूल की माला 'फुल्लदाम' छंदनाम । १२-६५
बंक=टेढ़ा (ऽ) । २-१
बंद=बंध, रचना । ५-७
बंद बंद=जोड़ जोड़ । ६-८१
बंधूकी=दुपहरी नामक फूल (पैर की ललाई) । १२-८१
बना=वर्ण, अक्षर । १२-८
बंस=समूह । ६-२
बंसपत्र=बाँस का पत्ता छंदनाम । ५-१६९
बंसस्थ बिलोकि=बाँस पर चढ़ी देखकर, 'वंशस्थबिल' छंदनाम । १२-२२
बंसाचरा=वंशमर्यादा, (वंश की) मर्यादा, कुलकानि । ११-८
बकबस=बगुल का परिवार । ६-१४
बकसत=देते हैं । ५-२३८
बक्त्राभोजप्रफुल्ल=मुखकमल खिला हुआ । १२-८९
बक्षोपरि=(वक्ष+उपरि) छाती के ऊपर । ५-१२२
बगारन दे=फैलाने दे । १०-४२
बदन=मुँह । ५-५८
बदि=बदी (कृष्णपक्ष) । १५-१६
बधु=अधिक । ५-६
बनक=वेश, भेस । ५-१४५
बनमाली=श्रीकृष्ण 'माली' छंद-नाम । ५-१६५
बनलती=वन की लता । ५-५४
बनीनी=बनिए की स्त्री छंदनाम । ६-३
बपु=शरीर । ५-११३
बरन=वर्ण, रंग । ५-१२
बरन=(वर्ण) अक्षर । १०-६

बरनि जा=जिसका वर्ण (रंग)। ५-२२

बरन=(वर्ण) अक्षर। १-८

बरह=मोरपंख। १५-९

बरहि=बर्ही, मयूर। १५-९

बरु=बल। ५-२४

वर्त्म=मार्ग, पथ; 'चंद्रवर्त्म' छंदनाम। ५-१५०

बलाहक=बादल, मेघ, बलशाली। ५-५३

बलि=बलिहारी जाती हूँ। ५-१५०

बसंत तिल कानन=थोड़ा बसंत के आने पर वन देखो, 'वसंततिलका' छंदनाम। १२-४८

बसन=वस्त्र। ९-३, ५-१७९

बसुबास=निवास। ६-१४

बसुमती=(वसुमती) पृथ्वी, छंदनाम। ५-६१

बहराई=देखी अनदेखी की। ५-१४३

बाँकइ=टेढ़ा होता है। १२-५७

बाँच=बाँचो, पढ़ो। ५-६३

बाँचो पैआ (लागे)=(श्रीरामचंद्र जी के) पैरों लगने से बचा (अपनी रक्षा की), 'चौपैया' छंदनाम। ७-२२

बाँटो=बखरा। ५-६६

बा=बार। ११-८

बाइ बयन=वायु के झकोर से अट-बट बोलती है। १-१५५

बागत=घूमता है। ५-२००

बाच्यो=बचा, बच सका। ५-१०६

बाज नहि आयउ=बाज न आया, न छोड़ा, न माना। ५-१७३

बाचा=वाणी। ५-१६५

वातोर्मी=हवा (वात) की लहर (ऊर्मि), छंदनाम। १२-७

बादि=व्यर्थ ही। ११-८

बानिनी=बनिये की स्त्री, छंदनाम। ५-१६१

बानी=सरस्वती। १२-२

बाम=बामा, स्त्री, नायिका। ६-४

बाम-सोभ-सरसी=स्त्री की शोभा रूपी सरोवरी। ५-१६६

बारक=एक बार। १०-५२

बारदारा=वेश्या। १०-५८

बारनि=बालों की। ६-६

बाल=बाला, नायिका। ५-७०

बाला=नायिका (गोपी), छंदनाम। ५-१६१

बाला=ऊँची। ९-५

बासंती=माधवी लता, छंदनाम। ५-२०३

बास=सुगंध। ९-३

बास=वस्त्र। ९-६

बासर=दिन। ५-५१

बाहा=बहना। ५-१८९

बाहहि=बहने दो, बाण चला दो। २-२

बाहिर=बाहर। ३-१३

बिंब=बिंबा फल, छंदनाम। ५-६२

बिंबो=कुँदरू (लाल अधर)। १२-८१

बिघन=विघ्न, बाधा। १-२

बिचित्रा=विलक्षण, 'चित्रा' छंद-नाम । १२-५६
बिजय=जीत, 'विजया' छंदनाम । ६-६
बिडारहु=तितर-बितर कर दो, भगा दो । १०-५३
बित=धन । ८-२४
बित्थ=वित्त । १-५
बिथा=(व्यथा) पीड़ा । ५-४०
बिद्याधारी=विद्या को धारण करनेवाला, विद्वान्, छंदनाम । ५-२०६
बिद्युन्माला=बिजली की पंक्ति, छंद-नाम । ५-१३५
बिद्रुम=मूँगा । ५-२००
बिधना=ब्रह्मा । १२-१२
बिधि=रीति, ढंग । ५-६६, ६-४१
बिधि-घरनि=ब्रह्मा की स्त्री, सरस्वती । ५-१७६
बिधुबदन=चंद्रमुख । ५-७०
बिनतासुत=गरुड़ । १-३
बिन हरहासिल=बिना लाभ के । ५-२३०
बिपिनतिलकै=वन में श्रेष्ठ ही, 'विपिन-तिलक' छंदनाम । ५-१७८
बिपुल=अनेक, बहुत । ५-१७५
बिप्र=चार लघु (।।।।) ब्राह्मण । ५-१७२
बिबि=(द्वि) दो । १-३
बिबि गिरि=दो पर्वत (स्तन) । ५-१८१
बिभावरी=रात्रि । ७-८
बिय=दो । २-८, ५-१४५
बिय चक्र नितंब=नितंबरूपी दोनों चक्र, 'अपर (बिय) चक्र' छंदनाम । १३-११
बिरति=वैराग्य । ७-११
बिरति=विश्राम (चरण के मध्य का) । ६-७
बिरतिउ लाल=विरक्ति भी (श्रीकृष्ण) लाल के, 'उलाल' (उल्लाला) छंदनाम । ७-११
बिरतिहिं=वृत्ति को । ८-१३
बिरद=बाना, यश । ५-१८६
बिरमत=विश्राम करता है । १२-११४
बिषधर धर=विषैले सर्पों को धारण करनेवाले, शिव । ५-८८
बिष्नुपद=विष्णु के चरण, छंदनाम । ५-२१४
बिष्नुरथ=विष्णुरथ, गरुड़ । १-४
बिसासिनि=विश्वासघातिनी । ६-४६
बिसु=विष । ६-३०
बिस्तरती=विस्तार करती । ५-१३८
बिस्वरूप=सर्वरूप । ५-३६
बिहूनियाँ=(विहीन) रहित भी । १२-७६
बींधै=बिद्ध हो, छिद जाए । ५-६४
बीर=सखी । ११-८
बीर बिचक्षण=वीरश्रेष्ठ । १-१
बुलाक=नाक में का एक गहना जो मोती का होता है । ५-१६२

बुद्धि=समझ, छंदनाम । ५-२५
बुध्यौ=बुद्धि भी । ५-२३४
बृष=भेड़िया । १२-६५
बृच=(वृत्ति) छंदसंख्या । ५-२६, ७४
बृच=गोल (चिबुक) । ७-३६
बृत्ति=छंदसंख्या, सूची, श्रंक । ५-५
बेंदा=टीका, माथे पर का एक गहना । ७-६
बेगवती=वेगवाली; छंदनाम । १३-
बेध्यौ=बेध्य, लक्ष्य, निशाना । १४-८
बेताली=वैताली, शिरगण । ५-३०
बेधे=बेधने में । १४-८
बेनीनिगलिता=खुली हुई वेणीवाली । १२-८६
बेनु=(वेणु) वंशी । १०-५६
बेली=बेलि, लता । ५-१६४
बेसर=छोटी नथ । ६-६
बैठक=आसन । ६-१४
बैसनो=वैष्णव (नारद) । १०-४१
ब्यूह=समूह । १२-५५
ब्यौंत=उपाय । ५-१५०
ब्यौंत=उपाय । १०-५६
ब्रजअधिप=ब्रज के स्वामी, श्रीकृष्ण । ८-१७
ब्रजचदु मिलावहि=श्रीकृष्ण से मिला दे, 'दुमिला' छंदनाम । ११-६
ब्रह्मप्रिया=सरस्वती । ६-२१, २२, २३
ब्रह्मा=ब्रह्मा, छंदनाम । ५-२३४
ब्रीड़िर्हि=लज्जित हो । १२-६२
भजो=भंग करो, त्याग दो । ५-६४
भगरु=(भगर) इंद्रजाल । ५-१४७
भटारकदारक=(फौंटेदार) भटकटैया-वाली । १०-४२
भटै=भट (योधा) को । ११-६
भनि जोजल=भगण नगण जगण लघु, जो जल है वह (कीचड़ नमूर-पंक-श्रवलि) कहा जाएगा । ५-१३४
भद्र कहै=श्रेष्ठ कहता है, 'भद्रक' छंद-नाम । १२-१११
भभ=भगण भगण । ५-१३०
भरता=भरण-पोषण करनेवाला । ५-३८
भरि उसासों=लंबी साँस भरकर । ५-६५
भाँति=(भाति) छटा । ११-१२
भा=शोभा । ११-१४
भाइ=भाव, प्रकार । ५-५७
भाग=भाग्य । ५-१७०
भाग भारु=भारी भाग्य, अत्यंत भाग्य-शाली । ५-६६
भागु=भाग्य । ७-२७
भानहि=तोड़ दो, हटा दो । १२-१८
भानि=मिटाकर, नष्ट कर । ५-२६
भानी=तोड़ो । ५-२०५
भामरी=भ्रमर, भौंरा । १०-३१
भामिनी=स्त्री, नायिका । ६-१०
भाय=भार (दर) । ६-३
भाय=(भाव) मोल, चेष्टा । ५-१६१
भारती=सरस्वती । ६-६
भाराक्रांता=भार से आक्रांत, बोझ से दबी, छंदनाम । १९-७६

भावती=भानेवाली (नायिका)। ६-३२

भास गहु=भगण, सगण गुरु (से 'गुग') भी (होता है)। ५-६३

भीजै=(रात भीजना=अधिक रात हो जाना) रात अधिक होती जा रही है। ७-६

भीर=आपत्ति। ५-२४

भुक्त=भुक्ति, लौकिक सुखभोग। ५-१५३

भुजगविजृंभितो=सर्प का फला फन, 'भुजगविजृंभित' छंदनाम। १२-११५

भुजगी=सर्पिणी (वेणी), छंदनाम। ६-६

भुजगे=साँप द्वारा, 'भुजंग' छंदनाम। ११-७

भुजगो प्रयातो=सर्प चला गया, 'भुजगप्रयात' छंदनाम। १०-४०

भुरजनित=पृथ्वी से उत्पन्न। ५-२२७

भूपरयौ=पृथ्वी पर पड़ा हुआ, 'भूप' छंदनाम। ६-२२

भूरि=बहुत। ७-६१

भूलो=भ्रमित, भूला हुआ। ५-१४१

भूषनमृगलछन=चंद्रभूषण। १-१

भेद=रहस्य, छंदनाम। १५-१४

भेरी=नगाड़ा। ५-२२६

भौंर=भौंरा। ११-४

भो=हुआ। ११-७

भोगहि=भगण गुरु ही। ५-२३२

भोगीपति=सर्पराज, शेषनाग। १२-२८

भोगीराजा=(भोगी=सर्प+राजा) सर्पराज। ५-२३६

भोभासोमो=भगण भगण सगण मगण; मुझे (मो) चंद्र-छटा (सोम-भा)। ५-१७२

भोर=प्रातःकाल। ५-७०

भोरन=भगण रगण नगण, रगण हुआ। ५-१७२

भौन=भवन। ११-१०

भ्रमर विलसिता=भौंरों से विलसित (घिरी), छंदनाम। ५-१३८

भ्रमरयुक्ता=भौंरों से युक्त, 'युक्ता' छंदनाम। ५-८५

भ्रमरावलि=भौंरों की पंक्ति, छंदनाम। १०-५३

भ्रुवजुग=भ्रू युगल, दोनों भौंहें। १५-६

मजरि=(मजरी) बौर, 'मजरी' छंदनाम। ११-१६

मजीरा=(मजीर) एक बाजा, ताल, 'मजीर' छंदनाम। ५-२३५

मजुभाषिनी=सुंदरभाषिणी, छंदनाम। १२-४३

मडि=मडित करके, मिलाकर। १-६

मडिकै=छाकर, करके। ५-२००

मत=मत्र, रहस्य। ५-११४

मथानु=मथानी। १०-२६

मदभाषिनी=कम बोलनेवाली, 'मदभाषिणी' छंदनाम। १२-४५

मदर=पहाड़ (ल्यावत=लाते हैं); छंदनाम। ५-१७

मंदाकिनी=गंगा। १२-२७

मदाक्रांता=मद और पराजित, छंदनाम । १२–७३
मचै=फैलाए । ४–२
मच्छ=मत्स्य । ६–८
मटक=नखरे से चलने का भाव । ६–४५
मत्त=मात्रा । १–८
मत्तगयदगती=मतवाले हाथी की चाल (सी चालवाली) 'मत्तगयद' छंदनाम । १२–५
मत्तप्रस्तार=मात्राप्रस्तार । ३–१
मत्तमयूरो=मतवाला मोर, 'मत्तमयूर' छंदनाम । ५–१६६
मत्तमातंगलीला करै=मतवाला हाथी क्रीड़ा करे 'मत्तमातंगलीलाकर' छंदनाम । १५–११
मत्ता=मात्रा । ५–५६
मत्ता=मत्त, मतवाले, छंदनाम । ५–१३६
मत्ताक्रीड़ा=मतवाला (मत्ता) खेल (क्रीड़ा), छंदनाम । ५–२३८
मदनकरन=कामोद्दीपक 'मदनक' छंदनाम । ५–४२
मदधारी=मद को धारण करनेवाला । ५–२२०
मदन-सर=काम का वाण । ८–१५
मदमदन हरै=कामदेव का गर्व हरण करता है 'मदनहरा' छंद नाम । ७–३१
मद लेखा=(मैंने) मद समझा, 'मदलेखा' छंदनाम । ५–८३
मदिरा=मादक पेय, छंदनाम । ११–३
मधु=वसंत, छंदनाम । ५–६
मधु=वसंत । ११–१४
मधुकर=भौंरा (उद्धव) । ५–१४१
मधुभार=मधु (मकरंद, पुष्परस) का भार, छंदनाम । ५–५७
मधुमती=मादक छंदनाम । ५–५४
मधुरिपु=मधु दैत्य के शत्रु । ६–८
मध्या=वह नायिका जिसमें लज्जा और काम समान हों, छंदनाम । ५–६६
मनमत्थ=मन्मथ, कामदेव । ५–११७
मनमथ=(मन्मथ) कामदेव । ५–४१
मन-मोटन=मन रूपी मोटों (गठरियों) 'मोटनक' छंदनाम । १०–५६
मन ली हेरि=(मन लेन) मोह लिया, वश में कर लिया । १–३
मन हंस=हंस के मन में 'मनहंस' छंदनाम । ५–१८५
मनि बाँध्यो=मणि को बाँध लिया है, 'मणिबंध' छंदनाम । ५–१०६
मनिमाला=मणि की माला, 'मणिमाला' छंदनाम । १२–२६
मनी=मणि (लाल और काली) । १२–२७
मनोभव=कामदेव । १०–५१
मनोरमा=मानो लक्ष्मी छंदनाम । ५–११२
मयूरपख=मोर के पख (का मुकुट) । ५–१६०
मरकत=नीलम । ८–१७

मरहट्टवधू=मरहठिन, 'मरहट्टा' छंदनाम । ५-२०३
मरू करि=कठिनाई से । ११-११
मर्कट=बंदर । ७-४२
मल्लिका=बेला, छदनाम । १०-३४
महरि=आर्या, यशोदा । ७-४४
महर्घ=महँगा, महार्घ; छदनाम । ५-१०१
महारी=(महा=अत्यंत, री=अरी , 'हारी' छदनाम । ५-८०
महालक्ष्मीरत=अति धनाढ्य, 'महालक्ष्मी' छदनाम । ५-१२६
महि=मध्य में । ५-१८
महिग्राँ=में । १२-१०३
मही=पृथ्वी, छदनाम । ५-१०
मही=छाछ, मट्ठा । १०-१६
महेंद्री=इंद्राणी । १५-२
माघोनी=इंद्राणी । १२-७३
माधवि=माधवी लता, 'माधवी' छदनाम । ११-१४
मान=रूठना (नायिकादि का), प्रतिज्ञा । ११-६
मानव को कीड़ करे=मानवोचित क्रीड़ा करता है 'मानवक्रीड़ा' छदनाम । ५-३१
मानस=मन, मानसरोवर । १०-२८
मानिनि=मान करनेवाली, 'मानिनी' छदनाम । ११-६
मानु=मान, रूठना । ५-६०
मानुष्य=मनुष्य द्वारा निर्मित । ५-७८
मालति=मालती पुष्प 'मालती' छद नाम । १०-२७
मालतियौ=मालती लता भी, 'मा छंदनाम । ११-१५
मालती=लता विशेष, छदन ५-१५१
मालती की माला=मालती (ए की माला, 'मालतीमाला' छदन ५-१८६
मालिनी=मालिन, छदनाम । १२
माहिर=कुशल । ११-१५
मित्त=हे मित्र । ५-७४
मिथ्यावादन=झूठ बोलना । ५-
मिलिंद-जाल=भौंरों का स १०-३६
मीचु=मृत्यु । १०-३५
मीचौ=मृत्यु भी । ५-१०६
मुडमाला धरे=मुंडों की माला किए हुए, 'मालाधर' छंदन १२-६६
मुकुतमाला=मुक्ता की माला, 'म छदनाम । ८-१७
मुक्तअवलि=(मुक्त=मोती, अ पंक्ति) मोतियों का हार । ५-
मुक्तद्युति=मोती की चमक । ५-
मुक्तहरा=मोती का हार, छदन ११-११
मुखाग्र=मुखाग्र । ६-३७
मुधा=व्यर्थ, व्यर्थ । १०-५५
मुनि=ऋषि सात । १२-१०४
मुद्रा=अंग की विशेष स्थिति, नाम । ५-३४
मुहचगी=मुँह से बजाने का एक मुरचग । १५-८

मूर=(मूल) अरान में। ५-६४
मूरै=मूल लेता है, चुरा लेता है।
१०-५६
मृगपति=सिंह। १२-६५
मृगशावकनयनी=मृगछौने के नेत्रों के से नेत्र वाली। ११-८
मृडानी=पार्वती। १५-२
मेचला=करधना। ७-६
मेघग्रोघ=बादलों का समूह। १०-३५
मेघविस्फूर्जिता=बादल का गर्जन भी, छंदनाम। १२-६७
मेधा=बुद्धि। १२-७७
मेरुशिखर=पर्वत की चोटी। ५-६७
मैनगर्वहर मुखवर्णं=सौंदर्य में कामदेव का गर्व हरण करनेवाले मुँह का, 'हरमुख' छंदनाम। ५-८६
मोतियदाम=मोती की माला 'मोतीदाम' छंदनाम। १०-४४
मोदक=लड्डू, छंदनाम। १०-५५
मोरै=मार हा, मयूर ही। ८-२५
मोहनी=मोह लेनेवाली, छंदनाम।
५-३४
म्रीदंगी=मृदंग बाजा। ५-२२६
यह=यही। ११-१२
यम=एव। ५-१२४
यकाता=एकांत। १२-६६
यामै=इसमें। ५-१४
रंक=दरिद्र। ५-१००
रइ=अनुरक्त हुई। १२-३
रगना=रगण। ५-१८३
रघुनायक=राम 'नायक' छंदनाम।
५-३६
रघुवीर=रामचन्द्र, 'वीर' छंदनाम।
५-२४
रडु=नीच पामर, छंदनाम। ८-२४
रजत=चाँदी। ४-११३
रजा=राजा। १२-७४
रति लेगो=प्रेम (रति) समझो (लेगो, रतिलेगा छंदनाम।
५-१६८
रती=रत्ती, थोड़ा। ५-१५१
रक्त=लाल (अधर)। ७-२६
रक्त-रत, अनुरक्त। १५-११
रत्ता=रक्त, लाल। ५-१३६
रथुद्धतौ=रथ से उड़ाई हुई। ५-१२३
रनभासन=रगण नगण भगण सगण, रण का संकेत। ५-१३२
रवि=सूर्य बारह। ५-६५, ८-३
रमना=स्त्री। ५-१५
रमनो=रमणीय, छंदनाम। ५-१५
रमावै=लाना करे, आनंदित करे।
५-८८
रयनि=(रजनी) रात। ५-१५८
रटै=रटे, जप। ५-११५
रस=षट् रस छह। १२-१०४
रस मीजिए=आनंद लीजिए। ३-७
रसाकर=रस की खानि। १२-११०
रसाल=रसीला, मधुर। १०-३२,
१२-६२
रसिक=रसवत्ता, छंदनाम। ८-१३
रागी=अनुरागी, प्रेमी। ५-६४
राजी=पंक्ति। १४-७
राजै=शोभित होता है। ५-६७,
२३६

रात=रक्त, लाल । ११–१२, १७
राती=लाल । ५–१३८
रात्यो=रात । ५–१६०
राधहि=राधा को । ५–६५
रिक्ष=भालू । ७–४२
रिपु=शत्रु । २–२५
रीते परपा=खाली पन्ने । ३–७
रुक्मवती=सोने की, छंदनाम । १२–३
रुचि=छटा । ५–२३६
रूप दरी= (रूप+दरी=मुख) रूपमुखीत्व । ५–२११
रूप=सौंदर्य । १२–१०६
रूप धन अक्षरी=दरी (सभी शरीर) बादलरूप और आँखें (बाण हैं) 'रूपघनाक्षरी' छंदनाम । १४–८
रूपसेनिका=रूप की सेना छंदनाम । १०–३२
रूपामाली=रूप (सौंदर्य) माली (है) छंदनाम । ५–१६४
रूरी=बढ़िया । ७–२७
रेखिए=लिखिए । ३–२८
रेखु=रेखो, लिखा, खींचा । २–६
रेनु=(रेणु) धूल । ५–१५२
रेनुरेल गहि है=रगण नगण रगण लघु गुरु ही है, धूल की अधिकता पाएगा । ५–२३३
रेलनि=रेला, प्रवाह, समूह, ढेर । ८–२५
रैनिराज=चंद्र । १२–४३
रोजनि=निषाद । १०–४५
रोजनि=प्रतिदिन । १०–४५
रोन भाग गहि=रगण नगण भगण गुरु गुरु ही, रमणीय भाग्य प्राप्त करो । ५–१३२
रोमराजी=रोमावलि । १४–७
रोमाटोना=रोम के छोर में । ५–२३४
लक=कमर । ५–२२०
लकुट=लकड़ी, लाठी । ५–१६५
लच्छियै=देखिए 'लक्षी' छंदनाम । ११–८
लक्ष्मी=विष्णुपत्नी छंदनाम । ५–१०१
लक्ष्मी धरे=लक्ष्मी को धारण किए हुए 'लक्ष्मीधर' छंदनाम । १०–४'
लखन=देखने । १२–६६
लग्गिय=लगा । ७–४२
लज्या=लज्जा । ५–६६
लटक=अंगों की मनोहर चेष्टा,लचक । ६–४५
लटेहूँ=दीन हीन होने पर भी । ५–५१
लड़ावती=लाड़-प्यारवाली । १४–५
लती=लता । ५–१५१
लमकारो=लघु तथा मगण । ६–२७
लमलम=लघु-मगण लघु मगण (।SSS।SSS) । ५–११४
लरिकई=लड़कपन । ५–१२२
लालन=लघु-लघु नगण लला, नायक । ५–१७७
ललिता=राधा की सखी, छंदनाम । १२–३२

लवढी=लिपटी । ८-१७
लवन्या=लावण्य, लुनाई । १२-५५
लव लाउ=प्रेम कर । ६-३८
लसै=शोभित होती है । ५-१७६
लसै न=सुशोभित नहीं होता । १०-३५
लहुआ=लघु । ३-२
लागी=तक । १२-६१
लाजित=लज्जित । ११-१२
लाल जो हाथ मैं=नायक यदि मुट्ठी में है, 'जोहा' छुदनाम । १०-२४
लावति=लगाती है । ६-२७
लिपि=भाग्य की रेखा । ५-१६१
लीला=क्रीड़ा, खेल, छुदनाम । ५-७७, १-६६
लीलावती=लीलावाली छुदनाम । ६-४५
लेस=तनिक, थोड़ा । ५-१६३
लो=लघु । ५-१२०
लोभा=लोभ, लालच । १-६४
वहे=वही । १-६५
वाक्ति=वाक्य, वचन छुदनाम । ५-३७
वारतहि=न्यौछावर करती हुई । ५-८६
वारि वारि=न्यौछावर कर कर । ६-७
विष्नु=भगवान् विष्णु छुदनाम । ५-४१
विस्वदेवी=उन देवी 'विश्वदेवी' छुदनाम । १२-२५
वोढ़िकै=ओढ़कर, अगीकार कर । ६-१४
वोर=ओर, तरफ । ५-५८, १११
वोस=(अवश्याय) ओस । १५-७
वोहारिणी=(उद्घाटन) खोलनेवाली, बढानेवाली । १२-७६
श्री=लक्ष्मी, छुदनाम । ५-८
श्री=लक्ष्मी । ५-६४
श्रुति=वेद । ५-२७
षट्पद=भ्रमर, भौंरा, 'षट्पद' (छप्पै) छुदनाम । ७-३६
ससकर=विष्णु । ५-१८८
ससनारी=शश की मादा, छोटा शश 'शशनारी' छुदनाम । १०-२३
सँग=सगण और गुरु । ५-६३
सगर=युद्ध । ७-२६
सँघाती=साथी, सगी । ६-२६
सजुत=, सयुत) सहित 'सयुता' छुदनाम । ५-११५
सतरस=शातरस । ६-६
सतारि दै=पार कर दे, निकाल दे । २-२
सदोह=समूह, झुड । १२-७७
सपा=बिजली । २-५
सभुप्रिया=पार्वती । ६-२१, २२, २३
सभू=शिव, 'शभु' छुदनाम । ५-२३६
समोहा=मोह, ममता, माया, छुदनाम । ५-६४
सचावति=सचित करवाती है । ९-३४
सचीपति=इद्र । ७-४४
सचै=सचित करे । ४-२
सठ=(शठ) दुष्ट । ५-३८
सतै=सतीत्व का । १२-४१
सत्ति=सत्य । ७-२६

सदय=दयायुक्त । ५–८६
सन=से । ६–१०
समदविलासिनी=मदयुत विलास करनेवाली, छंदनाम । ५–१६३
समा=समान । ५–१०
समुद=समुद्र । ५–२२१
समुद्रिका=मुद्रिका (अँगूठी) सहित, छंदनाम । ५–११३
सर=शिर, ऊपर । ४–५
सर=सरोवर, तालाव । ५–७८
सर=बाण । ५–१७४
सर=पॅच । १२–११२
सरघनि=(सरघा) मधुमक्खियाँ । ५–१७१
सर नमैं=सिर झुकाए । १२–११२
सर लहित=सरोवर में लगा हुआ । ७–३६
सरवर=तालाव (नाभि) । ५–१८१
सरसति=बढती । १४–७
सरसी=सरोवरी, छंदनाम । १०–१०६
सरि=पंक्ति । ३–१८
सरि=समान, समता । ५–२३६, १२–१०६
सरिष्यु=सदृश, समान । ८–१६
सरिसा=सदृश, समान । ३–२
सरिसै=सदृश, समान, तुल्य । ३–२२
सरै=सपन्न हो । ५–३५
सरोजनयनी=कमलवत् नेत्रोंवाली । ५–१५२
सर्नु=शरण । १५–१४
सर्ववदनै=सभी मुखों से 'सर्ववदना' छंदनाम । १२–१०५
सर्वरी=(शर्वरी), रात्रि । १०–५४
सवाय=(शृंगार) सँवारो, सजाओ । ५–१६
सवैया=सवै या (यह सब), छंदनाम । ५–२३०
ससिधर=(शश+धर) चंद्रमा । ५–७१
ससी=शशि, छंदनाम । ५–२०
सहजउ=सहज ही । ५–२३७
सहि=सगण ही । ५–८१
साँचौबोल=सत्य बात, 'चौबोल' छंदनाम । ५–२२८
साँवरो इंदु=श्रीकृष्णचंद्र । १५–१६
साधत्वै=साधुता हो । १२–११५
सायक=बाण छंदनाम । ६–३०
सारगिय=सारंगी, छंदनाम । ५–८८
सारंगी=वाद्य विशेष छंदनाम । ५–२२६
सारस=(सार+अश) तत्त्वांश मक्खन । १०–२६
सारद=शरद ऋतु का । ७–३६
सारसपात=कमलपत्र । ११–१७
सारिका=मैना । ५–२१३
सारी=मैना । ५–२४०
सारु=सार तत्त्व छंदनाम । ५–११
सार्दूलविक्रीड़ितै=क्रीड़ा करते हुए सिंह, 'शार्दूलविक्रीड़ित', छंदनाम । १२–६३
सार्धललिता=ललिता सखी के साथ छंदनाम । १२–८६
सालिनी=सालनेवाली, पीड़ा करनेवाली छंदनाम । १२–५
साली=चुभी हुई, छंदनाम । १२ १६

सालूँग=लाल साड़ी; 'सालूर' छंद-नाम । ५-२३६
साहि=सगण ही, शाह (राजा) । ५-१७२
सिंजित=करधनी । ७-३४
सिंह , विलोकित=सिंह अवलोकित, 'सिंहविलोकित' छंदनाम । ७-३५
सिंहिनी=शेरनी, छंदनाम । ८-८
सिखरिनी=श्रेष्ठ नारी; 'शिखरिणी' छंदनाम । १२-७१
सिख्या=शिखा, ललाट, भाल, छंद-नाम । ५-१०६
सिगरे=सब, सभी । १२-६५
सित=श्वेत, उज्ज्वल । ६-६
सितलाई=शीतलता, ठंढक । ५-१४३
सितासित=उजली और काली । ११-१२
सिपाह=सिपाही । ५-१७४
सियरैहै=शीतल होगा । १०-५१
सिरान=(सिराना) समाप्त हो गया । ५-२३०
सिलीमुख=भौंरा, वाण । ११-६
सिष्यु=मीरो, 'शिष्या' छंदनाम । ८-१६
सिसिकिन=सी सी (सीत्कार) की ध्वनि । ७-३४
सीतकर=चंद्रमा । ६-६
सीतावरै=सीतापति (श्रीरामचंद्र) । १०-१६
सीते=शीत में, ठंडे में । १२-५६
सीरी=शीतल । १२-२६
सीरी=शीतल । १२-१०३
सीवा=सीमा । १०-२३
सीसहि सीस=केवल ऊपर । ३-८
सुंडादंड=सूँड़ । १-२
सुंडाल=हाथी । १२-६५
सुंदर=सौंदर्ययुक्त, छंदनाम । १२-१३
सुंदरि=(सुंदरी) सुंदर स्त्री; 'सुंदरी', छंदनाम । ५-२४३
सुंदरी=सुंदर स्त्री; छंदनाम । १२-१८
सु=से, मैं । ३-८
सुआतुंडै=सुग्गे का ठोर । १२-५५
सुकृति=पुण्यकर्म (से) । ५-६८
सुकेसि=सुंदर बालों वाली । ११-५
सुक्र=शुक्र । ५-२२८
सुक्षिप्र मानि कामिनी=हे कामिनी अति शीघ्र मान जाओ, 'प्रमाणिका' छंदनाम । १०-३७
सुखारी=सुखी, आनंदित । ५-६०
सु गंधावली=अच्छी गंध का समूह; 'गंधा' छंदनाम । १४-१
सुघर=चतुर । ६-५
सुठौनि=सुंदर मुद्रा (अदा) वाली । ११-१
सुत=पुत्र । ८-२४
सुदि=सुदी, शुक्ल पक्ष । ७-३०
सुदेस=सुंदर । १०-११
सुधा=अमृत, छंदनाम । १२-१०३
सुधाधर=चंद्रमा । १४-८
सुधाबुंदै=अमृत की बूँदें, 'सुधाबुंद' छंदनाम । १२-६१
सुधासार=अमृततत्त्व । १-२

सुद्द गावै=शुद्ध (गाना) गा; 'शुद्धगा' छंदनाम । ५-११६, ६-४२
सुविचित्र=अति विचित्र; 'चित्र' छंदनाम । ६-३
सुवृत्ती=(सुवृत्त+ई)सुंदर गोलाई वाले; सदाचारी; छंदनाम । ५-१०७
सुभगति=सद्गति, छंदनाम । ५-४४
सुभगीत=मंगलगान; 'शुभगीता' छंदनाम । ६-३३
सुमुखि=सुंदर मुखवाली । ५-१०७
सुमुखी=सुंदर मुखवाली; छंदनाम । ५-१११
सुरंग=लाल । १२-१०६
सुर=स्वर । ५-१६२
सुरत=रति । ७-३४
सुर तरुनि=देवी । ८-६
सुरति=ध्यान, स्मरण; 'रतिपद' छंदनाम । ५-७२
सुरनि=स्वरों से । ५-८८
सुरपतिसुत=इंद्र का पुत्र, जयंत । ७-२२
सुरभि=गंध । ५-५४
सुरसा=नागमाता जिसने समुद्र पार करते हनुमान् को रोका था; छंदनाम । १२-१०१
सुरूपमाला=स्वरूप की माला को; 'रूपमाला' छंदनाम । ६-३६
सुरूपी=स्वरूपी, छंदनाम । ५-११८
सुलगन जुत्ता=शुभ लग्नयुक्त । ५-५२
सुश्रोनि=सुंदर कमरवाली । ११-५
सुषमा=अति शोभा; छंदनाम । ५-१३७
सुसैनी=अच्छे संकेतों वाली । ११-५
सुसोभधर=अच्छी शोभा धारण करनेवाला । ७-३६
सू=सो । ५-१६०
सूची=तालिका, बतानेवाली । ३-२७
सून=शून्य । ३-२४
सूर=(शूर) वीर, बली; छंदनाम । ५-६४
सूरो=(शूर) बली, पराक्रमी । ५-१२६
सृंगीधारा=विषाण बजानेवाले, श्रीकृष्ण । ५-१३५
सेंति=बिना मूल्य के । ५-१६१
सेइकै=सेवा करके । १२-२५
सेत=श्वेत । ५-२४१
सेल=बरछी । १२-१६
सेवाइ=(सिवा) अतिरिक्त । १०-१५
सेवार=(शैवाल) पानी में होनेवाली घास । १०-३१
सेषा=नाग; छंदनाम । ५-८२
सैन=सेना । ५-१८४
सैवै=सेवा करता है, रहता है । ६-४
सैहै=सहेगी । १२-५६
सो=से । ५-६५
सो=यह । १०-१७
सोतो=स्रोत, धारा । १२-१०३
सोर ठानि (है)=शोर मचाएगी; 'सोरठा' छंदनाम । ७-६
सोहागै=सौभाग्य ही । १२-२५
सौदामिनी=बिजली । ५-२३६
स्मरै=कामदेव को । ११-७
स्यों=सहित । १२-६५
स्रग्धरे=माला धारण किए हुए;